स्मृति पुष्प

(हिन्दी-साहित्य)

कनक

कहानी, निबन्ध एवं काव्य-गजल संग्रह

KANAK COACHING कनक कोचिंग पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स

प्रकाशकः-
कनक कोचिंग (पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स)
डाकबंगला रोड, हरनौत-८०३११०(नालन्दा, बिहार)
(C) लेखिका का परिवार

©प्रथम संस्करणः- २००८

कम्पोजरः आर0-फ्लैक्स डिजाइन सौल्यूशन
बंगाली अखाड़ा, पटना- ४

Printed by
Bihar Block & Printing Works Pvt. Ltd.
Kazipur, Swarnasan Lane, Nayatola,
Patna- 800 004

मृत्यु तिथिः २९/०१/२००६

लेखिका का जीवन परिचय

नाम	: कनक
जन्म स्थान	: सिरसी (डिहरा)
प्रारंभिक शिक्षा	: मध्य विद्यालय, सिरसी
मैट्रिक	: प्रोजेक्ट बालिका उच्च विद्यालय, हरनौत
इन्टरमीडिएट	: जी०डी०एम० कॉलेज, हरनौत
पिता का नाम	: श्री राम प्रवेश सिंह
माता का नाम	: श्रीमती शैलकुमारी देवी
पता	: डाक बंगला रोड, हरनौत (कनक कोचिंग सेंटर)
पोस्ट+थाना	: हरनौत
जिला	: नालन्दा
राज्य	: बिहार
पिन	: 803110

दो शब्द

प्रायः कलम तरूणाई बिताये लोगों के हाथ आती है। इसके पूर्व कलम चलाने की कला सीखने के लिए कलम हाथ में आती है। पर इस पुस्तक की लेखिका इस तथ्य की अपवाद है। इसने किशोरवस्था में कलम का उपयोग लेखन के रूप में करना शुरू कर दिया था। लेखन कला सीखे बगैर लेखनी चलाना वैसा ही है जैसे कि बगैर तीरन्दाजी सीखे तीर चलाना। परन्तु प्रकृति ने ऐसे नमूने पैदा किये हैं जो किसी अभ्यास या प्रशिक्षण या शिक्षण के मुँहताज नहीं रहे। जैसे एकलव्य, संत कबीर, रैदास, घाघ एवं भड्डरी आदि। वैसा ही एक व्यक्तित्व है कनक, इस पुस्तक की लेखिका। इसकी जीवनी एवं इसके द्वारा अपने संबंध में कहे या लिखे गए बातों से ऐसा परिलक्षित होता है जैसे वह गलती से इस दुनिया में आ गई हो और इस संसार को छोड़ने की बहुत अधिक जल्दीबाजी है। अतः जल्दी-जल्दी कलम चलाकर समाज को अपने कृतियों का आईना दिखाकर चली गई। मानों कह गई हो कि ''ऐ दुनिया वालों, ये तूने कैसी दुनिया बना दिया कि इसमें मैं सुखपूर्वक कुछ दिन रह भी नहीं सकती। इस दुनिया में प्यार के नाम पर ठगी, धर्म के नाम पर धर्मांधता, संस्कृति के नाम पर अत्याचार, देशभक्ति के नाम पर समाज का शोषण होता है। भला ऐसे संसार में मैं कैसे रहूँ?'' कनक की लेखन शैली उदात्त जलप्रवाह है जो कई जगह लेखन कला रूपी मर्यादाओं को तोड़ती नजर आती है जो इसके किशोरावस्था में उद्‌भूत भाव तरंगे हैं जो मर्यादाओं का खयाल किये बगैर बही जाती है।

इसकी रचनाओं को पढ़ने एवं उससे आनन्द प्राप्त करने के लिये पाठक को अपने मन को किशोरावस्था में ले जाना पड़ता है। इसके बाद इसकी रचनाओं की गहराई में डूबना संभव होता है। लेखन शैली में उन्मुक्तता एवं काव्यशैली छन्दाभाव स्पष्ट नजर आती है। दरअसल भावनाओं का प्रवाह इतना अधिक है कि शास्त्रीयता का बाँध कई जगह टूटता नजर आता है। किशोरावस्था के उन्मुक्त भाव तरंगों में प्रवाहित होना हो तो इसकी रचनाओं को अवश्य पढ़ें।

(रामकृष्ण प्रसाद सिंह)
पूर्व प्राचार्य
एशियन कॉलेज औफ इंजिनियरींग
एंड टेक्नोलाजी, पटना
इन्द्रपुरी, पटना

बड़ी बहन की कलम से

कनक, एक ऐसी हस्ती जिसका नाम मैं लोगों के सामने फक्र से लेती हूँ। वो एक ऐसी असाधारण प्रतिभा की मालकिन थी जिसने बहुत ही कम उम्र में सांसारिक रिश्तों, दुखों, तकलीफों को समझ लिया था। वो बचपन से बहुत अल्हड़, मासूम और हमेशा मुस्कराहट बिखेरने वाली लड़की थी। वह बहुत बहादुर और निर्भीक थी। हम हमेशा साथ खाते और सोते थे। जैसे-जैसे वो बड़ी होती गई उसका प्यार मेरे प्रति बढ़ता गया। वो अधिक से अधिक समय मेरे साथ ही गुजारना चाहती थी। उसे परिवार में सबसे अधिक प्यार मुझसे ही था। उसके बाद वो पापा से बहुत अधिक प्यार करती थी। बचपन से ही उसकी बुद्धि बहुत विलक्षण थी। शिक्षक की बातों को सुनकर ही समझ जाया करती थी। उसने इंटरमीडिएट तक ही शिक्षा प्राप्त की थी वो भी छोटी सी जगह हरनौत में। हमेशा हँसने-मुस्कराने वाली लड़की में अचानक 10-11 वर्ष की उम्र से गंभीरता आ गयी और उसने कलम पकड़ ली। पहले वो छोटी-छोटी रचनाएँ करती थी। किसी विषय पर अपने विचार व्यक्त करती थी। धीरे-धीरे उसकी ये दिनचर्या बन गई कि एक-दो रचनाएँ प्रतिदिन करना और शाम में पढ़कर सारे परिवार को सुनाना। इसी बीच उसकी रूचि चित्रकारी में भी होने लगी थी। हमने उसकी प्रतिभा को पहचाना और उसे प्रोत्साहित किया। मैंने उसे कहानी लिखने की सलाह दी और उसने बहुत छोटी सी एक कहानी लिखी। मैंने उस कहानी को सुनकर उसे और प्रोत्साहित किया और उसे कविता लिखने को कहा। फिर उसने कविता भी लिखी। मैंने उसे और उत्साहित किया और फिर तो यह सिलसिला चल पड़ा। उसने कहानियाँ, कविताएँ, गजलें, विचार, शायरी, हर चीज लिखना शुरू कर दिया और धीरे-धीरे उसकी रचनाओं की श्रेष्ठता बढ़ती गई। एक तरफ वो रचनाएँ भी करती रही और दूसरी तरफ वो छोटे-छोटे कागज पे चित्रकारी भी करती गई। उसी तरह चित्रकारी भी निखरती गई। उसने बिहार के नालन्दा जिले के एक छोटे से गाँव सिरसी (डिहरा) में जन्म लिया था। हम दोनों की प्रारंभिक शिक्षा गाँव में ही हुई थी। उसके बाद हम हरनौत आ गये और मेरी बहन ने जो भी शिक्षा पायी वो सिर्फ हरनौत में ही। हमारे परिवार के लोग कभी बाहर घूमने नहीं जाते थे। उसने न कभी बाहरी दुनिया की सैर की और न ही किसी लेखक की मोटी-मोटी किताबें ही पढ़ी। फिर भी इतने छोटे से कस्बे में अपने आप एक छोटी सी लड़की ने अपने आस-पास एक अच्छी लेखिका और एक अच्छी चित्रकार होने का दर्जा पा लिया। मगर उसकी जिन्दगी में उसकी कोई रचना कभी प्रकाशित न हो सकी क्योंकि हम बहुत साधारण परिवार के थे और हमारी पहुँच इतनी नहीं थी कि वो अपनी रचनाओं को पेपर में भी छपा देखकर खुश हो ले। इसके साथ ही उसकी जिन्दगी की अहम् सच्चाई यह थी कि उसके दिन हमेशा बिस्तर पे ही कटते थे। वो अक्सर बीमार रहती थी। शायद इसीलिए वो खामोश हो गयी थी और दर्द भरी रचानाएँ करती थी। उसकी सारी रचनाओं में सच्चा सामाजिक चित्रण किया गया है। उसके शब्द दिल की गहराईयों में उतर जाते हैं। उसकी रचनाएँ किसी एक श्रेणी में बँधी नहीं होती थी। उसने एक तरफ हिन्दू-मुस्लिम संबंधों, गरीबी, दर्द इत्यादि से जुड़ी रचनाएँ की है तो दूसरी तरफ उसने अपनी कहानियों में ऊँचे लोगों के रहन-सहन को भी चित्रित किया है जबकि खुद उसने साधारण जगह में साधारण जीवन जीया था। उसने अपनी कुछ रचनाएँ मेरे बारे में भी लिखी है और अनेक रचनाएँ उसने पापा को समर्पित कर भी लिखा है। उसकी कई रचनाओं से यह सच्चाई झलकती है कि उसे मालूम था कि वो इस दुनिया में अधिक दिनों तक रहने के लिए नहीं आयी है। उसने मृत्यु संबंधी तीन कविताएँ भी लिखी है। उसने मेरे बारे में ''बड़ी दीदी'' नाम से एक कहानी लिखी है जिसमें भविष्य में घटित होने वाली घटनाओं को दर्शाया है। उसे कई भाषाओं का भी ज्ञान था। उसकी अपनी रचनाओं में कुछ दूसरी भाषाओं का मिश्रण है। इस प्रकार वो लिखती रही, चित्र बनाती रही। इसी बीच मैंने जनवरी 2004 में "कनक कोचिंग" नाम से एक कोचिंग चलाना शुरू किया और उसकी छोटी सी चित्रकारी पे किसी की नजर पड़ी और उसने उसकी बड़ी सराहना की और उसे बड़ा सा पोस्टर बनाने को कहा। बस फिर क्या था, उसने तुरन्त रंग और ब्रश मँगवाए और एक पोस्टर बहुत ही आसानी से बना डाला। इस प्रकार 2005 का अंतिम साल बीतते-बीतते उसकी रचनाएँ और चित्रकारी दोनों में ही अद्‌भुत निखार आता गया और उसका स्वास्थ्य भी गिरता गया और अचानक एक दिन 29 जनवरी 2006 को वो हम सबसे दूर हो गयी।

आज वो हमारे बीच नहीं है। हमारे पास केवल उसकी यादें हैं और उसकी रचनाएँ हैं जो वो हमारे लिए छोड़ गयी है। उसकी आखिरी इच्छा यही थी कि उसकी रचनाओं की एक पुस्तक प्रकाशित हो, वो प्रशंसित हो इसलिए हमने उसकी पुस्तक प्रकाशित करवायी ताकि लोग उसकी प्रतिभा को समझ सकें कि आखिर कोई छोटी सी लड़की ऐसे माहौल में आकर कैसे अपनी कलम का जादू बिखेरती थी और लोग सोचने पर मजबूर हो जाएँ कि भगवान ने उसके साथ कितनी नाइंसाफी की। जिसकी लेखनी और चित्रकारी इतनी कम उम्र में इतनी अद्‌भुत थी वो अगर 5-10 वर्षों तक हमारे बीच रह जाती तो वो क्या लिखती और क्या बनाती? पर अफसोस! ईश्वर ने तो उसे हमसे जुदा कर ही दिया। अब तो हम उसकी यादों के सहारे जी रहे हैं। हमने अपने जीवन की हर एक साँस में उसे शमिल कर रखा है और बस जीए जा रहे हैं। हम न उसे भूल पाये हैं और न ही भूलना चाहते हैं।

बबीता कुमारी
संचालक
कनक कोचिंग सेन्टर
डाक बंगला रोड हरनौत (नालन्दा)

बड़े भाई की कलम से

इस पुस्तक की लेखिका एक ऐसी युवा लड़की है जो आज हमारे बीच नहीं है। जिसने दुनिया को एक अलग ही नजरिए से देखा था। उसकी सोच की गहराई किसी भी आम इन्सान से अलग थी जबकि उसने सिर्फ इन्टरमीडिएट तक ही शिक्षा प्राप्त की थी। (प्रारंभिक शिक्षा सिरसी(डिहरा) नामक छोटे से गाँव में और उच्च शिक्षा हरनौत जैसे छोटे से कस्बे में) फिर भी उसने अपनी लेखनी में भूख, गरीबी, बेबसी, नारी समस्याओं और सामाजिक रिश्तों का ऐसा ताना-बाना बुना है कि कोई भी इसे पढ़कर उसकी लेखनी की तारीफ किए बिना नहीं रह सकता। हर समस्या को उसने इतनी गहराई से छुआ है कि आश्चर्य होता है। हमारे समाज में आसपास क्या हो रहा है इसकी झलक उसकी रचनाओं में मिलती है। वो बचपन से ही हमेशा बीमार रहा करती थी और इसी कारण उदास भी रहती थी। इसी उदासी में वो दर्द भरी रचनाएँ किया करती थी। मगर गम के साथ-साथ कभी-कभी हँसी से सराबोर कर देनेवाली रचनाएँ भी कर डालती थी। यही तो एक अच्छी लेखिका होने का परिचय है। एक कम उम्र लड़की जिसके हाथों में मेंहदी नहीं लगी। जिसे कि शादीशुदा रिश्तों का कोई अनुभव नहीं था। उसने शादीशुदा नारियों की समस्याओं को भिन्न-भिन्न रूप देकर उभारा है। ऐसी लड़की जिसने मध्यवर्गीय परिवार में जन्म लिया, जिसकी परवरिश पिछड़े माहौल में हुई, जिसने बाहर की दुनिया नहीं देखी। परन्तु उसने उच्चवर्गीय समाज में जीनेवाले परिवार को भी चित्रित किया है। आश्चर्य होता है कि वो कैसे इतना जानती और समझती थी। उसके जीने का सहारा था-रचनाएँ करना और रंग और ब्रश से चित्र बनाना। वो चित्रकारी भी बहुत अच्छी किया करती थी। इसी तरह इन चीजों से दिल लगाकर जी रही थी। पर ईश्वर को उसका जीना मंजूर नही था और एक दिन उसने 29 जनवरी 2006 को उसे हमसे जुदा कर दिया। उसकी मौत ने हमारे परिवार को झकझोर दिया। जैसे-जैसे समय बीत रहा है, हमारा दर्द बढ़ता ही जा रहा है। कभी-कभी हम अपने बचपन में चले जाते हैं और गाँव की उन पगडंडियों, हरे-भरे खेतों खलिहानों को याद करते हैं जहाँ हम साथ-साथ दौड़ा करते थे और कागज की कश्ती बनाकर खेला करते थे। वो कश्ती तो नहीं डूबी, पर असल कश्ती तो बीच भँवर में ही डूब गयी। वो हमारी हर साँस में शामिल है और हम अपने जीते जी उसे नहीं भूल सकते। मैं एक पढ़ा-लिखा इन्सान हूँ। मौत की सच्चाई को समझता हूँ कि जो आया है उसे एक दिन जरूर जाना है। मगर इतनी कम उम्र में वो हमारा साथ छोड़ गयी कि इस सदमें से मैं उबर नहीं पाता। हम उसे भूलना चाहकर भी भूल सकते ही नहीं क्योंकि वो हमारे लिए इतनी अनमोल धरोहर जो छोड़कर गयी है। इसलिए हम उसकी रचनाओं को पुस्तक का रूप देकर उसे श्रद्धांजलि अर्पित कर रहे हैं और ईश्वर से प्रार्थना कर रहे हैं कि हमने उसकी आखिरी आरजू पूरी कर दी। अब ईश्वर उसकी आत्मा को शान्ति प्रदान करें।

रजनी कान्त सिन्हा

कनक के माता-पिता

कनक की दादी

नन्हीं कनक

छोटा भाई शशि कान्त सिन्हा

कनक के आखिरी जन्मदिन की तस्वीर

कनक के मैट्रिक परीक्षा की तस्वीर

अनमोल वचन

(1) जीवन माध्यम है फकत प्रशस्ती का
प्रशस्त तो केवल भगवान है।
इन्सान उसका आगाज या एक पहचान है
जिसका अन्जाम एक मात्र भगवान है।

(2) हमारा नाम एक है और पयाम अलग-अलग
जो रोशनी साथ लाये वो जीवन शाम है अलग-अलग
मिलता है हम सबको जो, वो मकाम भी है अलग-अलग।
अन्जाम तक ले जायें, वो राह भी है अलग-अलग।

(3) शासन करता एक राजा था और प्रजा में शान थी उसकी
मगर वो खाली हाथ जा रहा था, न आज कोई पहचान थी उसकी।

(4) महफिल की शान है जिन्दगी, धड़कन की पहचान है जिन्दगी
संसार में आया फकत दो दिन का मेहमान है जिन्दगी।

(5) खुदा की खुदाई से मिल जाती है आशनाई
पर ऐसी किस्मत कहाँ कि मिल जाये शहनाई
जैसे धुन बगैर सुरताल के नहीं संवरती
वैसे ही जिन्दगी बगैर प्यार के नही संवरती।

(6) सागर से सीप उधार ले आये हो तुम
क्या मोती की पहचान है तुम्हें।
जिसके चर्चे तुम रोज सुनते हो
क्या उन पंछियों की पहचान है तुम्हें।

(7) किसी को साथ ले जाना तुम सफर में
कि मोड़ हजारों आते हैं इस अजनबी शहर में।

(8) ये जीवन एक मेला है और इन्सान उसमें बिकने वाले खेल-खिलौने
खरीदार है संसार और पहरेदार है आसमान।
किसी को हरे, नीले, पीले और गुलाबी खिलौने पसंद आते हैं,
किसी को सफेद, मगर खेलना सब चाहते हैं इनसे।

(9) इन्सान सब कुछ हासिल कर सकता है उसके पास अगर पैसे हों तो
मगर क्या भगवान से वो यह कह सकता है
कि हे ईश्वर! ये ले रिश्वत! मुझे अमर कर दे।

भाग-१
कहानी संग्रह

सूची
भाग-१ कहानी संग्रह

01. बड़ी बहू 1-5
02. पत्ता-पत्ता, डाली-डाली 6-10
03. सर्दी का मौसम..... 11-12
04. कोयल क्यों गाती है 13-15
05. रिश्ते 16-18
06. गजल 19-20
07. सरहद 21-22
08. जंग वादे के 23-25
09. ये कैसा जवाब 26-29
10. शराब 30-31
11. कश्मीरी मौसम 32-33
12. बड़ी दीदी 34-35
13. सफर 36-37
14. गुल और गुलिस्तान 38-39
15. रिश्तों की पहचान 40-41
16. इम्तहान 42-43
17. बेइरादा 44-45
18. माचिस की एक तीली 46-47
19. बन्द दरवाजा 48-49
20. खामोशी 50-51
21. शमा 52-54
22. 22वाँ दिन 55-57
23. साया 58-59
24. ताई माँ 60-61
25. महानगर 62-63
26. दूरी 64-65
27. निकाह 66-67
28. रेशम की एक साड़ी 68-69
29. एक और खिलौना 70-71
30. सिर्फ एक चिट्ठी और एक पता 72-73
31. काबुल का पता 74-75
32. आपके साथ 76-78
33. जश्न की रात 79-81
34. इन्तजार 82-83
35. इन्साफ का तराजू 84-85
36. गोपी 86-87
37. आँखों की नमी..... 88-90
38. एक आसियाँ 91-92
39. सजा 93-94
40. बिन्दास 95-97
41. सिसकते कदम 98-100
42. रूखसती 101-102
43. कलम की ताकत 103-104
44. आँखें 105-106
45. सुबह 107-108
46. खत 109-111
47. परछाई 112-114
48. ससुराल 115-116
49. दुल्हन का जोड़ा 117-119
50. खामोशियाँ 120-121
51. मजमा 122-123
52. शुभी का पौधा 124-125
53. नीला आसमान 126-128
54. विश्वासघात 129-130
55. एक रात की दुल्हन 131-132
56. लिबास 133-135
57. कभी सोचा न था 136-137
58. तिलस्मी नागिन 138-140
59. एक आखिरी उम्मीद 141-142
60. जीवनदान 143-144

भाग-२ निबन्ध संग्रह

1. भूमिका 145-146
2. अपनी कहानी का पात्र मैं 147-148
3. एक और किस्सा 149-150
4. गूँज 151-151
5. मेरी जगह 152-153
6. मेरी रचना 154-155
7. ये मेरी निगाह 156-157
8. मन का मयूर 158-159
9. काबुल 160-161
10. मेरी कला का ध्येय 162-163
11. कवयित्री 164-165
12. कलाकार 166-167
13. कला 168-169
14. कला 169-170
15. रिश्ते-नाते 170-171
16. बचपन का वो छोटा सा गाँव 172-173
17. मेरी प्रकृति मेरा गाँव 174-175
18. कला और कलाकार 176-177
19. कवि के बोल 178-179
20. प्रकृति की गोद में 180-180
21. स्नेह 181-182
22. आभा 183-184
23. मौत 185-186
24. हादसा 187-188
25. अजनबी हूँ मैं 189-190
26. परिक्रमा 191-192
27. अभिनेत्री 193-194
28. मैं 195-196
29. पत्ते 197-198
30. जीवन का सार..... 199-200
31. अकेला कोई नहीं है 201-202
32. जिन्दगी तेरी मेरी कहानी 203-204
33. मैना 205-206
34. देश-देश में बँटवारा, भाई-भाई में बँटवारा
    रिश्तों में बँटवारा 207-208
35. आंतकवाद देश का दुश्मन है 209-210
36. शोक में डूबी पुराने वर्ष की शामें और नये वर्ष की सुबहें
    26 दिसम्बर 2004 सुनामी लहर 211-212
37. कश्मीर की वादी 213-214
38. गाँव से दूर 215-217
39. रेल का खाली डिब्बा 218-219
40. नाम कठपुतली नाच 220-221
41. पुस्तक 222-222
42. संगीत 223-224
43. प्रीत 225-226
44. सौन्दर्य 227-228
45. ये कैसा अफसोस 229-229
46. घुँघरू 230-231
47. गंगाजल 232-233
48. मुनीम जी का बही खाता 234-235
49. मिट्टी 236-237
50. धरती 238-239
51. साया 240-241
52. सावन 242-243
53. यारी बचपन की 244-245
54. तवायफ 246-246
55. रोटी 247-248
56. खैरात की वेला.....249-250
57. सांसारिक राग-रंग 251-252
58. कैसी है ये जिन्दगी.....253-254

59. वो नाजुक पल..... 255-256
60. जवानी 257-258
61. नायिका 259-260
62. सुर 261-261
63. कस्तूरी 262-263
64. शहर की दास्तां 264-265
65. सांसारिक दृश्य 266-267
66. दुल्हन 268-269
67. मैं समाज, मर्द का समाज 270-271
68. हाँ, मैं एक माँ हूँ 272-273
69. पिता धर्म 274-275
70. डोली 276-277
71. मेंहदी 278-279
72. पल 280-280
73. शहर 281-282
74. धैर्य 283-284
75. डर 285-285
76. रंगमहल की नायिका 286-287
77. प्रेम 288-289
78. सत्य 290-290
79. वक्त 291-292
80. आश 293-293
81. इन्तजार 294-295
82. जिस्म 296-297
83. कल्पना 298-298
84. ये दो हाथ 299-300
85. सितारा 301-302
86. तन्हाई के इस आलम में 303-305
87. ये दो आँखें 306-307
88. सबसे बड़ा खिलाड़ी 308-309

भाग-३ काव्य-गजल संग्रह

1. शिव स्तुति 310-310
2. कृष्ण स्तुति 311-312
3. सरस्वती स्तुति 313-313
4. लक्ष्मी स्तुति 314-314
5. शाश्वत एक मार्ग ही जीवनेन्द्र है 315-315
6. शोभित है पुष्पिता 316-316
7. मैं करूणाा, मैं कामिनी 317-317
8. मान रखना मुझको नहीं आता 318-318
9. बुझ गया आरती की दीया 319-319
10. ईश्वर शक्ति शाश्वत है 320-320
11. मैं नदी, मैं लहर 321-321
12. मैं अगन में जली 322-322
13. एक समन्दर था खड़ा 323-323
14. वादी में उठ रही थी लहर 324-324
15. ज्ञानदीप 325-325
16. सो जा ऐ मेरी लाडली 326-326
17. ये अनमिट कहानी है 327-329
18. हिन्द पे लहरा रहा झंडा 330-330
19. ऐसा भी कभी होता है 331-331
20. मैं कब उड़ जाऊँ क्या खबर 332-332
21. कवि और कविता 333-334
22. क्या नाम था उस लड़की का 335-335
23. मेरा जहां छोड़कर वो चली गयी 336-336
24. बेशकीमती नगीना नीलाम हो गया 337-337
25. शहर में शोर है कैसा 338-338
26. खिलौने टूट गये तो क्या 339-340
27. मेरा छोटा सा संसार 341-341
28. मेरे आँगन में आज आयी है बहार 342-342
29. मैं कौन हूँ 343-343
30. ऐ कदम डगमगाने वाले 344-344

31. अम्बर ने धरती से पूछा 345-345
32. ये मौसम है प्यार का 346-346
33. प्रीतम आये थे इस ओर 347-347
34. दिल मुस्कराने लगा है 348-348
35. वफा 349-349
36. कागज 350-350
37. एक शोख गजल 351-352
38. मैं नेता हूँ 353-353
39. पैसा ही सबकुछ है 354-354
40. बाकी सब ठीक है सिवाय मेरी तबीयत के 355-355
41. ऐ दुल्हन 356-356
42. मैं बनी हूँ दुल्हन 357-357
43. बेटी मेरी बन रही है परायी 358-358
44. छूट गया घर-द्वार 359-359
45. गीत गूँज के 360-360
46. गीत बाबुल के आँगन के 361-361
47. आज मैं दुल्हन बनी 362-362
48. बेटी सुहागन बनी 363-364
49. इतना भी तंगहाल नहीं मेंहदी 365-365
50. ये किस्सा उसने ही था रचा 366-366
51. ये जिन्दगी लगी ना भली 367-367
52. पौधे से शाख जुदा हुआ 368-368
53. ये कैसा जहां 369-370
54. मैं भाग रही थी भीड़ से 371-371
55. कहो तो मैं सो जाऊँ 372-372
56. दिल का किस्सा 373-373
57. आईना 374-374
58. वो एक मकान मुझे सपने में दिखा था 375-376
59. बचपन बीत गया 377-377
60. बचपन की वो दास्तां 378-378
61. तुमने मुझे हँसते हुए देखा है 379-379
62. न बारिश थमी न बिजली रूकी 380-380
63. मैं चुपके से आसमां से मिली 381-381
64. जिन्दगी की दास्तां 382-382
65. एक टीस सीने में उठी 383-383
66. जिसका कोई नहीं होता 384-384
67. कफन 385-385
68. कुछ भी नहीं मिला 386-386
69. दास्ताने जिन्दगी 387-387
70. ये किसका दिल रोया 388-388
71. टूट गया विश्वास 389-389
72. कुछ पता नही, कुछ खबर नहीं 390-390
73. तन्हाई 391-391
74. हम हैरान रह गये 392-392
75. दास्तां 393-393
76. बाग ने पुकारा किया 394-394
77. लबों की खामोशियाँ बुला रही है तुम्हें 395-395
78. हमने शुरू एक किस्सा किया 396-397
79. मानव देह 398-398
80. तू मृत्यु है अगर तो कितनी दूर है 399-400
81. हे मृत्यु! तेरा रूप कैसा होगा 402-402
82. हमें चलते जाना है 403-403
83. मेरा नाम याद रखना 404-404

बड़ी बहू

1

अरे बहू, जरा अपनी माँ को तो भेजना। पता नहीं मेरा चश्मा कहाँ रख दिया उसने? आ रही हूँ बाबूजी। आपको याद नहीं शायद, चश्मा आपकी कोट की जेब में पड़ा होगा। माँजी पूजा की थाल लिये घूम रही हैं। अगर बीच में टोक दिया तो उनके मुरली मनोहर रूठ जायेंगे। अच्छा बहू, उससे कह देना शाम को गुप्ता जी के घर जाना है। सत्यनारायण स्वामी की आरती होने वाली है। वहाँ प्रसाद के लिए बुलाया है। कह दूँगी बाबूजी। अच्छा बहू, तो चलूँ? हाँ बाबूजी। अरे बहू उनसे कहो, गुप्ता जी के घर शाम को पूजा नहीं, दोपहर को है। जरा जल्दी ही आने को कहना। जी माँजी। बाबूजी से अभी जाके कहती हूँ। बहू, क्या बात है? क्या कहा विश्वास की माँ ने? बाबूजी, वो कह रही हैं, गुप्ता अंकल के यहाँ शाम को नहीं दोपहर को जाना है। तो फिर कह दो अपनी सास से कि वो दोपहर को चली जाये, मैं शाम को चला जाऊँगा। आरती तो उसे लेनी है न। मुझे तो प्रसाद खाना है। जी बाबूजी, कह दूँगी। अच्छा बेटी जाओ। जाकर विश्वास के ऑफिस जाने की तैयारी करो। उसे भी तो देर हो रही होगी। अरे नहीं बहू, देर इन्हें हो रही है। इनसे कह दो कि जल्दी चले जायें । इनके साहब नाराज हो जायेंगे। नहीं लता बेटी, अपनी माँ से ही कह दो कि जरा जल्दी करे। नहीं तो इनके मुरली मनोहर ही घर छोड़कर चले जायेंगे। चिढ़ा लो जितना चिढ़ाना है। ठाट हैं तुम्हारे तो। नयी-नयी बहू जो आयी है घर में। लाडली है तुम्हारी। माँजी, छोड़िए भी। बाबूजी मजाक कर रहे हैं। अरे बहू, मैं भी तो मजाक ही कर रही हूँ। तू है ही इतनी प्यारी। वो देखो, तुम्हारे देवर और ननद कैसे बिस्तर पे ठाट कर रहे हैं। सबको मस्ती सूझी है लगता है। माँजी इनकी उम्र ही है मस्ती करने की तो कर लेने दीजिए न। अरे नहीं बहू, इनके लगाम तुम्हें ही कसने हैं अब। खुले घोड़े बन गये हैं ये लोग। लो विश्वास को क्या हो गया? हरदम कुछ न कुछ कहता रहता है। जाओ जाकर देखो कि क्या कह रहा है? क्या कह रहे होंगे माँजी? खुद ही जाकर पूछ लो, आवाज आ रही है। कंघी कहाँ रखी है लता? जरा ढूँढकर तो दो। वहीं पर तो पड़ा था। कहाँ? नहीं मिल रहा। आती हूँ। भाभी चाय बनकर तैयार हो गई क्या? हम कब से जगे हैं? कहाँ बनी देवर जी? आप तो अभी उठे हैं। वैसे भी आपकी उम्र नहीं हुई चाय पीने की। तो कब होगी भाभी? जब थकान होगी और आप तो जनाब अभी-अभी बिस्तर से उठे हैं, आराम फरमाकर। वो देखो तुम्हारे भैया कैसे चाय की चुस्की लिये जा रहे हैं। भाभी इतनी भी ज्यादती ठीक नहीं। चाय पहले देवर को मिलनी चाहिए। भाभी पहले उसी की होती है। और ननद की कुछ नहीं होती विजय? अरे दिशा! तुम भी जाग गयी। जाके किचन में पानी चढ़ाओ। मैं चीनी और पत्ती लेकर आती हूँ। क्यों भाभी क्या आज हम सबको सादी चाय पीने को मिलेगी ? हाँ ननद जी। मेरे पिताजी हमेशा यही कहा करते हैं। अरे भाभी, छोड़िए भी अपने पिताजी की बातें। वो बेचारे तो उसूल वाले होंगे। पर हम तो अभी हट्टे-कट्टे जवान हैं। हमें इन उसूलों से क्या लेना देना? हाँ भाभी, चाय तो हम सादी हरगिज नहीं पीयेंगे। विजय! तुम्हारी भाभी कह रही है तो पीनी ही पड़ेगी तुम दोनों को। नहीं तो खुद बनाकर पी लो। क्यों लता? बात तो ठीक ही कही तुम्हारे भैया ने विजय। अगर सादी चाय पसन्द नहीं तो खुद ही बना लो। अरे कैसे बनायेगा बहू ये विजय चाय? इसे तो यह भी नहीं पता कि आज घर-घर पूजा है। दूध वाले ने दूध दिया ही नहीं। क्या? तो तुम हमसे मजाक कर रही थी भाभी। और नहीं तो क्या? चाय आज किसी को

2

पीनी ही हो अगर तो वो सादी चाय पीये वरना चाय पीने का इरादा ही छोड़ दे। अरे माँ, तुम्हारे मुरली मनोहर ने तो दूध की हंडिया नहीं फोड़ दी कहीं। सही पहचाना तुमने बेटा। आज गोवर्धन पूजा ही है। तो इसलिए इतनी सुबह-सुबह जगा दिया बेचारी भाभी को। अरे नहीं दिशा, आज बाबूजी को जल्दी ऑफिस जाना था। शाम को गुप्ता अंकल के यहाँ पूजा है। प्रसाद खाने जाना है। अरे बहू, तुम भी अपने ससुर की बातों में आ जाती हो। कितनी बार इनसे कहा कि गुप्ता जी के यहाँ शाम को नहीं, दोपहर को जाना है। ये लो फोन की घण्टी बज गयी। लगता है तुम्हारे बाबूजी का फोन है। कहना चाहते होंगे कि विश्वास की माँ से कह दो पूजा में अकेली चली जाये। मुझे घर पहूँचने में देर हो जायेगी। ऑफिस में काम ज्यादा पड़ गया है। क्या पता कब लौटूँ? पर माँजी, वो तो सुबह ही ऐसा कह गये हैं। फिर फोन को उठा के तो देखो बहू कि वो कहना क्या चाह रहे हैं ? तभी बाबूजी ने आके कहा, अरे भाग्यवान! ये फोन की घण्टी नहीं, तुम्हारे दिल का हॉर्न था जो बज रहा था। उठा के तो देखा होता कि किसका फोन है। जब तुम आ ही गये तो होगा कोई रौंग नम्बर। अरे भाग्यवान कितनी बार कहा तुमसे कि हर कॉल को गलत नम्बर का नाम मत दो। हमारे और भी बच्चे हैं जो अलग-अलग शहरों में रहते हैं। क्यों नहीं? वो मेहरा भाई साहब की बेटी और आमना भाभी की कजिन जो तुम्हें भाईजान-भाईजान कहा करती है। अरे रिश्तों से ही तो रिश्तों की कड़ी बनती है। कितनी बार कहूँगा तो समझोगी तुम। सब समझती हूँ मैं जी। मत नहीं मारी गयी है हमारी तुम्हारी तरह जो घर से निकलूँ ये कहकर कि बहू कह दो अपनी सास से कि मुझे लौटने में देर हो जायेगी। चली जाये अकेली। हाँ भाग्यवान, कह के तो यही गया था सच में मैं। पर रास्ते में ही मुझे लता के चाचाजी मिल गये। कहने लगे श्रीवास्तव जी, आज की चाय मैं आपके घर पीऊँगा। अच्छा बाबूजी, तो कहाँ रह गये वो। अरे बहू, उन्हें साथ ला ही रहा था कि याद आया अभी तुम्हारी माँजी तैयार नहीं हुई होगी और समधी जी आज इन्हीं के हाथ का बना खाना तक खानेवाले थे। पर मैंने भी कह दिया कि लता बेटी जैसी हस्ती कोई नहीं हमारे घर में भाई साहब। सब के अलग-अलग काम हैं अपने-अपने। आपकी भाभी को अपने मुरली मनोहर से फुर्सत नहीं, बच्चों को सोने से फुर्सत नहीं। आपके दामाद को कभी सेंट की शीशी गायब पड़ी मिलती है तो कभी कंघी करना भूल जाते हैं वो और जाने लगते हैं ऑफिस बगैर मुँह-हाथ धोये। पर अपनी लता बेटी हमेशा सब पे रोब जमाये रहती है। किसी को नहाये बगैर चाय तक पीने नहीं देती। कहने लगे, तो फिर चलता हूँ श्रीवास्तव जी। हमें तो नहाये दो दिन हो गये हैं। जब बेटी के ऐसे तेवर हैं तो माँ के क्या होंगे? तो क्या चले गये वो? हाँ विश्वास की माँ। अब उनसे गुप्ता जी के घर ही मुलाकात होगी। वहाँ पर क्या वो नहाकर आनेवाले हैं? अरे नहीं भई। वहाँ पर कहाँ डर है उन्हें अपनी बेटी का? कहो, कैसी रही बहू? कम-से-कम आज सादी चाय की लाज तो बच गयी न हमारी। हाँ बाबूजी, ये तो खूब रही। क्यों भाभी? विजय और दिशा ने कहा। तब लता बोली, बाबूजी एक बात तो बताना ही भूल गयी आपको, दिशा ने अपना लाईफ पार्टनर चुन लिया है। क्या? हाँ, आज हमने उसकी फोटो देखी है। अच्छा तो ये देर से उठने का राज है। क्यों बहू? हाँ बाबूजी। तो क्या वो रात को मिलने आता है उससे? अरे हाँ बाबूजी। रोज रात को आता है, घण्टों बैठता है, बातें करता है। क्या? देखो बहू, ये मजाक की बात

नहीं। सीरियस मूड में आओ। सीरियस ही तो हूँ मैं बाबूजी। तो क्या दिशा की ये मजाल? हाँ बाबूजी, माँजी भी समझा-समझाकर हार गयी। पर इनकी मानें ये लोग तब न। इतना ही नहीं बाबूजी, विजय की गर्लफ्रेंड भी आपके पीछे घर आती है उससे मिलने। माँजी तो हमेशा पूजाघर में रहती हैं। मैं इनकी खातिरदारी में लगी रहती हूँ। बस अभी से देवर, देवरानी और ननदोई जी के नखरे उठाने पड़ रहे हैं हमें। क्या ये लोग इतने बहक गये है लता? हाँ सबकुछ खुलेआम हो रहा है और खबर किसी को भी नहीं। क्या कहा तुमने? हमें पहले बताया होता कि ये लोग हमारी पीठ पीछे तुमपर इतना रोब झाड़ते हैं। मैं इनकी घोड़ी के लगाम ऐसे कस देता कि फिर वो अपने रास्ते आना ही भूल जाते। कैसे कस देते विश्वास? जब मियाँ-बीवी राजी तो क्या करेगा काजी? मन्त्र तो पढ़ने ही पड़ेंगे उसे, फेरे तो लगवाने ही पड़ेंगे उसे। अच्छा तो वो दोनों इस वक्त हैं कहाँ? अपने-अपने कमरे में एक दूसरे के साथ चाय की चुस्कियाँ लेते या आपके आने की आहट को सुना होगा तो चले गये होंगे अपने-अपने घर वापस। पर बहू अभी-अभी तो दोनों यहीं पे थे। वो तो उनकी परछाई थी बाबूजी। रूह तो मिलने की आरजू लिए सड़कों पे भटक रही होगी। क्या? हाँ बाबूजी, अब तो लगता है गुप्ता अंकल के घर जाने का वक्त हो गया और माँजी की पूजा भी खत्म हो गयी। चलिए जल्दी से हाथ-मुँह धोकर कपड़े बदल लीजिए। पूजा में जाना है न बाबूजी। कम-से-कम इतना तो करना ही पड़ेगा। हाँ बहू, तुम कहती हो तो कर लेता हूँ। पर जब इनसे मिलने कोई आये तो हमें खबर जरूर कर देना। जी अच्छा बाबूजी! लाओ नहा ही लेता हूँ। आरती का सवाल है, ऐसे तो जाना उचित नहीं लगता न। हाँ बाबूजी, सुबह पानी जमा कर दिया था हमने। तो क्या हमें उसी पानी से नहाना होगा? जी बाबूजी। आज नल का पानी रात में भी आनेवाला नहीं। क्यों बहू? नलकूप की सफाई होनेवाली है। बाबूजी, हमें इसी पानी से दो दिन काम चलाना है। क्या हम कल भी यही पानी पीयेंगे? क्या करें बाबूजी? मजबूरी है न। हाँ सो तो है। बहू! अरे जरा अपनी माँ से कहना कि तौलिया लेकर जल्दी आये। आती हूँ। सामान भी समेटने नहीं देते हो तुम तो। क्या करूँ भाग्यवान? सुबह के जमे पानी से नहा रहा हूँ न। तो गर्म कर दिया होता बहू। कैसे करती माँजी? बिजली ही गायब है और किसे पता था कि बाबूजी इतनी जल्दी घर लौटनेवाले हैं। सो तो है बहू। पर कम-से-कम इन्हें नहाने से तो रोका होता। अगर सर्दी-जुकाम हो गया तो? क्या कहा माँजी? बाबूजी को जुकाम हो जायेगा। फिर तो सत्यनारायण जी की आरती का सत्यानाश ही होना था। अरे नहीं बहू, वहाँ मैं अकेली चली जाती हूँ। अरे नहीं माँ, बाबूजी को साथ ले जाओ न? लो आ गये ये चांडाल। हम गये ही कहाँ थे बाबूजी? विजय और दिशा ने कहा। तो अपने-अपने दोस्तों से मिलने को कौन गया था। वो तो इनकी परछाई गई थी न बाबूजी। हमने कहा था न आपसे। हाँ बहू कहा तो था। तो नहा लिया जी? हाँ विश्वास की माँ। हमेशा हमसे ही जल्दी करने को कहा करती हो और खुद बैठी रहती हो श्रीकृष्ण जी की मूर्त्ति के पास। क्या करूँ? तुम्हें तकने से तो अच्छा है, उन्हें ही तक लेना। अच्छा तो मैं इतना गैर हो गया तुम्हारी नजरों में। अरे बाबूजी, आप दोनों तो झगड़ने लग गये, जल्दी कीजिए। लगता है आरती की आवाज भी आने लगी। क्या आरती भी हो गयी? फिर इनके साथ जाने का क्या फायदा? बहू, तुम इनको तैयार करो। मैं चलती हूँ। जी माँजी। तो बहू, आखिर तुम्हारी सास चली ही गयी। जाने दीजिए न बाबूजी। आज हम खुलकर कम-से-कम बातें तो करेंगे। देखिए बिजली भी आ गयी। माँजी क्या गयी?

कमरे में रोशनी ही बिखर गयी। हाँ बहू, वही हो-हल्ला मचाती रहती है तो तार गलत जुड़ जाता है। क्यों विजय? अरे बाबूजी! आप किसको बुला रहे हैं? वो तो घर में है ही नहीं। अभी-अभी तो वो दोनों यहीं थे। वो तो उनकी परछाई थी बाबूजी। अरे हाँ, आजकल उनका जिस्म तो भटकता ही रहता है। क्यों बहू? विश्वास कितने बजे आयेगा? कह गये थे, रिश्ता पक्का कर ही आऊँगा? बाकी बातें तुम बाबूजी से साफ-साफ कर लेना। पहले मैं ही देख आता हूँ कि इनकी पसन्द कैसी है? बाबूजी बाद में जायेंगे। चलो ठीक ही किया विश्वास ने। हम कहाँ मारे-मारे फिरते अपनी ड्यूटी छोड़कर। हाँ बाबूजी, आपको तो इतवार के दिन भी काम ही रहता है। सो उन्हें ही भेज दिया हमने। आज उनकी छुट्टी थी। उन्हें किसी दोस्त की पार्टी में जाना था। सो कह गये कि रास्ते में उसे भी साथ लेता जाऊँगा। बाबूजी, गलत भी क्या किया उन्होंने? विजय और दिशा जवान हैं। उन्हें एक-न-एक दिन तो विवाह बंधन में बँधना ही है। सो अभी क्यों नहीं? हाँ बहू, तुम्हारी माँ घर में नहीं है। तो खुलकर बातें भी कर ली हमने। लो विश्वास भी आ गया। क्या बात चली बेटा? बाबूजी बात पक्की ही समझिए। लड़का-लड़की एक तो घर में ही मिल गये, सो देख भी लिया और परख भी लिया। कैसी लगी इनकी पसन्द? अच्छी लगी बाबूजी, बहुत अच्छी। हमारी पसन्द से कहीं अलग। गलत, बिल्कुल गलत। हमारी लता बेटी जैसी पसन्द किसी की हो ही नहीं सकती और हमारी यही बेटी देखना सारी जिन्दगी इस घर में राज करेगी। तो ठीक है, अभी फोन कर सारा इन्तजाम कर लेता हूँ। विजय और दिशा को साथ में ले जाकर अपनी-अपनी पसन्द के कपड़े खरीदवा दो लता। हाँ बहू, लो दस हजार रूपये। पर बाबूजी, इतने पैसे। रख लो बहू, तुम्हारे ही काम आयेंगे। घर भी तुम्हें ही चलाना है और शादी की सारी तैयारी भी तुम्हें ही करनी है। पर बाबूजी, माँजी से पूछ तो लिया होता। अरे बहू उससे क्या पूछना? वो तो आकर बस मुरलीधर की बातें लेकर ही बैठ जायेगी। नहीं बाबूजी, वो हमसब की अपनी हैं। उनकी मर्जी के बगैर हम इतना बड़ा फैसला कैसे ले सकते हैं? तुम लोग जाओ न बहू, मैं उसे समझा दूँगा। समय ही कितना बचा है हमारे पास। ये आखिरी लगन है इस साल का। हाँ लता, बाबूजी ठीक ही कह रहे हैं। ठीक है विश्वास! विजय और दिशा को कहो कि जल्दी से तैयार हो जायें। हम तैयार हैं भाभी। क्या? हाँ। तो ठीक है, चलें हम। हाँ चलो। तभी माँ आ गयी। ये तुम सब बन-ठनकर कहाँ जा रहे हो? बाबूजी बतला देंगे माँ हमें जल्दी जाना है कहीं। माँ जैसे बरस पड़ी। सबको तो अपनी मनमानी पर उतार दिया है इस लड़की ने आकर। उस बेचारी ने क्या किया भाग्यवान? हमेशा उसे ही कोसती रहती हो। नहीं, मैं ही फालतू हूँ इस घर में। मुझे ही कोसो न तुमसब। पहले गुप्ता जी के घर जल्दी से भगा दिया और खुद अभी तक नहीं गये। अब पीछे न जाने क्या-क्या पुलाव पकायें होंगे तुमलोगों ने। मुझसे क्या पूछती हो? विश्वास से पूछो। इसी ने तो सारा खेल शुरू किया है। क्यों रे क्या किया है तुने? माँ मैंने तो कुछ भी नहीं किया, जो भी किया दिशा और विजय ने किया। क्या किया उनलोगों ने? शादी की प्लानिंग कर डाली चुपके-चुपके अपने-अपने दोस्त के साथ। तो तुमने इसमें उनकी मदद की। क्यों मैंने ठीक कहा न जी? नहीं भाग्यवान! गलत, बिल्कुल गलत कहा। इसने तो फकत तारीख तय की है। वो भी पाँच दिन बाकी रह गये हैं। क्या? अब तो मैं इस घर में एक पल भी नहीं रह सकती, जाती हूँ। तो अपने मुरली मनोहर को किसपे छोड़कर जा रही हो भाग्यवान! इन्हें भी साथ लेती जाओ न? क्यों? इनके लिए भी

इस घर में अब जगह नहीं क्या? नहीं है, पर तुम दोनों के लिए। न अकेले इनसे घर सम्हलेगा, न तुमसे। क्या? तो फिर बच्चे किस दुकान में गये हैं? वहाँ मैं भी जाती हूँ। तुम कहाँ-कहाँ भटकोगी माँ? उन्हें ही मार्केटिंग करने दो न। ठीक है, मैं बैठी रहती हूँ पराये लोगों की तरह। बहू की आरती तुम ही उतार लेना और दामाद की भी। अरे हाँ, याद आया। अगर आमना भाभी को खबर न की तो वो हमें कभी माफ नहीं करेंगी। और उनकी कजिन, उनके घर खबर नहीं भिजवानी क्या? सब को भिजवा देंगे जी। पर बाकी के लोगों को तो अभी बता दो जो इसी शहर में हैं। सबको खबर एक साथ ही भेजी जायेगी बाबूजी। वो भी माँ के हाथों शगुन की मिठाई खा लेने के बाद। तो फिर ठीक है जाओ और फिर अपने भगवान पर से थोड़ा सा प्रसाद ही लाके खिला दो हम सबको। ठीक है, ठीक है। जाती हूँ। अरे ये लोग सामान खरीदकर आ भी गये। कितने पैसे खर्च हुए भाभी? बाबूजी को लिस्ट दिखलाना तो? अरे नहीं विजय, जब लता थी ही तो हमें क्या देखना? सारी जिम्मेदारी तो उसे ही निभानी है आखिर, बाद में भी। क्यों बाबूजी? क्या बाद में विजय की पत्नी नहीं आयेगी? आयेगी विश्वास! पर घर में हमेशा बड़ी बहू का ही राज रहेगा। नहीं बाबूजी, तब तो हमारी देवरानी भी नाराज हो जाएगी और हमारे देवर जी भी। वो क्यों भला? इन्हें भी तो घर सम्हालना आना चाहिए। वो तुमसे सीख लेंगे बहू।

फिर शादी का दिन आया। माँ ने एक को विदा किया, एक को डोली से उतारा और घर-आँगन जैसे फूलों सा खिल गया। बाग में जैसे अनगिनत फूल खिले हों। कभी दिशा अपने पति के साथ घर आ जाती। कभी विजय की पत्नी के मायके से उसके परिवार वाले आ जाते। पर सबको ले-देकर विदा करने की जिम्मेदारी बड़ी बहू को ही दे डाली थी बाबूजी ने। माँ भी खुश थी, बाबूजी भी खुश थे और अपनी पत्नी को ऐसी जिम्मेदारियों को निभाते देख विश्वास भी खुश था। पर एक दिन दिशा भी माँ बनी, उसके बच्चे भी दुनिया में आये और फिर एक दिन विजय भी बाप बना उसकी बच्ची भी दुनिया आयी। पर इन सबकी परवरिश में लता को कभी ये याद ही न रहा कि उसकी भी कोई औलाद हो जो उसे माँ कह सके। बाबूजी तो अपनी बड़ी बहू को हमेशा जिम्मेदारियों के बोझ तले दबते देखते चले जा रहे थे। बर्षों बीते। उनके बच्चे स्कूल भी जाने लगे और लता बेऔलाद ही रही आजतक। तो एक दिन विश्वास ने लता से कहकर एक बेटी गोद ली 5 साल की। उसको भी उसी स्कूल में दाखिला दिलवाया जिसमें कि विजय की बेटी पढ़ती थी। पर कभी उसकी बेटी ने लता की बेटी को अपनी बहन नहीं माना। और फिर सारे घर में दरार पड़ती चली गयी। वो लोग हमेशा उसे अछूत ही बुलाने लगे जो लता और विश्वास को अच्छा न लग सका कभी। तो एक दिन उन दोनों ने घर से दूर हो जाना उचित समझा। माँ से भी जब लता की बेटी दादी-दादी कहकर लिपट जाती वो उसे झटक देती और विजय की बेटी को सीने से लगा लेती। बाबूजी तो नहीं बदले, पर अपनी ही बहू के जोड़े इन रिश्तों के सामने उसे बिखरता देखकर भी खामोश रहे। आखिरकार वो दिन आया जब सारी जिम्मेदारियों को अपनी देवरानी पर सौंपकर वो जाने लगी तो पीछे से एक भी आवाज नहीं आयी। रूक जाओ भाभी! हमसब तुम्हारे अपने हैं। रूक जाओ बहू! हमसब तुम्हारे अपने हैं। पहले तुम ही आयी थी इस घर में बड़ी बहू बनकर।

आज भी ऐसा लगता है जैसे कहीं कुछ नहीं बदला हो। माँ आज भी खाना परोस रही हो और कह रही हो, चलो बच्चों सब खाने के पास आ जाओ और हमसब भाई-बहन दौड़-दौड़ कर आ रहे हों। पापा आज भी हमेशा की तरह चश्मा लगाये बैठे हों हाथ में अखबार लिये और माँ उन्हें डाँट रही हो क्यों जी, तुम्हें भूख नहीं लगी क्या? सब खाने पर कब से तुम्हारा इन्तजार कर रहे हैं। पापा हँसकर कह रहे हैं, बच्चों को खा लेने दो फिर हम खा लेंगे। कितनी अच्छी कहानी पढ़ रहा था मैं अखबार में तुमने सब भूला दिया। अब कहाँ तक पढ़ा था ये भी याद नहीं रहा मुझे और माँ चिढ़कर कह रही हो, चलो अच्छा ही हुआ रोज-रोज की इस कहानी से जान ही छूटी और पापा, माँ की तरफ आँखें तरेरकर देख रहे हैं पार्वती, जब तुम्हें समझ नहीं इन ऐतिहासिक कहानियों की तो कम-से-कम मुझे ही समझ लेने दो। तब माँ कह रही है क्या करोगे इतिहास जानकर जी? क्या तुम्हें भी बच्चों की तरह इम्तहान देने हैं या कोई ऐतिहासिक रचना करनी है। पापा कह रहे हैं पार्वती, इतिहास हमारे पूर्वजों ने बनाये हैं। उन्हें ही याद कर लेने दो न। माँ चिढ़ रही है नहीं। चलो जल्दी उठो, नहीं तो मैं बच्चों से कहती हूँ सारा खाना तुमसब ही खा लो। तुम्हारे पापा को आज भूख नहीं तब पापा ऐसे उठ रहे हैं जैसे उन्हें सच में आज खाना नहीं मिलनेवाला और हमसब पापा की तरफ देखकर हँस रहे हैं तो माँ की धमकी सही निशाने लगी। क्यों भैया? मिंकी कह रही है, पापा को इस उम्र में भी कहानियों की ही पड़ी रहती है। क्या ऐसा नहीं हो सकता, हमसब ही पापा को इतिहास बना डालें और लिख डालें एक कहानी। क्यों पापा कैसी रही? पढ़ोगे न अपना पुराना इतिहास? ये तो खूब रही बेटा। पर तुम जवान लोग क्या जानो इतिहास को? लिखोगे, रजिया ने याकूब से प्रेम किया था। शाहजहाँ ने मुमताज से प्रेम किया था। बाजबहादुर ने रूपमती से प्रेम किया था। सुहैल था एक गरीब जो चाँदनी रात में एक झलक पाकर रूही का दीवाना हो चला था। पर क्या कभी ये लिख पाओगे कि राम ने कैकेयी जैसी माँ से भी प्रेम किया था। कृष्ण ने राधा से प्रेम किया था ये तो लिख डालोगे। पर क्या ये लिख सकोगे कि उन्होंने देवकी और यशोदा से भी प्रेम किया था? तब हम हँस पड़े थे। पापा वो सब तो आपके पुराने इतिहास होंगे न जिन्हें लिखना हमें भले न आता हो पर ये तो लिखना आता ही है कि शहर के नामी कारोबार के मालिक के बेटे ने एक गाँव की गोरी से प्यार किया था। माँ उन दिनों की तरह आज भी झेंप रही है और कह रही है क्यों जी बच्चों के सामने तमाशा बना दिया न? देखिये तो वो कैसे हमारी तरफ देखकर हँस रहे हैं। और अनिल को तो देखो, अपनी ही धुन में कैसे हँसा जा रहा है। और हम कह रहे हैं लगता है अनिल भैया को शोभा भाभी की याद आने लगी है। माँ, कहो तो एक फोन ही कर देती हूँ इनके ससुराल। इनके ससुर जी ऐनक के पीछे से तरेरकर कहेंगे ये किस कम्बख्त ने इतनी सुबह-सुबह फोन किया और विजय कह रहा है आशा दीदी कह तो ठीक रही हैं माँ। पर अनिल भैया की तो अभी शादी ही नहीं हुई। चलो एक इतिहास इनकी प्रेम कहानी पर भी लिखा जाये और हँसते-हँसते सबकी हालत आज भी जैसे बुरी हो रही हो। पापा तो खाना खाकर सोने चले गये पर माँ बैठी है अपनी पुरानी यादों की गठरी लिये। उन्हें भी जैसे अपने पुराने दिन याद हो आये हैं। फूलों का एक बाग था। बागों में झूले पड़े थे।

वो बावरी निगाहों से पेड़ों की झुकती डालियों की तरफ देख रही थी कि अचानक पापा सामने आ गये थे। माँ ने दुपट्टा सर पे रख लिया था आज भी जैसे हमेशा रखा करती थी। उन दिनों का जमाना ही ऐसा था। उन लोगों का प्रेम एक पत्ता मात्र होता था जिसकी चिकनाई को तो वो महसूस कर लेते थे पर हाथ से छूने से डरते थे। कहीं उनपे दाग न लग जाये। रोज ही उस बगीचे में उनकी मुलाकात होती थी। एक दिन उनकी सखी ने मजाक-ही-मजाक में प्रेम करना सिखा दिया उन्हें। वो खुलकर तो कुछ बोले नहीं पर उनकी माँ बेटे-बेटी के हाव-भाव को पहचान गयी। ये रोज ही निगाहें झुकाये घर आना, बार-बार घड़ी की तरफ देखना, रात-रात भर कमरे की बत्ती न बुझाना, पढ़ने कहें तो किताब खोलकर छत की तरफ ताकना। ये प्यार नहीं तो और क्या है? और इसकी भनक जब इनके पिता तक गयी, पहले तो बड़ी जोर-जबरदस्ती चलायी उन्होंने। फिर माँ के मनाने पर राजी हुए। घोड़ी पर सवार होकर पापा उनके घर आये। माँ ने उनकी आरती उतारी मंडप तक ले गये उन्हें बाकी के लोग। सखियों ने खूब हो-हल्ला मचाया। डोली सजायी गयी और माँ को बिठाकर विदा किया गया। पापा माँ के इस चेहरे को देखने को व्याकुल होते रहे और माँ ने घूँघट में ही मुस्कराते रहना उचित समझा। सब यादें लेकर बैठी थी माँ और पापा ने आकर कहा था कि पार्वती सब सो गये चलो हम भी सो लें। क्यों कमरे की बत्ती बुझ गयी क्या? अरे भाई आज क्या शरमाना इन बुढ़ापे के क्षणों में? और माँ कह रही है पहले भी तो ऐसा ही किया करते थे हम। सब वहीं रह गया हो जैसे और हम अपने-अपने रास्ते चले गये हों। उस दिन पापा की आवाज जब कानों में गयी थी हम सब जाग गये थे। पूछा था पापा से, पापा क्या बात है? पूछो अपने भाई से। श्रीवास्तव जी का फोन आया था। कह रहे थे कि अनिल ने उनके घर जाकर शोभा के साथ जबरदस्ती बाहर जाने की जिद की है। तब हम हैरान होकर पापा की तरफ देखने लगे थे। तो क्या बात हो गयी ऐसी पापा? अरे होना क्या था? तुम्हारे भाई की मत मारी गई थी। भगा लाता शोभा को हमारे घर। फिर श्रीवास्तव जी लाख मनाते हमें, हम कह देते समधी साहब, आपकी बेटी ने हमारे बेटे के साथ गठबन्धन कर लिया है। कितना मजा आता? वो गुस्सा होते रह जाते। तब विजय ने अनिल की तरफ देखकर आँख मारी थी क्यों भैया? पापा का आईडिया बुरा नहीं और वो भाग गया था। फिर एक दिन पापा ने बड़ी धूमधाम से अनिल और शोभा की शादी रचायी थी। तब शोभा के पिता हमारे पापा से बोले थे सिन्हा साहब, मेरा एक बेटा भी है उससे अगर आप अपनी बेटी की शादी...! तब हमने मिंकी की तरफ देखा था और उसने हमारी तरफ। फिर पता भी न चला कि कब सुधीर और मिंकी अच्छे दोस्त बन गये। पर मिंकी को शादी की जल्दी नहीं थी अनिल और शोभा की तरह। पर उस दिन पापा काफी नाराज हुए थे जब मिंकी ने कहा था कि पापा! माना सुधीर अच्छा लड़का है, मेरा अच्छा दोस्त भी है। पर मुझे एक अच्छा दोस्त ही नजर आता है फकत वो। मैं उसके साथ शादी करके लाईफ में सेटल नहीं हो सकती। पापा ने लाख समझाया कि बेटी, श्रीवास्तव जी से मैंने वादा किया है। वो हमारे करीबी रिश्तेदार हैं। इतने दिनों तुम सुधीर के साथ घूमी-फिरी, साथ रही। न जाने कितनी मुलाकातें हुई होगी तुम दोनों की। तब मिंकी ने कहा था कि पापा! ये जमाना वो आपका पहले वाला जमाना

नहीं रहा। जब दो लड़का-लड़की मिलते हैं और शादी करना उनकी मजबूरी बन जाती है। आज का जमाना बदल चुका पापा। आप भी इस जमाने में झाँककर देखिए उस पुराने जमाने से निकलकर। ये फूलों का बाग नहीं रहा अब पापा। रिश्तों की कड़ी नहीं रही अब पापा जिसमें दो लोग गाय-भैसों की तरह बँध जाएँ और खूँटों के साथ बँधे रहना उनकी नसीब बन जाय। तब माँ ने कहा था तुम कहना क्या चाहती हो मिंकी? यही कि सुधीर के पिता से कह दीजिए कि मुझे उनके बेटे के साथ शादी नहीं करनी। इसकी कोई वजह? वो भी बता दूँगी माँ। मुझे आज अपने बचपन का दोस्त अजीत मिला था। उसने अपना कारोबार अच्छा बढ़ा लिया है। लगातार सम्पर्क होता रहा है हमारा। मैं उसी के इन्तजार में थी कि पापा ने मेरा रिश्ता सुधीर के साथ जोड़ दिया श्रीवास्तव जी के कहने पर। क्या तू उन बुजुर्ग लोगों को नाम से बुलाने लगी है? इतनी भी शर्म बाकी नहीं रही तुममें। क्या तू भूल गई कि श्रीवास्तव जी कोई गैर नहीं, हमारी बहू शोभा के पिता हैं। अनिल के ससुर हैं वो और ये सब हमारे अपने हैं। तब मिंकी ने कहा था, होंगे तुम्हारे अपने माँ। पर इस मामले में वो हमारे लिए गैर ही बने रहेंगे। तब पापा ने मिंकी के गाल पे एक तमाचा मारा था और कहा था कि अभी और इसी वक्त निकल जा इस घर से। कलंक है तू हमारे नाम पर। वो रोती हुई बाहर चली गयी थी और जाने से पहले कहा था अगर इसी उसूल के मालिक बने रहे न आप पापा, तो देखना एक दिन आपके सब बच्चे आपसे दूर होते चले जाएँगे। पापा ने भी पलटकर कहा था ऐसे औलाद हों अगर तो हम बेऔलाद ही भले हैं मिंकी। और फिर सारे घर में सन्नाटा छा गया था। पापा किसी से कुछ नहीं कहते थे। हमेशा अपने कमरे में पड़े रहने लगे थे। माँ खाना परोस देती और वो ढंडा होकर रह जाता। मिंकी के चले जाने से ये घर सूना सा हो गया था। एक वो ही तो थी जो इस घर को उमंगों से जोड़े थी। शोभा के भाई का दिल टूटा था उसकी ननद की वजह से। इसलिए वो भी अब खींची-खींची सी रहती थी। माँ-पापा से तो नजरें मिलाना ही छोड़ दिया था उसने। एक बार भी नहीं कहती थी कि पापा! मिंकी की पसन्द ही जब अलग थी तो गलती इसमें कहाँ थी उसकी? कर दिया होता उसका विवाह अजीत के साथ। हमारी भी तो अनिल के साथ लव मैरिज हुई है। पापा! प्यार अन्धा होता है। अच्छे-बुरे की पहचान नहीं होती उसे। कब किस रास्ते मुड़ जाए, कुछ खबर नहीं रहती उसे। मगर कभी कहाँ कहा उसने ऐसा। श्रीवास्तव अंकल भी हमेशा पापा की तरफ देखकर निगाहें फेर लेते। घर आते भी तो शोभा से ही बातें कर चले जाते। न हमारी तरफ देखते, न हमसे कुछ पूछते कि आशा बेटी, तुम्हारी पढ़ाई पूरी हुई की नहीं? सिन्हा साहब लगता है कुछ बीमार से हैं। क्यों सिन्हा साहब? आप भी परेशान होते रहते हैं। अरे हमारा जमाना नहीं रहा अब जब लड़का-लड़की मिलें भी नहीं और रिश्ते की बात चला दें माता-पिता। आज के बच्चे अलग तरह के विचार रखते हैं सिन्हा साहब। मिंकी को सुधीर पसन्द ही नहीं आया तो इसमें उसका क्या दोष? सुधीर तो आज भी मिंकी की बातें करता न थकता है फिर आप और हम नाराज भी हों तो क्यों? कल को सुधीर भी किसी को चुन लेगा जिसके साथ वो लाईफ पार्टनर बन सके और क्या हमारी आशा बेटी कँवारी बैठी रहेगी सारी उमर। उसे भी कोई सच्चा प्रेमी नहीं मिलेगा क्या ? क्या वो अनिल और

शोभा की तरह विवाह बन्धन में बँधना नहीं चाहेंगे? अरे सिन्हा साहब, हम बुजुर्ग लोग तो एक सूखी हुई डाली मात्र रह गये हैं, पत्ते तो वही लोग हैं। मगर ऐसा एक बार भी नहीं कहा उन्होंने। माँ भी जब शोभा से कहती कि बहू! तुम माँ बनने वाली हो। कुछ तो अपनी सेहत का ख्याल रखा करो। सारा दिन सहेलियों के साथ घूमती रहती हो। तब वो तपाक से कह देती माँजी, अपना बच्चा कैसे सम्हाला जाता है इसकी समझ है मुझे और मैं चुपचाप माँ की तरफ देखती रह जाती। माँ बेचारी हमेशा कुछ-न-कुछ नसीहत ही देती रहती लोगों को। पर उनकी सुने कौन। विजय तो अब नशे में चुर घर आने लगा था। सिगरेट का धुआँ तो हमेशा उसके मुँह से लगा ही रहता था। पापा सब देखते रहते पर कहते कुछ भी नहीं। क्या कहते वो बेचारे कहते-कहते तो थक गये थे। एक दिन विजय को पुलिस पकड़कर ले गयी घर से। उसने किसी सेठ की बेटी की इज्जत के साथ खिलवाड़ किया था। बीच सड़क पर कपड़े फाड़ दिये थे उसके। पूछने पर जवाब ये मिला कि उससे उसकी पहले से ही जान-पहचान थी, ताल्लुकात पहले उसी ने बढ़ाये थे उससे । पहले उसे अपने बाप की हवेली में मिलने को बुलाया। फिर बीच सड़क पर जाकर अपने कपड़े फाड़ डाले उसने क्योंकि उसके संबंध न जाने कितने मर्दों से थे और वो माँ बनने वाली थी और कहती फिर रही थी कि ये बच्चा इसी विजय का है। इसने बहला-फुसला कर मेरी इज्जत नीलाम की है। पुलिस हिरासत में पड़े-पड़े लगातार विजय के कानों में उसकी आवाज जा रही थी और वो बाहर आने का इन्तजार कर रहा था जब बाहर निकला तो चीखता हुआ उसके घर गया। राधिका! मैं देखता हूँ कि आज तुम्हारी इज्जत नीलाम होने से कौन रोकता है। ऐसा कह कुछ गुण्डों को साथ लेकर घुस गया उसके घर में और जबरदस्ती उसे पकड़कर बाहर लाया और बीच सड़क पर सबने उसकी इज्जत के साथ खेला और जिन्दा जला दिया उसे। विजय को उम्रकैद की सजा हुई जो पापा की नजरों में कम ही थी। पापा की इच्छा थी उसे सजाये मौत मिले। इसी बीच एक रात मिंकी का फोन आया। फोन शोभा ने उठाया और अनिल को दिया। अनिल ने कुछ पूछने से पहले फोन पापा की तरफ बढ़ा देना चाहा। तब मैंने बीच में पड़ते हुए कहा ये तुमलोग कैसी बातें कर रहे हो अनिल? कम-से-कम उसकी बातें तो सुन लो। वो कहना क्या चाहती है? कहाँ है, कैसी है? तब उसने कहा दीदी, मिंकी और विजय इस घर के लिए कलंक हैं। ऐसा कह फोन रख दिया और दूसरे ही दिन पता चला कि सड़क पर एक लाश पड़ी है। पापा ने तो देखने जाने से भी इनकार कर दिया। मैंने अनिल से कहा कि अनिल लोग जा रहे हैं। चलो, हम भी चलें। और जैसे ही हम वहाँ पहुँचे, मिंकी को जमीन पे पड़ा पाया।

बाल का आधा भाग नोचा हुआ था। कपड़े भी जगह-जगह से चिथड़े हो चले थे। अजीत का कोई पता नहीं था। मेरे तो आँसू रूक नहीं पा रहे थे। पर अनिल ने जाने कैसे नफरत से अपना चेहरा घूमा लिया था। मैंने लोगों की भीड़ को चीरते हुए जाना चाहा पर अनिल ने मेरा हाथ पकड़ लिया। बोला, आशा दीदी! लोगों के सामने जाकर क्या कहोगी तुम कि ये हमारी बहन मिंकी है। वही मिंकी जो कल इसी सड़क पर दौड़ा करती थी । नहीं दीदी, इसे लावारिस ही बना रहने दो। पापा की क्या इज्जत रह जायेगी समाज में? लोग क्या कहेंगे कि इतने बड़े करोबार के मालिक की बेटी सड़क पे यूँ अधनंगी पड़ी है। जब ये जिन्दा थी, तब तो हमारी थी नहीं। अब तो ये मर चुकी। इसकी लाश को कफन पहनाकर क्या करेंगे हम? सच कहूँ तो इस वक्त मुझे मिंकी से अधिक अनिल पर लज्जा आ रही थी। अगर ऐसी हालत में शोभा की बहन जमीन पर लावारिस बनी पड़ी रहती तो क्या वो ऐसा कह पाता, कभी नहीं। मगर क्या करती? मैं वापस घर आ गयी। पापा ने पूछा, किसकी लाश थी आशा बेटी? क्या उसकी पहचान हो सकी? मैंने अपने आँसूओं और सिसकियों को रोकते हुए कहा, पता नहीं पापा किसकी थी? हमने नहीं पहचाना। देखने जाना ही बेकार था। मैंने तुमलोगों से कितनी बार कहा कि जो लोग सड़क पे पड़े हैं वो हमारे अपने नहीं हो सकते। कभी नहीं। फिर कुछ दिनों के बाद जेल से खबर आयी कि विजय ने जेल में ही आत्महत्या कर ली। पापा खामोश ही बने रहे। माँ लगातार पूछती रही। मिंकी का दुबारा फोन आया था आशा बेटी! मैं माँ को फकत देखती रह गयी थी। क्या कहती की मिंकी की आवाज अब कभी नहीं आ सकेगी माँ क्योंकि वो तो कब्र में दफन होने को जाने कितने अर्से पहले ही चली गयी थी। शोभा ने इन दिनों एक बेटी को जन्म दिया और अपने पिता के साथ मायके चली गयी। माँ ने लगातार श्रीवास्तव अंकल से कहा कि समधी साहब! पोती का नामकरण यहाँ करना चाहती हूँ मैं। उसे वापस भेज दीजिए। मगर वो लोग तो वापस न आ सके, अनिल ही उनके पास रहने चला गया। पापा लम्बी बीमारी के शिकार होते चले गये। उनके कान आज भी मिंकी की आवाज सुनने को तरस रहे थे। माँ की शिकायतें भी अब सबके प्रति खत्म हो चुकी थी। आज खाना परोसा नहीं जाता था। परोसने से पहले हजार बार उन लोगों को याद किया जाता था जो पत्ता-पत्ता, डाली-डाली की तरह बिखर गये थे।

सर्दी का मौसम

खोली के सारे लोग अलाव जलाये बैठे थे और बातें कर रहे थे कि सरकार कम्बल बाँटने वाली है। बाबा, फिक्र मत कर। हमारे पास भी इस सर्दी से बचने को एक-एक कम्बल हो जायेंगे। तो बाबा ने कहा, हाँ रे सूर्या! सरकार के इस कम्बल के इन्तजार में ही तो हमारी साँसे अटकी है। तो सूर्या ने कहा, कैसी बातें करते हो बाबा? तेरे पास तेरा जवान बेटा है जो शहर में कमाता है। तू क्यों इन सरकारी कम्बलों के इन्तजार में बैठा है? तो बाबा बोले, मेरा मजाक उड़ा रहा है रे सूर्या तू! क्या तू नहीं जानता कि मेरा बेटा शहर में ही कहीं मशीन में दबकर मर गया है। वो क्या मेरे लिए कम्बल लायेगा, वो तो इस दुनिया में ही नही है। तो एक बूढ़े ने आँसू पोछते हुए कहा, अरे सूर्या तू कितनों को तड़पायेगा रे! तो सूर्या शरमा गया और बोला, ठंड के इस मौसम में आँखें बन्द करने से तो अच्छा है कि आपस में बातें करके रात बीता दूँ। हमारे पास है ही क्या? ये एक खोली, खोली में खाली बर्तन, बर्तन में नमक के साथ खाने को सूखी रोटी। तो बाबा बोले, हम इन्हीं बातों से कब तक दिल बहलाते रहेंगे बेटा। हम बूढ़े लोगों के बीच तू बैठा है तो दर्द कुछ कम भी हो जाता है। नहीं तो कौन है हम बूढ़ों के पास जो हमें तंग भी करे। सूर्या रो पड़ा। बाबा, मैं तुम्हें तंग करता हूँ और तुम खश होते हो। बाबा, कैसी है ये बूढ़ापे की जिन्दगी? मेरे हाथ तो सलामत हैं। ये ठिठुरती ठंड में कम्बल थाम भी सकते हैं। मगर तुमसब के हाथों में तो कम्बल सम्हलेगा भी नहीं क्योंकि पहले ही सर्दी ने तुम्हारे हाथ-पाँव बेकार कर दिये हैं। पहले तुम पैरों पे चलने के काबिल न रह सके। फिर तुम्हारे हाथों से अलाव भी न जल सका। तब बाबा बोले, जब तेरी चाची थी न बेटा तो हमारे लिए गर्म पानी का लोटा रख दिया करती थी पास में। जब हमारे हाथ काँपने लगते थे तब मैं उस गर्म लोटे को पकड़ लेता था। मगर हमारे बूढ़े हाथों के छूते ही वो लोटा भी इतनी जल्दी ठंडा हो जाता था कि पता भी न चलता था। तो सूर्या ने कहा, क्या चाची दोबारा लोटा गर्म नहीं करती थी बाबा? बाबा ने कहा, करती थी बेटा। वो बराबर मेरे पास बैठा करती थी। मगर जब थक जाती थी तो जमीन पर सो जाती थी। आज उसकी कमी बहुत महसूस होती है। मगर अच्छा है आज वो नहीं है क्योंकि आज भी बेचारी तेरी बूढ़ी चाची हमारे लिए इस सर्दी के मौसम में जमीन पे बैठी रह जाती। तो सूर्या ने कहा, क्यों बाबा, क्या आज तुम नहीं बैठे हो जमीन पर, सो वो भी रह जाती। तो बाबा ने कहा, नहीं बेटा! वो बात नहीं। वो भूखों सोती थी हर रात क्योंकि खाने का सामान वो बचाकर हमारे लिए रखती थी और सपने देखती थी कि जब हमारा बेटा शहर से पैसे लेकर लौटेगा, हम सबसे पहले उस पैसे से अपने लिए दो

खाने का बहुत सारा सामान खरीदेंगे। तो सूर्या ने पूछा बाकी के पैसे से वो क्या करती बाबा? तो बाबा बोले, बाकी के पैसे से वो बहू के लिए चुनरी खरीदती लाल रंग की। मगर जब खबर मिली कि बेटा मशीन में ही दब गया तो जीना भूल गयी वो। आज अगर वो हमारे हाथ-पाँव को इतना ठंडा देखती तो अपनी हथेली से रगड़कर गर्म कर देती क्योंकि तुम्हारी चाची अपने बेटे से भी ज्यादा मुझसे प्रेम करती थी। हम दोनों आधी रात के वक्त कहवा बनाकर पीते थे जब हमारे पास पैसे थे, जब बेटा परदेश गया था। तो सभी बूढ़े लोगों की आँखें रो पड़ी कि इतने भी बुरे होते हैं बुढ़ापे के ये दिन। इतने बुरे होते हैं सर्दी के ये मौसम। तो फिर आते ही क्यों हैं?

बातों-बातों में रात बीत गयी। सूर्या वहीं जमीन पर सोया हुआ था। सुबह सूरज की हल्की सी रोशनी दिखी। सब चीख पड़े। धूप निकल आयी, धूप निकल आयी। मगर कोई ये न सोच सका कि सूर्या क्यों नहीं बोल रहा। बाबा भी भूल गये अपने उसे बेटे को सुबह की चमकीली धूप के सामने। मगर जब धूप तेज हुई, सूर्या की लाश पे नजर पड़ी बाबा की जो ठंडी हो चुकी थी। उन्होंने उसे झकझोरा देखो सूर्या! धूप निकल आयी। तेरे बाबा सर्दी से बच गये। मगर वो नहीं जगा। बाबा ने रोते हुए कहा, सर्दी की इस रात ने हमसे हमारा एक और बेटा छीन लिया जो हमारा दिल बहलाया करता था।

तो क्यों निकली ये चमकीली धूप आज 13 वें दिन? सर्दी की सारी रातें यूँ ही बीत गयी हमारी सोते हुए। क्यों ऐसी रात दुबारा आयी जब हमारी जिन्दगी के दिन और बढ़ गये। क्यों सर्दी की रात हमसे हर बार हमारा बेटा ही छिनती रही? हमें न ले जा सकी। क्यों हमारे घरों में चिराग के जलने की जगह खाली रह गयी? क्यों सरकारी कम्बलों के इन्तजार में हम रातभर बैठे रह गये? अगर आज सरकार हमें लोभ न देती तो हम इतने निर्मोही न बन गये होते। हमें पहले हमारी बेकारी ने मारा, फिर हमारी गरीबी ने, फिर सरकार की झूठी तसल्ली के वादों ने।

तभी रेडियो से आवाज आने लगी। सर्दी के इस मौसम में जाने कितने लोग घर से बेघर हो गये हैं। सरकार उन्हें एक-एक खोली, एक-एक सफेदा और एक-एक कम्बल अगले सर्दी के मौसम में देने का वादा करती है। तो उन्होंने रेडियो पटक दिया और कहा, नहीं सुननी हमें तुम्हारी सरकारी जुबान। अब हमें तुम्हारी दी हुई खोली या कम्बल नहीं चाहिए, मौत चाहिए। मौत मिलनेवाली दुकान चाहिए ताकि हम कल फिर किसी बेटे को ठंड से मरते हुए न देख सकें।

ये कहानी उन औरतों की है जो जीवन से कुछ उम्मीद करती हैं और रास्ता भटक जाती हैं। मैं लता, आशा और उषा तीन सखियों का किस्सा लेकर बैठी हूँ आज जो कब खत्म होगी, मालूम नहीं मुझे। खत्म भी होगी या आगे बढ़ती ही जायेगी?

लता एक साधारण परिवार की लड़की है। आशा अमीर बाप की बेटी और उषा एक निर्धन और विपन्न परिवार में पली, बढ़ी जवान हुई है। लता का सपना एक सुन्दर राजकुमार का है। आशा बिन्दास है। उसे अपनी पसन्द का जीवन साथी चाहिए। उषा की सोच सबसे कम है। वो चाहती है कि उसका रिश्ता बस एक अच्छे घराने में हो जाये। तीनों की सोच अलग-अलग है मगर रास्ता एक, सपनों के साजन का।

लता जब पहली बार आशा से मिली थी तो खुद ही लजा गयी थी मगर जब उसकी बातों के अन्दाज को समझा तो पहली बार जान पायी कि बिन्दास लड़कियों के सीने में भी एक दिल होता है। लता, आशा जब उषा से मिली तो पहले तो उषा उनसे निगाहें मिलाने से कतराती रही मगर फिर हाथ में हाथ डाल दिया दोस्ती का। तीनों ही हमउम्र हैं। एक या दो साल आगे या पीछे के फासलों को गिना नहीं जाता हमारी बिरादरी में। हाँ, ये बात और है कि गरीबों के बच्चे की उम्र ज्यादा आँकी जाती है। मगर हमने इन तीनों को हमउम्र बताया है ताकि किस्सा समान धारा में चल सके। हाँ तो लता की सोच ने उसे अपने जीवन में इतना परिपक्व बना दिया कि वो अपने से बहुत बड़े लड़के से प्यार कर बैठी। मिलने-मिलाने का प्रोग्राम बना। किसी ने उन्हें नहीं रोका मिलने से। वो जीवन से समझ हासिल करना चाहते थे कुछ। लता की मुलाकातों का सिलसिला बढ़ता चला गया उससे और एक दिन लता ने आशा और उषा से कहा कि अनिल जी से मैं शादी करने जा रही हूँ। वो हैरान तो हुई पहले मगर ऐसे रास्ते की मन्जिल तो एक ही होती है शादी सो उन्होंने नहीं रोका। वो दो बच्चों के बाप थे। उनकी पत्नी मर चुकी थी। लता शादी के बाद उनके ही घर रहने चली गयी। कुछ दिन तक तो साथ मजे में कटे मगर धीर-धीरे उम्र के फासले ने दूरी बनाना शुरू कर दिया दोनों के बीच। वे उम्रदराज तो थे ही। अब लता अनिल जी के साथ रहना नहीं चाहती थी और उनके बच्चे लता से बहुत प्यार करने लगे थे। जब उन्हें पता चला कि उनकी नई माँ घर छोड़कर जा रही है वो उससे लिपट गये। मत जाओ माँ। लता स्नेह बन्धन में एक बार फिर उलझ गयी और अनिल जी जबरन ढो रहे इस जिन्दगी से लता को देख कुढ़ने लगे। धीरे-धीरे उन्होंने पीना शुरू कर दिया। पहले तो शाम को सात बजे घर लौटते थे। अब रात को दस-ग्यारह बजे लौटने लगे। बच्चे उनके इन्तजार में खाना खाकर सो जाते। लता को जागना पड़ता आधी रात तक और जबरदस्ती के रिश्ते से उसका भी जी भर सा गया। जो अनिल रस्तोगी उसे इतने पसन्द थे वही अब उसे खलने लगे थे। एक दिन उसने कह दिया उनसे कि अनिल मैं अब आपके साथ रहना नहीं चाहती। रही बात बच्चों की तो उनकी जिम्मेदारी आप ले लीजिए क्योंकि वो आपके बच्चे हैं, मेरे नहीं।

इधर आशा की निगाह सागर से लड़ चुकी थी जो देखने में गोरा-चिट्टा और खूबसूरत था। उसी की तरह मस्तमौला भी। आशा ने एक ही नजर में उसकी दोस्ती कबूल कर ली। उसको दिल दे दिया। वो दोनों रोजाना मिलते रहे। कभी किट्टी पार्टी में जाती तो कभी

सागर के इन्तजार में सड़क पे खड़ी रहती। किट्टी पार्टी उसे बहुत पसन्द थी। वो वहाँ हमेशा कुछ प्रोग्राम बनाने चली जाती थी। वहाँ से वो सज-संवरकर निकलती और खुद से बातें करती दौड़कर सागर के साये से लिपट जाती थी। उनके बीच फासले इतने खत्म हो गये कि वो अपने दरम्याँ शीशे की एक दीवार भी खड़ी न रख सके और फिर एक दिन पता चला कि आशा के पेट में बच्चा है। बिन्दास तो वो थी ही जाकर डॉक्टर के पास ऍवौर्शन करवा लिया और सागर को छोड़ राघव से दिल लगा दिया। राघव से जब दिल भर गया, सुहैल का हाथ पकड़ लिया और सुहैल भी जब छूट गया तो अपने आप से शरमाती पहली बार आईने के सामने तन्हा खड़ी होकर उन डबडबायी आँखों की तरफ देखा और शर्म से निगाहें फेर ली उसने और अन्त में एक साधारण से लड़के से ब्याह कर लिया क्योंकि तितली बन उड़ते-उड़ते और कई लोगों से रिश्ते बनाते-बनाते उसकी साँसे ढल चुकी थी। और जब उस लड़के के साथ उसके घर गयी कुछ दिन तक तो जीना आसान रहा। उसका मगर धीरे-धीरे जीवन से नफरत होने लगी उसे और उसने एक दिन जहर खा लिया। जब उसको हॉस्पिटल ले जाया गया कहा गया कि उसकी दिमागी हालत नाजुक हो चुकी है जो कभी भी बिगड़ सकती है। उसके पति सुनील ने उसके लिए कई ऐसी चीजों का बन्दोबस्त किया जो उसे सही तरह से जीना सीखा सके। मगर उसे तो हर एक चेहरे से नफरत हो चुकी थी। भाग गयी उसके घर को छोड़कर और सुनील रह गया अपने आप से बातें करता। धीरे-धीरे उसे भी पीने की लत लग गयी। मगर आशा की तलाश उसने नहीं छोड़ी और एक दिन नशे में उसका ऍक्सिडैंट हो गया। वो वहीं मर गया। आशा बेखबर भागती रही, भागती रही। फिर जिन्दगी के एक मोड़ पे उषा से मुलाकात हुई उसकी। वो एक भीड़ भरे रास्ते के बीच खड़ी कोई खेल-तमाशा देख रही थी। जब उसकी निगाह उषा पे पड़ी वो उससे लिपट गयी और पूछा कि कहाँ थी इतने सालों तक और फिर बेहोश होकर गिर पड़ी। जब उसकी आँख खुली तो उसने खुद को बिस्तर पे पाया तो चीख पड़ी मुझे नहीं चाहिए बिस्तर, तुमसब लुटेरे हो। मुझे लूट लोगे तुम। तब उषा ने उसकी मनोदशा को पढ़ा और सबसे पहले उसके लिए कॉफी बनाकर लायी और आशा से उसकी बीती जिन्दगी के बारे में पूछा तो उसने कहा कि हमारी मन्जिल जीवन को तलाशना था न उषा। हमने वो मन्जिल तलाश भी ली मगर अपनी अय्यासी में मैं बर्बाद हो गयी। उषा कुछ नहीं बोली। वो बस उसे देखती रही। आशा ने पूछा तुम्हारी जिन्दगी किस मोड़ पे मुड़ी उषा तो उसने कहा कि आशा पिताजी की मर्जी से मैं शादी करना चाहती थी एक साधारण और सम्पन्न घर में मगर जब मेरा ब्याह हुआ मेरे पति को मेरी आदत पसन्द न आ सकी। मैं सादे लिबास में रहना चाहती थी। वो मुझे ताम-झाम में रखना चाहते थे। सो मैं उनसे झगड़कर घर आ गयी। पिताजी को गहरा सदमा लगा। वो गरीब तो थे ही, बीमार पड़े। इलाज सही न हो सका और गुजर गये। मेरे पति ने मेरी सारी जायदाद मेरी माँ से लिखवा ली और इस वजह से गम में एक दिन माँ भी मर गयी। मसलन हमारा घर उजड़ गया। हमने एक बार फिर जिन्दगी को पढ़ना चाहा और निकल गयी घर से। ऐसा मोड़ तो पहली बार आया था ना आशा तो कुछ तो परेशानी उठानी ही थी। अच्छा, अब लता कहाँ है? पता नहीं। तभी सामने का दरवाजा खुला और लता अन्दर आ गयी। एक आदमी और दो बच्चे के

साथ। पूछा उषा ने कि ये सब कौन हैं? तो वो बोली कि मेरे पति और बच्चे। मगर तुम तो! हाँ वो सच है मगर अब हममें सुलह हो गयी है। उषा इन्होंने पीना और लड़ना झगड़ना सब छोड़ दिया है। तो फिर अब क्या इरादा है तुम्हारा? हम एक बार जीवन को पढ़ने निकले थे। हमने अपने-अपने ढग से पढ़ा इसे। अच्छा अब दुबारा मिलना तो बताना कि तुम्हारे बच्चों की शादी कब है?

तब लता ने आशा और उषा की तरफ देखकर कहा कि चले तो थे हम साथ-साथ, मगर जिन्दगी से कुछ उम्मीद करती निगाहों ने आज रास्ते बदल लिए हैं। मैं खुश हूँ और उसके जाने के बाद वो दोनों सोचने लगी कि ये कौन सा मोड़ है जिन्दगी का। वो तो आज जाना हमने कि बाग में कोयल क्यों गाती है वसन्ती बयार में? वेदना में, पीड़ा में या दर्द के आलम में।

विकास कहाँ है चाची? होगा अपने कमरे में, जाके देख लो। और वो बड़ी भाभी, वो भी होगी अपने कमरे में और वो बड़े बाबूजी, वो कहाँ है चाची? बैठे होंगे अपने कमरे में अखबार लिये। तुम कहाँ जा रही हो? देख नहीं रही बिटिया, मेरे हाथ में पूजा का थाल है। मैं मन्दिर जा रही हूँ। तो ठीक है जाओ। पर एक बात पूछनी थी आपसे चाची। वो क्या रे? जल्दी बता दे, देर हो रही है। आरती भी शुरू हो गयी होगी अब तो। तो ठीक है चाची, जाओ। मैं बड़े बाबूजी से कह दूँगी। ये तुने ठीक कहा बिटिया। चलो अच्छा ही हुआ, अब तो मेरी जान छूटी। फँसे तो विकास के बाबूजी ही न और चली गयी। फिर जब वो बाबूजी के पास गयी तो पूछा उन्होंने कि विकास से मिलने आयी है नेहा? नहीं बाबूजी, आपसे ही कुछ बात करनी थी। चाची से कहना चाहा तो यह कहकर चली गयी कि जाके कह दे विकास के बाबूजी से। वो ही तो बैठे हैं चुपचार घर में। मुझे तो देर हो रही है। मन्दिर जाना है। अरे बिटिया, जाके थोड़ी देर बैठो न बड़ी भाभी के पास। मुझे थोड़ा और पढ़ना बाकी रह गया है अखबार। जब पढ़ लूँगा तो बुला लूँगा। क्यों ठीक कहा न मैंने नेहा? जी बाबूजी, आपने बिल्कुल ठीक कहा। मैं चलती हूँ बड़ी भाभी के पास। पर जब अखबार पूरी पढ़ लेना न तो मुझे जरूर बुला लेना हाँ। बोलो, बुलाओगे न? हाँ बिटिया, कहा न बुलाऊँगा। अब जा। वो देख तेरी बड़ी भाभी इधर ही आ रही है। ऐसा कह बाबूजी अखबर पढ़ने लगे। फिर नेहा की तरफ देखते हुए भाभी ने कहा अरे तू यहाँ क्या कर रही है बाबूजी के पास? बैठा तो है विकास अपने कमरे में। जाके बैठ वहीं पर। मैं तेरे भैया के लिए जरा नाश्ता बना लूँ। क्यों भाभी, मैं इसमें आपकी मदद कर दूँ? .कहो न भाभी। अरे पागल तू कभी-कभार तो आती है हमारे घर में। फिर मैं तुझसे काम करवाने लगी भला। तेरी उम्र नहीं अभी ये सब करने की। खेलने की उम्र है, जाके खेल विकास के साथ। पर भाभी मैं तो इतनी बड़ी हो गयी। अब तो आपके कांधे तक आ जाती हूँ मैं। हाँ नेहा, आ जाती है। पर हमारी नजर में तू आज भी बच्ची ही है। बचपन से देखा है मैंने तुम्हें खेलते हुए और तुम्हें खेलते देखना ही हमें अच्छा लगता है। बस अब जा विकास के कमरे में। वो भी बैठा ही होगा। कोई मैगजीन बगैरह ही पढ़ लेना, नहीं तो टीवी ही देखने बैठ जाना। आजकल तो बड़ी अच्छी फिल्में आने लगी है दूरदर्शन पर। तबतक मेरा काम भी पूरा हो जाएगा तो मैं भी आ जाऊँगी तुम्हारे साथ बैठने। फिर हम बातें भी करेंगे और फिल्म भी देखेंगे। क्यों नेहा, ठीक कहा न मैंने। हाँ भाभी, बिल्कुल ठीक कहा आपने। पर भाभी तुम सच में भैया को नाश्ता देकर आओगी न? कहा न बाबा, आऊँगी और कितनी बार कहूँगी तो मानेगी तू। सच नेहा, तू जैसे-जैसे बड़ी होती जा रही है बड़ी जिद्दी होती जा रही है रे। तेरे भैया भी यही कह रहे थे रात। क्या कह रहे थे भाभी? कह रहे थे कि नेहा में अब वो पहले जैसा बचपना नहीं रहा। अब तो विकास के साथ भी बातें करते सुनता हूँ तो हँसी की आवाज नहीं आती। क्यों निकिता, तुम जानती हो इस बात का राज? क्या तुम्हें पता है? और क्या कहते हैं वो भाभी? कहते हैं कि अब हमारी नेहा सुन्दर और सुशील भी हो गयी है। काकाजी से कहकर किसी अच्छे घर में रिश्ता तय करवा देता हूँ उसका। घर मेरा देखा हुआ है। और क्या कहते है वो भाभी? अरे, वो देखो तुम्हारे भैया बुला रहे हैं मुझे। नाश्ता भी अभी तक पूरा नहीं बनाया मैंने। जाऊँगी तो

गुस्सा ही होंगे। अच्छा अब जाओ। मैं थोड़ी देर में उन्हें बाहर भेजकर तुम्हारे पास आती हूँ। बंटी और सोमी भी तुम्हें कब से ढूँढ रहे थे। कह रहे थे, माँ नेहा बुआ अब हमारे साथ क्यों नहीं खेलती? ऐसा कहते हैं वो भाभी। पर क्या करें? अब हमें उनके साथ खेलना अच्छा नहीं लगता। वो बच्चे हैं न भाभी। कभी उछलकूद करने लग जाते हैं तो कभी पीठ पर चढ़कर बन्दरिया-बन्दरिया चिढ़ाने लग जाते हैं हमें। जो अब अच्छा नहीं लगता मुझे। क्यों? पहले तू उनके साथ यही खेल नहीं खेला करती थी क्या? खेला करती थी भाभी, पर तब की बात और थी जब खेलकूद के सिवा कुछ और सुझता ही न था हमें। पर अब तो सब बेगाने बन गये हैं हमारे लिए। क्यों रे? क्यों इतना अच्छा चेहरा उदास कर लिया तुने। क्यों? माँ ने कुछ कहा क्या? नहीं भाभी, माँ ने कुछ नहीं कहा। तो क्या बाबूजी ने ही कुछ बोल दिया जो ऐसे मुँह बनाये है तू। नहीं भाभी, उन्होंने भी कुछ नहीं कहा। तो क्या विकास से तेरा झगड़ा हो गया? नहीं भाभी, वो भी नहीं हुआ तो बोल न क्या हुआ? क्यों ऐसा हाल बना रखा है तुमने अपना? ऐ नेहा देख, एक बार अपने मन की बात कह दे बड़ी भाभी से। जी हल्का हो जायेगा तेरा। छोटे बच्चे किसी भी बात को दिल से लगा लिया करते हैं न रे तो उबर नहीं पाते वो और तेरे पास तो अभी पूरी जिन्दगी पड़ी है। हम हैं न गम उठानेवाले। अच्छा तू जा विकास के कमरे में। वहीं आती हूँ। तभी बड़े भैया आ गये। अरे नेहा, तुम! तुम कब आयी भई? हमें आये तो बड़ी देर हो गयी भैया। पर हमें अबतक दिखी क्यों नहीं? सब से मिल ही तो रही थी भैया। बस इसी में देर हो गयी। कहाँ जा रहे हैं आप? जा रहा हूँ एक जगह। पर हाँ, शाम को तेरे घर जरूर आऊँगा। काकाजी से भी बड़े दिनों से मुलाकात नहीं हुई हमारी और काकी अम्मा तो हम से जाने कब से नाराज होंगी। क्यों रे ठीक कहा न? हाँ भैया, माँ कब से कह रही थी हमसे कि क्यों रे नेहा? तू अपने बड़े भैया को साथ आने को क्यों नहीं कहती तभी मैंने भी कह दिया था भैया, आज जाके जरूर कह दूँगी माँ। अच्छा तो जाता हूँ। शाम को तुम्हारे घर जरूर आऊँगा। काकाजी और काकाजी को भी अच्छी बात बतानी है हमें। ठीक है भैया कह दूँगी। अच्छा तो जाओ विकास के कमरे में जाके कैरम खेलो। तबतक तेरी भाभी भी अपना काम खत्म कर आती ही होगी। जी भैया, जाती हूँ। पर हाँ, शाम को जब घर आना तो सबसे पहले हमसे मिलने हमारे कमरे में जरूर आना। क्यों रे? तू कहेगी तो आऊँगा मैं तेरे पास। अपनी लाडली बहन को नहीं बतानी हमें अपने मन की बात। अच्छा, तो तू ये उदास चेहरा दिखाकर हमें जाने को मत कह। जरा हँस दे। ठीक है भैया। तो फिर हँस न। ये हुई न बात। अब लगा जैसे छोटी सी, प्यारी सी बहन से विदा लेकर जा रहा हूँ। तभी बंटी और सोमी आ गये। अरे नेहा बुआ, तुम कहाँ जा रही थी? हम कब से तुम्हें खोज रहे थे? क्यों खोज रहे थे भला? खेलने के लिए और किसलिए? क्यों तेरे पड़ोस में बच्चे नहीं हैं क्या तेरे साथ खेलनेवाले? जो तू मेरे साथ खेलेगा। अरे पागल, अब तो मैं बड़ी हो गयी। अब मैं नहीं खेल सकती तुमलोगों के साथ। क्यों बड़ी हो गयी नेहा बुआ, तुम परसों तक तो छोटी थी। हमारे साथ ही कैसे खेला करती थी। हम तो उतने से ही रह गये आजतक। पर तुम एकाएक कैसे बड़ी हो गयी? कुछ हमें भी बताओ न। हमें भी तुम्हारी तरह बड़ा होना है। तुम नहीं खेलोगी तो हम किसके साथ खेलेंगे। सब बच्चे तो

यही कहते हैं हमसे रे बंटी। पर अब हमें तुम्हारे साथ खेलना अच्छा नहीं लगता। फिर कौन खेलेगा हमारे साथ बुआ? हमें तो तुम्हारा इन्तजार था। पर तुम एकाएक बड़ी हो गयी। अब हमें भी जल्दी से वो दवाई पिला दो जिससे कि छोटे लोग बड़े हो जाया करते हैं। वो तो तेरे पास होगी न नेहा बुआ? सोमी ने बड़ी मासूमियत से कहा तो नेहा ने अपनी आँखें पोछ ली और कहा नहीं रे! वो भी नहीं है अब हमारे पास। क्यों? खत्म हो गये सारे-के-के सारे? हाँ सोमी, सभी खत्म हो गये रे। ऐसा कह विकास के कमरे में आखिरी बार गयी और कहा, विकास! कहाँ जा रहे हो तुम तैयार होकर? मुझे तुमसे एक जरूरी बात कहनी थी। कौन सी बात नेहा? लो भाभी बुला रही है, तुम उनसे ही कर लो अपनी बात। मुझे आज कहीं जाना है। कहाँ? मैं ये तुम्हें बताता रहूँ। पर क्यों भला? ऐसे ही बता देते एक दोस्त के नाते। अरे नेहा, तुम भी न हमेशा बहकी-बहकी बातें किया करती हो। तुम लड़कियों को तो एक अपने मन की बात बताने वाला कोई नहीं मिलता। क्यों नहीं सुनोगे न विकास तुम? कहा न, अभी तो बिल्कुल नहीं। पर हाँ, भाभी से जरूर बता देना। शाम को आकर मैं उनसे जरूर पूछ लूँगा। अच्छा अब खुश। तो चलूँ। हाँ। और एक बात बता दूँ तुम्हें नेहा। क्या विकास? नेहा, मैंने तुम्हारे लिए एक नई दोस्त ढूँढ ली है। वो तुम्हारे साथ खेलेगी भी और तुम्हें नाश्ता बनाना भी सिखाएगी। तुम्हें तो कुछ करना आता ही नहीं। पर उसे तो सब आता है। क्यों सीखेगी न? हाँ विकास। अगर तुम्हारे घर आयी तो जरूर सीखूँगी। तो फिर ठीक है। मैं चलता हूँ। विकास! एक बार मेरे मन की बात सुन लेते तो क्या जाता तेरा? अरे कहा न, शाम को भाभी से पूछ लूँगा। ऐसा कह वो चला गया। फिर नेहा भी रोते हुए घर वापस आने लगी। तभी बच्चों ने आकर पकड़ लिया उसे। क्यों रो रही हो नेहा बुआ? विकास काका ने तुमसे कुछ कहा क्या? अम्मा ने तुम्हें मारा क्या? नहीं बाबा, हमें किसी ने नहीं मारा रे। सब हमें बहुत मान देते हैं। देख तो मेरे रोने से तू भी कितना रो रहा है। क्यों रो रहा है न? हाँ बुआ? पर आओ बैठो न हमारे साथ? हम कभी खेलने की बात नहीं करेंगे तुमसे। अब तो खुश हो न तुम। हाँ बाबा! बहुत खुश हूँ। तो फिर आओगी न? हाँ अगर तुम बुलाओगे तो जरूर आऊँगी। तो फिर ठीक है। हम बुला लेंगे तुम्हें। ऐसा कह उससे हाथ छुड़ा लिया बच्चों ने और नेहा भागकर अपने कमरे में आ गयी। खूब रोयी और अपने कमरे से अपने बचपन की सारी तस्वीरें, सारे खिलौने और सारी निशानियाँ ही उठाकर फेंक डाली और शाम को बड़े भैया के आने की राह देखने लगी। जब शाम हुई, दरवाजे पे घंटी बजी। बड़े भैया ने उसे आवाज देते हुए कहा नेहा! अरे कहाँ हो तुम? देखो तो मैं तुम्हारे लिए क्या खुशी लाया हूँ। नेहा अपने कमरे में पड़ी-पड़ी सब सुनती रही, कहा कुछ भी नहीं और वो उसके माँ-बाबूजी के पास रिश्ते की बात चलाकर चले गये। उन्हें वो रिश्ता बहुत पसन्द आया। आखिर वो बड़े भैया का खोजा हुआ रिश्ता था न।

पर जो रिश्ता नेहा ने बड़े भैया से, चाची से, बड़ी भाभी से, बाबूजी से और यहाँ तक की विकास से भी माँगना चाहा, उन्होंने नहीं दिया। फिर इतने रिश्ते किस काम के रह गये थे उसके लिए जिसकी कड़ी ही अलग थी। जिसका बन्धन ही नया था। जिसकी गाँठ ही कमजोर थी उसकी नजर में।

अमित! सोनिया आज कॉलेज नहीं आयेगी। पर क्यों? उसके मामा की शादी है। तो क्या शादी में वो हमें नहीं ले जायेगी? नहीं। पर हम अकेले क्या करेंगे? चलो अंकित, गौरव और प्रियंका को बुलाते हैं। मगर जाना कब है सुकन्या? आज ही शाम को। फिर चलो उसके घर चलते हैं। और अगर प्रिंसिपल ने देख लिया तो? तो क्या? मम्मी की बीमारी के बारे में बता देंगे। वो तो जानते ही हैं कि हमारी अनुपस्थिति में हमारी मम्मी बीमार पड़ जाती हैं। और सभी भागने लगे मगर सुकन्या को प्रिंसिपल साहब ने पकड़ लिया, कहाँ जा रही हो सुकन्या तुम? सर वो बारात में। सोनिया के मामा की शादी है। क्या? तो सोनिया भी आज कॉलेज नहीं आयी। नहीं सर, हमें छुट्टी दे दीजिए न ताकि हम घर जाकर जाने की तैयारी कर सकें। ऐसे कैसे जाने देंगे? पहले शादी का कार्ड तो दिखाओ। सर, वो तो सोनिया के पास ही रह गया। अच्छा तो तुम्हारी चांडाल चौकड़ी कहाँ रह गयी? सर वो सब बारात में शामिल हो गये होंगे। शायद कॉलेज से भागकर! हाँ सर। अच्छा सर! अब मैं जाऊँ? हाँ, जाओ। मगर वादा करो कि मिठाई का सबसे पहला डब्बा मेरे ही पास आना चाहिए। ठीक है सर! तो मैं जाऊँ? हाँ मगर! अब क्या सर? जाने से पहले तुम लोग अपनी-अपनी हाजिरी तो बनाते जाओ। सर! एक मेहरबानी और कर दीजिए। हमारी तरफ से आप हाजिरी बना दें। ठीक है सुकन्या, मगर पहले मिठाई का डब्बा मेरे ही पास आना चाहिए। अच्छ तो मैं जाऊँ? हाँ मगर, अब क्या सर? कुछ भी नहीं जाओ।

इधर अमित, अंकित, गौरव और प्रियंका उसका इन्तजार कर रहे थे। कहाँ रह गयी थी सुकन्या तुम? सुकन्या ने कहा, क्या बताऊँ यार! प्रिंसिपल ने रास्ता ही रोक लिया था। तो पीछा कैसे छुटा? बड़ी मुश्किल से। तो अब चलें। हाँ चलो। सभी सोनिया के घर गये। वहाँ ताला पड़ा था। सोनिया अपने मम्मी-पापा के साथ दो बजे ही निकल चुकी थी और ये चांडाल चौकड़ी निकले थे, रास्ते में धूम मचाते हुए। अब वे सोच में पड़ गये कि क्या करें जब सोनिया ही चली गयी तो जाना कहाँ हमें सुकन्या? हाँ अंकित! तुम ठीक कह रहे हो। तभी सड़क पर गाड़ी-मोटर का शोर सुनाई दिया उन्हें। वो पलटे और जाकर गाड़ी में बैठ गये। सुकन्या, बारात जा रही है। चलो चलते हैं इसी के साथ। मगर गौरव, ये सोनिया के मामा की बारात नहीं। ये तो किसी अजनबी की बारात है। तो क्या हुआ? हम तो जाने-पहचाने हैं प्रियंका। अच्छा चलो। मन्जिल जिधर ले चले। और धूम मचाते वो पाँचो सवार हो चल पड़े बारातवालों के साथ कि रास्ते में उन्हें किसी मन्दिर की सजावट दिखाई दी। उन्हें लगा कि यहाँ तो शादी हो रही होगी। चलो गाड़ी से उतरते हैं। हाँ अंकित चलो और गौरव तुम भी नीचे आ जाओ, अमित तुम भी और हाँ सुकन्या! तुम गाड़ी से उतर क्यों नहीं रही? पता नहीं। तो ठीक है। हम भी तुम्हारे साथ ही चलते हैं। नहीं। तो नीचे उतरो। ठीक है उतरती हूँ। और नीचे आते ही सब एक साथ मन्दिर की सीढ़ियाँ चढ़ने लगे और वहाँ पर उन्हें दो जोड़े दूल्हा-दुल्हन दिखाई दिये। सभी हँस पड़े। यार! यहाँ तो दो लोग बैठे हैं शादी के जोड़े में और हमें एन्ज्वाय करने का मौका भी दे रहे हैं। चलो नाचते हैं हमसब। नहीं अमित मैं तो नहीं नाचूँगी आज के दिन। पर क्यों सुकन्या? मेरा मूड नाचने का नहीं हो पा रहा प्रियंका। मगर ऐसा तो पहले कभी नहीं हुआ। हाँ नहीं हुआ। तभी अमित और अंकित ने उसे पकड़ लिया। गौरव को देखो तो कैसे नाच रहा है। चलो हम भी नाचते हैं। सभी नाचने लगे। मगर ये क्या? लोगों ने उन्हें नाचने-गानेवालों की जमात में शामिल कर लिया और

बख्शीश के पैसे दिये पाँचो को। सभी ने पैसे लिये और मुस्कराकर एक दूसरे की ओर देखा। मगर सुकन्या नाराज हो रही थी। हम बाराती बनकर आये थे घर से और यहाँ क्या होके रह गये? नाचने-गाने का सामान जिसे सिर्फ सौ के नोट देकर इन्होंने अपनी बख्शीश पूरी कर ली। चलो इनके पास चलते हैं। पर कहेंगे क्या? इतने से पैसे से हमारा पेट नहीं भरेगा जी। हमें पाँच-पाँच सौ के दो नोट चाहिए। हाँ चलो, यही कहते हैं और जाकर भीड़ गये लड़की वालों से। वो लोग हाथ-पाँव जोड़ने लगे। इससे ज्यादा पैसे हमारे पास नहीं हैं बेटा। खैर कोई बात नहीं। ये सौ का नोट भी आप ही रख लीजिए, उन्होंने कहा। तो वो बोले ऐसा अपशकुन मत करो बेटा। तो खिलाओ मिठाई हम सबको। हमें जोरों की भूख लगी है। ठीक है और मिठाई का डब्बा उनकी ओर बढ़ा दिया। सभी एक दूसरे की ओर देखकर हँस पड़े और वहाँ से चल पड़े फिर किसी दूसरी बारात में शामिल होने मगर शाम ढल चुकी थी और उन्हें घर भी जाना था। पता नहीं बारात वालों के साथ वो सब कितनी दूर निकल आये थे। तभी उन्हें ख्याल आया कि हमने तो तारीख देखी ही नहीं। आज हमारे पड़ोस में भी एक पार्टी होनेवाली थी। चलो जल्दी चलो और वो सब गाड़ी में बैठ गये।

शाम रात में ढल चुकी थी। उनका ही इन्तजार हो रहा था वहाँ। वो लोग नाचने-गाने का इतना अच्छा प्रोग्राम जो कर लेते थे। वो सब पार्टी में शमिल हो गये। डांस भी किया मगर रह-रह कर सोनिया का ही ख्याल आ रहा था उन्हें। उनके दिलोदिमाग में शादी का मतलब घूमने लगा था और वो सब एक दूसरे से अनजान थे। मगर सुकन्या रह-रहकर खामोश हो जाती थी। प्यार सभी के दिलों में पनप रहा था मगर कौन किससे करे, यही मालूम नहीं था। सभी एक दूसरे पर जी-जान न्योछावर कर सकते थे। ऐसे में उन्हें अगर जरा सी भी तकलीफ होती तो बात बिगड़ सकती थी। तभी अमित की मोबाइल बजी। अबतक उन्हें ये ख्याल ही नहीं आ रहा था कि सोनिया से बात कर लेते हैं। नम्बर सोनिया का ही था। सभी ने बात की उससे और कहा कि अमित, अंकित, गौरव, प्रियंका, सोनिया का रिश्ता तय हो गया। पिछले ही दिनों बात पक्की हो चुकी थी। अच्छा हुआ हमें खुद की बारात में नाचने का मौका मिल गया। क्यों अमित? मगर अमित कुछ नहीं बोला।

सभी के दिलोदिमाग में सोनिया से बिछड़ जाने का गम था। सबसे बड़ी बात यह थी कि इनकी चांडाल चौकड़ी में से एक गायब हो चुकी थी। उन्हें लगने लगा कि अब एक दिन हमसब की शादी हो जायेगी और हमसब अकेले हो जायेंगे। वो सब नाचना-गाना भूल गये और एक जगह जमीन पे बैठ गये और कहने लगे कि यार! अब हम कैसे जीयेंगे? आज सोनिया की शादी हो रही है, कल सुकन्या की हो जायेगी। फिर प्रियंका के पापा भी तो इसकी शादी करना चाहेंगे। वो बीमार भी रहते हैं। और अमित की मम्मी! उन्हें तो जल्दी ही सेवा करनेवाली एक बहू चाहिए और गौरव की बहन, उसकी शादी तीन साल से तय है पैसे का जुगाड़ नहीं हो रहा। गौरव के दहेज से ही वो उसकी बहन की शादी करना चाहेंगे। इसलिए जल्दी ही गौरव की भी शादी हो जायेगी। यार, फिर ये चांडाल चौकड़ी क्या करेगी? कुछ नहीं, मगर हमसब के रास्ते अलग हो जायेंगे। और फिर सोनिया सबसे पहले बिछड़कर अलग हो जायगी। फिर सुकन्या, फिर प्रियंका।

ये कैसा प्यार था जो साथ रहकर भी हमें एक दूसरे से जुदा कर गया। रूत ने ये कैसी गजल गायी कि सारे पंछी उड़-उड़कर घोंसले के बाहर चले गये।

सलीम और नजमा चोरी छुपे मिल रहे थे और खालिद चाचा उन्हें मिलता देख डबडबाई आँखों से दो कतरा आँसू की इल्तजा कर रहे थे। वो जानते थे इनका पाक प्रेम कभी कामयाब नहीं हो सकेगा। अँग्रेजों ने तो देश छोड़ दिया था मगर भाई-भाई आपस में बँटवारे को लेकर लड़ रहे थे। वो दोनों इन बातों से अनजान एक दूसरे के दिलों में कई नये-नये ख्वाब सजा रहे थे। उनके वालिद को ये बात पता न थी। एक रोज वो दोनों खालिद चाचा के पास आये उनसे मिलने। कहा, चचाजान! नजमा और मैं आपसे इजाजत लेने आये हैं। खालिद चचा ने कहा, किस बात की रजा लेनी है आपको सलीम मियाँ? तो उन्होंने कहा, चचा हम ये क्या सुन रहे हैं देश का बँटवारा हो रहा है। मुल्क बँट रहे हैं, ईमान बँट रहे हैं। भाई-भाई सरहद बनाना चाह रहे हैं। तो उन्होंने कहा, बेटे आपने सच सुना है। देश-देश में बँटवारा हो रहा है। मुल्क अलग-अलग हिस्से में बँट रहे हैं। यहाँ के कुछ मुसलमान सरहद पार जा रहे हैं तो नजमा बोली, चचाजान रोकिये इसे। अगर मुल्क बँट गया तो हमारा प्यार भी बँट जायेगा। तो खालिद साहब बोले। नजमा बेटी, प्यार बाँटे नहीं बँटता। आपका प्यार सरहद पार से भी वापस आ जायेगा। नहीं चचाजान, ये सरहद नहीं बनेगी। ये हमारे कब्र की मिट्टी पे आलीशान घर बनेंगे। याद रखिये चचाजान! अगर हम जुदा हुए तो तबाही आ जायेगी। बिजलियाँ गिरेगी। बारिश कहर बन बरसेंगे। तो खालिद साहब बोले नजमा बेटे! सलीम मियाँ! ये वक्त हौसला रखने का है। तो सलीम ने कहा कैसे हौसला रखें चचाजान? मैं और नजमा साथ खेले हैं। हमने जुदा होने की बात कभी सोची ही नहीं। हमारे वालिद हमें जुदा नहीं कर सकते। ये मिट्टी हमें एक-न-एक दिन पनाह जरूर देगी। हम अलग मुल्क में अपने प्यार को दम तोड़ते नहीं देख सकेंगे। तो खालिद साहब बोले, बेटे! ये आपका बचपना बोल रहा है। तभी रेडियो पर खबर आयी, देश-देश में बँटवारा हो गया, मुल्क बँट गये।

एक तरफ सरहद थी। एक तरफ सलीम और नजमा। दोनों ने कसम खायी कि जीते जी इस मिट्टी को छोड़ नहीं जायेंगे। सुबह हुई। भाई-भाई बँटने लगे। नजमा के वालिद ने नजमा से कहा, नजमा बेटी! जल्दी से सामान बाँधिए। हमें दूसरे मुल्क में जाना है। हमारा देश बँट चुका। हम उस नये मुल्क में जायेंगे जहाँ के हर एक मुसलमान के दिल में एक नया हौसला होगा, एक नयी ताकत होगी। तो नजमा ने कहा, अब्बाजान! जरा सोचिए उस नये मुल्क में हमारे कितने परिचित होंगे। अब्बाजान, हम उस नये मुल्क में अकेले पड़ जायेंगे। यहाँ हमारे कई कजिन हैं। खालिद चचाजान हैं, हमारी मिट्टी है जिसका कर्ज हमें चुकाना है। तो अब्बाजान बोले, नजमा बेटे, ये हमारी मिट्टी नहीं, ये हमारा मुल्क भी नहीं। ये हिन्दुस्तानी मिट्टी है जहाँ सिर्फ ईश्वर होता है। हमारे अल्लाह तो पाकिस्तान चले गये। तो नजमा ने कहा, अल्लाह बँटवारा नहीं चाहते अब्बाजान। बँटवारा तो हम चाहते हैं। हम मुसलमान होने से पहले फकत इन्सान हैं अब्बाजान। तो उन्होंने कहा, तुम कहना क्या चाहती हो नजमा? तो नजमा बोली मैं ये मुल्क छोड़ नहीं जाऊँगी अब्बाजान। हमारे अल्लाह यहीं हैं। हमारी नजर में ईश्वर और अल्लाह में कोई फर्क नहीं। तो वो गुस्से में बोले, वक्त कम है नजमा, जल्दी करो नावें तैयार है। नावों में जगह नहीं बचेगी। तुम अपनी अम्मीजान के साथ घर के बाहर निकलो, तो नजमा ने कहा, अम्मीजान भी यहीं रहेगी अब्बाजान। आपको

जाना है तो जाइए। तब उन्होंने नजमा के गाल पे एक थप्पड़ मारा और कहा, चल मेरे साथ। ये मिट्टी नहीं, ये हमारे लिए जंजीर है। नजमा, ये गुलामी की जमीन है हमारे लिए। हम गैर मुल्क में रह गुलामी नहीं करना चाहते और उसका हाथ पकड़ उसे घसीटते हुए बाहर निकले। अम्मीजान ने रोते हुए कहा, नजमा चल बेटे, तू समझती क्यों नहीं? हमारा मुल्क बँट गया। हम गैर मुल्कवाले हो गये बेटे। तो नजमा बोली, सलीम भी तो मुसलमान हैं अम्मी। वो यहीं क्यों रह गये? तो वो बोली बेटी, कुछ मुसलमान यहीं रह गये। बँटवारे के वक्त उन्हें जगह नहीं मिली उस नये मुल्क में। उनमें से एक सलीम के वालिद भी थे। तभी सलीम दौड़ता हुआ आया, नजमा! रूक जाओ। मैं भी तुम्हारे साथ चलूँगा। पीछे से पुलिस आ रही थी। नजमा भी नाव में से कूद गयी। उसके अब्बाजान असमंजस में खड़े रह गये। दोनों तरफ से गोलियाँ चली। एक ने इस तरफ जान दी। एक ने उस तरफ। मिट्टी पाक थी। दोनों इसी मिट्टी में दफन होने को तैयार हो गये थे।

सरहद पार तक नावें जा रही थी और नजमा और सलीम की आँखें खुली थी जो कह रही थी कि अब्बाजान! आपने हमारे प्यार की कद्र नहीं की। लेकिन इस मिट्टी के सामने उनके बचपन का चेहरा आ गया जो कह रहा था अब्बाजान मैं यहाँ हूँ। नजमा कहाँ है? तभी खालिद चचाजान आ गये और बोले इतिहास इस बात की गवाही जरूर देगा कि देश-देश में बँटवारा हुआ था, मुल्क-मुल्क बँट चुके थे। मगर प्यार न बँट सका था। नजमा और सलीम के दिल में भी प्यार की पाक निशानी थी जो अल्लाह देख रहा था। इसी मिट्टी पर ईश्वर भी रहेगा, इसी मिट्टी पर अल्लाह भी रहेगा, इसी मिट्टी पर नजमा और सलीम फिर से पैदा लेंगे। हवायें भी जोर-जोर से चलेगी, सरहद पार से नदी के थपेड़े उठेंगे और आसमान में बिजली भी चमकेगी मगर फिर कोई परिन्दा वापस नहीं आयेगा आसमान से। वो उड़ेगा और उड़ते-उड़ते सरहद पार चला जायेगा। एक को हिन्दू की गोलियाँ मार डालेंगी, एक को मुसलमान की। ये हिन्दुस्तान और पाकिस्तान फिर कभी एक नहीं होंगे। सरहद पार से फिर कोई आवाज नहीं आयेगी। सलीम और नजमा की निगाहों में एक ही मुल्क होगा एक ही चेहरा होगा, एक ही मिट्टी होगी, हिन्दुस्तानी मिट्टी । यहीं पे उनकी कब्र बनेगी। एक ही मिट्टी में दफन होंगे वो और फिर कभी ईश्वर नहीं बदलेगा। जगह बदलने से अल्लाह की ताकत कम नहीं हो जायेगी। अल्लाह-ईश्वर दो नहीं हो जायेंगे। वो एक थे, एक हैं और एक ही रहेंगे।

कश्मीर की वादियों में घूमते युवा कब आतंकवादियों का शिकार हो जाते हैं, कोई नहीं जानता। मगर ऐसा कहाँ देखा कभी मेरी निगाहों ने कि किसी आतंकवादी को भी किसी से प्यार हो जाता है।

मेरी ही वादी में घूमते नजमा और सुहैल को पकड़कर ले गये थे वो और सुहैल को एक अलग कमरे में बन्द कर दिया था और नजमा को अलग कमरे में ताकि वो आपस में बातें कर कोई प्लानिंग न कर सकें। मैं सब देख रहा था। नजमा ने जुदाई के इन लम्हों में जमीन में एक सुरंग खोदना शुरू किया मिट्टी के नीचे से। जब भी वो आते, एक तरफ चेहरा छुपाकर बैठ जाती। वो उसका घूँघट उठा देते और ये कहते हुए चले जाते कि साली ने शक्ल ही ऐसी पायी है कि हलाल करने का दिल ही नहीं करता इसको और उनके चले जाने के बाद नजमा फिर सुरंग खोदना शुरू कर देती।

आखिरकार वो रात आयी जब नजमा ने सुहैल से मिलने का इरादा कर लिया। जब वो लोग निरीक्षण कर चले गये नजमा ने अपने दुपट्टे को जमीन पर बिछा दिया और तकिये को कोने में बिठा दिया। जब वो लोग मशाल लेकर देखने आये हल्की सी रोशनी में समझे नजमा नमाज अदा कर रही है। चलो कहीं और चलते हैं और उनके जाने की आहट को सुन नजमा निश्चिंत हो गयी। जब सुरंग के भीतर कदम रखा तो पाया कि वहाँ बैठकर नहीं जाया जा सकता, लेटकर जाना पड़ेगा और आहिस्ता-आहिस्ता खुद को सरकाती वो सुहैल के कमरे तक गयी और सुहैल को आवाज दी। सुहैल! मैं नजमा। सुहैल चौंककर पलटा और सामने नजमा को लेटा हुआ पाया तो उसका हाथ पकड़ लिया। दोनों मिल गये। गले भी लगे मगर निरीक्षण करनेवाली शातिर निगाहों ने नजमा के साथ सुहैल को गले मिलते देख लिया। वो दोनों दरवाजा तोड़कर भाग निकले। भागते-भागते जब थक गये, एक पेड़ के झुरमुट में छुपा लिया खुद को। जब वो लोग वहाँ पहुँचे, उन्हें खून के निशान मिले। नजमा का पैर कट गया था आते वक्त रास्ते में किसी चीज से। बचते-बचते वो फिर भागने लगे मगर गोली के शिकार हो गये दोनों। सुहैल तो मर गया मगर नजमा की साँसे अभी चल रही थी। दूसरे आतंकवादियों ने अपने बॉस से कहा कि बॉस उड़ा दूँ इसके भेजे को? तब आतंकवादी दिल ने एक बार फिर से नजमा के हुस्न को पढ़ा और कहा नहीं रहने दो। हम इसे तड़पा-तड़पाकर मारेंगे और ले आये एक बार फिर से नजमा को अपने ठिकाने पे। गोली के घाव गहरे थे। भरने में वक्त लगे और इसी बीत एक आतंकवादी को उससे प्यार हो गया जिसका नाम अख्तर अली था। बाकी सब तो उसके हुस्न के दीवाने थे मगर वो पाक दिल का मालिक था। धीरे-धीरे मुलाकातें बढ़ती गयी मगर नजमा हर बार नफरत से निगाह फेर लेती। हमेशा सिसकती ही रहती और इधर अख्तर की रातों की नींद उड़ चुकी थी। वो रातभर जागकर नजमा की निगरानी करने लगा और नजमा सुहैल को तलाशती अपने आप को धोखा देती रही कि सुहैल आयेगा। एक रात एक साये पे नजर गयी उसकी। नजमा ने जल्दी से दुपट्टा ओढ़ लिया और पूछा कौन है? तो आवाज में दरार पड़ी सुनायी दी उसे। उसने फिर पूछा वहाँ कौन है? तो अख्तर ने मशाल जला दी और नजमा नफरत से निगाह फेरते हुए बोली, आखिर आ ही गये न तुम अपनी हवस की प्यास बुझाने मेरे पास? अख्तर ने तब उसके

गाल पे एक तमाचा मारते हुए कहा। ऐसा न कह नजमा, मैं तुझसे जानबूझकर मिलने नहीं आया हूँ। मैं दिल के हाथों मजबूर होकर आया हूँ। नजमा मैं तुम्हारी याद में रात-दिन यहीं बैठा रहता हूँ ताकि तुम्हें कोई परेशान न करे। तुम्हें किसी किस्म की तकलीफ न सता सके। तो नजमा ने उससे कहा तो फिर पकड़कर क्यों लाये मुझे? मैं तो वादियों में घूमने वाली रंगबिरंगी तितली थी। तुमने मुझे एक कमरे में एक ही लिबास में कैद क्यों कर रखा है? आजाद क्यों नहीं कर देते मुझे? तब अख्तर बोला कि आजाद कर दूँगा तो जीऊँगा कैसे? मुझसे तो तुम्हारा चेहरा देखे बगैर रहा ही नहीं जाता। तब नजमा नफरत की हँसी हँसने लगी थी। तुम आतंकवादियों को भी किसी से प्यार होता होगा, ये सोचकर हैरान हो जाती हूँ मैं रह-रह कर अख्तर अली। तुमने मेरा नाम लिया अपनी जुबान से। नजमा मैं मान गया रे कि जीत इस बार भी मेरी ही हुई। ऐसा कह मस्ती में चुर बाहर चला गया अख्तर। नजमा को पहली बार उसके दीवानेपन पे हँसी आयी और दूसरे ही पल डर भी लगा कि कहीं आबरू न चली जाय। फिर वो भागने की तरकीब सोचने लगी और एक रात मौका पाकर निकल पड़ी। अख्तर उसके पीछे साया बन चलता रहा और जब मशाल की रोशनी पड़ी नजमा के चेहरे पर उसने जल्दी से उसका हाथ पकड़ लिया और कहा कि नजमा, पागल मत बन। वो लोग तुम्हें ढूँढ रहे है। वो लोग ढूँढ रहे हैं या तुम मेरा पीछा कर रहे हो? छोड़ो मेरा हाथ। मगर अख्तर ने उसका हाथ नहीं छोड़ा और लाकर पटक दिया बिस्तर पर। फिर बोला भागने चली थी अगर मैं न होता तो चिथड़े-चिथड़े हो जाते जिस्म के। तब नजमा रोने लगी। क्यों मरने भी नहीं देते तुम मुझे? तुम खुदा की जात वाले हो क्या जो मौत को छीनकर जिन्दगी लाते हो तो फिर ला दो न वापस मेरे सुहैल को भी। तब अख्तर उसके इस सवाल पे रो पड़ा था। क्या तुम सुहैल से इतना प्यार करती हो नजमा कि उसे खुदा से माँगने की चाहत में मुझे खुदा बना डाला। मैं वादा करता हूँ तुमसे कि तुम्हें सुहैल दूँ या न दूँ अपनी जान पर खेलकर कश्मीर जरूर पहुँचाऊँगा। मैं सारी बातें सुन रहा था और सोच रहा था कि अख्तर और सुहैल में महान कौन था? अख्तर, जिसने नजमा से मुहब्बत की खातिर रातों की नींद गंवा डाली या सुहैल जिसने वफा की चाहत में खुद को मिटा डाला था। यही सोचता एक बार फिर रात के सन्नाटे में खुद से बातें करते हुए सुना मैंने अख्तर को और पहली बार मेरी आँखों में आँसू आ गए। मैं सोच में पड़ गया कि एक गैर जाति के लड़के से नजमा ने इतना प्रेम किया इतनी मुहब्बत की और जिसे खुदा की जात वाला समझा उसे उसने ठोकर मार दिया।

आखिरकर वो रात भी आयी जब अख्तर को दूसरे आतंकवादियों ने नजमा से बातें करते हुए सुना तो पूछा कि अख्तर अली मिशन पे नहीं जाना क्या? बॉस ने तुम्हें बुलाया है अभी और इसी वक्त। तब अख्तर बोला कि इस वक्त मैं नहीं जा सकता मुझे खुदा से दो बातें करनी है। ठीक है, मैं कह देता हूँ जाकर उनसे ये बातें। मगर हाँ, सुबह भी मिलने नहीं गये तुम तो तुम्हारी सजा ये होगी कि तुम्हें खुद नजमा के हाथों मरना पड़ेगा क्योंकि बहुत मुहब्बत करते हो ना तुम उससे। अरे अख्तर अली, ये कश्मीरी मौसम की तरह है लड़की जो कब बदल जाये पता नहीं। अख्तर ने सारी बातें सुनी और उनके जाने के बाद बोला कि नजमा क्या ये लोग सच कह रहे थे? नहीं अख्तर! मैं कश्मीरी जरूर हूँ मगर रूप

25 कनक : स्मृति पुष्प

बदला नहीं करती मैं किसी भी मौसम में और ऐसा कह रो पड़ी थी उसका हाथ पकड़कर। अख्तर को पहली बार अपनी बहन याद आ गयी थी, अपनी अम्मी याद आ गयी थी। उनसे जुदा होते वक्त इसी तरह हाथ छुड़ाकर आया था वो जैसे आज जा रहा था नजमा का हाथ छोड़कर। नजमा ने उसके माथे पे अपने बदन का खून लगा दिया और कहा कि अख्तर मुझे पहुँचाने में अगर तुम कामयाब रहे तो मैं तुम्हारा इन्तजार जरूर करूँगी दुबारा मिलने की हसरत लेकर और तभी सुबह हो गयी। नजमा बैठ गयी और अख्तर मिशन की सूचना लेने रवाना हो गया। फिर शाम ढली, रात हुई। अख्तर नजमा को लेने वापस आया और कहा कि नजमा मुझे मिशन पे जाना है। तुम मेरे साथ भाग चलो। मैं अगर तुम्हें भगाने में कामयाब रहा तो खुदा का शुक्रगुजार रहूँगा। चल मेरे पीछे-पीछे ये काला लिबास पहनकर और हाथ में गन थमा दी उसके । सभी मिशन पे जानेवाले अपना ही साथी समझते रहे उसे और जब सरहद का रूख मोड़ा नजमा ने तो पहली बार किसी की आवाज गयी उसके कानों में। वो चौंकी। पीछे अख्तर खड़ा था, एक बार उससे गले मिलने की चाहत लेकर। उसने नजमा से कहा कि नजमा आखिरी मोड़ पे खड़े हैं हम। यहाँ से हमारी सरहदें खत्म हो जाती है। आखिरी बार मेरे गले लग जाओ। नजमा ने अख्तर की दर्द भरी आवाज को सुना तो रो पड़ी और लिपट गयी उससे। तभी पीछे से गोली चली जो अख्तर के सीने को चीरती चली गयी और उसने नजमा का हाथ पकड़ लिया नजमा भाग, नजमा भाग कहता रहा। जब नजमा अपने मुल्क में प्रवेश कर चुकी उसकी साँसे भी अपने आप टूट गयी।

ये कहानी यहीं पर खत्म न हो सकी। नजमा ने अख्तर के इन्तजार में कश्मीरी वादियों में घूमना नहीं छोड़ा। मगर हाँ, सुहैल का रास्ता अब उससे बिल्कुल अलग हो चुका था। नजमा सुहैल को भूल चुकी थी क्योंकि अब उसका मकसद सिर्फ अख्तर और अख्तर रह गया था जिसके इन्तजार का वादा लेकर आयी थी वो और जिसके वादे की जंग ने उसे सही सलामत सरहद पार करा दिया था और मैं ये सोचता रह गया कि एक आतंकवादी को एक कश्मीरी लड़की ने इतना मान-सम्मान दिया। मैं नतमस्तक था आज उसकी वफा और अख्तर की मौत पर। मगर मुझे गर्व भी हुआ अपनी सरहद पे तैनात सैनिकों पर जिन्होंने मेरी शान में जीत का झंडा गाड़ दिया था। सारे आतंकवादी पकड़े जा चुके थे।

▭

ये कैसा जवाब

26

एक आदमी रोज जंगल के उस भाग से गुजरता था जहाँ पर पक्षियों के जोड़े बैठे होते थे और जाने क्या बातें कर रो पड़ते थे। कभी भी उसे हँसते हुए या बातें करते हुए उस आदमी ने नहीं देखा था। एक दिन उसने मन में ठानी की आज जरूर पुछूँगा उनसे उनके आँसूओं की वजह। यही उचित लगा उसे और उस दिन तड़के ही जाग गया वो। जल्दी से जूते पहन लिए और चलता रहा, चलता रहा। मानो आज वो जंगल ही वहाँ से गायब हो गया हो। आखिरकार उसके करीब पहुँचा वो और उन पक्षियों से जाके बोला, ऐ उड़ते हुए परिन्दों! तुम्हें क्या दर्द है ऐसा जो तुम दोनों रोते रहते हो? उन्होंने पहले तो कुछ नहीं कहा, फिर बोले अगर पूछ ही रहे हो तो बता देता हूँ मैं पर पहले ये वादा करो कि मेरे हर सवाल का तुम वैसा ही जवाब दोगे जो हमें और हमारी सखी को प्यारी लग सके। वो आदमी असमंसज में पड़ गया। ऐसा कौन सा सवाल करेंगे ये दोनों हमसे और ऐसा कौन सा जवाब ढूँढूंगा मैं इनके लिए जो इन्हें पसंद आ सके। फिर भी उसने सोचा, वादा कर ही लेता हूँ। जितनी बनेगी हमसे उतनी ही खुशी दे पाऊँगा इन्हें मैं। फिर पूछा, बोलो ऐसा कौन सा सवाल है तुम दोनों के दिल में जिसका की हल ही नहीं है तुम्हारे पास। है एक सवाल मुसाफिर। चलो मेरे पीछे आओ। मैं एक जगह बिठाकर बताऊँगा तुम्हें। ऐसा कह वो दोनों उड़ गये। वो आदमी उनके पीछे-पीछे चलता रहा। जब वो रूके तो बोला, अब करो सवाल। तब उन्होंने एक घर की तरफ इशारा करते हुए कहा कि यहाँ पर ऐसा कौन सा शोर है जो इतने लोग जमा हैं यहाँ। बड़ी अजीब लगी उसे उनकी ये बातें सुनकर। पर तनिक सोचकर वो बोला, यहाँ तो जो शोर है वो तुम्हें भी दिखलाई दे ही रहा है। क्या तुम नहीं देख रहे हो, यहाँ पर किसी का जवान बेटा मृत पड़ा है जिसको देखने को ये लोग इकट्ठे हैं। पर वो क्या है जिसको कि लोग कांधे पे उठाकर ला रहे हैं। ये तो बाँस की चार लठें हैं फकत। कहाँ से लायी इन्होंने ये लठें? एक पेड़ से काटकर। पर वो पेड़ कहाँ है? वो तो जगह-जगह मौजूद है। पर इनके करीब तो वो हमें सिर्फ चार टुकड़े के रूप में ही नजर आ रहे हैं। वो क्यों? वो इसलिए कि अभी इनकी जरूरत इतनी ही है। तो क्या इन्हें और भी जरूरत पड़ेगी कभी इन लठों की? उन्होंने पूछा तो वो आदमी बोला हाँ, इसकी जरूरत तो हमेशा रहेगी इनके पास। क्यों? क्या कल भी इनका ही बेटा मरेगा? नहीं, कल इनका कोई और सम्बन्धी मरेगा। तो क्या इतने बड़े संसार में जिन्दगी कहीं भी नहीं? अब वो आदमी असमंजस में पड़ गया उनके बेतुके सवाल को सुनकर। तो उन पक्षियों के जोड़े ने उसे फिर टोका क्या हमारे इस सवाल का कोई जवाब नहीं है तुम्हारे पास मुसाफिर? तो उस आदमी ने कहा, ये सवाल ही ऐसा है जिसका कि कोई जवाब ही बताया नहीं जा सकता। पर क्यों? क्योंकि हमें तो संसार में हर जगह जिन्दगी-ही-जिन्दगी नजर आ रही है। साँसे तो एक ही रूकी है, यहाँ पे। यहाँ अगर एक मृत पड़ा है तो सैकड़ों जीवित लोग भी तो खड़े हैं यहाँ। अब उन पक्षियों को इस जवाब से संतुष्टि क्या होती। उन्हें तो वो नजर ही नहीं आ रहे थे जो वो आदमी बता रहा था उन्हें। वो एक बार फिर उड़ गये और वापस आकर उसी जंगल में उसी पेड़ पे आकर बैठ गये और फिर से रोने लगे आपस में बातें कर।

अब उस आदमी की सुध-बुध खो चुकी थी । वो जब सोने गया तो उसे नींद भी

नहीं आयी। जब उसकी पत्नी ने खाना परोसा तो जी के मचल जाने का बहाना कर वो चुपचाप लेटा रहा। खाना वहाँ से हटा दिया उसकी पत्नी ने और सो गयी। रात भर वो जागता ही रह गया। वो बार-बार सोचता रहा, क्या जवाब देता मैं ऐसा उनके उन सवालों का जिसको पाकर कि वो संतुष्ट हो पाते और अपने दर्द को बयां कर देते हमसे। वह सारी रात सोचता रहा। नींद तो आँखों में थी ही नहीं। सुबह फिर तड़के ही जाग गया वो और जूते पहने। बाहर जाने को पाँव बढ़ाना ही चाहा कि पीछे से उसकी पत्नी ने टोक दिया। आज जरा जल्दी ही वापस आने की कोशिश करना। क्यों, क्या बात है? है एक बात जो तुमसे आने पे कहूँगी। ठीक है तो फिर चलता हूँ। ऐसा कह वो फिर तेज-तेज कदमों से चलता उसी जंगल में पहुँचा और उन पक्षियों को तलाशने लगा। तभी वो फिर उसे उसी पेड़ पे बैठे रोते ही नजर आये। वो उनके पास जाके बोला, क्या तुम्हें और भी सवाल करने हैं हमसे? क्यों, क्या तुम्हें हमारे सवालों का जवाब मिल गया। नहीं, अभी तक तो नहीं मिला। जब मिला ही नहीं तो क्यों आया तू हमारे पास ये पूछने? इसलिए कि शायद तुम कोई दूसरा सवाल करो जिसका कि जवाब मैं तुम्हें दे सकूँ। तो फिर चलो हमारे पीछे। ऐसा कह वो दोनों उड़ गये। वो आदमी फिर उनके पीछे-पीछे चल पड़ा। जब वो रूके तो बोला, पूछो क्या पूछना चाहते हो तुम हमसे? वहाँ क्या हो रहा है ये बता सकते हो तुम? हाँ। तो बताओ। वहाँ किसी की बेटी का विवाह-समारोह चल रहा है। ये सब लोग जो इकट्ठे हैं, इनके मेहमान हैं। फिर ये इतने सारे पकवान! इन्हें क्या इन्हीं लोगों के लिए बनाया गया है। हाँ। ये बिजली, ये बत्तियों की रोशनियाँ, ये गाजे-बाजे का शोर ये फिर इनसे क्या कह रहे हैं? ये कैसा सवाल है भई, ये तो तुम भी देख रहे हो ये सब खुशी का जश्न मना रहे हैं। ये गाजे-बाजे ही असल में जिन्दगी है। तो क्या तुम्हें लगता है, यही जिन्दगी है। और नहीं तो क्या? तो फिर छोड़ो, तुम्हारे इस जवाब ने भी हमें संतुष्ट नहीं किया। ऐसा कह वो दोनों फिर से उड़ चले। वो आदमी फिर निराश और बुझा-बुझा सा अपने पर वापस आ गया। पर जैसे ही घर के दरवाजे तक पहुँचा उसके कानों में एक आवाज गयी जो जाते वक्त उसकी पत्नी ने कहे थे उससे कि शाम को जल्दी लौट आना। एक बात कहनी थी तुमसे पर यहाँ तो जाने कितने लोग इकट्ठे थे। वो उन सब के बीच से होते हुए घर के अन्दर पहुँचा। पर जैसे ही उसकी नजर घर की दहलीज पे पड़ी, वहाँ पर तो उसकी पत्नी मृत पड़ी थी। अब वो क्या कहता, उसी की अर्थी का सामान इकट्ठा करने में रात का पूरा वक्त गुजर गया। सुबह जब वो सबके साथ उसे विदा करने गया तो उसके कानों में एक बात गूँजी जो उससे उन पक्षियों ने कहा था। वो लठें कहाँ मिलती है? पेड़ से और वो पेड़ कहाँ मिलते हैं? जगह-जगह। क्या फिर इन्हें इसकी जरूरत पड़ेगी? हाँ क्यों नहीं? तो क्या कल फिर इनका ही कोई मरेगा? हाँ। कौन? सगा-संबंधी। तो क्या संसार में जिन्दगी कहीं नहीं है? ऐसी बात पे वो तनिक रूककर सोचने लगा क्या कहना चाहा होगा उस वक्त पक्षियों के उस जोड़े ने हमसे ऐसा जो कि मैं समझ न सका। फिर अपनी पत्नी की अर्थी को कांधे पे बिठाया और ले गया श्मशान घाट। फिर मुखाग्नि देकर उसकी अस्थियों को गंगा में बहाकर चला आया घर वापस और सोचने लगा, क्या कहना चाहा होगा उस वक्त उसने मुझसे जो मैंने न सुना और चला गया। जब लौटकर वापस आया

तो वो मृत पड़ी मिली मुझे। ऐसा कौन सा राज था उसके दिल में जो वो मुझे बताना चाहती थी और अपने ही सीने में दफन कर चली गयी वो। बहुत सोचा, दूर-दूर तक उसकी बातें याद की पर किसी भी बात से उसे उसकी पत्नी के सवाल का सबब न मिल सका। अब वो बहुत उदास रहने लगा और भूल भी गया वो बात कि कभी उसे कोई पक्षियों का जोड़ा भी मिला था किसी जंगल में। तभी एक रोज उसके ख्वाब में दोनों उसे रोते हुए नजर आये। वो जल्दी से उठा और फिर तड़के ही निकला, जूते पहने और चल पड़ा उनकी खोज में। बहुत देर तक चलता रहा, तब जाकर कहीं उसे वो ही जंगल दिखा। लगा जैसे रास्ता ही दुगना हो गया हो पहले से। जब वो जंगल में पहुँचा तो सामने फिर वो ही पक्षियों के जोड़े दिखाई दिये उसे फिर उसी तरह रोते हुए। वो उनके पास फिर गया और बोला, आज भी अगर तुम्हें हमसे कोई सवाल करने हो तो करो? शायद आज मैं तुम्हारे सवाल का उचित जवाब दे सकूँ। उन्होंने कहा, सोच लो मुसाफिर अब ये हमारा आखिरी सवाल होगा। जरा सोच कर जवाब देना नहीं तो जा चला जा, हमें रोता ही रहने दे। वैसे भी हमारे दर्द तू अब कम करने वाला नहीं। तब उस आदमी ने कहा आज हमने जान लिया कि संसार में ऐसा कोई सवाल नहीं जिसका कि हल ढूँढने से न मिले। अच्छा ऐसा! तो फिर चल मेरे साथ। ऐसा कह वो दोनों उड़ चले। वो आदमी फिर उनके पीछे-पीछे चलता रहा। जब वो रूके तो बोला, अब कौन सा सवाल करना है तुम्हें करो। वो वहाँ इतने सारे लोग जो जमा हैं, क्या कर रहे है? वो तो सारे भूले-भटके राही हैं जो अपनी ही मंजिल की तलाश में रास्ता भटके लगते हैं। तो क्या संसार में इतना भी रास्ता है लम्बा जो यहाँ के लोग ही भटक जाते हैं। फिर तू बता सकता है ये रास्ते कहाँ से सही लोगों को सही मार्ग तक ले जाते है और कहाँ से गुमराह कर देते है? सोच ले मुसाफिर, ये हमारा आखिरी सवाल है जिसका कि जवाब तुम्हें पल दो पल में देना है। उस आदमी को एक बार फिर हैरानी हुई उनकी बातों पर। भला ये कौन सा सवाल हुआ जिसका कि हल ढूँढूं मैं इनके लिए। संसार में तो ऐसे जाने कितने रास्ते हैं और जाने कितने लोग हैं जो अपनी ही दुनिया, अपनी ही बस्ती, अपनी ही आबादी से महरूम रह जाते हैं। फिर इनको कौन पग-पग सही मार्ग दिखलाये और किसको पता है इतना कि सब के रास्ते किस गली तक छोड़ आते हैं उन्हें। ये तो सारे-के-सारे लोग अजनबी हैं। भला जब हमें इनकी पहचान ही नहीं मालूम तो इनकी मंजिल का पता फिर हमें कैसे हो? जब बहुत देर तक उन दोनों ने उस आदमी को खामोश देखा तो बोले, हार गये न मुसाफिर। नहीं जवाब पाया न तुमने हमारे सवालों का। फिर तुमने किस दम पर कहा था कि ऐसा कोई सवाल ही नहीं जिसका कि जवाब संसार में कहीं नहीं है। बोलो कहा था न? पर आज जाना न तुमने कि तुम्हारे पास हमारे सवाल का सच में कोई हल न था। बोल मुसाफिर हार मानता है न तू? हाँ। उसने कहा। तो फिर क्यों मेरे दुखते कलेजे पे चोट पहुँचायी तुने। हम जैसे भी थे जी रहे थे। तुमने तो हमारे आँसू पोछने चाहे थे पर ये क्या, तुम तो खुद ही रो पड़े।

पर आज हम बताते हैं तुम्हे अपने ही हर उन सवालों का जवाब जो हमने तुमसे पूछे और हमने ही तुमसे उसे ढूँढने को भी कहा। पर हमारे हर सवाल का जवाब तो तुम दे ही गये थे। हमारे पहले सवाल का जवाब तुमने ऐसा दिया था जिसको कि सुनकर हमें

संतुष्टि नहीं मिली थी और हम फिर उड़कर वापस उसी जगह आ गये थे जहाँ पर कि हम रोज ही बैठा करते थे। तुमसे पहले सवाल में हमने पूछा था कि वो लोग वहाँ क्या कर रहे है? कैसा शोर है इनके बीच? तुमने तब कहा था, कोई मृत पड़ा है वहाँ और उनके अपने ही परिजन इकट्ठे हैं सारे। तुमने तो सच ही कहा था न? हाँ। तो फिर क्यों तुम्हारे जवाब तुम्हारे ही सामने खड़े हो गये आकर? कभी सोचा तुमने। तुमने तो कहा कि हर जगह जिन्दगी है पर हमने तो देखा कि हर जगह मौत का ही कारवाँ हैं। क्या घर जाके तुम्हें तुम्हारी पत्नी मृत पड़ी नहीं मिली थी? हाँ। तो क्या उसने तुमसे अपने मन की कोई बात कहनी नहीं चाही थी तब? चाही थी। तो वो बात क्या थी तुमने जाना अबतलक नहीं न? वो बात भी वही थी जो हमारे पहले सवाल में शामिल थी। क्या? हाँ, वो भी जिन्दगी की ही बातें करना चाहती थी तुमसे पर पाया क्या मौत ही न? उस दिन तुमसे जब दूसरा सवाल किया था हमने और एक विवाह समारोह में लेकर गये थे तुम्हें और पूछा था कि किस बात का ष्टोर है? तुमने कहा था, खुशी का माजमा है। गाजे-बाजे का शोर है। इतने सारे पकवान हैं बने उनके लिए तो क्या वो वाकई में खुशी का ही शोर था? क्या कभी सोचा तुमने? हाँ सोचा, पर यह कि इसमें तो कोई बात सोचने वाली है ही नहीं। लेकिन बात थी, वहाँ भी तो एक विदाई का ही समारोह था न? हाँ था पर उस जगह मृत व्यक्ति पड़ा था और उस जगह दुल्हन की सजी डोली खड़ी थी। पर क्या वो खून नहीं था? नहीं। तो फिर दुल्हन ने लाल जोड़ा क्यों पहन रखा था? पता नहीं। तो सुनो, वो इसलिए कि वो जिन्दा लाश बन के विदा हो रही थी उस जगह से। पर उसकी तड़प जिन्दा थी जिसकी तरफ ताकने की किसी को फुर्सत ही नहीं थी। उस मृत व्यक्ति की तो तड़प मरते ही खत्म हो चुकी थी पर ये मौत तो उससे भी भयानक थी। फिर जिन्दगी कहाँ दिखी उस जगह और जो तीसरा सवाल किया था हमने कि जो इतने सारे लोग भटके हुए जवानी के हमउम्र यारों में से थे जिन्हें कि अपनी ही गली, अपना ही घर, अपनी ही बस्ती, अपना ही जहां नजर नहीं आ रहा था। तो क्या वो उस मृत आदमी से अलग थे किसी भी रूप में? नहीं, वो सब एक ही चीज के शिकार थे इस कमबख्त जिन्दगी के जिसने उन्हें कभी कुछ न दिया।

क्या? ये जवाब था उन सारे सवालों का? हाँ। पर ये तो एक ही हल बन के सामने आ गये हमारे। हाँ। तभी तो कहा था हमने तुमसे कि हमारे सवालों के जवाब सोच-समझकर देना और ऐसा देना जो हमें उचित लग सके जिससे कि हम सन्तुष्ट हो सकें। पर तुमने तो हमारे एक भी सवाल का सही जवाब न दिया। अब जाओ, सब कुछ तो मिल जाता है किसी को पर अनजान मुसाफिरों का साथ घड़ी-दो-घड़ी का ही होता है। अब देखो न, हमने तुमसे पहले मिलना चाहा, फिर बातें भी की, पर आखिरकार जाने की घड़ी आ ही गयी न? अब तो शाम भी ढलनेवाली है, अगर देर करोगे तो रात हो जायेगी और तुम रास्ता ही भटक जाओगे। पर तुम्हारे आँसू? उसकी फिक्र न करो। हम फिर कोई अनजान मुसाफिर तलाश लेंगे।

कनक : स्मृति पुष्प **'राब**

सीमा होटल के बगीचे में बैठी हर आने- जानेवाली को देख रही थी। कोई अपनी पत्नी के साथ था, कोई अपनी महबूबा के साथ। वो सोचने लगी, मैं कितनी बार इस होटल में आयी, याद नहीं। एक दिन में तो कई बार मैं राजीव के साथ चाय, कॉफी के बहाने चली आती थी। राजीव कितना गोरा-चिट्टा था, उसपर मैं साँवली शक्ल वाली साधारण सी लड़की। जोड़ी जम नहीं पाती थी। कितने लोग हमारा मजाक बना दिया करते थे। एक दिन ऐसा भी आया जब राजीव चिढ़ सा गया मेरे साँवले नैन-नक्श से और उसने मुझे छोड़ दिया। मगर मैं तो उससे बेइन्तहा प्यार करती थी। शादी के कई बंधन बाँधे थे हमने अपने अन्दर उससे हर एक मुलाकात में। जब भी मिलते थे हम यही तो कहा करते थे उससे कि राजीव पापाजी से मिलवाओ न? वो टाल जाता। पापा का क्या सीमा, उन्हें तो हमारी दोस्ती पे जरा भी एतराज नहीं। उन्होंने तो खुद लव मैरिज की है। तब मैं हँस पड़ी थी। क्यों इतने मॉडर्न हैं तुम्हारे पापा? हाँ सीमा। और फिर जितने दिन भी हम मिले राजीव अपने ही बारे में मुझे बहुत कुछ बताता रहा। मगर जब मैं उसका पीछा करते उसके घर तक गयी तो पाया कि वो शादीशुदा दो बच्चों का बाप है। मेरा माथा ठनका। जो राजीव मुझे इतने ख्वाब दिखाया करता था शादी के, वो पहले से ही शादीशुदा है और मैंने सोच लिया कि इतनी आसानी से नहीं छोड़ूँगी उसे। तभी मेरी परछाई मेरे सामने आ गयी। राजीव से बदला लेगी तू। अरे कोई मर्द जाति से बदला ले पाया है भला? क्यों नही? क्योंकि लड़कियों की कमजोरी होते हैं ये मर्द लोग। तुम सोचो, क्या देखा, क्या पाया तुमने उसमें जो एक अनजान अजनबी से बेइन्तहा प्यार कर बैठी। तब मैंने अपने आप से कहा था कि राजीव ने मुझे धोखा दिया है और इस धोखे का बदला जबतक नहीं लूँगी, चैन नहीं आयेगा मुझे। तब मेरी परछाई ने मुझे झकझोरते हुए कहा, क्या बिगाड़ लोगी तुम उसका? उसके दो बच्चे हैं। एक का अपहरण कर लोगी, उसकी पत्नी की इज्जत से खेलोगी। नहीं सीमा नहीं, मर्द की बात और है, औरत की और। तो मैं चिढ़कर बस इतना ही कह सकी थी मैं राजीव को नीचा दिखाने की खातिर किसी दूसरे अमीर लड़के से शादी का बंधन बाँध लूँगी और उस दिन से किसी अमीर को जगह-जगह तलाशने लगी मैं। एक दिन मैं बहुत खुष्ठ हुई। मुझे किसी ने अपने फंक्शन में डांस प्रोग्राम करने के लिए बुलाया। मैं मशहूर डांसरों की कॉपी किया करती थी। मैंने ऐसा डांस किया कि वहीं पर बैठा आकाश मुझे देखता रह गया। मुझसे कई लोगों ने ऑटोग्राफ माँगे और सबसे बाद में आकाश आया। हमारी पहली मुलाकात काफी शानदार रही। हमने सारी रात बातें की। समारोह के खत्म हो जाने के बाद सुबह जब मैं घर वापस जाने लगी, उसने अपना पता मुझे दिया। मैंने लिया भी। राजीव से बदले की चाहत ने मुझे न जाने आकश के कितने करीब ला दिया। मैं बराबर उससे मिलती रही, बातें करती रही। मगर इस बार मैं इतनी जल्दी शादी की बात चलाना नहीं चाहती थी। मैं चाहती थी कि पहल पहले वो करे और इसी इन्तजार में 2 वर्ष गंवा डाले हमने। एक दिन मेरी बर्थडे पार्टी में उसने मुझे गिफ्ट के तौर पर हीरे की एक अँगूठी पहनाई। उसने कहा, हमारी मँगनी हो गई आज सीमा। तो शादी कब करोगे? मैंने भी उससे पूछना चाहा, उसने कहा जब तुम्हारी मर्जी। तब मैं तपाक से बोल पड़ी, मुझे शादी की कोई जल्दी नहीं है आकाश। वैसे भी मैं बहुत व्यस्त हूँ। मेरा डांस प्रोग्राम होनेवाला है। कल मुझे दूसरे ष्टाहर जाना है। तुम साथ नहीं चलोगे। नहीं सीमा, मैं नहीं जा सकता, मेरी माँ की तबीयत

31 कनक : स्मृति पुष्प

खराब है। तब मैं समझ गयी की ये भी सिर्फ हीरे की एक अँगूठी में मेरी आबरू से खेलने का सामान खरीदने आया है। मैंने भी ज्यादा दबाव नहीं दिया और चली गयी दूसरे शहर। वहाँ पर लोगों ने मेरे डांस की खूब तारीफ की। वहाँ पर मेरी एक सहेली मिली जिसने मुझसे कहा कि सीमा मेरे होने वाले पति! तब मैं दंग रह गयी। ये तो राजीव है, इसके तो दो बच्चे हैं। मगर कहा कुछ नहीं। वो उसकी चाहत था। भला मैं किसी की चाहत में दीवार कैसे बन सकती थी? मैंने हँसकर उसकी तारीफ की कि जोड़ी शानदार जमेगी तुम्हारी। तुम दोनों गोरे-चिट्टे हो। क्यों राजीव? हाँ क्यों नहीं? अच्छा सीमा जी, हम चलते हैं। मैं बस यही सोचती रह गयी कि आज राजीव ने मुझे सीमा जी कहा। मेरी सहेली भी इसी मोड़ पे आ जायेगी जिस मोड़ पे आज मैं खड़ी हूँ। मगर ऐसा नहीं था। जिसके भ्रम में मैंने राजीव से धोखा खाया था वो असल में राजीव की पत्नी और बच्चे नहीं थे। राजीव की भाभी और भतीजे थे वो सब। मगर राजीव ने जो मुझे धोखा दिया था उससे तो मुझे यही एहसास हो रहा था कि राजीव मेरी सहेली को भी ऐसा ही धोखा दे सकता है। मगर नहीं इस बार दो अमीर घराने के लोग जुटे थे। मैंने किसी के सामने आकश का जिक्र नहीं किया और तब मेरी मुलाकात रोहित से हुई। वो उम्र में कुछ ज्यादा था मगर बातें करने में मुझसे भी कहीं आगे। प्यार न उम्र देख सका, न तहजीब, न ओहदा। वो इतना अमीर था कि शहर का हर एक आदमी उसे जानता था। उसकी पहली पत्नी उसे छोड़कर जा चुकी था। इस बार मैं सिर्फ एक ही मुलाकात में पैसे की खातिर एक अपाहिज आदमी के साथ शादी करने के लिए राजी हो गई। शादी की तारीख तय हो गई। उसकी पत्नी की तरफ से या उसके घरवालों की तरफ से कोई एतराज करने नहीं आया मगर जैसे ही वो मेरी माँग में सिन्दूर भरने लगा, दो बच्चियों ने मेरे पैर में लिपटते हुए कहा, मत करो इनसे शादी आँटी, ये बहुत बुरे हैं। इन्होंने मेरी माँ को धोखा दिया है। तब मैं पीछे पलटी। सामने एक औरत खड़ी थी जो मेरे सामने आ गयी। सीमा, ये बात सच है। सीमा, इसकी हकीकत शायद तुम नहीं जानती। ये देखो इसकी दोनों टाँगें सलामत हैं। ये व्हीलचेयर पर बैठ अपाहिज होने का नाटक कर रहा है। तब उस आदमी ने खड़े होकर उस औरत को थप्पड़ मारा। मैं ताली बजा मुस्कराने लगी, वाह रोहित वाह! इतनी जल्दी दिखा दी अपनी असलियत। तुमने देखा न सीमा इस आदमी को। ये तुमसे शादी कर तुम्हें भी दो बच्चों की माँ बना दिया होता अभी-अभी। हाँ, शायद आप ठीक कहती हैं। ऐसा कह एक ही झटके में दुल्हन का जोड़ा उतार फेंका मैंने और वहाँ से भाग गयी। वापस जब इस शहर में आयी, मेरे बहुत सारे अपने लोग मुझसे डांस प्रोग्राम करवाना चाहते थे। मैंने सबको हामी भर दी और मेरा तीसरा डांस प्रोग्राम था जब मैं आज बिल्कुल सादे लिबास में थी और सोच लिया कि मैं किसी भी किस्म के शराब को अपने मुँह से नहीं लगाऊँगी चाहे वो कितनी भी मँहगी क्यों न हो? और आज भी मैं मशहूर कैबरे डांसर बन इस होटल में प्रोग्राम करने जा रही हूँ। क्या पता कौन-कौन से लोग मिलें आज के इस प्रोग्राम में। शायद राजीव, आकाष्ठा, रोहित सब आयें मगर मेरे लिए वो अजनबी साये ही होंगे। वो ऐसा सोच ही रही थी कि किसी ने आकर कहा मैडम! प्रोग्राम शुरू होनेवाला है और आप यहाँ बैठी हैं। तब उसने अपनी आँखें पोछी और कहा, अभी आती हूँ।

कश्मीरी मौसम

32

अहमद साहब ने आज फिर रेशम के सामने मौसम का जिक्र किया तो रेशम बोली अहमद साहब, मौसम वो मौसम नहीं था जो बदल जाये। मौसम तो हर सर्दी के मौसम में मेरे लिए पशमीने वाली शाल लाने का ही जिक्र किया करता था कश्मीर से। वो कश्मीरी था। उसे सर्दी की आदत थी। मगर मुझे ठंड ज्यादा लगती थी। वो मौसम आज भी मेरी निगाहों के सामने दौड़ रहा है। अहमद साहब! मैं उसे कभी भूल ही नहीं सकती। मुझे आज भी याद है वो पल जब वो मेरी अम्मीजान के पास आया था ये कहने कि चाचीजान, रेशम मेरी ही डोली में रूखसत होगी न? तब मेरी अम्मीजान ने उसका माथा चूमते हुए कहा था हाँ बेटा, वो तेरी ही डोली में रूखसत होगी। मगर उसके वालिद-वालिदान मेरे परिवार से घृणा करते थे क्योंकि मेरे अब्बूजान आतंकवादी गोलियों का निशाना बने थे और मेरे भाईजान अब्बूजान के बदले की आग में आतंकवादी बन चुके थे। मगर मौसम जब कश्मीर जा रहा था एक ही बात कह रहा था कि रेशम, मेरे अब्बूजान चाहे कुछ भी कहें, मैं तुम्हारी डोली अपने ही घर ले जाऊँगा। मेरा इन्तजार करना और फिर एक दिन खबर मिली कि मौसम की दादीजान गुजर गयी। उन्हें कश्मीर जल्दी जाना होगा। मौसम मुझसे मिलने चला आया और बोला रेशम, कश्मीर जाना और जल्दी हो गया। मेरी दादीजान गुजर गयी। अब तो मैं तुम्हारे जन्मदिन पर पशमीने का शाल जरूर लाऊँगा। मैं रोने लगी, रूक जा मौसम। अबकी बार मुझे सर्दी ही महसूस नहीं होगी तो फिर मैं तुम्हारे शाल का क्या करूँगी? तब उसके अब्बूजान उसे मुझसे छीनते हुए बोले, तुम इसके शाल से अपनी अर्थी का सामान सजा लेना क्योंकि मुझे पता है तुम्हारी डोली मेरे आँगन में नहीं, तुम्हारी अर्थी ही जायेगी। चल मौसम। ऐसा कह वो मौसम को ले चले गये। मेरी अम्मीजान मेरे आँसू पोछते हुए बोली कि रो मत रेशम। मौसम तो था ही मौसम। उसके बदलने पर रोना कैसा? मौसम फिर बदलेगा। तब मैं अपनी अम्मीजान से लिपटते हुए बोली, नहीं मेरा मौसम जरूर आयेगा अम्मीजान और उसके जाते ही खिड़की में बैठ गयी। तभी मुझे मौसम की आवाज सुनायी दी। मैंने खिड़की से बाहर झाँकना चाहा। मगर ये मेरा भ्रम था। मगर जब रात को खबर आयी कि दो कश्मीरी लोग रास्ता भटक गये हैं। उनका बच्चा कहीं खो गया है। तब मैं अपनी अम्मीजान के पास गयी। तब वो बोली, रास्ता भटकना कश्मीरियों का काम नहीं और मौसम अगर रास्ता भटक जाये तो फिर उसके वालिद-वालिदान का जिक्र कैसा? जिन्होंने बच्चे के बचपने को अर्थी के सामान के साथ जोड़ दिया। तब मैं निश्चिंत हो बिस्तर पे सो गयी। तभी लगा जैसे मौसम कह रहा हो रेशम, दरवाजा खोलो। मैं जब सामने गयी, खिड़की के पास दो आतंकवादियों को देखा। मैं अम्मी से बोली अम्मीजान, सामने दो अजनबी खड़े हैं और अभी-अभी मैंने मौसम की आवाज सुनी थी। तो अम्मीजान ने कहा, रेशम बेटे! भूल जा मौसम को, भूल जा उसके पशमीने के शाल को। तो मैंने कहा कि मैं कैसे भूल जाऊँ मौसम को माँ? मेरा मौसम तो हर सर्दी के मौसम में आता ही रहेगा मेरे लिए एक नयी बहार लेकर। तो मेरी अम्मीजान बोली कि भूल जा बेटे, वो मौसम तो बीत गया जिसका जिक्र तेरा मौसम किया करता था। तो मैंने कहा अम्मी, वो मौसम शायद बीत गया हो। मगर मेरे लिए एक मौसम फिर आयेगा मुझे लेने और सो गयी थी। तभी दरवाजे पे दस्तक हुई। मेरे भाईजान ने अम्मीजान

को आवाज दी। मेरी अम्मी ने दरवाजा खोला। मगर सामने तो दो आतंकवादी एक बच्चे के साथ खड़े थे। मौसम की आवाज तो आती ही थी रातों को। रेशम ने कहा, मौसम आया माँ। तो आंतकवादियों ने पीछे से उसे धकेलते हुए कहा, मौसम की राह देख रही है न तू। ये ले मौसम का खाली जिस्म और मेरे भाईजान ने मौसम का गला रेत दिया था। मैं चीख पड़ी थी मौसम! मगर सामने उसकी लाश पड़ी थी। मेरी अम्मीजान एक नजर मुझे, एक नजर मौसम को देख रही थी और मैं बार-बार अपने भाईजान के हाथों में पड़े खन्जर को देख रही थी जिसने मेरे मौसम का गला रेत दिया था और मैंने पूछा था कि मेरे पास ही लाके मेरे मौसम का कत्ल क्यों किया भाईजान आपने? तो वो बोले, इसलिए कि इसके अम्मी-अब्बू ने तुम्हारे सामने अर्थी का सामान रखने की बात कही थी। ये देखो अर्थी सज गयी उसके औलाद की। तो मेरी अम्मीजान ने पीछे से उन्हें गोलियों से छलनी करते हुए कहा था कि इसी तरह की बातें कल तेरे वालिद भी किया करते थे खुर्शीद मोहम्मद। मगर तुने उनकी लाश को अपना निशाना बना डाला। आज के बाद कोई अजनबी मेरे दरवाजे पे आने की हिम्मत नहीं करेगा क्योंकि आज मेरी माँग के साथ साथ मेरी कोख भी उजड़ गयी। मगर मेरे सामने बार-बार एक ही आवाज आ रही थी कि रेशम, मैं तुम्हारे लिए पशमीने का शाल जरूर लाऊँगा । तुम मेरा इन्तजार करना। मेरे आँगन में ही तुम्हारी डोली रूखसत होकर जायेगी और मेरी ही मेंहदी तुम्हारे हाथों में रचेगी।

तब से अहमद साहब, मैं अपनी हथेली रचना भूल गयी थी। मगर जब आप मुझसे मिले, मुझसे निकाह की बात की तो मैंने सोचा मेरी बूढ़ी, लाचार अम्मी भला कबतक मेरा साथ दे पायेंगी। इसलिए मैंने आपसे निकाह कर लिया । मगर मैं एक बार फिर कह रही हूँ आपसे आज कि मेरे दिल के हर कोने में मौसम बसा है, आप तो बस निगाहों के सामने हैं। तो अहमद साहब बोले, अगर मैं निगाहों के सामने भी रहूँ न रेशम तो भी मौसम को तुम्हारे सामने से हटने नहीं दूँगा। आज मौसम की याद ताजा करना चाह रहा था क्योंकि मैं जानता हूँ आज के दिन तुम्हारे लिए मुबारक दिन होता था। आज इसी मुबारक दिन पे मैंने तुम्हारे लिए खास पशमीने का साल मँगवाया है कश्मीर से क्योंकि आज सर्दी का मौसम फिर आया है और तुम्हारे जन्मदिन पर तुम्हारा मौसम पशमीना लाना नहीं भूला है आज। रेशम अपलक अहमद साहब को निहारने लगी और कहा, तो आज आपने मौसम की जगह ले ही ली अहमद साहब। नहीं रेशम, मैंने मौसम की जगह नहीं ली। मैं मौसम दे गया तुम्हें क्योंकि तुम हर मौसम में मौसम का ही जिक्र करना चाहती थी। नहीं अहमद साहब, आपने मुझे मौसम नहीं दिया, मौसम की यादें दी है, मौसम का पशमीने वाला शाल दिया है। आज आप मेरे सामने मौसम बनकर खड़े हो गये अहमद साहब। मैं मौसम को तो नहीं भूली मगर आज मैं आपको मौसम से भी ज्यादा पाने को बेकरार हूँ। ऐसा कह उनसे लिपट गयी। आज अहमद साहब बहुत खुश थे और अम्मीजान उन्हें हँसता देखकर अपनी आँखों से बहते आँसूओं को पोछ रही थी और सोच रही थी आज फिर से मौसम जिन्दा हो गया हमारी बेटी के लिए और हमने जो अहमद चुना उसके लिए वो कश्मीरी मौसम तो नहीं, मगर कश्मीर की बहार तो दे ही गया उसे।

बड़ी दीदी

मैं कई दिनों से देख रही थी उन्हें। उनके सामने कई लोग आते थे और उनके कदमों को छूकर गुजर जाते थे। मैं सोचने लगी ये कौन हैं जिन्हें इतना मान-सम्मान देते हैं लोग। वो उम्र में मुझसे बड़ी थी। उनके कुछ बाल सफेद, कुछ काले थे। जब मुझसे रहा नहीं गया तब मैं भी उनके पास जाने की बात सोचने लगी। तभी पीछे से एक आवाज सुनी मैंने और एक तरफ खड़ी हो गयी। कोई कह रहा था बड़ी दीदी इस समाज की एक खास महिला बन गयी हैं आज। मगर इनका कल कितना भयानक था जब सारा जमाना एक पतिविहीन औरत का नाम दे रहा था इन्हें। बड़ी दीदी आज उम्र के ऐसे मोड़ पे खड़ी हैं जहाँ से जिन्दगी एक ऐसा खेल दिखाती है कि कुदरत को भी अपने कायदे-कानून बदलने पड़ते हैं। तब मैं सोच में डूब गयी। ये बड़ी दीदी क्यों कहते हैं इन्हें लोग? क्या इस उम्र में आके लोग ऐसा ही दर्जा पा लेते हैं। हमने भी कुछ सुना था कि ये एक ऐसी औरत हैं जिन्होंने जीवन में सिवाय अँधेरे के कुछ देखा ही नहीं। हमारी माँ भी कहती थी बेटे! जीवन में अगर मिली मैं किसी से तो वो थी तुम्हारी बड़ी दीदी जिसे मैंने छोटी उम्र से देखा था और जब मैंने माँ से पूछना चाहा कि ये बड़ी दीदी कब से रहने आयी हैं इस मकान में माँ? तब वो खामोशी से हँसकर बात को टाल गयी। मगर आज जब बड़ी दीदी की इतनी तारीफ सुनी मैंने लोगों से तो सोचा चलूँ माँ के पास। तभी इससे पहले मुझे बड़ी दीदी के पास जाने की चाहत हुई। मैं मुड़ गयी उनके घर की तरफ। माँ ने मुझे नहीं देखा और जब आँख में चश्मा डाले बड़ी दीदी ने हमारी तरफ देखा तो पूछ बैठी, तुम कौन हो? तो मैंने कहा दीदी! मैं यहीं पड़ोस में रहने आयी हूँ। मुझे लोग सिमी कहते हैं और जिन्हें मेरा नाम अटपटा लगता है वो मुझे गुड्डी कहते हैं मगर माँ मुझे बचपन से आरती कहती आयी है। तब वो इतनी जोर से हँसी कि मुझे कुछ अजीब सा लगा और तब मैं उनकी हँसी में छुपे खोखलेपन को पढ़ने लगी। उन्होंने कहा, तुम्हारे तो इतने सारे नाम हैं सिमी! तब मैं भी हँस पड़ी। आपको मेरा नाम याद हो गया दीदी तो उन्होंने कहा, क्यों न याद हो? इतने सालों में मैं अनगिनत नामों से मिली हूँ जिनमें कुछ तुम्हारे नाम भी शामिल थे। तब मैंने उनकी तरफ देखते हुए कहा कि आपका पूरा जीवन किन लोगों के बीच बीता दीदी तो उन्होंने एक बार फिर कहा तुम जैसे कम उम्र बच्चों के साथ मेरा पूरा जीवन बीता सिमी! मैं जब इस शहर में आयी थी तो तुमसे भी कम उम्र थी हमारी और आज पन्द्रह से पचपन साल की हो गयी हूँ मैं। मेरी आँखों में चश्मा जो तुम देख रही हो न, ये मैंने अपनी स्याह आँखों को छुपाने के लिए लगायी है। मेरे आँखे काली होने के साथ-साथ नीली भी हो गयी है। कैसे दीदी? तुम जैसी अनगिनत सिमी, गुड्डी और आरती की मार सहते-सहते। मैं वर्षों से तुम लोगों को सम्हाल रही थी सिमी! मगर तुम सब जवान क्या हुए, भूला दिया अपनी बड़ी दीदी को। तब मैंने जाना कि जो बड़ी दीदी लोगों को इतने आशीर्वाद देती हैं, जिनके कदमों में इतने लोग आकर झुकते हैं वो बड़ी दीदी असल में कितनी तन्हा हैं। फिर मैंने उनकी आँखों से चश्मे को हटाया और उनके आँसू पोछते हुए बोली मैं भले ही पन्द्रह साल की हूँ और आप पचपन साल की, मगर मेरी माँ ने मुझे आप जैसे लोगों का मान-सम्मान करना सीखा दिया है। कल जब मैं जाने लगूँ, मेरा हाथ पकड़कर रोक लेना बड़ी दीदी! तब उन्होंने कहा, जब किसी को रोक नहीं पायी तो तुम्हें कैसे रोक पाऊँगी मैं? आज तुम पन्द्रह साल की हो जब पच्चीस की हो

जाओगी, तुम्हारी माँ तुम्हारी शादी कर देगी। तब शादी के बाद क्या बड़ी दीदी की याद आयेगी तुम्हें? तब मैंने कहा कि दीदी! पन्द्रह से पच्चीस होने में मुझे दस वर्ष लगेंगे और इन दस वर्षों में मैं चाहती हूँ कि आपसे कुछ सीखूँ। आप पढ़ना सिखायेंगी मुझे? तो उन्होंने कहा कि किसी को पढ़ाने की चाहत छोड़ दी मैंने क्योंकि मेरी आँखें आज भी उन सबको अपने पास घिरे देखना चाहती है। मगर वो सब अलग-अलग जगहों के थे, कहीं दूर चले गये। अब अगर तुम्हें पढ़ाने लगी तो तुमसे मेरा नाता जुड़ जायेगा। तुम्हारे बाद और लोग आयेंगे जिन्हें देख-देखकर रोती रहूँगी मैं क्योंकि कोई भी आज तक ऐसा नहीं मिला जो मुझे याद रख सके। मगर मेरी पूरी जिन्दगी तो रोते हुए ही कट जायेगी न सिमी। मत याद दिलाओ मुझे मेरे लोग। तब मैंने कहा कि आखिर आप अपने लोगों को याद कर रोती हैं तो सारे लोग जो आपकी तरफ आपके कदमों में झुकने आते हैं क्यों नहीं कहती उनसे कि मेरा पीछा मत करो। बताइए दीदी, ये लोग कौन हैं जो अभी-अभी आपके पास आये थे जो एक बच्चे के माँ-बाप थे। तब उन्होंने कहा कि जीवन में मैंने खेल-खिलौनों से खेलते जितने लोगों को जीने की तहजीब सिखायी, जो मुझसे पढ़ने आया करते थे, सब लोगों के घर बस गये। उनके पास अब तुम्हारी जितनी उम्र के बच्चे आ गये हैं खेलने-कूदने। खेल-खिलौनों से खेलने वाले ये लोग मुझसे गुजारिश करने आते हैं कि मैं उनके बच्चों को आशीर्वाद दूँ। ये लोग जीवन में मुझे कुछ इज्जत तो देते हैं मगर इनको देने के लिए आज मेरे पास कुछ भी नहीं है। मगर क्यों दीदी? क्योंकि आज मैं अंधी हो गयी हूँ। तुम्हें क्या किसी को पढ़ा नहीं सकती मैं। हाँ, मुँह से बोलकर कुछ बातें जरूर सिखा सकती हूँ। सीख लो। तो इसलिए आप हमेशा ये चश्मा पहने रहती हैं दीदी। मगर दीदी! आपने अपनी आँखों का इलाज क्यों नहीं करवाया? क्योंकि मैं किसी के दर्द को जीवित रखना चाहती थी। कोई मेरा अपना था जिसकी लाश मेरी आँखों के सामने से गुजर गयी, जो मुझसे हर बात कहती थी, जिसकी मैंने बहुत देखभाल की थी, जिसे मेरी जरूरत थी। तुम्हारी तरह वो भी बातें किया करती थी। मगर जब मैंने उसे खो दिया तो उसकी याद में अपने आप को भूला दिया। मगर आज जब तुमसे बातें कर रोयी तो याद आया कि मैं एक चश्मा भी लगा लेती हूँ उसके दर्द के आँसूओं को छुपाने के लिए। उसके साथ मेरी जिन्दगी ही चली गयी। तब मैंने रोते हुए उनके कदमों को छू लिया और कहा, दीदी! आज से आप मन की आँखों से मुझे देखिए। मैं आपकी उस चहेती की कमी जरूर पूरी कर दूँगी दीदी। तब उन्होंने कहा, तुम मुझे मान-सम्मान तो दे सकती हो मगर तुम्हारा प्यार मेरी जिन्दगी की उस कमी को पूरी नहीं कर सकता। मत आना बार-बार मेरे पास मोह जताने क्योंकि तुम फकत मुझे धोखा देने आयी हो। तुम ऐसी तितली हो जिसके बाल तो सुनहरे हैं मगर आँखें नीली है जो मुझे किसी की याद दिलाती है। इतना कह वो जोर-जोर से रोने लगी। मैंने उनकी तरफ एक नजर देखा और वापस अपने घर आ गयी। दूसरे ही दिन पापा ने मुझे हॉस्टल में डालने की बात की माँ से और मैं बड़ी दीदी से की गयी बातें याद करने लगी जो उन्होंने कहे थे कि तुम जैसे लोग मुझसे मिल मुझे मान-सम्मान तो देते हैं मगर मेरा साथ नहीं देते। तुम भी चली जाओगी मुझे छोड़कर। और मैंने जाते वक्त उनके बारे में सोचते हुए बस इतना ही कहा कि वो एक ऐसी हस्ती हैं जिनका नाम लोग फख्र से लेते हैं।

राहुल से अलग हुए सीमा को पन्द्रह साल हुए और इन पन्द्रह सालों में उसने अपनी बीती जिन्दगी की ओर पलटकर कभी नहीं देखा। आज उसका बेटा अभिषेक जवान हो चुका था जिसे उसने गोद लिया था। इन पन्द्रह सालों में उसने जिन्दगी से बहुत कुछ सीखा।

आज की शाम अभिषेक आनेवाला था। उसके इंजिनियरींग कॉलेज से छुट्टी मिल रही थी उसे। वो 5 साल का था जब सीमा ने उसे गोद लिया था। वो सड़क पर नंगे पाँव अपने आप को घिसट रहा था। उसने सीमा की साड़ी पकड़ कहा, मुझे भूख लगी है खाना दो। सीमा को उसकी इन बातों से इतना दर्द हुआ कि वो रो पड़ी। बोली बेटा! मैं तुझे खाना भी दूँगी, अपने घर भी ले जाऊँगी। पहले ये बताओ, तुम्हारी माँ ने तुम्हें खाना क्यों नहीं दिया? वो सौतेली है न, इसलिए। तब सीमा को लगा था जब इतना नन्हा सा बच्चा सगी माँ और सौतेली माँ का फर्क जान सकता है, ये प्यार पा अपनी माँ को भूल सकता है। तो मैं राहुल को नहीं भूल सकती। मुझे भी तो पापा ने इतना प्यार दिया। बस उसी क्षण से सीमा के दिल में कुछ बनने की चाहत जागी और उसने पढ़ाई के साथ-साथ अभिषेक की परवरिश भी की। पापा ने सीमा की काफी मदद की। आज वो पन्द्रह साल बाद इतनी खुश नजर आ रही थी कि आज अगर पापा होते तो सोचते हमारी बेटी ने सफर में मन्जिल पा ली। आज उसने राहुल के नाम पन्द्रह साल बाद एक खत लिखा।

राहुल

मैं तुम्हारी दुनिया से बहुत दूर हूँ और खुश भी हूँ। मैंने कभी पीछे पलटकर ये नहीं देखा कि मेरा अतीत क्या है? मैंने जिन्दगी में आगे देखा, बस आगे, बहुत आगे और आज एक मकाम पे खड़ी हूँ। न तुम पहले मुझे याद आया करते थे न आज याद आते हो। आज मेरा बेटा जवान हो गया है। हाँ, मेरा बेटा। मेरी परवरिश से वो जवान हुआ है। वो मेरे बूढ़ापे का सहारा है। पर आज तुम मेरी दुनिया में कहीं नहीं हो। हो सके तो ये खत पढ़कर देख लेना और सोचना कि जीवन-सफर में तुमने क्या पाया, क्या खोया? मेरे पापा ने मुझे एक मकाम पे खड़ा किया है आज। मैं कल अपने बेटे को एक मकाम पे खड़ा देखूँगी। तुम चाहे संसार के किसी भी कोने में रहो, मेरी आवाज तुम्हें चिख-चिख कहेगी राहुल। तुमने जिसे पत्थर समझ रास्ते से हटा दिया वो आज खरा सोना बन गयी है जिसे लोग एक नाम, एक मकाम पे खड़ा देख चुके हैं। आज दुनिया मुझे सीमा नहीं, सीमा जी कहती है। तुम सोचो, दुनिया तुम्हें क्या कहती है। मैं तो सफर में मन्जिल पा चुकी। पर शायद तुम्हें सफर में मन्जिल नहीं मिली। इन पन्द्रह सालों में मैंने तुम्हारी ओर पलटकर नहीं देखा। देखना भी नहीं चाहती मगर आज मुझे पता चला कि तुमने सफर में जिन्दगी गंवा दी। तुम अपने दोनों पैरों से लाचार हो चुके हो। हाँ राहुल! मैंने सुना है तुम्हें चलने के लिए पग-पग बैशाखी का सहारा लेना पड़ता है और मुझे मेरा बेटा, अभिषेक अपनी उँगलियों का सहारा देता है। सोचो कितना बदल गया हमारा सफर। पहले मैंने सहारे के लिए तुम्हें चुना था। सोचा था एक अकेली लड़की का घर वही होता है, पति का घर। पर आज जाना कि एक अकेली लड़की का घर एक और भी होता है, बेटे का घर। तो राहुल, आज मुझे मेरे बेटे का घर मिल गया। आज मैं अभिषेक के सहारे एक नये सफर पे जा रही हूँ इस शहर से दूर, बहुत दूर जहाँ मेरा बेटा

मुझे रखना चाहता है। वो मुझे चाँदनी के घर ले जाना चाहता है। अब सोचोगे, ये चाँदनी कौन है? ये मेरी बहू है। शहर में मेरे बेटे ने एक घर लिया है जो कि मेरे प्यार की, मेरे आशीर्वाद की, मेरी बहू के इसरार की निशानी है। यही तमन्ना लिये जा रही हूँ। आज पापा का घर छोड़ रही हूँ। पापा नहीं रहे, अभिषेक भी नहीं रहा। तो ये घर मैं क्यों न छोडूँ? जहाँ बच्चे जवान हों, जवानी से उन्हें प्यार हो, वही घर माँ का घर होता है राहुल। हाँ राहुल आज पापा का घर भी मुझे अपना नहीं लगता। इतनें वर्षों में मैं सदा पापा को ही याद करती रही। बाद में याद आया कि मेरा एक बेटा भी है अभिषेक जिसे पापा ने बहुत अच्छे संस्कार दिये। आज पापा नहीं हैं। मगर हमारे बेटे में तो पापा के दिये हुए संस्कार ही मौजूद हैं। आज से हम-तुम अलग-अलग सफर पे चलेंगे। तुम्हारी राहें मुझसे पन्द्रह साल पहले अलग हो चुकी थी। मेरी राहें आज मेरे बेटे अभिषेक के साथ आ मिली है। यही सोच-सोच कभी रोती हूँ तो कभी हँसती हूँ। पर तुम्हारा चेहरा कभी याद नहीं करती। मैं तो इतने वर्षों में तुम्हारा नाम लेना भी पाप समझती रही।

सीमा

इतना लिख लेने के बाद सीमा ने जैसे ही खत लिफाफे में डाला, अभिषेक की आवाज सुनाई दी उसे। वो दौड़ता हुआ आ रहा था। ममा, मैं लौट आया। सीमा ने अभिषेक को गले से लगा लिया। बोली बहू कहाँ है? ममा, मैंने उसे सरप्राइज गिफ्ट में बन्द कर रखा है, शहर जाकर खोलेंगे। चलो, मुझे कुछ खाने को दो। देती हूँ बाबा, देती हूँ। पहले हाथ-मुँह तो धो लो। नहीं, आज ऐसे ही खाऊँगा। और सुना बहू के बारे में सीमा ने कहा तो अभिषेक बोला, कुछ नहीं सुनाऊँगा। कहा न मैंने तुम्हारी चाँद सी बहू को सरप्राइज गिफ्ट में छुपा रखा है। सीमा हँस पड़ी। ऐसी बात है तो फिर गिफ्ट खुलेगा कब? अभी। नहीं बाबा, मैं तो आज नहीं जाऊँगी। पापा के घर में पहले तुम्हें जी भरके खेला तो लूँ, तब चलेंगे। ममा, नानाजी ने कहा था न एक रोज कि जीवन एक सफर है और हम सब मुसाफिर। तो ममा! जीवन-सफर में नानाजी ने कौन सी मन्जिल पायी? वो कैसे मुसाफिर रहे? तो सीमा ने कहा बेटे, जीवन-सफर में तुम्हारे नानाजी ने पहले मुझे पाया, फिर तुम्हें। वो एक खास मुसाफिर रहे। तो माँ चलो, आज ही हम भी एक नये सफर पे निकल पड़ते हैं। हाँ अभिषेक, शायद तुम ठीक कहते हो। इतना कह सीमा ने खत फाड़ डाला। तो अभिषेक बोला, किसका खत था माँ जिसे तुमने फाड़ डाला था एक अनजान मुसाफिर का। गलती से हमारे बीच आ गया। अच्छा चलो सामान मैंने पैक कर रखा है, जल्दी से निकलते हैं।

गुल और गुलिस्तान

आज आग में लिपटी एक गुल की तड़प देखी हमने और यही सोचकर हैरान रह गयी कि खुदा ने गुल की तकदीर में ये क्या लिख दिया? उसे ठंडी हवा की जरूरत थी, उसे आग के घेरे में डाल दिया। मगर पता नहीं क्यों, खुदा अपनी करतूत पर हैरान न हो सका और तब मैंने एक दिन खुदा को धिक्कारा कि ऐ खुदा! तू भी हमारी तरह अपाहिज की जिन्दगी गुजार कर देख और सोच कि तेरे बनाये इस जहां में हाथ-पाँव होते हुए भी मैंने एक अपाहिज की जिन्दगी कैसे गुजारी? गुल बेचारी नादान थी जो तेरी बातों में आ इस जहां के किसी गुलिस्तां से दिल लगा लिया। मगर जब वो गुलिस्तान में पहुँची, वहाँ के सारे गुल उसकी बदनसीबी पे हँस रहे थे। तब गुल ने कहा, मुझपे क्यों हँसते हो तुमसब? मेरा क्या कसूर? तो वे लोग बोले, कसूर तेरा कुछ भी नहीं। पर हम तेरी नासमझी पे हँस रहे हैं कि तुम इन बेगैरत लोगों के गुलिस्तान में क्यों आ फँसी? तुम तो खूबसूरत थी। कहीं भी एक गुलिस्तान तुम्हारी राह देख रहा होगा। तो गुल ने कहा, शायद तुम ठीक कह रहे हो। बहुत सारे गुलिस्तान मेरा इन्तजार कर रहे थे राह में। पर मेरे पास आते-आते उनकी चाहत अंगारों में लिपट गयी। मैंने उन सब को अपनी जिन्दगी से दूर कर दिया और कहा, वहाँ नहीं जाना हमें। वहाँ तो आग-ही-आग है। पर आज जाना कि वहाँ अगर आग था तो पास ही में कहीं-न-कहीं पानी भी जरूर था। पर मैंने तो ऐसे गुल और ऐसा गुलिस्तां चुने जो तपती रेगिस्तान की मरूभूमि में मुझे प्यासा छोड़कर चला गया। आज मैं एक बूँद पानी को तरस रही हूँ अपनी प्यास बुझाने को, पर मैं क्या करूँ?

तू कुछ मत कर। बस उस आग से अपना दामन बचाती रह जिस आग ने तुझे चारो ओर से घेर रखा है और इन्तजार कर उस दिन का जबकि पानी बरसेगा। इस तरह गुल ने पहली बार हमदर्दी के दो बोल सुने और वापस अपने घर आ गयी और खुदा के दरबार में बैठी रही। मगर काफी वक्त बीत गये, पानी नहीं बरसा और गुल धीरे-धीरे मुर्झाने लगी। लोग देखते रहे बेचारी गुल को, जो इतनी खूबसूरत थी, एक गुलिस्तां ने त्याग दिया। खुदा करे वो गुलिस्तान ही जल जाये और फिर एक दिन सचमुच गुल जब आँगन से बाहर हुई, उस गुलिस्तान में आग लग गई। मगर तबतक काफी वक्त बीत चुका था, गुल भी झुलस गयी थी मगर जिन्दा थी और सारा गुलिस्तान आग की लपटों से घिर चुका था। फिर भी खुदा को वो याद न कर सका। उसने सोचा कि इस गुल के शाप ने आज हमें जला डाला। उन्होंने एक साथ मिलकर आग की चन्द लपटें गुल के ऊपर फेंकी, मगर वो लपटें बारिश की बूँदे बन गुल की रक्षा करने लगी। अब गुल को होश आने लगा। तब उसने पास ही में खुदा को देखा और बोली, ऐ खुदा! तुने आने में बहुत देर कर दी। आज तो मेरा गुलिस्तान ही जल गया। तो खुदा बोला, तेरा गुलिस्तान नहीं जला बेटी। ये तो पाप का एक जहां जला है। आ चल मैं तुझे एक ऐसे गुलिस्तान में ले चलता हूँ जहाँ पर कि चाहत-ही-चाहत है। चाहतों के खामोश मंजर बुला रहे हैं तुम्हें। आ चल। अब गुल खुदा के पीछे-पीछे चल पड़ी और एक जगह जाकर रूक गयी और पूछा, मेरा गुलिस्तान कहाँ है खुदा? तो वो बोला, ये हरी-भरी वादी, ये वसंत के लहराते मौसम, ये ठंडी हवाएँ, ये है तुम्हारा गुलिस्तान। आज तुम आजाद हो। आग की वो लपटें तुम्हें छू भी नहीं सकती। वो तुम्हारी पहुँच से परे है।

39 कनक : स्मृति पुष्प

इस तरह पहली बार गुल ने खुली हवा में साँस ली और महसूस किया कि यही सारा जहां है। इतना कह बहारों के आईने में अपना चेहरा देखा और सोचा, मैं इतनी खूबसूरत थी जिसे उन जालिमों ने बदसूरत बना छोड़ा था।

यही कहानी थी उस गुल की और उस पापी गुलिस्तान की कि पाप की हवा इतनी तेजी से आग की लपटों से लिपट जाती है कि उस आग से कोई बच ही नहीं सकता। आज गुल के पास एक हरी-भरी वादी थी और सारा गुलिस्तान राख का ढेर बन चुका था। कल गुल अपनी बदनसीबी पे रो रही थी, आज वो अपनी खुशकिस्मती पे हैरान हो रही थी।

रिश्तों की पहचान

40

आनन्द बाबू क्या सोच रहे हो? कुछ नहीं दामिनी जी मैं जरा बच्चों के संसार में वापस चला गया था। जब मैं वृद्धाश्रम आ रहा था, मेरी पोती ने मेरे पाँव पकड़ लिये थे। कहा था, दादाजी मत जाओ। माँ रोको दादाजी को, पापा रोको न इन्हें। तब मेरे बेटे-बहू ने मुँह फेर लिया था मुझसे और मैं ऑटो पकड़ यहाँ आ गया था। मुझे आज भी अपनी पिंकी की वही बातें याद आ रही है। तो दामिनी जी बोली, आनन्द बाबू रिश्ते समय के थपेड़ों से कमजोर पड़ जाते हैं। हमें ये नहीं भूलना चाहिए कि जब अपने खून ने साथ नहीं दिया तो वो नन्हीं सी जान जिसकी कोई दुनिया नहीं, वो क्या रख पायेगी हमारा ख्याल? तो आनन्द बाबू बोले, दामिनी जी शायद आप ठीक कह रही हैं। रिश्ते में बँधे हम अपनी हर खुशी त्याग देते हैं। मगर ये याद नहीं रख पाते कि ये खुशी चन्द दिनों की मेहमान है हमारे घर में। सोचो आप, अगर हमने शादी न की होती तो शायद अपनी जायदाद से अच्छी तरह गुजारा कर सकते थे हम। मगर हमने शादी की। बच्चे लाये इस दुनिया में ये सोच कि कल ये हमारा सहारा बनेंगे जब हम बूढ़े हो जायेंगे। मगर देखा न आपने, वो सहारा किस तरह बने हमारा। हमसे हमारी वैशाखी छीन ली उन्होंने। फिर हमें मजबूर हो यहाँ आना पड़ा। दामिनी जी, मैं आपसे ये वादा करता हूँ आज कि फिर कभी आप मेरे चेहरे पे उदासी नहीं देखेंगी। तब वो सोच में पड़ गयी। आनन्द बाबू ने तो अपना दिलोदिमाग काबू में कर लिया पर मैं क्या करूँ जिसे हर रात सपने में नन्हा रोहित ही दिखता है। वो उसके साथ दौड़ती है, भागती है। उसके साथ आँख मिचौली का खेल खेलती है। कहीं वो उसे छोड़ने स्कूल जाती है। उन्हें आज भी याद हैं वो लम्हें जब वो रोहित को छोड़ने स्कूल जा रही थी। रास्ते में रोहित गिर गया था। शाम को जब रोहित के माथे पे पट्टी बँधी देखी उसकी माँ ने तो कहा, क्या हुआ रोहित को माँजी? तो रोहित बोला, कुछ नहीं माँ मैं गिर गया था। वो बोली थी, कोई जरूरत नहीं तुम्हें इनके साथ स्कूल जाने की। मैं तुम्हारे लिए आया रख लूँगी। तब रोहित बोला था, क्यों माँ तुम नहीं जा सकती मुझे स्कूल छोड़ने? मेरा पैर नहीं फिसलेगा। तुम मेरा हाथ पकड़ चलना तो बहू ने कहा था, मेरे कपड़े खराब हो गये तो मैं पार्टी में कैसे जाऊँगी। तब रोहित ने उनकी ओर देखा था और कहा था कि सॉरी माँ, मैं आपके साथ ही स्कूल जाऊँगा। मगर दूसरे ही दिन बेटे-बहू ने रोहित के लिए आया रख ली और मुझे कहा, माँ तुम अब बूढ़ी हो गयी हो घर में आराम करो। तुम्हें रास्ता ठीक से दिखाई भी नहीं देता और तब उन्होंने सोचा कि एक ही जगह बची थी खाली। वो भी भर गयी। जब रोहित के लिए आया आ ही गयी तो मैं इस घर में किस मकसद से रहूँ और उन्होंने एक रात घर छोड़ दिया था। फिर किसी ने उन्हें ढूँढा भी नहीं। मगर वो बार-बार रोहित को कहीं ढूँढना चाह रही थी। तभी आनन्द बाबू बोले, दामिनी जी आप शायद कहीं खो गयीं। तो उन्होंने कहा, नहीं आनन्द बाबू मैं भी आपकी तरह रास्ता भटक गयी थी। तो आनन्द बाबू बोले, नहीं दामिनी जी आप रास्ता नहीं भटकी थी। इस उम्र में अकेलेपन ने आपको रास्ता भटकने पर मजबूर कर दिया था। चलिए सोमेश बाबू की विदाई हो रही है। उन्हें आखिरी बार देख लेते हैं। तब वो बोली, शायद इसी तरह एक दिन मैं भी चली जाऊँगी आनन्द बाबू और आप देखते रह जायेंगे। तो आनन्द बाबू बोले नहीं दामिनी जी, मैं इस बार अकेले नहीं जाऊँगा। मैं आपको भी साथ लेता जाऊँगा। किस रिश्ते से आनन्द बाबू आप हमें साथ ले चलेंगे तो आनन्द बाबू बोले एक रिश्ता सबसे

बड़ा होता है दामिनी जी। दोस्ती का रिश्ता, अपनापन का रिश्ता। तब वो शर्म से निगाहें झुकाते हुए बोली थी मैंने कभी आपके लिए ऐसी बातें नहीं सोची आनन्द बाबू। आप मेरी नजरों में महान हो गये। बातें हो ही रही थी कि ''राम नाम सत्य है'' का नारा गूँजने लगा और सोमेश बाबू की विदाई हो गयी। रास्ते भर आनन्द बाबू दामिनी जी के बारे में सोचते रहे थे। जब वो लौटे देखा दामिनी जी एक लड़के के साथ बैठी हैं। बोले, ये लड़का कौन है दामिनी जी? तब वो चहकते हुए बोली, मेरा पोता रोहित है ये आनन्द बाबू।

रोहित ने उनके पैर छुए और कहा, दादाजी प्रणाम। तब आनन्द बाबू ने हँसते हुए उसे गले से लगा लिया और जब वो जाने लगा तो बोले, दादी माँ को साथ नहीं ले जाओगे बेटे। तो रोहित ने कहा, दादाजी मैं बचपन से यही देखता आ रहा हूँ कि लोग दादी माँ से कुछ-न-कुछ हमेशा छीनते ही रहे हैं। आज मैं इनसे कुछ छीनने नहीं आया। इनसे मिलने आया हूँ, देखने आया हूँ। पर जब देखा कि ये आपके साथ खुश हैं तो दादाजी मैं समझ गया कि दादी माँ की असली खुशी कहाँ है। दादाजी, दादी आज उम्र के उस मोड़ पे आ गयी हैं जहाँ से रिश्ते दुबारा नहीं बनते और बनते हैं तो दुबारा नहीं टुटते। मैं चलता हूँ दादी माँ। मेरे दादाजी का खयाल रखना। तो आनन्द बाबू चौंके, तुमने मुझे अपना दादाजी कहा बेटे। हमारा रिश्ता जुड़ गया आज तुमसे। आज हमारे रिश्ते ने एक नयी पहचान पा ली है। कल जब यहाँ आया था बिल्कुल अकेला था। मगर जब तुम्हारी दादी माँ से मिला, सारा अकेलापन भूल गया। तो दादी माँ बोली, ये रिश्ते हैं आनन्द बाबू जो कभी नहीं टूटते। आपने मुझसे जो वादा किया है, वो मैं भूल ही नहीं सकती। तो रोहित बोला कौन सा वादा दादी माँ? साथ चलने का वादा, बेटे। जब ये दुनिया छोड़ जायेंगे मुझे भी अपने साथ ले जायेंगे। क्या आपकी इतनी कद्र है यहाँ दादी माँ? तो मैं भी कहता हूँ कि आप यहाँ से ज्यादा कहीं खुश नहीं रह पायेगी। वहाँ न माँ आपको इतनी खुशियाँ दे पायेगी, न पापा। मैं तो आपको खुश देख रहा हूँ न? आप यहीं रहना दादी माँ, मैं चलता हूँ। तो आनन्द बाबू ने कहा, फिर आना बेटे। मैं रिश्ते की पहचान करना सीख गया हूँ। दुबारा भी तुम्हें जरूर पहचान लूँगा। ऐसा कह दामिनी जी का हाथ पकड़ा और चले गये आश्रम के अन्दर।

ये उम्र का ऐसा सफर है जहाँ लोग तन्हा हो जाते हैं। आज आनन्द बाबू ने रिश्तों की महफिल सजा ली थी। वो बूढ़े हो गये थे मगर दामिनी जी साथ थी उनके।

इम्तहान

कुछ जिन्दगियाँ यूँ ही कट जाती है। सभी को सफर में मंजिल नहीं मिलती। बस एक चाहत लिए जिये जाते हैं हम कि खुदा शायद हमारी मुराद पूरी करे। आज शोभा चहकती हुई घर आयी कॉलेज से। आते ही बोली माँ, आज खाना अपने हाथों से खिला। बहुत भूख भी लगी है और बहुत दिनों से तुम्हारे हाथ का खाना भी नहीं खाया। माँ बोली, शोभा बेटे कुछ तो शर्म कर। घर में मेहमान आये हुए हैं तुम्हें देखने। तो शोभा बोली, क्यों? वो डॉक्टर हैं माँ ? मैं चलती हूँ उनके पास। कॉलेज से लौटते वक्त आज मेरे पैर में मोच आ गयी थी। माँ ने कहा, वो डॉक्टर नहीं हैं रे। तेरे पापा के साथ आये हैं तेरा रिश्ता माँगने। तो शोभा बोली, माँ उन्हें क्या पड़ी है हमसे रिश्ता जोड़ने की? वो मेहमान हैं मेहमाननवाजी करा दो, फिर चलता करो सबको। माँ ने कहा, बाहर बैठे मेहमान सारी बातें सुन रहें होंगे बेटा। तभी पापा ने माँ को आवाज दी। शोभा की माँ, शोभा से कहो मेहमानों के लिए चाय लाये। शोभा बोली, लाओ माँ मैं चाय लेकर जाती हूँ। देख तू मैं कैसे उनकी छुट्टी करती हूँ। माँ बोली, नहीं शोभा तुम्हें मेरी कसम, वहाँ काई शरारत मत करना। शोभा बोली, ठीक है माँ। मगर जाते ही पहले उन्हें चाय देने की बजाय बोली, आपके घर में चाय नहीं बनती जो इतनी दूर चाय पीने चले आये। मेहमान नाराज होने की बजाय बोले, बेटी हम इतनी दूर से तुम्हारे हाथ की चाय पीने आये हैं। अब शोभा को भी हँसी आ गयी। बोली, आज आप नाश्ता भी करते जायें आँटी? तो वो बोली, अब तो तेरे हाथ का खाना भी खाकर जाना पड़ेगा। मगर आज नहीं, फिर किसी दिन। फिर वो बोले पापा से, ओबरॉय साहब हमें अपने बेटे के लिए आपकी बेटी शोभा बहुत पसन्द आयी। पापा बहुत खुश हुए। बोले, आपलोगों ने मेरी अल्हड़ बेटी को पसन्द किया भाभी जी। मेरी मुराद पूरी हुई। तो वो लोग बोले, नहीं ओबरॉय साहब आपकी शोभा को कौन अभागा होगा जो पसन्द नहीं करेगा? फिर जाते हुए बोले, जरा शोभा को बुलाइए। पापा ने माँ से कहा, शोभा की माँ शोभा कहाँ गयी? माँ ने कहा, ऊपर कमरे में है। फिर शोभा को आवाज देते हुए बोली, शोभा बेटी जरा नीचे आ। शोभा ने कहा, सारे मेहमान चले गये माँ। माँ ने कहा, नीचे तो आ। शोभा बोली, आती हूँ। जब शोभा नीचे आयी, सब लोग देखकर हैरान हो गये। शोभा दुल्हन की तरह सजी हुई थी माँ की साड़ी और जेवर पहनकर। मेहमानों ने देखा कि शोभा कितनी खूबसूरत और चुलबुली है मगर खुश हुए। बोले, बेटी तुम्हें देख लिया। अब चलती हूँ। मगर तेरी नजर तो उतार दूँ। ऐसा कह उन्होंने पाँच सौ का नोट निकाला और बोली, लीजिए ओबरॉय साहब इसे मेरी तरफ से भिखारियों को बाँट दीजिएगा। पापा बोले, ये आपका बड़प्पन है भाभी जी। फिर शादी की तारीख तय हो गयी। ज्यों-ज्यों शादी के दिन करीब आते गये, शोभा मुस्कराना भूल गयी। उसकी याददाश्त वापस आ रही थी और उसे वो पल याद आने लगे जब वो पहली बार दुल्हन का लिबास पहन हाथ में माला लिये सीढ़ियों से उतर रही थी। बारात दरवाजे पर आ चुकी थी। उसके हाथ मेंहदी से लाल थे। तभी पटाखों के शोर में उसे दूल्हे के चीखने की आवाज सुनायी दी। शोभा ने माँ से पूछा, माँ ये आवाज कैसी है? तो माँ बोली, ये पटाखों का शोर था बेटे। मगर वो पटाखों का शोर नहीं दूल्हे की आवाज थी जो मर चुका था। सारे मेहमान दौड़ पड़े थे। शोभा के हाथ से माला छूटकर नीचे जा गिरा था। उसके मेंहदी से रचे हाथ सफेद हो

चुके थे। माँ बेटी की हालत को समझ रही थी। चारो ओर एक ही आवाज थी। लड़की बेचारी दुल्हन बनते-बनते बेवा हो गयी। आज इतने सालों बाद उसकी याददाश्त वापस आ गयी थी। वो दुबारा दुल्हन बन रही थी। माँ की आँखों से आँसू बह रहे थे मगर बेटी की हालत को समझ रही थी वो। शोभा जब से गुम हुई थी, बहुत बोलने लगी थी। उसकी चाहत थी कि वो दुल्हन बने जबकि उसके सर से लाल जोड़ा पाँच साल पहले ही उतर चुका था। शोभा माँ से बोली, माँ कितनी बार दुल्हन बनाओगी मुझे। तो माँ ने कहा, तू पहली बार दुल्हन बन रही है बेटी। तो शोभा बोली नहीं माँ, मैं दूसरी बार दुल्हन बन रही हूँ। तो माँ बोली बेटे, इस बार तू हमेशा लाल जोड़ा पहनेगी। तो शोभा ने कहा, माँ ये झूठे वादे मैं पहले ही भूल चुकी हूँ। मगर डॉक्टर और पापा के समझाने पर शोभा दूसरी बार दुल्हन बनने को राजी हो गयी। शादी के दिन करीब आ गये।

आज शोभा की बारात आ रही थी। माँ-पापा बहुत खुश थे। मगर जब बारात आयी, शोभा फिर सीढ़ियों से उतरने लगी। माँ-पापा देख रहे थे। सारे मेहमान देख रहे थे। मगर शोभा न जाने किन ख्यालों में गुम थी। जैसे ही वो माला दूल्हे के गले में डालती, दूल्हे की बुआ ने कहा नहीं ये शादी नहीं हो सकती। ये लड़की पागल है। तो दूल्हे की माँ बोली, आप कैसी बातें कर रही हैं दीदी? तो वो बोली, मैं ठीक कह रही हूँ। आज से पाँच साल पहले मैंने इसे इसी लिबास में देखा था। फिर उन्होंने सारा हाल सुनाया। माँ-पापा हाथ जोड़े खड़े थे। दूल्हे के बोलने से पहले शोभा बोली, तुम मुझसे विवाह करोगे। तो दूल्हा बोला, माँ मैं इस पागल लड़की से शादी नहीं करूँगा। तो शोभा बोली, तुम माँ से नहीं मुझसे बोलो। तो वो बोला नहीं। तब शोभा गुस्से में दूल्हे का सेहरा नोचते हुए बोली, तू ये सेहरा पहन यहाँ क्यों आया था जब तुम्हें मुझसे शादी ही नहीं करनी थी? जा चला जा यहाँ से। तू क्या मुझसे शादी नहीं करेगा, मैं ही तुम्हें छोड़ती हूँ। सारे बाराती हैरान थे। वो एक लड़की के नसीब पर रो रहे थे। सबकी आँखों में आँसू थे। मगर शोभा मुस्करा रही थी। वो खुदा से बोली थी, ऐ खुदा मेरा खाली दामन तुम्हारे सामने खाली नहीं रहा, ये भर गया। इसमें आँसू और आहें भर गयी। इतना कह वो वापस घर के अन्दर चली गयी और अन्दर से दरवाजा बन्द कर लिया। यह नारी स्वाभिमान की चरम अभिव्यक्ति थी। यही उसकी जिन्दगी का इम्तहान था।

बेइरादा

बेइरादा मेरी नजर उनसे मिल गयी थी और वो मेरे दिल में समाते चले गये थे। एक बार तो ऐसा भी हुआ कि सामने से वो गुजर गये और मैंने उन्हें नहीं पहचाना। तब वो ही बोल पड़े, सविता जी आप! हाँ आशीष जी, पर आप यहाँ कैसे? मैं जरा घूमने निकल गया था। यूँ हीं आप पर नजर पड़ गयी। तब मैंने कहा था कि यूँ हीं इत्तफाक से हम न जाने कितनी बार मिल चुके, कभी घर भी आ जाइए न? तब उन्होंने हँसते हुए कहा था और अगर आपके पति को एतराज हो गया तो? वो बात आप मुझपर छोड़ दीजिए। वो वैसे भी मुझपर पूरा यकीन नहीं रखते हैं। क्या आप इस उम्र में अपनी गृहस्थी को तोड़ देंगी? तब मैं हँसने लगी। जी नहीं आशीष जी, आप गलत सोच रहे हैं। एक बार मेरे घर आ तो जाइए और जब वो वापस जाने लगे थे बेइरादा एक बार फिर मेरी नजर उनतक चली गयी थी। फिर कई शाम मैंने उनका इन्तजार किया, मगर वो नहीं आये। एक रोज मेरे पति से रहा नहीं गया तो उन्होंने पूछा, सविता ये रोज शाम को नाश्ता बनाकर तुम किसका इन्तजार करती हो? तब मैंने कहा था कि किसी को हमारे घर से लगाव हो गया है कमल, मगर वो शख्स कौन है? एक देवता, तब वो चिढ़ गये थे और पीने लगे थे। मगर एक दिन दोबारा जब मेरी आशीष जी से मुलाकात हुई, वो खाँस रहे थे। मैंने पूछा, आपको बुखार तो नहीं आशीष जी? चलिए किसी डॉक्टर को दिखा लीजिए। तब वो बोले थे, बिना वजह आप अपनी गृहस्थी क्यों तोड़ना चाहती हैं सविता जी? कमल बाबू मुझसे मिलने आये थे। कह रहे थे कि आशीष जी मेरी पत्नी आपकी बड़ी तारीफ किया करती है। कभी शाम को आपका इन्तजार करती है, कभी दोपहर को तो कभी रात को। क्या आप दोनों ने दिल लगा लिया है एक दूसरे से? तो बताइए सविता जी भला ऐसी सोच रखनेवाले इन्सान से मिलने मैं आपके घर कैसे आऊँ? बेइरादा आपसे हमारी नजर मिल गयी थी। आपने हमारा हाल पूछ लिया। मेरे लिए यही काफी है। सविता जी, आपकी एक बेटी भी है। उसकी खातिर, उसके भविष्य की खातिर आप मुझसे मत मिलिए। समझ लीजिए कि हम बेइरादा मिल गये थे। एक दूसरे के नजदीक आ गये थे। बातों-बातों में आपने किसी का दर्द बाँटा था। तब मैं रो पड़ी ये देखकर कि आशीष जी लगातार खाँसते जा रहे थे। मैं उन्हें पानी तक न पिला सकती थी क्योंकि मेरे पीछे दो निगाहें हमेशा मेरा पीछा करती थी।

और फिर एक दिन जब मैं सो रही थी दोपहर को कि आशीष जी की आवाज सुनी मैंने। वो कह रहे थे किसी से कि सविता जी यहीं रहती हैं? मुझे उनसे जरूरी काम है और मैं खिड़की से देखने लगी थी। मैं सोचने लगी की क्या ये वो ही आशीष जी थे। मुझे धोखा हुआ। इनकी तो आँखें स्याह हो चली थी। चेहरे पे जगह-जगह काला धब्बा पड़ा था। जिस्म खण्डहर हो चला था उनका। मैंने जल्दी से दरवाजा खोला और उन्हें अन्दर बुलाते हुए कहा कि आशीष जी आज आप आ ही गये। आइए अन्दर आइए। जब वो अन्दर आये मैंने उन्हें सहारा देना चाहा पर उन्होंने दीवार का सहारा लिया और कहा सविता जी, मैं आपसे एक बात कहने आया था। कौन सी बात आशीष जी? आपकी बेटी से मिलना चाहता था मैं। आप बराबर मुझसे उसका जिक्र किया करती थी मगर साथ लेकर एक बार भी नहीं आती थी। सविता जी, मैं आपकी बेटी से मिलने की चाहत दिल में लिए गुजर जाना नहीं चाहता

था। ऐसा कह वो जोर-जोर से खाँसने लगे थे। मैंने उन्हें बिस्तर पे बिठाते हुए कहा कि आशीष जी, हमारी बेटी से आपको इतना लगाव है। नहीं सविता जी मुझे बच्चे बहुत पसन्द हैं। तो क्या आपकी कोई औलाद नहीं? नहीं सविता जी, जिस लड़की से मैंने शादी की थी वो किसी दूसरे से प्रेम करती थी। रहना नहीं चाहती थी मेरे साथ। सो आजाद कर दिया मैंने उसे और आज वो जीवन के ऐसे मोड़ पे खड़ी है जहाँ से जिन्दगी सौ अफसाने साथ ले आती है। मैं उसे बराबर इस शहर में आता-जाता देखता हूँ मगर वो मेरी तरफ नहीं देखती। शायद वो मुझे नहीं पहचानती। आज वो एक होटल में डांस प्रोग्राम करती है क्योंकि आज उसके पास कोई नहीं है। वो अकेली है जिन्दगी के इस सफर में। तब मैं सोच में डूब गयी कि इतने अच्छे आशीष जी की किस्मत ऐसी है। हाँ सविता जी, आज भी मैं उससे उतना ही प्यार करता हूँ जितना कल करता था मगर बेइरादा भी कभी मेरी तरफ नहीं देखती वो। आज जब आपके घर आ रहा था एक लड़की ने मेरा हाथ पकड़ लिया। वो बाहर खेल रही थी। वो लड़की कौन थी सविता जी जिसे गहरी चोट लगी थी? जो लड़खड़ा कर गिर गयी थी। वो हमारी बेटी थी आशीष जी। क्या वो आपकी बेटी है? क्या उसे दिखाई नहीं देता? इतनी प्यारी बच्ची को दिखाई नहीं देता और फिर नाश्ता किये बगैर जाने लगे थे वो। तब मैंने उनका हाथ पकड़ लिया था कहाँ जा रहे हैं आशीष जी? चाय तो पीते जाइए। तब वो रो पड़े। आपकी बच्ची की चाहत में यहाँ तक आ गया था सविता जी। आप बराबर उसकी बातें किया करती थी मगर मिलवाती नहीं थी न उससे। आज जब बेइरादा मैं उससे मिल पाया, जब मेरी नजर इत्तफाक से उसकी तरफ चली गयी तो सोचना ही पड़ा कि अब बेमकसद मौत नहीं मरूँगा मैं। सविता जी, मैं चाहता हूँ कि मरने से पहले मैं अपनी आँखें इस बच्ची को दे दूँ। तब मैंने रोते हुए कहा था कि कौन सी ऐसी बीमारी लग गयी आपको आशीष जी जिसका कि इलाज नहीं हो सकता। है एक बीमारी सविता जी और जब बातें हो ही रही थी तभी मेरे पति आ गये थे। मुझे उनके हाथ को पकड़ते हुए देख लिया था और हंगामा मचा दिया था उनके सामने। तभी वो बेहोश होकर गिर पड़े थे। मैं उन्हें हॉस्पीटल ले गयी मगर वो बच न सके।

मरने को तो वो कभी भी मर भी सकते थे मगर आज मेरे पति की वजह से अचानक उनकी मौत हो गयी थी। इसलिए मैंने अपने पति से तलाक ले लिया और वैसे भी ऐसे आदमी के साथ मेरा दम घुटता था और जैसे ही मैं एक बार फिर आशीष जी की तरफ देखना चाहने लगी बेइरादा मेरी नजर उनकी तस्वीर तक चली गयी जिसे मैंने भगवान की मूर्त्ति की बगल में रखा था जिसकी की मैं पूजा करती थी। आज मेरी वो बेटी सोलह साल की हो चुकी है और जब भी वो मेरी तरफ देखती है मेरी आँखों के सामने आशीष जी का चेहरा आ जाता है क्योंकि उनकी आँखों से ही तो मेरी बेटी मुझे देखती है? एक बार फिर अपनी बीती जिन्दगी के किस्से दोहरा लेती हूँ मैं। तब सोचते-सोचते मेरी बेटी आ जाती है। मैं उसकी तरफ देखने लग जाती हूँ और वो मुस्कराकर कहती है कहीं बेइरादा तो नजर नहीं मिल गयी हमसे तुम्हारी माँ। यही तो कहा करते थे आशीष जी जब उनसे मुलाकात होती थी हमारी।

माचिस की एक तीली

कौन? कौन है वहाँ? मैं आया हूँ अम्मा, कमलेश। तू कहाँ चला गया था रे कमुआ? यहाँ तो पूरा गाँव ही जल गया। क्या हुआ था अम्मा? एक बग्घी रूकी थी बेटा। उसमें से कुछ लोग उतरे थे। उनके हाथों में कारतूसें थी। हथगोले लिये घूम रहे थे वो। शोर था गली में। सबने खिड़की दरवाजे बन्द कर लिये थे और वे लोग चीख-चीख कर कह रहे थे, ये मेरा मुल्क है, ये मेरा गाँव है, ये मेरी सरहद है। निकलो बाहर तुम सब और आग उगलने लगी थी उनकी बन्दूकें और हथगोले। जब किसी ने निकलने में देरी की तो घुस आये थे ताले तोड़कर घरों में। माँ-बहनों की इज्जत गयी। बूढ़ी माएँ बेटे को अपने सीने से चिपकाये बैठी थी और वो उनके कलेजे के टुकड़े को उनसे छीन लिये जा रहे थे। कह रहे थे हमारा कोई धर्म नहीं, हमारा कोई मजहब नहीं, हमारी कोई कायनात नहीं और माएँ अपने बेटे की लाश पे, अपनी बेटी के अधनंगे जिस्म पे, अपनी आबरू पे रो-रोकर उस ऊपर वाले से लोगों पे टूटे इस कहर को रोकने की गुजारिश कर रही थी। जवान जिस्म अपना मुँह दुपट्टे में छुपाये दरिया को तलाश रही थी और दरिया उमड़-घुमड़ कर इनकी लाशों को अपने दामन में समेटे दहाड़ मार कर रो रहा था, विलाप कर रहा था। चारो तरफ गहरा सन्नाटा था और दिलों में खालिश तूफान मचे थे। राखी का बंधन टूट चुका था। रिश्ते उजड़ गये थे क्योंकि मौत के इस खेल में सबको अपनी ही फिक्र सता रही थी। किसी के साथ कोई मरना नहीं चाहता था। किसी की खातिर कोई मरना नहीं चाहता था क्योंकि बेटा, ये कम्बख्त मौत बहन से भाई छीन ले रही थी। माँ से बेटा छीन ले रही थी। गली में खेलते बच्चे अपने-अपने लट्टूओं के बील में खून को भरते हुए देख रहे थे और सोच रहे थे कि कल का सूरज कब निकलता है? खूनों के बहते इस रेले का बहाव कल तक रूकता है या नहीं और तूफान के आसार कब थमते हैं? मगर ये क्या, सूरज भी निकला, लहू के फब्बारे भी रूके मगर देखनेवाली निगाहें बची ही कितनी थी। ऐसा मातम था वहाँ की लोग सोच ही न पा रहे थे कुछ। किसी का जिस्म जलकर खाक हो चुका था। किसी की साँसे टूट चुकी थी। किसी का दिल जलकर बुझ चुका था। किसी की आत्मा धुआँ बन चुकी थी। लाशों का बिखरा ऐसा मंजर था वहाँ जैसा कि बर्बर युद्ध के मैदानों में होता है। हमने जा-जा कर देखा था वहाँ कि कौन कितना तड़पा होगा। किसको कितनी घावें मिली, जख्मों के निशान किसके जिस्म पे ज्यादा हैं किसकी लाश जलकर बुझ चुकी और कौन अभी भी जल रहा है। बेटा, मेरी इन बूढ़ी आँखों ने पालने में झूल रहे बच्चे भी जलते देखे और उनके मुँह से लगी दूध की बोतल को भी जलते देखा और उनकी लाशों पे अपना ही कफन ओढ़ा दिया। ढँक दिया हमने उसके चेहरे को और रो-रोकर उस मालिक से दुआ माँगी कि ऐ मेरे मालिक! ऐ आसमान के रहने वाले! एक नजर जमीन पर भी देख। सबकी आँखे अल्लाह-हो-अकबर! कहकर उसी ईश्वर को पुकार रही थी जिसने ये संसार रचा था और जिसकी रचना का ये सार था जला पड़ा और जलकर बुझ चुका। मगर पानी फिर भी नहीं बरसा। आग की लपटें फिर भी नहीं रूकी और लाशों के काफिले बढ़ते चले गये। कोई नंगा हो चुका था जलकर। कोई धूल-मिट्टी में सना आधा जला तड़प रहा था। किसी के मकानों से जलने की गन्ध आ रही थी। कोई गंध बाहर निकल-निकल कर अट्टहास कर रही थी कि मैं आ गया? देखो

मैं आ गया। भूख से बिखलते बच्चों के साथ उनकी रोटी जल रही थी और पानी के बर्तन आग बुझाने की बजाय खुद को ही जला पा रहे थे। कैसा था ये मौत का तांडव? ये सिवाय मेरी इन आँखों के कोई न देख सका रे। एक मैं ही रह गई उस मालिक के दिखाये इस मंजर को देखने के लिए। जिसका भी घर जला, जिसके भी बच्चे जले, जिसकी भी आबरू गयी, जिसका भी दामन जला, सब के पास से एक ही आवाज आ रही थी। ऐ ऊपरवाले! रोक दे ये कहर। मगर कैसे सुनता वो ऊपरवाला उनकी आवाज को। नहीं सुनी फिर भी उस खुदा ने उनकी आवाज और सारे लोग, सारे मकान, सारी जिन्दगियाँ जलती-बुझती रही। मन्दिर भी जला, मस्जिद भी जले, ईश्वर भी जला, अल्लाह भी जले मगर जलकर बुझ जाने का ढोंग उसने भी न किया। कैसे करता, अगर वो बुझ जाता तो क्या मुँह दिखाता वो लोगों को। इसलिए वो भी चुपचाप जलता ही रहा। हमारे अपने लोगों ने तो शोर भी किया। पर वो खामोशी से जलता ही रहा। फिर क्या हुआ अम्मा, कमलेश ने कहा? तो अम्मा बोली, फिर लाशों के ढेर से सड़ी हुई सड़ांध आने लगी और कहीं बीमारी न फैल जाये, इस वजह से सरकारी लोगों ने माचिस की एक तीली जलायी और उन लाशों के ढेरों पे फेंक दिया। धू-धू कर वो दोबारा जलने लगे और सारी कायनात ने धुएँ की चादर ओढ़ ली। पर कमलेश, तू तो आज ही आया है रे। मत देख ये जले हुए मकान। तू भी एक तीली माचिस की जला और ऐसी रोशनी बिखेर कि ये धुआँ ही विलीन हो जाये उस रोशनी में। मगर कमुआ, एक बात याद रखना बेटे कि ये तीली मजहब, जाति और धर्म के नाम पर न जले।

बन्द दरवाजा

उस दिन सुमित से मैंने कहा था, सुमित चाय बना दूँ, पीओगे? हाँ मगर जल्दी। क्यों, कहीं जाना है? हाँ, है एक जगह जाना मुझे। कहाँ? वहाँ मुझे भी ले चलो न। तुम कहाँ जाओगी? क्यों नहीं जा सकती मैं सुमित? मैं तुम्हारी पत्नी हूँ। आधी जिन्दगी तुम्हारी मेरी है। हाँ, वो तो है सुनीता मगर मुझे किसी से मिलने जाना है। तुम्हे कहाँ लेता जाऊँगा, उसने कहा था और मैं अन्दर से चाय बना कर ले आयी थी। फिर सुमित के जाने के बाद मैं बहुत देर तक सोचती रही थी कि आखिर मेरा क्या जीवन है? एक पति की सेवा और बच्चे होने की फिक्र। क्या इससे आगे मेरा कोई लक्ष्य नहीं? तभी से मेरे मन में एक क्रांति जागी थी। सुमित के जाने के बाद मैं अपनी एक सहेली से मिली थी जो महिला विकास केन्द्र में आने की मुझसे हमेशा जिद करती थी। उस दिन जब मैं उसके पास गयी तो उसने मुझे अपने पास बिठाया और कहा कि सुनीता! जीवन को मोहरा बना जीते है पुरुष समाज के लोग और मोहरा बनती हैं समाज की औरतें। कितना फर्क है तुममें और तुम्हारे सुमित में। वो हमेशा बाहर की दुनिया में खोया रहता है और तुम्हारी आँख जब खुलती है, सामने घर का बर्तन, पति की गंदी कमीज और किचेन की बाल्टी पर नजर जाती है तुम्हारी। तुम इन सब कामों के बीच खुद को उलझा लेती हो और शाम को जब तुम्हारा पति घर आता है, उसके लिए चाय-नाश्ता बनाती हो। क्या यही जीवन है एक इंसान का? क्या फर्क है तुममें और उनमें। क्या उनके हाथ नहीं हैं ये सब करने को? मगर वो नहीं करते क्योकि तुम जो उनके पास मौजूद हो ये सब करने को। देखो अपनी तरफ। क्या हाल हो गया है तुम्हारा? पिछले साल ही तो शादी हुई है तुम्हारी और तुम्हारे हाथ में न ढंग की चूड़ियाँ हैं, न बालों में गजरें हैं, न ही नाखूनों में नेल-पॉलिश लगी है। तो फिर किस तरफ से तुम खुद को एक सुहागन मानती हो? सुहागन बने रहने को तो तुम्हारे पास वक्त ही नहीं है। कल को तुम्हारे बच्चे होंगे। तुम उनमें व्यस्त हो जाओगी। पति और परिवार की जिम्मेवारी एक साथ सम्हालनी होगी तुम्हें। मगर एक बार भी ये सोचा है कि इन सब में बराबर का शरीक है सुमित। मगर उन्हें फुर्सत नहीं तुम्हारी तरफ देखने की। तुम्हारे काम जब उनके काम नही लगते उन्हें तो घर के सारे काम तुम्हे अपने क्यों लगते हैं? क्या माँ के घर ऐसी ड्यूटी थी तुम्हारी? तब मेरी आँखे पहली बार सुन-देख पायी थी बाहर के नजारे को। मैं पहली बार सोच पायी थी कि औरत के जीवन का मतलब बन्द दरवाजा नहीं सिर्फ और तब से मैं उनसे रोज मिलने लगी थी। इसी बीच जब मेरे पति घर आते, मुझे घर में नहीं पाते। नाश्ता बना हुआ होता। चाय बनाकर पी लेते वो और जब मैं घर आती मुझे हजार ताने सुनने पड़ते। मैं बहाना बना देती कि मुझे किसी ने बुलाया था। मगर एक दिन वो घर में बैठ गए और मुझे जरुरी मीटिंग में जाना था। मैं तैयार होकर जाने लगी। तब उन्होंने मेरा हाथ पकड़ लिया और मुझे गन्दी-गन्दी गालियाँ दी। कहाँ जा रही हो, किससे मिलने? मैंने कुछ नहीं कहा। वो फिर बोले, जवाब क्यों नहीं दे रही हो? कौन तुम्हारी राह देख रहा है? तब मैं फट पड़ी और कहा, उस दिन जब मैं आपसे पूछ रही थी कि सुमित कहाँ जा रहे हो? तो बताया था। तब उन्होंने मेरे गाल पे तमाचा मारना चाहा। मैं भी खामोश न रही। एकदम से वो हाथ पकड़ लिया और तलाक की धमकी दी उन्हें। वो पहले तो चिल्लाए। मगर दूसरे ही दिन तलाक के पेपर्स तैयार करवा लाए थे। मैंने उस पर दस्तखत करने से पहले अपना हिस्सा माँगा तो उनकी आँखें

फटी-की-फटी रह गयी। इतनी जुबान हो गई तुम्हारी और तलाक का पेपर्स फाड़ डाला उन्होंने और कहा, अब देखता हूँ कि तू कैसे इस घर के बाहर जाती है? तब मैंने अपने हाथ में फल काटनेवाली छुरी उठा ली और कहा कि अब रोक सकते हो मुझे तो रोक लो। बहुत मनमानी की है तुमने मेरे साथ। हमेशा कुछ न करने पर भी तुमने मुझपर गलत इल्जाम लगाया है। मैं सब जानती हूँ कि तुम कहाँ जाते हो, और किससे मिलते हो? तुम क्या तलाक की धमकी देते हो मुझे। पेपर्स तो मुझे भी साइन करवाने है तुमसे। मैंने नोटिस तुम्हारे नाम भिजवा दी है। कलतक पहुँच जाएगी तुम्हारे पास। तब वो मेरे इस बदले हुए रूप को देखकर हैरान हो गए थे और मैं बाहर जाकर सबसे पहले अपनी उस सहेली से मिली थी। सुमित की सारी बातें बतायी थी और सुमित के नाम कोर्ट के कागज भी भिजवाए थे। साइन करवाने का काम मेरे वकील का था। कुछ दिन तक मैं इन्तजार करती रही मगर जब उसने मुझे तलाक न देने की बात कही तो पूछा मैंने उससे कि बर्तन माँजोगे? नल जब आएगा, पानी भरोगे बाल्टी से? मैं परेशान बाहर से लौटूँगी, मेरे लिए चाय बनाकर दोगे? मेरे गंदे कपड़े मुझे धोने की फुर्सत नहीं रहेगी तो धो सकोगे? तब वो गुस्से में तिलमिलाकर बोले थे, मैं औरताना काम करूँगा। मैं मर्द हूँ। मैं करूँगा ये सब काम। तब मैं फट पड़ी थी। क्यों? क्या तुम्हारे पास हाथ नहीं है? इतना खाते हो, क्या शक्ति छीन हो गई है तुम्हारी और तुरन्त मेरे वकील ने तलाक के पेपर्स पर उनसे दस्तखत करवाए थे। उसने दस्तखत कर तो दिया था पर मुझसे बदले की भावना लेकर वो हमेशा मेरे पीछे साया बन भटकता रहा और फिर एक दिन उसने गाड़ी के बीच धकेल देना चाहा मुझे। मेरी किस्मत अच्छी थी जो मैं बच गई और कोई दूसरी औरत गाड़ी के नाचे आ गई। वहाँ खड़े लोगों ने उसे पकड़ लिया और इतना मारा, इतना मारा कि उसके हाथ-पैर सलामत न रह सके और कर दिया उसे पुलिस के हवाले। मैं हँसकर उससे ये कह गयी कि इसी तरह तुम मुझे मारा करते थे न सुमित? अब दर्द कैसा है तुम्हारे हाथों का, तुम्हारे पाँवों का? तुम तो मुझे पूछते भी न थे। मगर मैं तुम्हारी पत्नी होने के नाते न सही, एक औरत होने के नाते पूछ रही हूँ। तुम्हें कम-से-कम सजा होगी। हाँ, मगर उम्रकैद तो जरूर होगी, ऐसा कह चली आयी थी और उस दिन जब केस की सुनवाई थी, मैं सबसे पहले अदालत गई थी। वहाँ उस लड़की के माँ-बाप भी मौजूद थे। जब केस की सुनवाई शुरू हुई, सब हक्के-बक्के वकीलों को सुन रहे थे। आखिरकार जीत मेरी हुई। सुमित को उम्रकैद की सजा हुई क्योंकि हमारे देश में फाँसी की सजा किसी भी मुजरिम को नहीं मिलती थी। और आज वो जेल में पड़ा-पड़ा बूढ़ा हो चूका है। उसके सारे बाल सफेद हो चुके हैं। बाल तो मेरे भी सफेद हैं मगर मुझे माँ कहलाने का दर्जा मिल गया है। है एक अनाथ लड़की मेरे पास जो मुझे माँ कहती है। मैं उसे भी समाज में इसी तरह जीना सिखलाऊँगी और कहूँगी उससे कि बेटी! प्यार और मोहबंधन में मत पड़ना कभी क्योंकि वो औरत को एक बन्द दरवाजा बना छोड़ती है और मुझे तुम्हे बन्द दरवाजा नहीं बनने देना है। तुम एक ऐसा शमा बनोगी जीवन का जिसपे की सारी दुनिया गर्व करेगी और कहेगी कि ये एक औरत का बदला हुआ रूप है। ये जीवन का सही पैमाना है औरत के लिए जो कभी भी खाली नहीं हो सकेगा। जीने के मकसद मिलते ही जाएँगें और मकसद में उसे कामयाबी भी मिलती ही जाएगी।

खामोशी

शीबा की माँ! आज तुम्हारे बेटे ने मेरी बेटी का सर फोड़ दिया। शीबा की माँ! आज तुम्हारे बेटे ने मेरे बेटे के हाथों से कलम छीन ली। अरे, कैसे बिगाड़ के रख दिया है तुमने अपने सपूत को? यही रोज होता। माँ चुपचाप सुन लेती। मगर जवाब में कभी भी शीबा को इसके सिवा कुछ नहीं कह पाती, कितना तंग करता है रे शीबा तू मुझे! तेरी शिकायत मैं मास्टरजी से भी कह-कह कर थक गयी हूँ। अरे, पन्द्रह वर्ष का हो गया है तू। क्यों नहीं सुनता मेरी? इतना क्यों शोर मचा रखा है गली मुहल्ले में? तो शीबा सुनकर भी अनदेखा कर गुजर जाता। माँ बस कुढ़कर रह जाती। फिर सुबह होती। बच्चों की माँ शिकायतों का पुलिन्दा लेकर आ जाती। मार डाल रे शीबा की माँ! कपूत बेटे को। क्या संस्कार दिए हैं तुमने इसे? तो माँ कहती, बच्चा है दीदी। धीरे-धीरे समझ जाएगा। बच्चा तो मेरा बेटा भी है। बच्ची तो मेरी बेटी भी है। इससे कम ही उम्र है उसकी। मगर मेरे एक भी सवाल का जवाब देती है वो मुझे ऊँची आवाज में। यही कहती सभी औरतें आती और चली जाती। मगर शीबा की माँ से जब उनकी निगाहें लड़ जाती, तो वो चेहरा घूमा लेती। कभी किसी को सीढ़ियों से धकेल देता शीबा तो कभी किसी के हाथ-पाँव मरोड़ देता। कितना अजीब था शीबा का बचपना। बच्चे तो और भी थे, बदमाश और चालाक भी। मगर शीबा के मिजाज कुछ ज्यादा ही बिगड़े हुए थे। एक रोज माँ ने उससे कहा, शीबा! सुन बेटे, तेरे बाबा ये कह दूर देश को गए हैं कि मैं जब लौटकर आऊँगा, मेरे बेटे के हाथों में किताब होनी चाहिए, शीबा की माँ। पढ़नेवाली नहीं, पढ़ानेवाली। मैं चाहता हूँ कि वो मास्टर बने बड़ा होकर। तब शीबा ने माँ की बातों का मजाक उड़ाते हुए कहा, तो ठीक है माँ। तो फिर मैं गलत क्या कर रहा हूँ? मास्टरजी भी तो मारा करते हैं बच्चों को। अपने हमउम्र लोगों को अगर मैं मारता हूँ तो मास्टरजी की जगह तो ले रहा हूँ न मैं? माँ तुम नहीं जानती, मैं टोली का लीडर हूँ। मैं जो कहता हूँ, बच्चे वही तो सुनते हैं। तब माँ ने कहा, बच्चे सुनते नहीं रे शीबा तेरा कहा। बच्चे तुझसे डरते हैं बेटा। किसी को डराकर मारना, किसी को धमकाना अच्छी बात नहीं है। छोड़ दे ये जिद। पढ़ाई कर एक ऊँचा मकाम पा, मास्टर की कुर्सी हासिल कर, साहित्य सीख बेटे, साहित्यकार बन। यही तेरे पिता की भी मर्जी थी। मगर ऊपरवाले की रजा ने उन्हें हमसे दूर कर दिया। तो ठीक है माँ। नहीं मारता मैं बच्चों को। मगर मैं तो खेलता हूँ उनके साथ ये खेल। खेल-खेल में किसी का हाथ अगर मरोड़ भी दिया तो इसमें मेरा क्या कसूर? तो माँ ने रोते हुए कहा, **कनक : स्मृति पुष्प**फिर मैं भी चली जाती हूँ तेरे पिता के पास। तू जब मेरी सुनता ही नहीं तो मैं क्यों रहूँ तेरे साथ? तब शीबा ने माँ के आँसू पोछते हुए कहा, रो मत माँ! मैं जानता हूँ तू मुझसे बहुत प्यार करती है। मैं वादा करता हूँ, मैं तुम्हें कोई शिकायत का मौका नहीं दूँगा। तब माँ ने शीबा को सीने से लगा लिया। फिर शीबा दिन-रात मेहनत कर पढ़ने लगा। अब बच्चों के साथ खेलना भी छोड़ दिया उसने। एक दिन माँ ने कहा कि बेटा तू जरा दुकान से साबुन की टिकिया तो ले आना। तेरे कपड़े गंदे हो गए हैं, धो दूँगी। तो शीबा ने माँ के हाथ से पैसे लिये और चल पड़ा साबुन लाने। जब वो दुकान के पास पहुँचा, वहाँ उसे एक पुराना साथी मिला जो ये कहने लगा कि शीबा! अरे

शीबा! तू कहाँ चला गया था रे? कई दिनों से शोर नहीं किया हमने तो हमारा जी नहीं लग रहा था। चल, आज तू आ गया। चल खेलने चलते हैं। तो शीबा ने उससे अपना हाथ छुड़ाते हुए कहा, नहीं यार! मैं अब नहीं खेल सकता तुम्हारे साथ। माँ ने मुझे पढ़ने को कहा है। मैं पढ़कर एक दिन मास्टरजी बनूँगा। मेरे पिताजी वापस आ जाएँगें। तब वो हँसने लगे, क्यों मूरख बन गया रे शीबा। तू अपनी माँ की बातों में आकर। कोई मरकर वापस नहीं आता। तेरे पिता की अर्थी इसी गली से गुजरी थी। तब तू बहुत छोटा था। तभी तो उल्टा-सीधा पढ़ा दिया तेरी माँ ने। ला पैसे, गोली खरीद। तो शीबा ने उससे अपना हाथ छुड़ाते हुए कहा, छोड़ दे यार मेरा हाथ। मैं गोली नहीं खरीद सकता। इस पैसे से मेरी माँ ने मुझे साबुन की टिकिया लाने के लिए कहा है। तो वो लड़के हँसने लगे। कब से तेरी माँ तेरे कपड़े साफ करने लगी रे शीबा! तू तो हमेशा धूल-मिट्टी से ही सना रहता था। रहता था मगर तब, जब बूढ़ी माँ का ख्याल नहीं था मुझे। मैंने आज अपनी बूढ़ी माँ के आँसू देखे हैं। हो सके तो मेरा रास्ता छोड़ और खुद भी एक सही रास्ते की तरफ मोड़ ले अपने आप को। मैं पन्द्रह वर्ष का हूँ। तुम मुझसे भी बड़े हो। शायद तुम सोलह के भी हो। ये बचपन की उम्र नहीं रही हमारी। ये उम्र एक मंजिल तलाश करने की है। तो एक बच्चे ने उसे पीछे से पकड़ लिया, शाला! मंजिल की बात करता है। तोड़ दे इसके हाथ-पैर और सबने उसे पकड़ लिया। शीबा मारना चाहकर भी उन्हें मार नहीं पा रहा था क्योंकि उसकी आँखों के सामने उसके माँ के आँसू आ रहे थे। वो चीखा, नहीं माँ! और किसी ने उसके सर पे ईंट से मारा। वो वहीं बेहोश हो गया। शीबा की माँ को जब पड़ोसिनों ने खबर दी तो वो दौड़ती-भागती आयी। मगर जबतक वो शीबा के करीब पहुँची, शीबा के कान उसकी आवाज सुनना चाहकर भी सुन नहीं सके। वो बोलती रही शीबा बेटे! शीबा बेटे! और उसे डॉक्टर के पास ले गयी। शीबा के घाव तो अच्छे हो गए। मगर शीबा इतना खामोश हो गया कि फिर किसी शोर ने उसकी कानों में आवाजें नहीं दी।

आज सारे लोग जमा थे उसके पास। स्कूल के मास्टर भी थे, बच्चे भी थे, बच्चों की माएँ भी थी। मगर शीबा के सामने तो सिर्फ माँ के आँसू ही थे जिसे देखते-देखते ही वो दिमागी सन्तुलन खोता चला गया। एक दिन वो भी आया जब उसे पागलखाने ले जाया जाने लगा। आज भी सब थे उसके पास। स्कूल-मास्टर थे, बच्चे थे, बच्चों की माएँ थी। मगर अपनी ही माँ के पास नहीं था वो। अपनी ही माँ के आँसू पास नहीं थे उसके क्योंकि अंधी, बहरी, और पागल हो चुकी थी वो।

साहित्य की रचना करते देखना चाहती थी उसके पिता की निगाहें अपने बेटे के हाथों। मगर साहित्य की रचना तो इतिहास का गुजरा पन्ना बन चुका था। साहित्य की रचना तो गुजर चुकी थी एक खामोशी देकर, एक खामोशी की आवाजें देकर। सबकी आँखें आज नम थी, शर्म से शर्मिन्दा हो रही थी। वो सब आज कहना चाह रही थी, शीबा! फोड़ दे मेरे बेटे का सर। मरोड़ दे मेरे बेटे के हाथ।

आज बाजार में काली बाबू की नजर शमा पे पड़ी। वो चौंके, शमा फिर इस शहर में और वो उसके करीब हो लिये। शमा ने भी काली बाबू को देख लिया। बोली, अरे काली बाबू आप! काली बाबू भी बोले, शमा तुम दोबारा इस शहर में! हाँ काली बाबू, ये मेरे छोटे-छोटे बच्चे हैं। मगर तुम तो महमूद मियाँ के साथ गयी थी न शहर। हाँ काली बाबू? गयी थी मगर दोबारा मेरे ऐसे ही नसीब हुए कि मैं इसी शहर में वापस आ गयी। शाम को मुजरे के बाद मिलिएगा। मिल बैठकर बाते करेंगे। तुम फिर मुजरा करोगी शमा। हाँ काली बाबू! आप मुझे शमा नहीं, शमा बाई कहिए। दोबारा आपसे कल शाम मुलाकात होगी उसी पुराने बाजार में जहाँ हम पहली बार मिले थे। ऐसा कह चली गयी।

दूसरी शाम जब वो घुँघरू बाँध रही थी अपने पैरों में, काली बाबू के ही आने की वाट जोह रही थी और कोठे की मालकिन कह रही थी, जल्दी कर शमा! तेरे कद्रदानों की भीड़ लगी हुई है आज। मगर तेरे काली बाबू अबतक नहीं आये। आते ही होंगे अम्मा बाई! मैं जरा घुँघरू बाँध रही हूँ। मगर काली बाबू के आने तक अम्मा ने राह नहीं देखी और शमा के हुस्न की बिजली बाकी कद्रदानों पे गिरी।

शमा बाई, इतनी महशूर तवायफ आज भी इतनी हसीन होगी मैं नहीं जानता था। कद्रदानों ने एक दूसरे से कहा। जब मुजरा खत्म हो गया पैसे लुटाते हुए सभी कद्रदान वापस चले गये। शमा अपने कमरे में जा शीशे के पहलू में बैठ उन दिनों को याद करने लगी जब काली बाबू से पहली बार मुलाकात हुई थी उसकी। उसके हुस्न के दीवाने नहीं थे वो। वो तो शमा के तारीफे दिलोअजीज मर्द थे। कल की ही बात लगी उसे जब काली बाबू के साथ बैठ वो अपनी कहानी दोहरा रही थी। काली बाबू, मैं एक साधारण घर की ऐसी बेटी थी जिसकी माँ के पास दवा खरीदने के पैसे नहीं थे। माँ की बीमारी मुझे अन्दर ही अन्दर तोड़ रही थी। काली बाबू से वो ये भी कह रही थी कि मेरे मामा ने मुझे किसी अमीर घर की नौकरानी बना दिया। मगर नहीं, मैं उस घर की नौकरानी कम और एक खूबसूरत हसीना ज्यादा थी उनकी नजरों में। एक बार उनके घर एक मेहमान आया। उसने मुझे देखा और रातें रंगीन करनी चाही मेरे साथ। मेरे मामा तो पैसे के लालची थे ही। मान गये। एक मोटी रकम ले बेच डाला मुझे। वहाँ मैं एक रात की वेश्या बनी। वहाँ से फिर दो रात की वेश्या बनी। फिर मेरा पेशा ही वेश्यावृत्ति का हो गया। काली बाबू सब सुनते थे। मगर मैं पाती थी कि वो कहीं-न-कहीं से टूट रहे थे मेरे दर्द से क्योंकि उनके घर में भी एक बूढ़ी माँ थी। वो काली बाबू आज दोबारा आये थे उसकी जिन्दगी में। ऐसा सोच वो अपने गहने उतार ही रही थी कि शमा ने आईने में काली बाबू की परछाई देखी। वो पलटी और बोली, अरे काली बाबू! आप अब आये मुजरा खत्म होने के बाद। मैं कब से आपकी राह देख रही थी। तो काली बाबू ने आहिस्ता से कहा, आज तुम्हारा मुजरा सुनने का दिल नहीं शमा! बस तुमसे मिलने का दिल किया। तो शमा बोली, काली बाबू मुझ मशहूर तवायफ से मिलने की ही आरजू लेकर आते थे हर मर्द पहले। मगर सबके सब लालची निकले। आज अगर आप चाहें तो मैं आपके साथ हमबिस्तर हो सकती हूँ पूरी रात के लिए क्योंकि शमा बाई के कितने भी कद्रदान हों, पर आप जैसा एक भी नहीं देखा मैंने। तो काली बाबू ने एक जोर का तमाचा

मारा उसके गाल पे और कहा, ऐसी बातें सुनने नहीं आया मैं। तुम्हारी जिन्दगी की वो दास्तां सुनना चाहता हूँ जो तकदीर ने नहीं दिये तुम्हें, वो तेरे पुराने आशिक महमूद मियाँ ने दिये तुम्हें। तो शमा एक नजर काली बाबू को तो एक नजर घुँघरू को देखती रही और आहिस्ता से उनसे लिपटते हुए कहा, मारो काली बाबू, मुझे और मारो। मैंने आपसे बदजुबानी की है। तो काली बाबू रो पड़े। तुमने बदजुबानी नहीं की मुझसे। तो शमा ने कहा, मत करो ऐसी बातें काली बाबू! मैं मर जाऊँगी। फिर उसने अपनी पूरी जिन्दगी को दर्शा दिया उनके सामने ताकि फिर कोई काली बाबू शमा का नाम ले जिन्दगी जीना छोड़ दे।

तो काली बाबू बोले, अच्छा तो बताओ, महमूद मियाँ के साथ गयी थी न तुम? तो ये दो छोटे-छोटे बच्चे लेकर कैसे लौटी? तो शमा ने कहा, बताती हूँ काली बाबू। यही तो मैं आपको बताना चाहती हूँ। वो महमूद मियाँ नहीं थे। वो मेरे आशिक भी नहीं थे। वो मेरे मामा के भेजे हुए आदमी थे, लालची आदमी। जब मैं अपनी माँ से बिछड़ इतनी मशहूर तवायफ बनी मेरे मामा ने मेरी माँ को मार डाला क्योंकि मेरी माँ इस सदमे से इतनी पागल हो गयी कि मामा की जान की दुश्मन बन गयी। एक रात मुझे खबर मिली कि मेरी माँ गुजर गयी। वो महमूद मियाँ मेरे पास खबर देने ही आये थे। मैं उनके साथ बगैर कुछ सोचे-समझे चली गई क्योंकि कोठे की अम्मा बाई ने उनसे ढेरों पैसे लिये थे। मैं पागल एक बार भी ये पूछना भूल गयी उनसे कि मेरी माँ कहाँ है? उनकी लाश किस जगह है? रास्ते में मुझे पता चला कि मैं किसी ऐसे सफर पे जा रही हूँ जहाँ कि महमूद मियाँ ने सैकड़ों रातों के पैसे लिये थे मेरे लिये। मैं पूछती रह गयी। महमूद मियाँ चलते रह गये। रास्ता बीत गया। मगर मेरी माँ की लाश मुझे कहीं नहीं मिली। मिला तो सैकड़ों आवारा मर्दों का साथ। काश! मैंने आपके प्यार में जिन्दगी बीता दी होती काली बाबू! मगर मैं डरती थी कहीं आपकी माँ सदमे से मर न जाये मेरी माँ की तरह। तो काली बाबू अगर मैं अपने प्यार की कुर्बानी देकर अपनी माँ की लाश को देखने निकली तो क्या गलत किया? तो फिर काली बाबू बोले, ये छोटे-छोटे बच्चे किसके हैं? पता नहीं किसके हैं? मगर इन्हें पैदा मैंने ही किया है काली बाबू! आज आपके कदमों में पड़ी रहनेवाली धूल भी न रह सकी मैं। तो काली बाबू ने कहा, तू आज भी मेरे माथे का लाल चाँद है शमा। मैं तुम्हें जमीन की धूल न कभी समझता था न समझ सकता हूँ। मैंने रातभर अपनी बूढ़ी माँ से बात की है तुम्हारी। वो आज भी तुम्हें अपने घर की बहू बनाने को तैयार है। क्या मुझ मशहूर तवायफ को? हाँ शमा। मगर काली बाबू मेरा दिल इस बात की गवाही नहीं देता। मेरा मन बदल सकते हैं आप काली बाबू, पर मेरा तन नहीं। आपका बिरादरी में उठना-बैठना मुश्किल हो जायेगा। तो काली बाबू ने कहा, सोच लो शमा, मैं कल भी तुम्हारा था, आज भी तुम्हारा हूँ। इतना कह काली बाबू चले गये। शमा बुझे मन से बैठी रही। तभी उसके कानों में दोबारा महमूद मियाँ की आवाज गयी। वो खिड़की से काली बाबू को जाता देख रही थी। चीख पड़ी काली बाबू! काली बाबू दौड़ते हुए आये। क्या हुआ शमा? वो मैंने वहाँ महमूद मियाँ को देखा था अभी-अभी। वो तुम्हारा वहम होगा। नहीं काली बाबू! वो अम्मा बाई के साथ बैठे थे अभी-अभी। तभी काली बाबू की नजर एक काले आदमी पे पड़ी जिसने रूमाल से अपना चेहरा ढँक रखा था। वो पलटे। महमूद मियाँ!

उधर अम्मा बाई चीख पड़ी काली बाबू! दोनों तरफ से गोलियाँ चली। एक तरफ महमूद मियाँ थे। एक तरफ काली बाबू। महमूद मियाँ मर चुके थे। मगर काली बाबू की साँसे कुछ देर के लिए अटकी थी। उन्होंने कहा, शमा। शमा दीवार के सहारे एक तरफ बैठी थी। उसकी आँखें इस अजीब से मंजर को देख रही थी। न वो रो पा रही थी न काली बाबू को मरता देख पा रही थी। काली बाबू ने उसे आवाज दी। शमा, यहाँ आओ। शमा उनके पास गयी तो वो बोले, मैं जा रहा हूँ शमा! मगर मैं दोबारा फिर आऊँगा किसी शमा को बचाने। तो शमा ने कहा, अगर ऐसा होता न काली बाबू तो शमा कब से जलना भूल गयी होती। मगर नहीं वो जलती है। शाम से शहर तक उसे जलना ही पड़ता है। तब काली बाबू ने शमा का हाथ पकड़ा और कहा, तो चलो शमा मेरे साथ चलो। तो शमा ने कहा, कैसे चलूँ काली बाबू आपके साथ? मेरी साँसे टूटने में तो वर्षों लगेंगे क्योंकि मैं बुझती शमा नहीं जलती शमा हूँ।

२२वाँ दिन

हम कितनी दूर निकल आये शारदा, हमें पता भी न चला। हाँ रवि, ऐसा लगता है जैसे हमने अभी-अभी चलना शुरू किया हो। यहाँ का माहौल कितना सुहाना है। वो देखो सामने एक बाग है और लगता है वहाँ कोई बैठा है। चलो हम भी वहीं चलें। चलेंगे शारदा, पहले ये नजारा तो देख लेने दो। कितना नीला दिखता है यहाँ से आसमान का रंग। जैसे प्रकृति ने अपनी सारी आभा यहीं बिखेर दी हो। वो सामने पहाड़ी देख रहे हो रवि, चलो न उस तरफ चलते है। अरे वहाँ तो सीढ़ियाँ भी बनी है। चलो चढ़कर उस ऊँचाई पे चले चलते हैं। नहीं शारदा, अभी तो बस घूम-घूमकर ये नजारे देखने हैं हमें। कितना मनमोहक दृश्य है यहाँ का। एक बार जो आ जाये वो लौटकर जाने का नाम न ले। तभी पीछे से किसी ने कहा, जाने की बात क्यों कर रहे हो यार? थोड़ा आराम तो कर लो। हम दोनों कब से तुम्हें देखते चले जा रहे थे। पर माननी पड़ेगी भई तुम्हारी पसन्द को। लगता है, नई-नई शादी हुई है तुम्हारी। लाल जोड़े में तुम्हारी दुल्हन बड़ी खूबसूरत लग रही है। नहीं भई, तुम्हारी गर्लफ्रेंड भी तो अच्छी है। क्यों शारदा? हाँ रवि, इनकी पसन्द की तो दाद हमें भी देनी पड़ेगी। तुम दोनों ने अभी तक अपना नाम नहीं बताया यार। मेरा नाम कुमुद है, उसने कहा और ये मेरे पति राजेश्वर। क्या तुम दोनों भी शादीशुदा हो? हाँ, हम पूरे 21 दिन से यहाँ हनीमून मना रहे हैं। पर तुम्हारी तो लगता है आज ही शादी हुई है। चलो आज से इस मकान का ये कमरा तुम्हारा। हम पहाड़ी के उस तरफ वाले मकान में चले जायेंगे। क्यों शारदा मैंने ठीक कहा न? शारदा शरमाने लगी। तब राजेश्वर ने कहा अरे भई शरमाना कैसा। नये जमाने के हो, थोड़ा मूड में रहा करो हमारी तरह। क्यों रवि मैंने ठीक कहा न? भई शारदा, तुम्हारे क्या कहने हैं? हम क्या कहें रवि? पर राजेश्वर यार, एक बात तो पूछना ही भूल गये हम तुमसे। तुम्हें हम दोनों का नाम कैसे पता? अरे, यार हो। यारों के नाम न जाने हम तो किसके जानें? क्यों कुमुद? अरे यार, अब चलो भी यहाँ से। देख नहीं रहे, शारदा कैसे लजा रही है कमरे में जाने से। पर तुम सुन लो रवि, एक बार जो उस कमरे को देख लेता है न, तो बाहर आने की बात भूल जाता है। खोये रहना तुम भी अपनी पत्नी की बाँहों में। न भूख सतायेगी न प्यास। अरे यार, प्यार किया तो कम-से-कम इन सब चीजों का ख्याल दिल से निकालना होगा न। अगर तुम्हारी पत्नी चूल्हा ही फूँकती रही तो प्यार कैसे पाओगे उसका? चूल्हे के पास जाओगे तो धुआँ ही लगेगा तुम्हें। अगर खाना चढ़ा भी चूल्हे पर तो हमेशा उसे उसी की फिक्र सताती रहेगी। तुम करोगे प्यार और वो कहेगी लगता है सब्जी जल गयी रवि, गन्ध आ रही है। लगता है तवा लाल हो गया रवि, रोटी भी सेकनी है। भई तब तो ऐसे में हो गये सारे मजे खराब। तभी तो कहता हूँ जनाब, हनीमून मनाने आये हो तो प्यार करो, बस प्यार। पर खाये बगैर ये प्यार भी कैसे हो पायेगा राजेश्वर? बातों से भी कहीं पेट भरता है। तब वो लोग हँसने लगे। हम तो मजाक कर रहे थे तुम्हारी पत्नी के साथ। शरमा जो रही रही थी ये लाल जोड़े में। जाके तो देखो वहाँ सारा इन्तजाम पहले से ही कर रखा है हमने। पर कुमुद, तुम्हें कैसे पता था कि हम यहाँ आनेवाले हैं? पता चल जाता है यार। ये ख्वाबी जगह ही ऐसी है जो जाने कितने लोगों को खीच ले आती है। पहले हम भी हैरान ही हुए थे यहाँ आकर। पर हमें भी मिल गया था कोई यहाँ के बारे में बतानेवाला। ये कमरा पहले उसी ने

सजाया था। फिर जब वो चला गया, हम आ गये यहाँ रहने। हम जब इतने दिन रह चुके, तुम आ गये यहाँ। यही सिलसिला चलता रहेगा यहाँ रवि। एक अपना हनीमून मनाकर जायेगा, दूसरा कमरा लेने आ जायेगा। कभी उस तरफ जाके देखोगे न तो पाओगे यहाँ से जाने कितने लोग अपने नये साथी को यह कमरा देकर उस तरफ चले गये। तुम भी आ जाना जब जी भर जाये तो और कोई नया जोड़ा आ जाये दुल्हन के लिबास में तो। अरे राजेश्वर बातें ही करते रहेंगे हम या इन्हें कमरे में भी जाने देंगे। पर यार, यहाँ तो सब चीज अलग-अलग रखी है। तो एक साथ कर लो न? कैसे करूँ? जाओ कुमुद सिखा दो शारदा को कि ये सब एक साथ कैसे किये जाते हैं। ये जो खिडकी देख रही हो न शारदा, ये पार्क की तरफ खुलती है। ये जो रस्सी लटकते हुए देख रहे हो न रवि, इसमें मौसमी झूले लगा करते है। सुंदर है न जगह? रात को जब सो जाओगे सब अपने आप सेटल हो जायेगा। ये बिस्तर, यहाँ फूल बिछाने हैं इसपे तुम्हें। अरे कुमुद, तुम ही बिछा दो न, राजेश्वर ने कहा तो वो हँसने लगी। सुहागरात इनकी है भई, फूल हम क्यों बिछायें? क्यों शारदा मैंने ठीक कहा न? वो देखो उस तरफ थाल में कितने सारे फूल रखे हैं। अच्छा तो अब हम चलें। दरवाजा ठीक से बन्द कर लेना। कहीं शोर न सुनाई दे रातों को। कोई जगा न दे। अच्छा कुमुद तुम जाओ, मैं सब समझ गयी। पर कल सुबह मिलने जरूर आना। कैसी सुबह शारदा? प्रेमी हो तुम। रात की बात करो न सुबह की बात क्यों करती हो अभी से? भई ऐसे मौके पे तो रात ही अच्छी लगती है। ये लो बिजली भी चली गई। अब कैंडल जला लो। वो वैसे भी चिढ़ा रहे होंगे तुम दोनों को और यहाँ कोई स्वीच भी नजर नहीं आयेगा तुम्हें। ऐसे ही रोशनी का आना-जाना होता रहेगा। तो फिर ठीक है। चलते हैं हम रवि। तो इस अच्छे कमरे की सजावट के लिए शुक्रिया। हमारा क्या? ये तो इस प्रकृति का एक निशान मात्र है। जब बाहर निकलोगे तब न जान पाओगे कि यहाँ की दुनिया कितनी हसीन है। फिर उनके चले जाने के बाद रवि और शारदा ने मिलकर फूल बिछाये और सोने को चले। तभी आवाज आयी, रवि अपनी पत्नी को बाँहों में नहीं लोगे। रवि मचल गया और फिर सोने को हुआ तो आवाज आयी रवि ये कैंडल नहीं बुझाओगे, ये रोशनी तुम्हें देख रही है। शारदा ने कैंडल बुझा दी और दोनों बातें करने लगे। रवि कितना अच्छा कमरा है ये। ठीक कहा था कुमुद ने। ये जगह ख्वाब है और ये कमरा ख्वाबी महल। तभी फिर आवाज आयी रवि, शारदा से कपड़े बदलने के लिए नहीं कहोगे। एक ही कपड़े में बोर हो रही होगी वो। कुछ तो ख्याल करो अपनी पत्नी का। रवि ने भी कहा, शारदा सच तुम्हें तो ये कपड़े भारी लग रहे होंगे न? जाओ चेंज कर लो। पर रवि, कैसे? कमरे में तो रोशनी ही नहीं है। यही तो ठीक है न। अटैची से निकाल लो। प्यार की रोशनी पड़ेगी न तो सब साफ-साफ दिख जायेगा। लो, ये अटैची की चाभी। पर रवि, हमारे कपड़े तो इसमें हैं ही नहीं। जो हैं, वो पहन लो न। इसमें तो एक भी कपड़े नहीं हैं रवि। क्या? तो छोड़ दो। पर हमने तो कपड़े खोल डाले रवि। तो क्या हुआ शारदा, फिर से पहन लो। कैसे पहनूँ, बीयर के नशे में तुम्हें कुछ सूझ भी रहा है। लो लाईट आ गई। अब तो दिख गया न। बत्ती बुझाओ रवि, मुझे शर्म आती है। अरे कैसी शर्म? हम पति-पत्नी हैं। प्यार करने आये हैं सारी रात। सुबह होगी तो देखा जायेगा। तो फिर ठीक है, मुँह उस तरफ

करो, मैं कपड़े पहनती हूँ। ये लो रोशनी भी चली गयी। पहन लिये न कपड़े? कहाँ पहने रवि। जितनी बार पहनना चाहती हूँ उतर जाती है। क्या हो रहा है ये सब रवि? मुझे कुछ अच्छा नहीं लग रहा। चलो यहाँ से चलते हैं। मुझे ये जगह, यहाँ का मकान, ये कमरा कुछ अजीब सा लगता है। जाओ उन्हें बुलाओ और लौटा दो उनका कमरा। हमें नहीं रहना ऐसे कमरे में। पर रवि तो तबतलक नशे में चुर हो चुका था। नहीं मानी उसने शारदा की बात और सुबह होने के इन्तजार में शारदा सब सहती रही। पर जाने वो कैसी रात थी जिसकी सुबह ही नहीं हो रही थी। उसका जिस्म निर्जीव पड़ता चला जा रहा था। रवि भी अब अधमरा सा होने लगा था। कमरे का दरवाजा खोलने की ताकत नहीं बची थी उसके पास। जाने कितने दिन गुजरे। फिर एक रोज दरवाजा अपने आप खुला। पहली बार उन्होंने सुबह की झलक देखी। पर यहाँ कुमुद और राजेश्वर नहीं थे। एक नया जोड़ा खड़ा था, कमरा खाली होने के इन्तजार में। वो कह रहे थे यार, हमने पूरे 21 दिन इस दरवाजे के खुलने का इन्तजार किया और आज खुला ये 22वें दिन। कितना लम्बा इन्तजार था हमारा। अरे इन्तजार नहीं कहो यार, इसे हमारा प्यार कहो। यही तो खासियत है इस जगह की जो एक बार यहाँ आ जाता है वापस रंगीनियों के साथ ही जाता है। उस तरफ से भी कुछ लोग लगता है हमारी ही तरफ आ रहे हैं। अरे शारदा और रवि! वो देखो वहाँ खड़े हैं, कुमुद ने कहा और राजेश्वर के साथ उनसे मिलने चली आयी। आओ, अब हम किसी नये जोड़े का इन्तजार करें जिसके लिए कमरा खाली करना है हमें। पर 21 दिन के बाद। अभी तो वो दिन आया ही नहीं ।

एक रोज हवा का तेज झोंका आया था और वो चुपके से सफेद चादर ओढ़े मेरे पास आ गयी थी। मैंने उसे छूना चाहा मगर वो दूर चली गयी और फिर जब मैं वहाँ से उठने लगा, किसी ने हाथ पकड़कर बिठा दिया मुझे। मैं पूछ न सका तुम कौन हो कि अचानक जोर की बारिश हुई। बिजली कड़की। डर से वो मेरे सीने से चिपक गयी। मैंने उसे ऐसे समेटा जैसे उसका चादर मेरे जिस्म में लिपट गया हो और वो उसे मुझसे छीनने की कोशिश कर रही हो। जैसे ही मैंने उसको अपनी गिरफ्त से आजाद किया वो ऐसे दूर चली गयी जैसे रूई उड़ जाती हो हल्की सी हवा में। बारिश तो थम गयी मगर मेरा जिस्म इस कदर भीग चुका था कि मैंने पास ही में जलते अलाव की ओर देखा। वहाँ पर भी वो मुझे दिखी। मेरे पूछने से पहले कि तुम कौन हो, वो भीगे बदन मेरे पास आकर बैठ गयी। मैंने एक नजर उस लड़की को और एक नजर उस जलते अलाव की ओर देखा। वो सर्दी से काँप रही थी। मैंने अपने जिस्म से कमीज उतारी और उसको आग में सेकने लगा ताकि जब वो सूख जाये, मैं उसे ओढ़ा सकूँ। तभी अचानक वो गायब हो गयी। मैंने उसे जगह-जगह तलाशा मगर वो कहीं नहीं मिली। फिर जब मैं वापस आने लगा तो पीछे से आकर मेरी पीठ पे बैठ गयी। मेरे बदन पे मुझे कुछ बोझ महसूस हुआ। मैंने उसकी तरफ देखा और मुस्करा दिया। वो मेरी हँसी पे फिदा हो गयी। हम सारी रात साथ-साथ रहे मगर बिस्तर पे नहीं अलाव को घेरे। रात जब बीतकर एक सुबह दे गयी, मैंने उससे उसके घर का पता पूछा और जब उसने बताने से इनकार कर दिया, मैं असमंजस में पड़ा रह गया कि इतनी देर तक साथ रहे हम। हमने एक साथ रात गुजारी। अगर कल फिर उसकी याद आई तो उसे कहाँ तलाशूँगा। ऐसा सोच मैंने उसका हाथ पकड़ लिया और वो एक बार फिर मुझसे हाथ छुड़ाकर भाग गयी।

मैं घर लौट आया। जैसे ही मैंने दरवाजा खोला, पीछे से वो बोल पड़ी। मुझे अन्दर आने को नहीं कहोगे? मैंने फिर कहा, आप कौन हैं? तो कुछ नहीं बोली। फिर मैंने चाय बनायी। किचेन में उसने मेरी मदद भी की और जब हम दोनों चाय पीने बैठे गये कि अचानक हवा का तेज झोंका आया और उसका दुपट्टा उड़ा ले गया। मैं उसके पीछे भागता रहा, भागता रहा और जब दुपट्टा हाथ में लेकर लौटा, दरवाजा बन्द था और वहाँ पर चाय की दो खाली प्याली पड़ी थी मैंने सोचा कि कहीं उसने मेरी जूठी चाय भी तो नहीं पी ली। तभी लगा जैसे वो पीछे से आके फिर कह रही हो संदीप, मैंने तुम्हारी जूठी चाय नहीं पी थी वो तो ठंडी हो गयी थी इसलिए गर्म करने किचेन में चली गयी थी। ऐसा कह केतली से चाय बाहर निकालने लगी। कप में चाय डालने के बाद फिर उसने मुझसे पूछा कि संदीप चाय गर्म है न? मैंने घण्टो चढ़ाया है चूल्हे पर। आखिर सर्दी का मौसम है, चाय तो गर्म ही पीनी चाहिए। मगर यार, वो चाय तो ठंडी नहीं बिल्कुल ठंडी थी। मगर मैंने वो चाय पी ली और जब रात में हल्की नींद आ गयी, मैंने ख्वाब में भी उसे ही देखा। वो कह रही थी, संदीप! मुझे पहचाना। मैं वही हूँ जो कल बारिश के मौसम में मिली थी। मेरा बदन भीग गया था तो तुमने मुझे गर्मी दी थी अलाव जलाकर। सन्दीप जिस तरह तुम्हारा दिल पाक था, तुम्हारी आत्मा भी पाक थी। उसी तरह मैं भी पाक दिल पाक शमा हूँ। तब मैं उससे ये कहने लगा कि तुम मेरा पीछा क्यों कर रही हो? तो उसने कहा, तुम्हीं ने तो मुझे कल्पना से जवान किया है।

59 कनक : स्मृति पुष्प

मेरे हाथों में अपना हाथ रख दोस्ती की शुरूआत की है। तब यार, मैं जाग गया था और आहिस्ता से वो मेरे पास आकर बैठ गयी थी। मैंने जब उसे अपने करीब पाया मेरे दिल में हलचल मच गयी। मगर यार, वो मेरी कल्पना की पवित्र मूर्त्ति थी। मैं उसका आदर करता था। मैंने उससे कहा कि रात के बारह बज गये है। इस वक्त नापाक इरादे वाले लोग जागा करते हैं। चलो हम सुबह मिलेंगे और उसके चले जाने के बाद मुझे नीन्द बिल्कुल भी नहीं आ रही थी। और जब सुबह के सात बज गये, अखबार वाले ने मुझे बुलाया बाबूजी, मैं अखबार वाला। आज एक महीने हो गये, पैसे लेने आया हूँ। और जब मैं उसे पैसे देकर लौट रहा था कि अखबार में छपी एक तस्वीर पे नजर पड़ी मेरी। मैंने उसे पहचानने की बहुत कोशिश की और नीचे लिखी बातें पढ़ी। और जब दोबारा पलटा, सामने मेरी कल्पना की वो छवि आ गयी जिसे मैं बराबर देखता रहा था। देख यार, ये वही लड़की है जिसके बारे में लिखा है कि ये 15 दिनों से लापता थी और आज इसकी सड़ी हुई लाश पुलिस को मिली है। तब वो दंग रह गया ये सुन और जब उसने मुझे पूछना चाहा कि कहीं ये वही लड़की तो नहीं संदीप जो पिछले कई दिनों से तुम्हें मिल रही थी। हाँ यार, मैंने कहा। उसने मुझसे फिर पूछा कि संदीप तुम्हें क्या लगता है कोई साया तुम्हारा पीछा कर रहा था। तब मैं सोचकर बस इतना ही कह सका कि पता नहीं यार और दूसरे दिन मेरे उस दोस्त की मौत हो गयी। मैं समझ न सका कि उस साये को मेरे दोस्त से क्यों नफरत थी जो उसने उसे मार डाला और एक बार फिर मेरे कमरे की बत्ती बुझ गयी। मैं चौंक कर पूछ बैठा, कौन ? सन्दीप! यार मैं तुम्हारा दोस्त। तब मेरे मुँह से इतना ही निकल सका तुम! मगर तुम तो। फिर मैं सोचने लगा अगर वो लड़की साया थी तो मेरा दोस्त। ये क्या था? क्या वाकई में वो मर चुकी थी या वाकई में मेरा दोस्त मर चुका था या वो सब मेरी कल्पना की उपज थी। ये जान न सका मैं मगर इतना तो जान ही गया मैं कि मैंने कल्पना में जो भी देखा था मिथ्या नहीं हो सकता था। वो सारी बातें आज भी मेरे जेहन में दौड़ रही थी और वो दोनों मुझसे मिलने को अब नहीं आते थे। शायद उन दोनों को एक जगह मिल गयी थी, एक वजूद मिल गया था।

ताई माँ

60

हर सुबह ताई माँ के पास बच्चों की मण्डली चली जाती। ताई माँ! मुझे पापा ने मारा। मैं घर छोड़ आया। ताई माँ! मझे कोई कहानी नहीं सुनाता, तुम सुनाओ न! ताई माँ कहती, बच्चों! कहानी तो परियाँ चुराकर ले गयी अपने देश। वो जब वापस आयेंगी, मैं तुम्हें कहानी जरूर सुनाऊँगी। इतना कह ताई माँ सोच में डूब गई। कौन सी कहानी सुनोगे तुम बेटे? मैं तो तुम्हारे सामने खुद एक कहानी बनी बैठी हूँ। पर कहाँ पता तुम्हें कि तेरी बूढ़ी ताई माँ कभी जवान भी थी। तुम्हारी तरह वो भी अपनी किसी ताई माँ से कहानी सुना करती थी।

उन्हें याद आने लगे वो पल, जब वो दुल्हन के लिबास में बैठी थी। बारात आनेवाली थी। सारे लोग उस ब्याहता लड़के को देखने को व्याकुल थे जो ताई माँ को ब्याहने आ रहा था। आखिरकार गाजे-बाजे का शोर हुआ। लोग दौड़ पड़े। ताई माँ शरमा कर घूँघट गिराकर बैठ गई। तभी उनके कानों में एक आवाज आयी। अरी ओ शोभा की माँ! दूल्हा, जो घोड़ी पे बैठा है, वो तो तेरी बेटी से उम्र में बहुत बड़ा है। अरे वो तो तेरी शोभा के सामने पिता से भी ज्यादा उम्र का दिखता है। तो माँ बोली, ऐसा दामाद चुना मेरे भाई ने मेरी बेटी के लिए। मेरी बेटी ब्याही नहीं जायेगी। नहीं उतारूँगी मैं ऐसे दामाद की आरती। ताई माँ के सारे सपने टूटकर बिखर गये। उनकी डोली खाली, दुल्हन लिये बगैर चली गई। उनकी माँ सदमे से बेहोश हो गई। ताई माँ ने जो ख्वाब देखे थे, वो टूट गये। सपनों के महल की हर मीनार गिर गयी। वो ये सोच ही रही थी कि ताई माँ के कानों में आवाज आयी। अरी ओ ताई माँ! क्यों बिगाड़ रही हो मेरे बच्चों को? खुद की तो कोई औलाद नहीं तुम्हारी, क्यों मेरी औलाद पे बुरी नजर डाल रही हो? तो ताई माँ ने कहा, बुरी नजर डाल रही हूँ मैं तेरी औलाद पे रे मेनका! तू तो खुद मेरी बेटी जैसी है। मैं भला अपनी नवासी को बुरी नजर से देखूँगी। तो वो वहाँ से चली गयी। ताई माँ ने बच्चों से कहा कि जाओ बच्चों तुम्हारी माँ तुम्हें बुला रही है। अगर नहीं गये तो तुम्हें मास्टरजी से पिटवायेगी। तब एक बच्ची उनकी गोद में छुप गयी। ताई माँ, मुझे अपने पास रख लो न? मैं तुम्हारी गोद में सो जाना चाहती हूँ। तो ताई माँ ने उसे दुलारते हुए कहा कि बेटी तेरी उम्र नहीं मेरे पास बैठने की। तेरी माँ तेरी परवरिश अच्छी तरह कर रही है। मैं बूढ़ी हो गयी, मेरा क्या? मैं एक दिन मर जाऊँगी। बेटे मुझसे मोह मत कर। तो वो बच्ची रोने लगी। मत करो ऐसी बातें ताई माँ मैं तुम्हें मरने नहीं दूँगी। मैं अपने पापा से कहकर तुम्हारा इलाज करवाऊँगी। तुम्हें फिर से जवान कर देंगे डॉक्टर चाचा। तो ताई माँ ने कहा, अरी ओ बावरी। कौन बुढ़िया जवान हो पायेगी? कौन सी ऐसी दवा होगी जो तेरी ताई माँ की सफेद झुर्रियों को फिर से काली कर पायेगी। तो बच्चों ने कहा, ताई माँ, हम जानते हैं वो दवा जिससे बाल की सफेदी काली हो जाती है। वो मेरी माँ हमेशा बाल रंगती है। मैं उसका वो रंग ले आऊँगा, तुम्हारे बाल रंग दूँगा। तुम खुद-ब-खुद जवान हो जाओगी। तभी स्कूल की घण्टी बजी। बच्चे दौड़ पड़े घण्टी बज गयी और ताई माँ ये कह दरवाजे के भीतर चली गई कि बावरे हो गये हैं बच्चे भी। भला मेरे सफेद बाल रंगेंगे वो अपनी माँ के रंग से। मारेगी तेरी माँ भी। और जाकर बिस्तर पर लेट गयी। तभी एक औरत आयी। ताई माँ, आज हमारे बेटे का जन्मदिन है। खीर और मिठाई लायी थी, दरवाजा खोलो। तो ताई माँ कहा, बेटा अन्दर आ जाओ। दरवाजा खुला है। मै बिस्तर पे हूँ। मेनका कह रही

थी, उसकी बेटी मेरे साथ रहकर बिगड़ गयी है। इसलिए मैं बच्चों के मुबारक दिनों में मिठाई से मुँह मीठा करना नहीं चाहती। क्या पता, मुझ बूढ़ी की नजर लग जाये उन्हें। तो वो औरत बोली, मेनका की बातों को क्यों ले रही हो ताई माँ? मेनका का क्या, कुछ भी कहती रहती है। अरे वो जो पड़ोस के मेहता साहब रहने आये हैं, कितना जाते रहते हैं मेनका के घर। उसके तो बराबर झगड़े होते हैं अपने पति से। तो सोचो ताई माँ, उसका क्या असर होता होगा उसकी बेटी पर। तो ताई माँ ने कहा, बच्ची है, नासमझ है। नहीं जानती कि इस उम्र में पति-पत्नी के रिश्ते कितने कमजोर पड़ जाते हैं। मैं भी सुन रही थी, उसका पति कह रहा था, तुम्हारी कोख में जो बच्चा है, वो मेहता का ही है। मैं इसे अपना बच्चा मान ही नहीं सकता। भला ऐसी बातों का क्या असर होता होगा उसकी बेटी पर? वो सुबह पूछ रही थी कि ताई माँ मेरे असली पापा कौन हैं? मेहता अंकल या मेरे बलराज पापा। मैं बलराज से कह रही थी कि बेटा, तुम दोनों के झगड़े बच्ची पर बुरा असर डाल रहे हैं। तो बलराज ने कहा, ताई माँ! मैं क्या करूँ? शाम को जब थका हारा लौटता हूँ, मेनका मुझे चाय भी नहीं देती। जब मेहता आता है, नाश्ता बनाती है उसके लिए। तब मैंने उसे समझाया था कि अभी नयी-नयी गृहस्थी बसायी है तुम दोनों ने अपनी। मेहता को लेकर तोड़ो मत अपने रिश्ते। बच्ची के साथ खेलो, हँसो, बोलो। रहो एक अच्छे माँ-बाप की तरह। वो मान गया है बेटा। तो उस औरत ने कहा, अच्छा ताई माँ चलती हूँ। वो आते ही होंगे। हाँ बेटा! जा कितनी तैयारियाँ करनी है तुम्हें अपने बेटे के जन्मदिन की। उसके जाने के बाद वो सो गयी। तभी बच्चे शोर मचाने लगे। ताई माँ, छुट्टी हो गयी। दरवाजा खोलो। परियों की कहानी सुननी है हमें तुमसे। ताई माँ कुछ नहीं बोली तो बच्चे रोने लगे। ताई माँ! क्या परियाँ अपने देश से नहीं लौटी? तो उनके माता-पिता बोले, बेटे! ताई माँ सो रही है, सोने दो। नहीं, ताई माँ हमें शाम को परियों की कहानी सुनाने वाली थी। मगर माँ-बाप की जिद पर वो चले गये। ताई माँ सोती रह गयी। सुबह दरवाजे पे भीड़ देखी बच्चों ने तो पूछा ताई माँ को क्या हुआ? तो उन्होंने कहा, तेरी ताई माँ बूढ़ी हो गई थी बेटे, मर गई। तभी बलराज और मेनका आये ये कहने कि ताई माँ हमने तुम्हारी बात मान ली। ताई माँ, देखों हम एक हो गये। ताई माँ की खुली आँखें सब देख रही थी मगर कह कुछ नहीं रही थी और बच्चे अपनी माँ के रंग लेकर आ रहे थे। हटो माँ, मैं ताई माँ के बाल रंगती हूँ। वो फिर से जिन्दा हो जायेगी। वो बूढ़ी हो गयी थी, इसीलिए मर गयी। मैं उनके बाल काले कर दूँगी, वो फिर से जवान हो जायेंगी और हमें परियों की कहानियाँ सुनायेंगी। तभी एक नन्हीं सी बच्ची तुतलाती हुई आयी ताई माँ से ये कहने कि ताई माँ! देखो, मेरी सुनहरे परों वाली तितली के पर टूट गये। ये कैसे तड़प रही है? इसे ठीक कर दो न? और लोग ताई माँ की अर्थी सजा रहे थे। बच्चे रोये जा रहे थे। ताई माँ मुस्करा रही थी क्योंकि आज मुहल्ले के सारे बच्चे अपने-अपने माता-पिता के साथ आये थे उनके पास। आज उन्हें कोई डाँट नहीं रहा था। सबकी आँखें डबडबाई थी। मगर बच्चों की दुनिया कुछ ज्यादा ही वीरान हो गयी थी, ताई माँ के बगैर।

अमन आज हम बूढ़े हो गये, हमारी जिन्दगी एक किनारे लग गयी। पर आज रह-रह कर हमें बाबूजी की बातें याद आ रही है। बाबूजी ने आते वक्त हमें कहा था कि बेटे शहर जाकर अपने गाँव को मत भूल जाना। पर अमन हम तो इस शहर में आ अपने आपको भी ऐसे भूल गये जैसे हम गाँव के नहीं, महानगर के हों। अपने बच्चों की जिद्द के आगे हमने अपने बाबूजी के संस्कार को भूला दिये। शायद तुम ठीक कह रही हो दामिनी! पापा ने कहा। तो माँ बोली, तुम्हें याद है अमन, कल जब रश्मि बच्ची थी, हमने उसका बचपना समझ उसकी हर जिद्द पूरी की। मगर ये भूल गये कि बच्चों को बच्चा समझ उनकी गलतियों को नजरअन्दाज नहीं किया जाता। जब रश्मि ने रोहित को पसन्द किया, उससे मिलने-जुलने लगी इसे भी हम भूलते रहे। ये भी नहीं सोचा कि रश्मि के बहके कदमों को रोकूँ। आज अगर बाबूजी और माँ पास होते तो हमें रश्मि की आदतों को यूँ बढ़ावा देने न देते। एक दिन रश्मि जब घर आयी थी, उसकी माँग में सिन्दूर, गले में मंगलसूत्र था। उसने रोहित से शादी कर ली थी। आनन्द भी अपनी बहन की इस हरकत पे बस मुस्कराकर रह गया था क्योंकि वो खुद एक गैरजाति की लड़की से मुहब्बत करता था। हमने न रश्मि की शादी पे एतराज किया, न आनन्द की गैरजाति महबूबा पे। न तो गाजे-बाजे बजे, न हम रिश्तेदारों को बुला सके। शादी की कितनी तैयारियाँ की थी हमने, कितने सपने देखे थे हमारी आँखों ने। तो पापा बोले दामिनी ! हमसे ज्यादा सपने तो माँ-बाबूजी ने संजोये थे अपनी पलकों पे। हमने बच्चों की पढ़ाई की खातिर उन्हें एक बार भी गाँव जाने नहीं दिया। वो एकदम से महानगर के होके रह गये। हमारी आँखों के सामने बार-बार वो चेहरे आते रहे जिन्हें हम शहर की इस गली में भूलते चले गये। गाँव में कितने लोग थे। हमारे छोटे बाबूजी थे, छोटी माँ थी। हम उनके बच्चों की शादी में एक फोन करके रह गये। उन्होंने हमेशा बधाई दी, कार्ड भेजे। मगर हम जवाब में सिर्फ फोन करके ही रह गये।

अपने बच्चों के तो कार्ड भी नहीं बाँटे हमने। उन्होंने तो खुद ही अपनी बधाईयाँ बाँटी। उनके और हमारे माँ-बाबूजी के संस्कार और हमारे संस्कार एक न रह सके। रहते भी तो कैसे, हमने अपनी औलाद को आजाद जो छोड़ दिया। हमने ऐसा पिंजड़ा बनाया जिसमें कैद पंछी संस्कार भूल गये। रश्मि की तरह एक दिन आनन्द उस गैरजाति की लड़की शोभा को ब्याह लाया। हमसे पूछने की जरूरत भी नहीं समझी। हमारे संस्कार एकदम से महानगर वाले होके रह गये थे। दामिनी, एक रोज हमें खबर मिली की रश्मि ने अपने बच्चे को पैदा होने से पहले ही खत्म कर दिया क्योंकि उनके पास अभी वक्त नहीं था बच्चों के लिए। वो अभी और आजाद होकर जीना चाहते थे। मगर हम तो नाना बनने के सपने देख रहे थे। माँ-बाबूजी के खत हमें बराबर मिलते मगर हम उन्हें जवाब में कुछ लिख नहीं पाते। हम लिखते भी तो क्या? वो बार-बार कहते थे कि बेटा अमन! हमने रश्मि के लिए लड़का देखा है। एक बार उस महानगर से निकल के देख बेटा! ये गाँव की दुनिया बड़ी खूबसूरत है। हमने खत पढ़ा और उसे दराज में बन्द कर दिया। सोचो हम क्या कहते बाबूजी को कि रश्मि की शादी हो गयी, आपको बुलाया भी नहीं हमने। तो माँ ने कहा, आनन्द की तो कोई खबर भी नहीं हमें कि वो अपनी पत्नी को लेकर कहाँ गया? बस घूमने का बहाना कर चले गये

दोनों। तो पापा बोले, दामिनी। हम माँ-बाप तो बने मगर हमने अपने गाँव के रिश्ते को भूला दिया। अगर हम एक बार बच्चों के साथ गाँव जाते तो शायद वो एक अच्छा संस्कार पाते। तो माँ ने कहा, हमने कोशिश भी नहीं की अमन बच्चों के संस्कार बदलने की। हमने तो बस वही किया जो उन्होंने हमसे पूछा। कई बार तो पूछने की जरूरत भी नहीं समझी। जब शादी जैसे अहम् फैसले में हम साथ न हो सके तो बाकी की फैसले तो हमारी नजर में बेमानी थे दामिनी! तो माँ ने कहा, क्या बात करते हो अमन? हम पर तो उस दिन भी बिजली नहीं गिरी जब हमें पता चला कि रश्मि का रोहित से तलाक हो गया है और रश्मि अब अस्मित से प्यार करने लगी है। अब रश्मि घर आ गयी थी। कभी किट्टी पार्टी का प्रोग्राम बनता उसका कभी होटल में डिनर का। अब तो अस्मित की बाहों में रातें बिताने लगी थी। और फिर एक दिन पता चला हमें कि वो उसके बच्चे की माँ बनने वाली है। हमने जब शादी का दबाव डाला तो वो बोले, पापा! ये तो हमारे लिए कोई नई बात नहीं, हमने तो पता नहीं कितनी बार एबॉर्शन करवाया है। तब हमें उसके गाल पे एक तमाचा मारना चाहिए था। मगर मारते भी तो कैसे? हम तो खुद तमाचा खा चुके थे। ये महानगर था अमन जिसमें हमने अपने आपको पूरी तरह डुबो दिया था। तो पापा बोले दामिनी! आज तो हमें पता भी नहीं कि रश्मि ने अस्मित से शादी की भी या ऐसे ही रह रही है उसके साथ। वो लोग इतने मॉर्डन जो थे कि माँ-बाप को बताना भी जरूरी नहीं समझा। हमने कभी पूछा भी नहीं। बच्चे हमारे हाथ से निकल चुके थे अमन पूरी तरह। आज कई वर्ष बीत चुके हैं। रश्मि के फोन आने भी बन्द हो गये हैं। पता नहीं आनन्द भी शोभा के साथ है या वो भी अलग हो गये। तो पापा ने कहा, अब पता भी क्या करना दामिनी? जब पता करने का वक्त ही बीत गया। आज हमारे बच्चे भी हमारी तरह महानगर वाले हो गये। ये क्या बदलेंगे अपने आपको, जब हम इतने सीधे-सादे थे जो न बदल सके खुद को अमन! हमने तो पल-पल बाबूजी की बातों को नजरअन्दाज ही किया। आज तुम क्या कहते हो? बाबूजी ने आज आखिरी बार गाँव बुलाया है। आज वो आखिरी साँसें ले रहे है। तो पापा ने कहा आज हम भी तो जिन्दगी के उसी मोड़ पे आ गये दामिनी जहाँ बच्चे हमसे दूर हैं और हम माँ-बाबूजी की तरह अकेले। चलो, आज ही शाम की फ्लाईट पकड़ गाँव वापस चलते है। जिन्दगी के बाकी दिन हम उसी गाँव में बितायेंगे माँ-बाबूजी के साथ। हम उनके आखिरी पलों में उनके पास होंगे तो हो सकता है एक दिन हमारे बच्चे भी हमें ढूँढते हुए लौट आयें। तो माँ ने कहा, नहीं अमन, हमारे बच्चे अब वापस कभी नहीं आयेंगे हमने इस महानगर में आके अपने बच्चे खो दिये। तो पापा बोले, बच्चों के साथ-साथ जिन्दगी भी दामिनी। देखो इतिहास को पीछे मुड़कर देखो। जब आगे रास्ते बंद हैं तब लौट चलना ही उचित है। हमें हमारी माटी की सोंधी सुगन्ध पुकार रही है और उन लोगों ने गाँव की राह पकड़ ली।

दूरी

लोग कहते थे केदार की बीवी कैसी आयी है अल्हड़। हमेशा केदार की बातों का उल्टा मतलब निकालती है। सुना ताई तुमने मन्जरी तो कह रही थी कि केदार की बीवी पागल है और गोपाल कह रहा था आधी मिजाज पहले बचपन में खोयी होगी उसने और आधी शादी के बाद गंवा ली।

ऐसे कई किस्से होते थे हमारे और सौरभि के मगर हमें कभी ऐसा न लग सका कि हमारी बीवी सौरभि पागल भी हो सकती है। मैं तो उसे एक कमउम्र कमसिन लड़की मान उसके बचपने के साथ खेलता रहता था। एक रोज उसने मुझसे कहा था केदार तुम मेरे लिए एक तोहफा रोज ला सकोगे? हमने कहा था क्यों नहीं? और रोज वो मुझसे नयी-नयी चीजों की फरमाइश करती रहती थी और मैं पूरा करता रहता था। एक रोज ताई ने मुझे बुलाकर कहा था कि अरे ओ केदार! भेज दो अपनी लुगाई को उसकी माँ के घर। वो पागल है रे। मैं खीज गया था तब और घर आकर जब बिस्तर पे लेटा था तो सौरभि ने आकर कहा था सुनो केदार, अपने दोस्तों की बड़ी याद आती है मुझे। बाबूजी भी इतने दिनों से नहीं आये, मैं घर जाऊँगी। मुझे पहुँचा दो न? तब मैं हँस पड़ा था। क्यों रे पागल! कितने दिन हो गये तुम्हें यहाँ आये। तू तो परसों ही आयी है मेरे साथ। तब वो रोने लगी और बोली थी मैं जब अपने घर रहती थी न केदार तो रोज दिनभर में पन्द्रह बार अपने दोस्तों के पास जाने की इजाजत माँगती थी माँ से और माँ मना भी नहीं करती थी। मुझे हर बार कहती थी जा सौरभि खेल आ बेटा। तेरे तो अभी खेलने की उम्र है और तुमसे सिर्फ एक बार कहा तो तुमने इनकार कर दिया। केदार, आज के बाद से मैं तुमसे कुछ नहीं कहूँगी। मगर हाँ, जब बाबूजी लिवाने आ जायें तो तुम मेरे पीछे मत आना। कैसे साथ-साथ घूमे थे मेरे साथ सात बार। मैं सब बर्दाश्त करती रही थी जबकि मैं अपने दोस्तों का एक बार भी अपने पीछे आना बर्दाश्त नहीं कर पाती थी कभी। जरा सोचो केदार तुमसे तो मैंने इतनी वफा निभा ही ली न? आखिर जब तुम मेरे घर आये थे मुझे लिवाने तो तुम्हारे साथ आते वक्त मैंने तुमसे झगड़ा भी नहीं किया था और तुम हो कि मुझसे खीजते रहते हो हरदम। वो इतनी सारी बातें कर रही थी और मैं अपलक उसे निहार रहा था। उसकी आँखों से आँसूओं की कतारें बहती चली जा रही थी। वो कहते न थक पा रही थी मुझसे और मैं सुनते न ऊब रहा था।

उसकी सारी बातों को मैं बड़े ध्यान से सुनता था मगर कहता कुछ भी नहीं था क्योंकि मैं जानता था कि अगर उसे बीच में टोक दिया तो वो शरमा जायेगी और कहेगी कि तुमसे तो मेरी बोलचाल ही नहीं थी। तुमसे मैंने इतनी सारी बातें भला क्यों की? उसके ऐसे भोलेपन के आगे मेरी माँ भी सारा गुस्सा भूल जाती थी। मगर कहती जरूर थी कि केदार बेटा लगता है बहू को समझ नहीं तुम्हारे रिश्ते की। तुम उसे कुछ समझाते क्यों नहीं? मैं कह देता था माँ कम-से-कम एक बच्चे की कमी तो पूरी कर ही रही है वो इस घर में। तो क्या हुआ अगर उसे हमारे रिश्ते की समझ नहीं? यही सब बातें जब मंजरी काकी ताई अम्मा से कहती तब उन्हें ऐसी क्रूर निगाहों से देखता था मैं कि वो मेरी माँ को बहकाना भूल जाती थी। मगर कहाँ खत्म होती थी उनके पड़ोसिनों की महफिलें। मेरी सौरभि मुझे चाय भी बनाके देती थी, नाश्ता भी बनाके देती थी और रात को अपने दोस्तों की बातें भी सुनाती

थी। उसके साथ रहने में मुझे कोई परेशानी न थी। परेशानी थी तो इन ताई अम्मा और मंजरी काकी जैसे लोगों से जो एक ऐसी बचपन की साक्षात मूर्ति के लिए मुझे बहकाती रहती थी। मैं रोज बाजार से उसके लिए जलेबी लेकर आता था और वो कहती थी केदार, तुम्हारी जलेबी बड़ी अच्छी लगती है। थोड़ी और ला दोगे? इतने तो कम पड़ जाते हैं। तुम हमारे साथ खा भी नहीं पाते। तब मैं एक बार फिर उसे अपलक देखने लगा था कि ये मेरे साथ जलेबी खाना चाहती है। ये मुझे कुछ तो अपना समझने लगी है। तब दूसरे दिन से मैं और ज्यादा जलेबी लाने लगा था। वो मेरे मुँह में अपने हाथों से जलेबी खिलाती थी और अपने बचपन के किस्से को सुनाकर खूब हँसती थी। मैं भी हँसता था। हाँ, माँ कुछ बहक जरूर जाती थी पड़ोसियों की बातों को सुनकर मगर सौरभि की एक बोली उन्हें मना लेती। वो कह देती थी की माँ, मैं आपके लिए पूरी बना दूँ? आप खा लेना जलेबी के साथ। वो केदार है न रोज रात को जलेबी लाता है मेरे लिए और आपको देने को कहती हूँ तो कहता है कि माँ मारेगी। क्यों माँ, जलेबी खाने पर तुम मुझे मारोगी। पर क्यों? मेरी माँ तो रोज बाजार से मेरे लिए जलेबी लाती थी। तो आप में और मेरी माँ में क्या फर्क रहा भला पूछो न केदार से और तब माँ भी मेरे साथ रो पड़ती थी और कहती की तुम बेटी हो मेरी। ऐसा अनमोल रत्न हो मेरे लिए कि तुम्हारे आगे अगर कुछ और रख दिया जाय तो वो फीका है बेटे। ये मुरलीधर कृष्ण, ये राम कोई तुम सा मीठा बोल बोलना नहीं जानते होंगे। बेटी, मैं आज से ताई अम्मा और मंजरी काकी जैसे लोगों से कह दूँगी कि मेरी बहू सबसे अनमोल है। ऐसा सुनते ही वो कह देती थी कि केदार तुमसे मेरी कुट्टी खत्म हो गयी। आज से मैं कभी अपने दोस्तों की, अपनी माँ की और अपने घर की बातें याद नहीं करूँगी और माँ ने तब मेरे सर पे हाथ रखते हुए कहा था कि बेटा केदार, जरूर तुमने पिछले जन्म में कोई अच्छा काम किया होगा और हमारी सारी परेशानी ही दूर हो गयी थी। तब लोगबाग जो बातें करते थे हम उनपर ध्यान नहीं देते थे और फिर एक दिन जब उसके बाबूजी आये थे हमारे घर तो हमने कहा था कि बाबूजी सौरभि अब हमारे साथ रहना सीख गयी है तब सौरभि बोली थी हाँ बाबूजी! मगर माँ कैसी है? मेरे दोस्त कैसे हैं? बताओ न बाबूजी तो उन्होंने कहा था कि बेटा सौरभि सब मजे में हैं। तब वो एक बार फिर रोने लगी थी कि केदार मुझे बाबूजी के साथ अपने घर जाना है। हमने कहा था कि सौरभि तेरा घर अब यही है। मगर वो नहीं मानी थी और माँ ने उसके आँसू पोछते हुए कहा था कि जाने दे बेटा बहू को। कुछ दिन अपने घर रहेगी तो खुद ही यहाँ आने को जी करेगा इसका और ऐसा कह माँ ने उसे विदा कर दिया था।

मगर वो फिर कभी हमारे पास न आ सकी। कुएँ की मुंडेर पर कुछ लोगों के साथ खेल रही थी, कुएँ में गिर गयी और मेरी सौरभि इस संसार से अपने ही वजूद से जुदा हो गयी। जब ये खबर मुझतक पहुँची मैं जाने लगा था। तभी मेरे कानों में सौरभि की आवाज गूँजने लगी थी। उसने कहा था केदार, जब मैं अपने घर चली जाऊँ तो तुम मेरे पीछे मत आना। हमारी तुमसे कुट्टी हो गयी और कहा था कि केदार पहले भी हमने तेरी हर गलती माफ की है। तुम मेरे पीछे बार-बार घूमे थे और मैं तुम्हें टोक न सकी थी। आज जब उसकी बातें याद आती है तो सोचता हूँ कि कितनी दूरी थी हमारे और सौरभि के बीच कल समझ की। मगर आज जो दूरी बनायी उसने हमसे ये सदियों की दूरी बनके रह गयी।

निकाह

आपाजान की निकाह का वक्त हो चला था। शबनम एक कोने में उदास बैठी थी। तभी अम्मीजान आ गयी। बोली, अरे शब्बू! तू अभी तक तैयार नहीं हुई। नीलोफर की निकाह पढ़ने को काजी साहब आ गये हैं। शबनम ने अपने आँसू पोछे और कहा अम्मीजान, मेरा वहाँ क्या काम? आपाजान और अहमद साहब का निकाह हो रहा है न। मैं न भी जाऊँ तो ये निकाह नहीं रूकेगा। आप फिक्र न करें अम्मीजान। तव वो चौंकी और बोली शब्बू बेटे! तेरी आपाजान का निकाह हो रहा है और तू पराये लोगों की तरह बातें कर रही है। तो शबनम ने कहा, आपाजान से कहिए अम्मीजान कि वो निकाह पढ़वा ले। मैं आ रही हूँ। इतना सुन अम्मी चली गई।

शबनम की आँखों के सामने वो मंजर आ गये जब वो बारिश में नन्हें अहमद के साथ खेला करती थी। बचपन का दोस्त था वो मगर उसने कभी शबनम को उस नजर से नहीं देखा था तो शबनम भी खामोश रह गयी। उसने महसूस किया कि ताई अम्मीजान की बेटी नीलोफर से वो प्रेम करते हैं। उसे याद आया वो पल जब अहमद ने आपाजान का हाथ पकड़ा था और कहा था नीलू, तुम दूर हो जाओ मेरी नजरों से। मैं आज से शबनम के साथ खेला करूँगा। तब ताई अम्मी ने दोनों के झगड़े खत्म करवाये थे। आज वही अहमद निकाह कर रहा था नीलोफर आपाजान से। शबनम ने बहुत बार दूल्हा-दुल्हन का खेल खेला था नीलोफर के साथ। मगर बार-बार वो दूल्हे को छीन लेती थी उससे और कहती थी, ये मेरा दूल्हा है। मैं निकाह करूँगी इससे। तब वो रोती हुई अपनी अम्मीजान के पास जाती और कहती, आपाजान ने मुझसे मेरा दूल्हा छीन लिया। तब वो हँस पड़ती और जाकर बड़ी बी से कहती, बड़ी बी! आज भी दोनों बहनों में झगड़े हुए हैं दूल्हे को लेकर। पता नहीं ये झगड़े कब खत्म होंगे? हो जायेंगे छोटी तब जब नीलू का निकाह हो जायेगा। वो तो अभी दूर है बड़ी बी। वो दोनों तो अभी बच्ची हैं न। आज वही मंजर थे हवेली में। आज वाकई में उसका दूल्हा छीन रही थी नीलू। उसकी जीत हो चुकी थी। तभी काजी की आवाज गयी उसके कानों में। उसने सुना, काजी साहब कह रहे थे नीलोफर बानो, तुम्हें अहमद से निकाह मंजूर है। ऐसे में वो सोचने लगी, जाकर घूँघट उठा दूँ और छीन लूँ नीलोफर से उसका दूल्हा। मगर ऐसा नहीं कर पायी और बुझे मन से एक ड्रेस पहनकर जाकर बैठ गयी जमात में। वहाँ भी उसके दिलोदिमाग में एक ही सोच, एक ही नफरत छायी थी कि कहे काजी साहब से निकाह मेरा पढ़वाईए। अहमद से शादी मैं करूँगी। मगर इतने लोगों की भीड़ में वो ऐसा कह नहीं सकी और निकाह का वक्त बीत गया। तालियों की गड़गड़ाहट से वातावरण गूँज उठा। शबनम अपने कमरे में चली गयी। वो सोचने लगी कि आखिर आपाजान ने हमसे अहमद छीन ही लिया और एक कैसेट निकाला जिसमें उसने अपनी आवाज रिकॉर्ड की। कहा, आपाजान! आप एक गुनाह कर रही हैं और साथ में अहमद भी गुनहगार हैं। आपने बचपन के खेल को पूरा कर दिया आपाजान। आज इस जगह मेरा दम घुट रहा है। मैं आपसे दूर जा रही हूँ। पर ये कहना चाह रही हूँ कि मैं बचपन से अहमद से प्यार करती हूँ। पर निकाह आपका हुआ उनसे क्योंकि ये बड़ी बी की मर्जी थी कि पहले आपका निकाह हो। शायद यह ठीक भी हुआ हो। आप मुझसे उम्र में बड़ी हैं। आप तो मुझसे तहजीब में भी बड़ी हैं। पर आज

एक बात कहने की गुस्ताखी कर रही हूँ कि आप कभी मुझसे हारी नहीं आपाजान। आज भी आप जीत गयी। जब ये कैसेट सुनेंगी आप, मैं इस संसार से दूर बहुत दूर जा चुकी हूँगी। आपाजान मैं एक बार फिर कहती हूँ कि बचपन से लेकर आजतक मैंने सिर्फ अहमद को अपना दूल्हा माना और निकाह के वक्त आप बैठी थी। अहमद साहब जब आयें तो कहना कि शबनम ने आपका बहुत इन्तजार किया बचपन से लेकर आजतक पर अहमद साहब आप शब्बू के न हो सके। आपकी शबनम ये दुनिया छोड़ जा रही है आपाजान! जाने से पहले मेरी रूखसती देते जाना आप। इतना कह बिस्तर पे सो गयी। सीने पर सफेद दुपट्टा लहरा रहा था और बगल में खाली कैसेट पड़ा था।

जब ताई अम्मी को शबनम का खयाल आया, वो कमरे में ये कहते हुए आयी कि बेटी ये बहन की रूखसती की मिठाई खा ले। मगर बिस्तर पे तो शबनम की लाश पड़ी थी। जब उन्होंने उसे झकझोरा तो वो एक तरफ लुढ़क गयी और अम्मीजान दौड़ती हुई भागी। जब उनकी चीख सुनी तो नीचे से अहमद साहब भी आये मगर तबतक बहुत देर हो चुकी थी। अहमद साहब ने शबनम का सर अपनी गोद में लिया और टेप रिकॉर्डर चालू कर दिया। बार-बार एक ही आवाज आ रही थी कि अहमद साहब! मैं आपसे बहुत प्यार करती हूँ। बचपन से मैं आपको अपना दूल्हा बना देखती आयी थी। मगर आज आपाजान जीत गयी अहमद क्योंकि वो बार-बार मुझसे एक ही शिकायत करती थी कि शब्बू मुझसे कभी हारती ही नहीं तो आज मैं हार गयी। जब कैसेट बन्द हुआ नीलोफर रो पड़ी। इतना बड़ा राज लेकर गयी तुम शब्बू। मैंने तुम्हारे बारे में ऐसा कभी नहीं सोचा था। बचपन की बात और थी और उसने दिल पे पत्थर रख एक बार अहमद की ओर देखा और कहा, अहमद साहब मुझे तलाक दे दीजिए। मैं इतना बड़ा बोझ लेकर नहीं जी पाऊँगी। मैं अपनी शब्बू के चेहरे पर आज खुशी देखना चाहती हूँ। तब अहमद साहब रोते हुए बोले, हाँ नीलोफर बानो! मैं भी आपके साथ नहीं जी पाऊँगा। मैं नहीं जानता था कि हमारा निकाह इतनी बड़ी घटना को अन्जाम देगा। आज ही मैं आपको तलाक देता हूँ और तीन बार कहा, तलाक! तलाक! तलाक! सारे लोग दंग रह गये इस अजीबोगरीब दृश्य को देखकर मगर ये दोनों बार-बार शब्बू के सफेद लिबास को देख रहे थे जो चीख-चीख कह रहे थे मुझे रंगीन बना दो आपाजान! मुझे रंगीन बना दो अम्मीजान! मुझे रंगीन बना दो ताईजान!

रेशम की एक साड़ी

माँ, कहाँ हो तुम? संगीता की साड़ी नहीं मिल रही। कौन सी साड़ी बेटा? वो रेशमवाली पीली साड़ी। कहीं रख दी होगी उसने। जरा अच्छी तरह सन्दूक खोलकर देखने को कहो उससे। माँ आप क्या बात कर रही हैं? अगर ली हो तो दे दो। हमें पार्टी में जाना है। देर हो रही है। बेटा, भला मैं विधवा औरत रेशम की साड़ी का क्या करूँगी? कुछ भी करो माँजी मगर ली आपने ही है। इसी जगह तो कल निकालकर रखी थी मैंने संगीता ने कहा तो माँ बोली, बहू मैंने नहीं ली कह तो रही हूँ। आज अगर नहीं मिल रही और पार्टी में जाने में देर हो रही है तो कोई दूसरी साड़ी पहन चली जाओ। वापस आने पर तलाश कर लेना। नहीं माँजी, ली हो तो बता दो। मुझे अपनी सहेलियों को वही साड़ी दिखानी थी। मैं भला उनसे क्या बहाने बनाऊँगी? मैंने उनसे कहा था कि पिछले दिनों राजीव ने मेरे लिए अमेरिका से रेशम की एक साड़ी मँगवायी है, पूरे पचास हजार की। आज अगर पहनकर नहीं गयी तो मेरी क्या इज्जत रह जायेगी? माँजी प्लीज, मेरी साड़ी वापस कर दीजिए। माँ रो पड़ी। राजीव तू बहू को समझाता क्यो नहीं? इसने कब दी है मुझे रेशम की साड़ी रखने को? दी नहीं माँ, तुमने ही संगीता से माँगकर रख ली है। उसे वापस लेने की याद नहीं रही तो तुमने वो साड़ी रख ली। संगीता, माँ के कमरे में जाके देखो। कहीं वहाँ तो नहीं रखी? देखती हूँ। ऐसा कह संगीता उनके कमरे में जाने लगी। माँ ने कहा बहू, अगर मेरे कमरे की तलाशी लेनी ही थी तुम्हें तो सिर्फ रेशम की एक साड़ी का इल्जाम न लगाया होता मुझपर। गहने, हीरे-जवाहरात की चोरी का इल्जाम लगाती मुझपर। माँजी वो तो मैंने देखी ही नहीं अभी तक वो भी मेरे संदूक में है या आपने ले ली। बहू, तुम हद से आगे बढ़ रही हो। हमारे सब्र की सीमा जवाब दे रही है। तो फिर तलाशी क्यों नहीं लेने देती आप अपने कमरे की? राजीव, कहो इनसे कि दरवाजा खोल दें। राजीव ने कहा, माँ संगीता अगर तुम्हारे कमरे में अपनी साड़ी तलाश करना चाहती है तो करने दो न? माँ ने राजीव के गाल पे एक तमाचा मारना चाहा मगर पलटकर राजीव ने उनका हाथ पकड़ लिया ये कहते हुए कि जवान बेटे पर हाथ उठाने से पहले सोच मेरी माँ कि हाथ मेरी तरफ से भी उठ सकता है। तो मार न राजीव। संगीता क्या आ गयी तुम्हारी जिन्दगी में तू मुझपर हाथ उठाने लगा। क्यों नहीं उठाऊँगा माँ? ये बंगला, ये गाड़ी, ये बैंक-बैलेंस किसने छोड़ा है हमारे नाम? संगीता के पिता ने। तुम्हारे पास क्या था माँ? एक छोटा सा घर दो कमरों का और आज तुम जहाँ आराम से खिड़की से बगीचा देखती रहती हो, ठंडी हवा का आनन्द लेती हो। ये सब किसका है माँ? तुम्हारी पत्नी का राजीव और किसका? माँ ने कहा और रोते हुए बोली राजीव, ये जिस्म, ये रूप-शृंगार, ये चेहरे की रंगत किसने दी तुम्हें बेटा? शौक से तुम इनका वास्ता देती रहो मुझे माँ मगर सिर्फ एक जिस्म मिल जाने से जिन्दगी नहीं मिल जाती। औलाद तो लावारिस बन भी पाली जाती है माँ और पिताजी के मरने के बाद मैं यही बनकर तो पला हूँ माँ। माँ चीख पड़ी। तू चाहता क्या है बेटा, एक लाचार विधवा औरत से एक रेशम की साड़ी। तो क्या बेटा मेरा प्यार, मेरी सारी ममता, मेरा दुलार सब एक रेशम की साड़ी में सिमटकर खत्म हो गया। बेटा, तो ले मेरे कमरे की तलाशी और मुझे निकाल दे इस घर से धक्के देकर। तब संगीता ने कहा, आपके रहते ही कमरे की तलाशी लेंगे माँ ताकि आपको अभी ये देखकर

शर्म आ सके कि आपने ही घर से बहू की साड़ी चोरी की है। बहू, तू इतनी बर्बरता पर उतर सकती है ये जानती अगर मैं तो आज मैं तुम्हारे घर के कमरे में रहने नहीं आयी होती। बहू, यहाँ लाने से पहले तुमने मेरे दो कमरों वाले घर को बेच डाला था न? मुझे वो घर वापस कर दो। मैं शौक से चोरनी बन जाने को तैयार हूँ यहाँ से। पहले मुझे मेरे घर के कागजात वापस कर दे राजीव फिर ले मेरे कमरे की तलाशी। अच्छा तो अब असली रूप सामने आया तुम्हारा। माँ मेरी पत्नी की पचास हजार की साड़ी को इसलिए चुराया तूने ताकि हमसे घर के कागजात हासिल कर सके। तो ऐसी नागिन है तू ये आज जाना मैंने। माँ दोनों तरफ से हो रहे इस शोर को सुनते-सुनते चीख पड़ी। दोनों ही लोग अपनी-अपनी तरफ से गालियाँ और तोहमतें दे रहे थे उन्हें। वो बोली हे ऊपरवाले! इसी दिन के लिए मैंने तुमसे औलाद माँगी थी शायद और घर से बाहर जाने लगी। तब राजीव और संगीता ने उनका हाथ पकड़ लिया, कहाँ जा रही हो माँ? पहले रेशम की साड़ी तो वापस करती जाओ। ये तो तुम्हें मेरे कमरे की तलाशी से मिल जायेगी बेटा क्योंकि शायद उस रेशम की साड़ी में तुम्हारी पत्नी का अरमान जो मिला हुआ है। हाँ माँ, मिला है। तो ले तलाशी। मैं भी तो देखूँ कि कौन कितना सच कह रहा है। तभी लांड्रीवाले ने दरवाजे पे दस्तक दी। मेमसाहब देर हो गयी। आपकी साड़ी धोकर ला दी मैंने। संगीता शर्म से निगाहें झुकाते हुए बोली, सॉरी माँजी, मैं भूल गयी थी। कल ही मैंने वो साड़ी धोने को दी थी राजीव पार्टी में जाने के लिए। पिछले दिनों उसपे नेलपॉलिश के दाग लग गये थे। क्या? हाँ, अच्छा तो जल्दी करो हमें पार्टी में जाने में देर हो रही है और ऐसा कह दोनों तैयार होकर पार्टी में चले गये। माँ ने उन्हें बाहर जाते हुए देखा और बोली ऐसी होती है औलाद के बीच माँ की जिन्दगी और फफककर रो पड़ी ये कहते हुए कि क्या रेशम की एक साड़ी जितनी भी कीमत नहीं हमारी।

एक और खिलौना

पापा नींद नहीं आ रही, तुम्हारे पास बैठ जाऊँ? सीमा ने कहा, तो पापा बोले, बेटा! रात के बारह बज गये हैं। हमें नींद आ रही है। सोने दो और तुम भी कमरे में जाकर सो जाओ। तो सीमा बोली, और माँ! वो अभी-अभी आपसे बातें कर रही थी। उन्हें कहो न मेरे साथ बैठने को। तो पापा बोले, बेटा! तुम्हें तो पता है तुम्हारी माँ सुबह से काम करते-करते थक जाती है। अभी-अभी उसकी आँख लगी है। सो जाओ बेटा, ऐसा कह उन्होंने रजाई ओढ़ ली। सीमा अपने कमरे में आ बैठ गयी। चलो, जब सब को नींद ही आ रही है तो मैं रीतू से बात कर लेती हूँ। वो तो जाग रही है। पापा ने कहा था कि रीतू एक खिलौना है। इसे नींद नहीं आती। ऐसा कह रोने लगी। रीतू! पापा ने हमारी बात नहीं सुनी। हमने सपने में अपने पुराने दोस्त मनोज का सर फोड़ दिया। उसके सर से खून बह रहा होगा। मैंने तुम्हारी टाँगें भी तोड़ दी। पापा ने तुम्हारी और मनोज की मरहम-पट्टी भी न की। बेचारा मनोज कितना रो रहा था। तुम्हें भी तो पैरों में दर्द हो रहा होगा। चलो मैं खुद तुम्हें डॉक्टर के पास ले चलती हूँ। तो क्या हुआ मुझे उनका पता नहीं मालूम, मैं ढूँढ लूँगी न? तब भी रीतू ने कुछ नहीं कहा तो सीमा ने एक बार फिर उसके पैरों को जोड़ना चाहा और जाकर दरवाजे पे खड़ी हो गयी। मगर मैं कैसे जाऊँ बाहर? यहाँ तो ताला पड़ा है। अब बेचारा मनोज! उसका तो सारा खून ही बह गया होगा? क्यों मारा मैंने उसे? भला अपने दोस्त का सर फोड़ डाला मैंने! अब मैं डॉक्टर के पास भी नहीं जा सकती। पापा ने दरवाजा जो बन्द कर रखा है। भला मैं क्या कर बैठी? किसी को इतना मारा करते हैं। माँ ने तो कहा था बच्चे शरारती होते हैं। मगर ऐसी शरारत करते हैं वो कि खेल-खेल में किसी का लहू बह जाय। अब तो एक ही रास्ता है मनोज को बचाने का। डॉक्टर कहते थे जब किसी का खून बह जाय तो उसे अपना खून दे देना चाहिए। चलो मैं अपना सर फोड़ लेती हूँ और जो खून बहेगा उसे बोतल में भर डॉक्टर को दे आऊँगी। सुबह वो मनोज को हमारा खून दे देंगे। कितना बड़ा काम है ये। भला मैंने गुनाह ही क्यों किया इतना बड़ा? ऐसा कह पत्थर उठाया और मारने लगी सर पर। खून बहने लगा तो बोली, कितना दर्द कर रहा है मेरा सर। मगर मनोज को तो और ज्यादा चोट लगी थी। वो तो काफी जोर-जोर से रो रहा था। भला मैं तो रो ही नहीं पा रही। इसका मतलब मुझे चोट गहरी नहीं आयी। ये खून तो इतना सा है। भला इतना सा खून देंगे डॉक्टर मनोज को। लाओ, एक पत्थर और मारती हूँ सर पे। ऐसा कह इतनी जोर का पत्थर मारा कि उसका सर ही फट गया। खून के फब्बारे छूटने लगे। वो फिर भी रो नहीं पायी क्योंकि सपने में उसने मनोज के सर से इतना ही खून बहते देखा था। थोड़ी देर बार वो फिर पापा के पास गयी और कहा, पापा! मेरे सर में गहरी चोट आयी है। देखो तो कितना खून बह रहा है। पापा, अब तो मनोज को डॉक्टर के पास ले जाओगे न? और रीतू की एक टाँग तोड़ डाली मैंने। उसे भी तो जुड़वाना है। मगर पापा ने कुछ नहीं कहा। वो सोते रहे। तो सीमा बोली, पापा! सुबह होने में काफी वक्त है और खून है कि बहता ही जा रहा है। माँ मनोज को खून देना है। माँ, दरवाजा खोलो। माँ भी जाग न सकी और सीमा एक बार फिर अपनी रीतू के पास आ गयी और कहा, रीतू! तुम्हें दर्द हो रहा है। दर्द तो मुझे भी हो रहा है। चलो कमरे में चलते हैं। मगर तुम तो चल ही नहीं सकती। तुम्हारा पैर तो तोड़ डाला मैंने। चलो रीतू मैं तुम्हें अपनी गोद में उठाकर ले चलती हूँ। तभी उसे एक बार फिर ख्याल आया, रीतू

की टाँग तो दो जगह हो गयी। ये एक साथ कैसे जुड़ सकेगी? डॉक्टर कहा करते थे कि जब किसी की एक टाँग टूट जाय तो लोग उसे लँगड़ा कहने लगते हैं। इसलिए वो चलने में कामयाब नहीं हो पाते। मगर हम उसे दूसरी टाँग जोड़ देते हैं जिसे अंग्रेजी में रड से टाँग की मरम्मत करना कहते हैं। चलो मैं अपनी टाँग भी तोड़ लेती हूँ। भला मेरी रीतू को लोग लंगड़ी कहें और मैं चुपचाप सुनती रहूँ। नहीं मैं भी अपनी एक टाँग तोड़ लूँगी क्योंकि रीतू अगर अपाहिज हो सकती है तो मैं क्यों नहीं? रीतू अगर रड के सहारे चल सकती है तो मैं क्यों नहीं? पर मैं अपनी टाँग कैसे तोड़ूँ? सर तो मैंने पत्थर से फोड़ लिया। अब टाँग किस चीज से तोड़ूँ? चलो कहीं से डंडा उठा लाती हूँ मैं। मैं इन्हीं टाँगों पे चलके ही तो जाती हूँ उन्हें जगाने। भला मैं उन्हें सोने भी नहीं देती। चलो रीतू आज से हम दोनों में से कोई पापा के पास नहीं जायेगा। न मैं, न तुम, न मनोज । बेचारा मनोज! वो तो अबतक मर भी गया होगा। चलो एक बार फिर पापा के पास चलते हैं। कहीं मनोज मर गया तो हम किस के साथ खेलेंगे? पर मैंने तो अपनी टाँग ही तोड़ ली। अब किस टाँग के सहारे चलूँ। चलो रीतू, मैं पापा को यहीं से पुकार लेती हूँ। पापा, ये देखो सुबह होने ही वाली है। अस्पताल में डॉक्टर साहब आ भी गये होंगे। चलो उठो। मेरी रीतू की एक टाँग टूट गयी है। इसे जुड़वाना है न पापा? तब पापा जगे और माँ से कहा, जाकर देखो तो सीमा क्या कह रही है? तो माँ ने सोने का बहाना करते हुए कहा, मैं थक गयी हूँ। तुम्हीं जाओ न। अभी-अभी सुनी है तुमने उसकी आवाज। पता नहीं क्या कह रही थी? तब तक पापा ने माँ की एक बात भी न सुनी और फिर सो गये। इधर सीमा रोती रही। माँ मेरा पैर टूट गया। माँ मेरे पैर दुख रहे हैं। चलो न दरवाजा खोलने। हमें रीतू और मनोज के साथ अपना भी तो इलाज करवाना है न? पापा सुनो न! खून तो थक्का बन गया। अब मनोज को क्या देने के लिए कहूँगी मैं डॉक्टर से? तो भी पापा ने कुछ नहीं कहा। रात गहरी हो चली थी। उनकी आँखें खुल न सकी। सीमा जमीन पर रीतू के साथ पड़ी रह गयी। खून इतना बह चुका था कि वो बेहोश हो गयी थी। सुबह जब माँ-पापा की आँखें खुली तो उन्होंने सीमा को जमीन पर पड़े देखा तो पापा बोले-सीमा के सर से इतना सारा खून बह गया और हमने इसे इसका बचपना समझ सारी रात सोने में काट दी। चलो जल्दी से दरवाजा खोलो। डॉक्टर के पास ले चलते हैं इसे तो माँ ने रोते हुए इतना ही कहा जब ये पास आ रही थी हम इससे दूर जा रहे थे। आज देखते हो कैसे पड़ी है जमीन पे हमारी बेटी। तो पापा ने कहा, अगर इसे कुछ हो गया तो मैं कह देता हूँ सीमा की माँ। हम भी नही जीयेंगे। ऐसा कह जल्दी से उसे डॉक्टर के पास ले गये। सुबह से शाम हो गयी। सीमा को होश नहीं आ रहा था। पापा ने मन्नतें माँगी। माँ ने भगवान के सामने गर्दन झुकायी। तब सीमा की आवाज सुनाई दी उन्हें। पापा मनोज को खून दे दिया डॉक्टर ने? रीतू की टाँग ठीक हो गयी? पापा दौड़ पड़े। बेटा तुमने अपनी आँखें खोल दी? हाँ पापा! मगर गलती हो गयी। तुम्हें जगा दिया। अब कभी नहीं जगाऊँगी। तब पापा ने माँ की ओर देखा और कहा, ये एक ऐसी हस्ती है हमारे लिए सीमा की माँ! जिसके सामने दुनिया की कोई भी दौलत फीकी है। देखो तो हमारी बेटी ने अपने निर्जीव खिलौने की खातिर अपना सर फोड़ लिया, अपनी टाँगे तक तोड़ डाली और हमने अपने जीते-जागते खिलौने के लिए क्या किया?

सिर्फ एक चिट्ठी और एक पता

बाबा को मैंने चिट्ठी भेज दी भैया। अब देखो कैसे जवाब नहीं देते वो? हाँ दीदी, इस बार मैंने भी भगवान के पास जाकर मत्था टेका है। अगर ऐसी बात है न भैया, तो हमें भी तसल्ली हो गयी। अच्छा भैया आओ, हम यहाँ बैठें और सोचे कि अपनी चिट्ठी का जवाब आने पर हमें कैसा लगेगा। हाँ दीदी, हम तो भूल ही गये थे ये बात। आखिर बाबा परदेश यूँ ही थोड़े न गये होंगे। हमारे लिए अच्छे-अच्छे कपड़े, अच्छे-अच्छे तोहफे और अच्छी-अच्छी मिठाईयाँ लाने ही गये होंगे। तुम भूल गये कि अम्मा ने जाते वक्त क्या कहा था। कहा था कि बेटा अजय और बेटी रोहिणी, तेरी अम्मा तो जा रही है परन्तु अपने बाबा को मत जाने देना जब वो आयें तो। तबसे भैया हम अपने बाबा को रोज चिट्ठी लिखते आ रहे हैं जिस दिन पता सही मिल गया हमारे बाबा का हमें, वो वापस आ जायेंगे। हाँ। तभी तो दीदी, मैंने बाबा को चिट्ठी भगवान के सामने मत्था टेककर लिखा है ताकि इस बार तुरन्त वो हमारा जवाब दे सकें। अच्छा दीदी, बताओ तो बाबा नहीं आयेंगे क्या? अम्मा का कथन झूठा हो जायेगा? नहीं भैया, अम्मा कभी किसी से झूठ नहीं बोला करती। उन्होंने हमसे अगर हमारे बाबा का जिक्र किया होगा तब तो वो हमारे पास आ ही जायेंगे। हाँ दीदी! मैं तो ये बात भूल ही गया था। तुम भी भैया, हर बात को भूला देते हो और हमें दुविधा में डाल देते हो। अच्छा दीदी, आज के बाद से कोई बात नहीं भूलुँगा मैं। और हाँ भैया एक बात बता देती हूँ कि भगवान के पास जाके मत्था टेकना भी मत भूलना। अरे दीदी, ये तो अच्छा किया जो याद दिला दिया तुमने नहीं तो मैं भूल ही गया था। अच्छा दीदी, जो बात हम भूल जायें उसे तुम बता देना हमें और जो बात तुम भूल जाओ उसे हम बता देंगे तुम्हें। हाँ, मगर ये भी तो कह दो अपने आप से कि जो बात हम दोनों भूल जायें उसे तुम याद रखना। हाँ दीदी, कह दूँगा। अच्छा भैया क्या हम शाम तक यहीं बैठे रहेंगे? क्या तुम्हें लगता है कि बाबा आज ही आयेंगे? हाँ दीदी! बाबा आज अगर नहीं आये तो शायद कभी नहीं आयें। चलो इसी खुशी में, इसी उम्मीद में हम एक रोटी सेंक लेते हैं चूल्हे पर ये सोच कि ये हमारा आखिरी दिन होगा सूखी रोटियों का। हमें भी भूख लग ही गयी जब तुम्हें लगी है तो। आखिर तो हम हैं जुड़वें भाई-बहन न। हाँ दीदी, अच्छा एक बात कहूँ मैं तुमसे, थोड़ी देर और रूक जाओ। ठीक है। जब तुम सब्र कर लोगे भैया तो सब्र हमें भी हो ही जायेगा। कैसी बातें कर रही हो दीदी, हमारे पास क्या है सिवाय इन तसल्ली भरे शब्दों के और ऐसा कह वो एक बार फिर दरवाजे पे बैठ गये और शाम ढलने की राह निहारने लगे। मगर शाम रात में भी बदलने लगी तो भाई-बहन उठे और सोचा कि बाबा के आने में देरी हो शायद इसलिए हमें आज सूखी रोटी खानी ही पड़ेगी। मगर जब चूल्हे के पास लकड़ी लेकर गये तो पता चला कि कन्टर में आटा ही नहीं है। वो फिर उठे और कहा दीदी! अच्छा हुआ कि आटा नहीं है हमारे पास। अगर होता तो मजबूरन सूखी रोटी ही खानी पड़ जाती हमें। चलो दरवाजा अन्दर से बन्द कर लेते हैं और सो जाते हैं। तभी आधी रात के वक्त रोहिणी जागी और अजय से बोली भैया, लगता है बाबा आ गये। चलो जल्दी से दरवाजा खोलो। हम उनके पास चलते हैं। मगर दीदी, तुमने इतनी रात गये उन्हें देखा कहाँ और बताओ कि उनके हाथ में क्या-क्या देखा तुमने? तो रोहिणी बोली भैया, बाबा के हाथ में वो सबकुछ देखा हमने जो हमें

चाहिए था। मगर भैया उनके हाथ में एक चीज नहीं थी। क्या दीदी? माँ की साड़ी। तब वो रोने लगा। बाबा ने माँ की साड़ी नहीं लायी। क्यों नहीं लायी? माँ क्या पहनेगी? पता नहीं भैया। अच्छा दीदी, बाबा से कह देते हैं भगवान के पास जाके कि बाबा लौट जाओ और माँ की साड़ी लेकर ही आना, अगर आना हो तो। रोहिणी ने कहा, हाँ भैया ऐसा ही करो और दोनों एक साथ मिलकर भगवान के पास जाने लगे। तभी उन्हें पीछे से अपनी अम्मा की आवाज सुनायी दी जो कह रही थी कि बेटा अजय, बेटी रोहणी, मैं जब तुमसे दूर हो ही गयी तो क्यों माँगा बाबा से मेरे लिए साड़ी? मैं भला पहनने ही नहीं आऊँगी तो तुम उसका क्या करोगे? अब दोनों सोच में डूब गये। हमने कैसा गलत काम किया दीदी। अपनी मरी हुई अम्मा के लिए बाबा से साड़ी लाने को कह दिया और पास आये हुए बाबा को दूर भगा दिया। चलो हम दोनों बाबा को वापस लाने चलते हैं। ऐसा कह वो दोनों बियाबान में भटक गये और कहा, बाबा हम यहाँ है? हमारी तरफ देखो। माँ की साड़ी की हमें जरूरत नहीं। हमारी माँ तो मर गयी और यह कहते-कहते जब बहुत दूर चले गये तो याद आया उन्हें कि हम किसे तलाश रहे हैं दीदी? हमने तो कभी जीवन में बाबा का चेहरा देखा ही नहीं। उनकी आवाज सुनी ही नहीं। मगर अब कहाँ जायेंगे हम भैया? हम तो रास्ता ही भटक गये। हमें तो अपनी ही चिट्ठी बियाबान तक ले आयी दीदी। एक बात कहूँ, भगवान का नाम लेकर कोई काम मत करना। वो ऐसा ही अन्जाम देता है हर उस उम्मीद का, हर उस काम का।

मगर कहाँ जान पा रहे थे वो कि अब उनके पास वापस जाने का कोई रास्ता नहीं रहा था, वो बियाबान में भटक चुके थे।

काबुल का पता

कितनी दूर आ गयी चलते-चलते पर रास्ते का पता फिर भी न पाया। लोगों ने तो कहा था काबुल का मुल्क इसी रास्ते से होकर जाता था। हाँफने लगी हूँ, अब तो पानी भी खत्म हो गया। लगता है अब पीना भी दुस्वार ही हो गया। आसपास कहीं तालाब भी नहीं, अब क्या करूँ? यही पास ही पेड़ों के झुरमुट में बैठकर सुस्ता लेती हूँ। कहीं दम आ गया तो आगे भी चल पड़ूँगी। कितना बड़ा इलाका होगा वो काबुल का, क्या पता? हमारी अम्मी ने तो मरते वक्त कहा था कि जहाँ पर काबुल बसता है वहीं पास में ही हमारी नानी अम्मी का मकान है। अगर मैं एक बार वहाँ पहूँच गयी तो वो हमें पानी तो पिलाएगी ही और साथ में खाना भी देगी। तो क्या हमारे अब्बाजान काबुलवासी ही थे फिर हमारी अम्मीजान हिन्दुस्तानी मुल्क में कैसे चली गयी? ये सब तो नानी अम्मी से पूछने पर ही पता चलेगा हमें। पर क्या हमारे अब्बाजान हमारी अम्मीजान को लेने नहीं आये होंगे उस मुल्क में। फिर हमारी अम्मीजान ने आने से इनकार क्यों कर दिया?

चलो अब विश्राम कर लिया, आगे के सफर पे चलती हूँ। सामने कुछ लोग जमात लगाये बैठे हैं, उनसे पूछ लूँगी काबुल का पता और यही सोचती वो आगे बढ़ती चली गयी। जब उनलोगों के घर तक पहुँची तो पूछा बाबू साहेब! आगे का रास्ता किस मुल्क की तरफ जाता होगा, पता कर बता देना जरा। पर क्यों? तुझे जाना कहाँ है? काबुल। वहाँ तेरा कौन रहता है? नानी अम्मी और मेरे अब्बाजान। क्या उन्होंने तुझे कोई नाम पता दिया है? नहीं। तू इतने दिन कहाँ रही? अपनी अम्मी के पास। फिर आज इस तरफ क्यों भटका दिया उसने तुझे। वो गुजर गयी। तब सब लोग हँसने लगे, अरे पागल! अभी उमर ही क्या है तेरी। चलते-चलते अगर तू जवान भी हो जाये न तो भी काबुल तक नहीं जा पायेगी। पर क्यों? ऐसा क्या है वहाँ? खुद ही जाकर देख ले और हँसने लगे। अरे पागल! जिस मुल्क से भी आयी है वापस चली जा। कुछ इज्जत-आबरू की समझ है तुझे? नहीं। फिर क्यों चली आयी अकेली इतनी दूर, अब कहाँ जायेगी? काबुल। तो जा न फिर देर काहे को कर रही है? शाम होनेवाली है और तेरे लिए तेरी नानी अम्मी ने घी के दीये भी जला रखे होंगे। जा वहाँ जा। पर कहाँ? ये मुझसे पूछती है तू तो खुद जानती है कि तुझे कहाँ जाना है। तो डिब्बे में थोड़ा सा पानी भर दो न? नहीं भर देता। पर क्यों? मुझे तू चाहिए। किसलिए? अपने घर में चूल्हा फूँकवाने के लिए। पर वो काम तो मुझे नहीं आते। सीख जाएगी रहते-रहते फिर जब जवान हो जाएगी न तब चली जाना काबुल। नहीं तो फिर भाग और वो बड़ी तेजी से भागने लगी। शाम भी ढली, रात भी आयी पर काबुल आया कि नहीं क्या पता? फिर वो एक जगह रूकी और कोने में दुबक गयी। रात को एक जंगली जानवर झपटा उसपर। वो चीख पड़ी नानी अम्मी.....! सबने उसे देख लिया और वो सब अपने-अपने घरों से दीये लेकर निकले। वो डर से काँपने लगी। सबने पूछा तू कौन है? तेरा नाम क्या है? कहाँ से आयी है? ये तेरी गठरी में क्या है? कुछ नहीं। कुछ कैसे नहीं है? भारी है लगता है हीरे-जवाहरात हैं इसमें। नहीं खाने के सामान हैं। तो फिर दिखाती क्यों नहीं? तुमसब खा जाओगे। अरे हमसब इसके थैले के खाने खा जाएँगे, जरूर ये झूठ बोल रही है। छीन इससे थैली और फिर उन्होंने उस नन्हीं सी लड़की से उसकी थैली छीन ली। खाने-पीने के जितने भी सामान थे, सब ले गये

और फिर रात को ढकेल दिया घने जंगलों में। वो रोने लगी। तभी सामने की पहाड़ी पर रोशनी होती दिखाई दी उसे। उसने कहा मालिक हो न तुम जो झिलमिल दीये में झलक रहे हो। मेरी अम्मी कहती न थी कि अल्लाह दीये की लौ में छुपे होते है। वो सब इन्सानों का, सब जगहों का पता जानते हैं। चलती हूँ उनके पास। अरे चढ़ते-चढ़ते तो पाँव भी छिल गये पर वो हमारी पहूँच तक आते क्यों नहीं। अब तो चढ़ा भी नहीं जाता। जब चढ़ ही नहीं पाऊँगी तो उनतक जाऊँगी कैसे? फिर तो नानी अम्मी और अब्बाजान का पता हमें मिल ही नहीं पाएगा। नीचे की तरफ तकती हूँ तो लगता है मैं बादल पे आ गयी। जमीन तो कहीं झलकती ही नहीं। अब तो आगे जाना वश में रहा नहीं, यहीं बैठ जाती हूँ। अगर वो हमारे अब्बाजान के पास हमें ले जाना चाहेगा तो क्या यहाँ आकर काबुल का पता नहीं बता देगा? ऐसा कह वहीं सो गयी। सुबह जब रोशनी का सामां देखा तो डर से चीख पड़ी वो। वहाँ तो न रोशनी थी, न अल्लाह था, न इन्सान थे। वहाँ तो चारो तरफ झाड़ी-ही-झाड़ी दिख रही थी उसे।

तो क्या यही काबुल था जहाँ तक वो आ गयी थी या उसकी अम्मी ने अल्लाह का सबक देकर झूठ कहा था उससे कि रूखसार जान! तेरे अब्बाजान और तेरी नानी अम्मी काबुल में रहते हैं। क्या यहाँ से वापस जाना भी अब सम्भव रह गया था उसके लिए? ये कौन सोचे सिवाय मौत की उलझनों के। एक मासूम बच्ची के सामने खड़ा ये कातिल सामान कितना विशाल था किसी ने देखा क्या? क्या वो काबुल का ही देश था या वो काबुल की झाड़ियों में गुम होने का एक एहसास मात्र। यह रूखसार को तबतक पता न चला जबतक कि वो लुढ़ककर उस पहाड़ी से गिर न गयी।

आज जमीन भी अलग थी उससे और आसमान भी। पर काबुल का पता तो कहाँ ठहरा था ये तो अल्लाह ही जानता होगा फकत और चुप बैठा होगा शायद।

भाभी! मेरी शर्ट कहाँ है? पैंट पहन लिया हमने। कहीं पैंट है तो शर्ट नहीं है और शर्ट है तो पैंट नहीं है और जहाँ दोनों चीजें हैं, वहाँ टाई नहीं। तो भाभी ने कहा, देवर जी! आपकी ड्रेस आपकी ससुराल से आयी है। ये लो चूड़ीदार पाजामा-कुरता। क्या मैं पाजामा-कुरता पहनूँगा भाभी? मैं कोट पहनकर जाऊँगा सुजाता के घर, समीर ने कहा। तो भाभी बोली, तुम किसी दूसरे के बाराती बनकर नहीं जा रहे हो समीर। तुम्हें खुद अपनी बारात लिये जाना है। तुम्हारे भैया को पता नहीं कौन मिल गया रास्ते में आज के दिन? तभी भैया ने आते हुए कहा, देवर से इतनी हमदर्दी जता रही हैं आप और पति को उलाहना मिल रहा है सुनने को तो भाभी ने कहा, कितना अच्छा लग रहा है आज आनन्द जब घर में सुजाता आनेवाली है बहू बनकर। अपने समीर सा ही हँसता-खेलता चेहरा चुना है मैंने अपने देवर के लिए तो भैया बोले, तुम ठीक कहती हो शोभा! हमारा समीर बचपन में जैसा करता था वैसी ही हरकतें कर रही थी सुजाता हमारे सामने जब हम उसे देखने गये थे। तब भाभी बोली आनन्द जल्दी जाओ न समीर को लेकर। क्या पता? सुजाता के पिता इन्तजार कर रहे हों समीर का और तुम्हारा। आखिर शादी होने वाली है समीर की। आज तो देरी करना ही नहीं चाहती मैं। तो भैया ने कहा, शोभा! हमें भी जल्दी से लाना है सुजाता को इस घर में। तभी भाभी बोली, आनन्द! हमारा देवर या तुम्हारा छोटा भाई नहीं है समीर। वो हमारा बेटा है। इतने साल हो गये हमारी शादी को, अभी तक बच्चे की किलकारी नहीं सुनी हमने। लेकिन समीर की हर उस आवाज को सुना है जो वो सात, आठ और अठारह साल की उम्र में कहा करता था हमसे। तभी समीर आ गया ये कहते हुए कि भाभी तुम भैया को पकड़कर बैठ गयी। देखो मैंने पाजामा-कुरता तो पहन लिया मगर बाल झाड़ने के लिए कंघी कब से तलाश रहा हूँ मैं? तो भाभी ने हँसते हुए समीर की ओर देखा। क्यों क्या ख्याल है अब सुजाता के बारे में? हमारा समीर सुजाता से जरा भी कम नहीं नखरे दिखाने में तो भैया चिढ़ते हुए बोले, जाने दो मेरी बेटी तो सुजाता ही रहेगी। तो क्या हुआ? मेरा बेटा नहीं है मेरे पास। हाँ है क्यों नहीं? मेरा समीर मेरा इकलौता वारिस है। इस घर की शान है वो, जलता दीया है वो इस हवेली का। नहीं शोभा मैं तो सुजाता के साथ अँधेरे में बैठा करूँगा ताकि रोशनी की जरूरत ही न पड़े हमें। तो भाभी बोली, मैं कैंडल जला लूँगी जब बिजली चली जायेगी। ऐसा कौन सा बुरा चेहरा है मेरे बेटे का? चाँद भी शरमाकर बादलों में छुप जायेगा हमारे समीर को देखकर। बातें हो ही रही थी कि गाड़ीवाले ने आवाज दी। भैया जल्दी करो, हमने गाड़ी सजा ली। अब हमारी तरफ से कोई देरी नहीं है। भैया ने भाभी से कहा, गाड़ीवाला आ गया। सारी टोकरियाँ जल्दी से लाओ भई रखना है डिक्की में। भाभी अन्दर से बोली, आ रही हूँ न? वहीं पास में तो पड़ा है तो भैया बोले पास में पड़ा है पर ये तो सिर्फ पाँच ही है। क्या इतने से ब्याहने जायेंगे हम बेटा? हाँ इतने से जाओ ताकि सुजाता के घरवालों को तुम्हारी कन्जूसी साफ-साफ दिखाई दे सके। तभी ड्राईवर टोकरी लेने आ गया और भैया से बोला, पाँच ले आया भैया और किधर से लाऊँ? भैया बोले पाँच ले गये और ये अभी भी बाकी हैं। तो तुम्हारी भाभी मुझे चिढ़ाती क्यों है रे? तो वो हँसते हुए बोला, पता नहीं भैया और जब गाड़ी में टोकरियाँ रख ली, समीर को आवाज दी उसने। समीर भैया! जरा जल्दी आना मुँहदिखाई की

रस्म अदा करनी है। तो समीर बोला, भाभी! आज के दिन भी टोक दिया इस आदमी ने मुझे। तो भाभी ने हँसते हुए भैया की ओर देखा, क्यों लगा दूँ अपने बेटे के माथे पे तिलक? तो भैया ने गर्दन हिलायी। लगा दो, नजर न लग जाये कहीं। अब कहाँ नजर लगेगी? अब तो सुजाता की माँ हमारे समीर की नजर उतार देगी। ऐसा कह समीर के पास गयी और कहा, समीर तुम तैयार हो गये? कहाँ भाभी? पर्फ्यूम ही नहीं मिल रहा। पर पास की अलमारी में ही तो रखी थी हमने। कहाँ गयी? अभी आती हूँ। और भाभी के आने पर समीर बोला सामने ही रखी हुई थी भाभी मैंने बेवजह आपको तकलीफ दी। भैया हँस पड़े, कर लो बातें जी भरके आज अपने देवर से। कल से सारा हक सुजाता को मिल जायेगा। तभी फिर ड्राईवर ने आवाज दी, समीर भैया! मोबाइल बज गयी। आपकी सासू माँ ने फोन किया है। समीर दौड़ता हुआ आया, मेरी सासू माँ का फोन आया है। हाँ आया था मगर कट गया तो समीर ने उसके गाल पे एक तमाचा मारा और कहा, मालिक बन गया है तू और फिर भैया से कहा भैया जल्दी चलिए। मन्दिर ही चले चलते हैं। तभी भैया गाड़ी में बैठते हुए बोले, शोभा! बहू लाने जा रहा हूँ। दरवाजा खुला रखना और हाँ, आरती की थाल में एक सौ एक रूपये रखना मत भूलना बहू की नजर उतारी के लिए। तो भाभी ने हँसते हुए कहा, अब जाओ भी और गाड़ी के खुलते ही हाथ हिला दिया। समीर मैं तुम्हारा इन्तजार करूँगी। फिर घर के अन्दर जाते हुए बोली, कल ये वीरान घर हँसी-खुशी से भर जायेगा जब सुजाता की गोद में समीर का बच्चा होगा। मैं चाची माँ बनूँगी, दादी माँ बनूँगी, नानी माँ बनूँगी। फिर बिस्तर पे खामोश बैठ गयी और शाम होने का इन्तजार करने लगी। तभी उन्हें ख्याल हो आया कि मैंने समीर के माथे पे काजल का टीका तो लगाया ही नहीं। कोई बात नहीं सुजाता की माँ लगा देगी और आरती का थाल सजाने लगी। जब सभी काम हो गये तो चुपचाप दरवाजे की ओर तकने लगी। तभी उन्हें खयाल हो आया, जाते वक्त मैंने समीर को दही नहीं चटायी। इससे शगुन अच्छा होता है। कोई बात नहीं, सुजाता की माँ ये काम जरूर कर देंगी और फिर खामोशी से शाम होने का इन्तजार करने लगी। तभी उन्हें ख्याल हो आया समीर के हाथ में मैंने धागा बाँधा ही नहीं। कोई बात नहीं, सुजाता की तरफ के पुरोहित जी ने यह काम कर दिया होगा। ऐसा सोच ही रही थी कि घड़ी ने शाम के पाँच बजने की सूचना दी। तो उन्हें लगा जैसे समीर सुजाता को लेकर आता ही होगा। ऐसा सोच दरवाजा खोल दिया। जब भी गाड़ी गुजरती उन्हें लगता समीर ले आया सुजाता को। तभी सच में एक गाड़ी आयी। भैया ने कहा, शोभा! जल्दी से आरती का थाल लाओ। हमारी बहू आ गयी।

भाभी दौड़ती-भागती थाल लाने गयी। जब थाल लेकर लौटी तो भैया ने पूछा, एक सौ एक रुपये रखे हैं न तुमने थाली में शोभा सुजाता की नजर उतारी के लिए? हाँ भई, रखी है। मगर एक रुपये रखना भूल गयी। तुम कैसे भूल जाती हो शोभा? ये लो एक रूपये निकालकर देता हूँ। जब भाभी ने सुजाता की आरती उतारी तो समीर बोला, भाभी! आरती तो मेरी भी उतारनी होगी आपको आज। आखिरी लम्हा है ये आपके साथ मेरा। कल से तो मैं सुजाता के साथ रहूँगा। भाभी रो पड़ी, इतनी जल्दी भूल जायेगा रे तू भाभी को! नहीं भाभी, मैं तो मजाक कर रहा था। ऐसे मजाक नहीं किये जाते समीर बड़ों के साथ, खासकर माँ

के साथ तो बिल्कुल भी नहीं। नहीं करूँगा भाभी। तुम भी भाभी के साथ कोई मजाक मत करना सुजाता। जी अच्छा, सुजाता ने कहा और भाभी ने उसे गाड़ी से उतारा। सामने सुजाता को पाकर वो खुशियों से सराबोर हो गयी। फिर सुजाता को उसके कमरे में ले गयी और कहा, बहू आराम करो, तुम थक गयी होगी। फिर रात को जब सबने खा लिया भाभी बोली समीर तुम्हारा खाना और सुजाता का खाना तुम्हारे कमरे में दे आती हूँ। दोनों साथ खा लेना और मैंने तुम्हारे लिए थाल में फल रख दिये हैं और चाकू भी जिससे सुजाता तुम्हें काटकर फल खिला सके, समझे तुम। हाँ भाभी समझ गया। अब जाऊँ मैं या और कुछ कहना है। नहीं अब कुछ नहीं कहना है जाओ और समीर सुजाता के कमरे में चला गया। सुजाता शरमा रही थी तो समीर बोला, सुजाता आज शर्म कैसी? हमारी भाभी ने तुम्हारे कमरे में हमें बेझिझक भेजा है। तभी सुजाता की आँखों के सामने उस आदमी का चेहरा आ गया और लगा जैसे वही कह रहा हो सुजाता, मुझे उसने बेझिझक तुम्हारे कमरे में भेजा है मनमानी करने के लिए। वो चीख पड़ी अनिल! और समीर को धक्का दे दिया। फिर पास ही के टेबुल पर से चाकू उठा लिया और कहने लगी, आगे मत बढ़ो अनिल, रूक जाओ। सुजाता, मैं अनिल नहीं हूँ। मैं अनिल नहीं तुम्हारा पति समीर हूँ। मगर सुजाता ने समझने में देर कर दी और चाकू फेंककर मार डाला समीर को। वो चीख पड़ा। भाभी दौड़ती हुई आयी। सुजाता दरवाजा खोलो। समीर ने दरवाजे को सिर्फ सटाया था, चटकनी नहीं चढ़ायी थी। सुजाता ने अनिल समझकर मार डाला समीर को। खून के छींटे उसके जिस्म पे पड़े थे। भाभी ने कहा, ये तूने क्या किया सुजाता? ये समीर था समीर, अनिल नहीं। अनिल तो कब का मर चुका जिसने तुम्हारे साथ बदतमीजी की थी। ये तो हमारा बेटा समीर था। भाभी क्या कहा आपने? मैंने अपना बदला पूरा करने के लिए समीर को मार डाला और बेदम होकर रोने लगी। कैसा बदला सुजाता? ऐसा बदला किस काम का जिसने तुम्हारे माथे से बिन्दिया ही छीन ली, तुम्हारे हाथों की चूड़ियाँ ही उतार ली, तुम्हारी जिन्दगी के सपने बिखर गये और उनके सामने समीर की कही वो बात आ गयी जो उसने अभी-अभी कहा था, भाभी ये आज आखिरी लम्हा है मेरा आपके साथ क्योंकि आज के बाद से मैं सुजाता के साथ रहूँगा।

▭

भाभी, आज बीच में मत टोकना। मैं राहुल के घर जा रहा हूँ। बर्थडे पार्टी है उसकी। जश्न होगा आज की रात। तो भाभी ने कहा, ठीक है देवर जी नहीं टोकती। पर भैया को तो आ जाने दो। तो अनिकेत फिर नाराज हो गया। मैंने क्या कहा भाभी और आप ने क्या सुना? कुछ नहीं अनु, मैं तो तेरे भैया की बातें कर रही थी तुझसे। तो अनिकेत ने कहा, हाँ भाभी मैं भी उन्हीं की बातें कर रहा हूँ आपसे। देखो, रात के आठ बज गये हैं। भैया आयेंगे तो भाषण शुरू। शाम को देर से घर लौटता है। तेरी भाभी ने तुझे सर पे चढ़ा रखा है और जनाब जा कहाँ कहे हैं? तब तुम कहोगी, राहुल की बर्थडे पार्टी है। भैया कहेंगे मत जाओ वहाँ। राहुल के पिता अच्छे आदमी नहीं है। तो बताओ भाभी, इन सब बातों में कितना वक्त बीत जायेगा। राहुल की पार्टी भी खत्म हो जायेगी और वो मेरा इन्तजार ही करता रह जायेगा। तो भाभी ने सर पकड़ते हुए कहा, ठीक है भई जाओ। हाँ मगर जाते ही एक फोन जरूर कर देना। तो अनिकेत ने हँसते हुए कहा अगर किसी की चाहत में देर हो गयी तो? अगर वहाँ आपसे भी अच्छी लड़की मिल गयी तो? तो तुम अपनी जुबान पे ताला लगा लेना देवर जी। क्या पता बातों-बातों में वो किसी दूसरे लड़के का जिक्र कर बैठे? तो फिर अनिकेत नाराज हो गया। आप ने मुझे बद्दुआ दे दी भाभी अभी से। भाभी रो पड़ी। नहीं रे अनु, मैं तुझे बद्दुआ नहीं दे रही, जीना सीखा रही हूँ। तुम कई लड़कियों को नापसन्द कर चुके हो। तो हो सकता है तुम जिसे पसन्द करो, वो तुम्हें नापसन्द कर दे। तभी अनिकेत ने घड़ी की तरफ निगाह दौड़ायी और कहा, भाभी आठ बजने में पाँच मिनट बाकी रह गये हैं। भैया आते ही होंगे। मैं चलता हूँ और ऐसा कह वो चला गया। भाभी एक तरफ कोने में बैठी रही। जब भैया आये और पूछा कि अनिकेत कहाँ है? तो उन्होंने कहा, पार्टी में गया है। आज उसके दोस्त की बर्थडे पार्टी है। तो भैया ने नाराज होते हुए कहा, बिगाड़ लो और बिगाड़ लो अपने लाडले को। नौ बज गये हैं। भूख से अँतड़ियाँ सट गयी हैं। तो भाभी ने कहा, खाना लगा दूँ। नहीं लाट साहब आयेंगे तो ही खाना लगेगा। ऐसा कह बिस्तर पे एक तरफ बैठ गये। जश्न मनाने गये हैं छोटे मियाँ। कहीं झगड़ा न हो जाये किसी से जश्न की रात। तो भाभी भैया के करीब जाते हुए बोली, इन 20 वर्षो में भी आपने अपने भाई को नहीं पहचाना जी। अरे वो झगड़ा कर सकता है किसी से। कह तो ऐसे रही हो जैसे मुझे अपने भाई पर भरोसा नहीं है। पर नम्रता, मैं उसके बगैर एक लम्हा गुजारना नहीं चाहता। अब देखो न। दिनभर की थकान से जब घर लौटा हूँ अनिकेत नहीं है। घर कितना खाली-खाली लग रहा है। नम्रता कैसे कटेगा जीवन उसके सहारे के बगैर? तो भाभी ने उनके आँसू पोछते हुए कहा, कहाँ जायेगा वो हमें छोड़कर। कहीं भी नही तो क्या सारी जिन्दगी हम साथ-साथ रह पायेंगे? हाँ आशीष हम सारी जिन्दगी साथ रहेंगे। हम ऐसे ही घराने में करेंगे उसका ब्याह जहाँ से कि हमारे घर तक नफरत की बू न आ सके। तो भैया बोले, कहीं उसने लड़की पसन्द कर ली तो? तो बात पक्की कर देंगे। कौन लड़की ऐसी होगी जो पति के प्यार को ठुकरायेगी। अनिकेत के हम पहले प्रेमी हैं आशीष। भरोसा है मुझे उसपर। ऐसा कह खाना लगाने लगी टेबुल पर तो भैया ने कहा, आने दो अनिकेत को नम्रता। जब उस पर नजर पड़ जायेगी तो जी का बोझ कुछ हल्का हो जायेगा और ऐसा कह बिस्तर पे लेट गये और उन यादों में खो गये जब

वो अनिकेत को पहली बार स्कूल छोड़ने जा रहे थे। खाने का डब्बा लिया कि नहीं अनु ने। यही बार-बार पूछ रहे थे। वो बार-बार मुझसे इसी बात का जिक्र किया करते थे। आज भी जब भूख लग रही थी भैया यही बात सोच रहे थे। पता नहीं पार्टी कब खत्म होगी, जश्न कितनी देर तक चलेगा। खाना खाया होगा अभी उसने की नहीं। मैं पहले कैसे खा लूँ? यही सोचते-सोचते कब उनकी आँख लग गयी पता भी नहीं चला। सुबह जब उन्होंने भाभी से पूछा कि अनिकेत कहाँ है? तो वो बोली रातभर नहीं लौटा। क्या रातभर नहीं लौटा? मगर कहाँ रह गया? फोन किया था कि नहीं? नहीं। तुमने मुझे जगाया क्यों नही? जगाया, मगर तुम सोते रह गये गहरी नींद में। मैं सारी रात दरवाजे पे बैठी रह गयी। तभी अनिकेत के कदमों की आहट सुनी उन्होंने। वो चौंके ऐसी धीमी आहट तो अनिकेत की तब होती थी जब वो कोई गलती कर बैठता था। भाभी ने उसका हाथ पकड़ते हुए कहा, क्यों रे? कहाँ रह गया था रात को? कुछ नहीं बोला वो। भैया की सब्र सीमा टूट गयी। क्यों बोलेगा ये और क्या बोलेगा? जब इसकी जुबान ही काट दी है किसी ने। तो अनिकेत रोने लगा। भैया माफ कर दो। रात भर घर नहीं लौटा। अच्छा तो फोन कर दिया होता, भाभी ने कहा। तो अनिकेत ने बस इतना ही कहा, भाभी फोन लगा ही नहीं और जश्न सारी रात चला। मैं आपको बताना फिर भूल गया। तब भैया ने मुँह फेरते हुए कहा, अगर पार्टी में आप अपने भाई-भाभी को भूल गये तो कौन मिल गयी थी वहाँ पर? थी एक अनजान लड़की। मगर इतनी देर से लौटने की वजह। भाभी, मैं उसकी बातों में सारी रात खोया रहा और सुबह जब पार्टी खत्म हो गयी वो किसी और के साथ जाने लगी। मैंने उससे कहा कि मैं तुम्हें छोड़ दूँगा तो उसने कहा, अनिकेत मैं किसी अजनबी के साथ नहीं जा सकती। मेरी शादी होनेवाली है और भाभी, तब से ये बात मेरी जेहन में गूँज रही है कि किस तरह अजनबी कह डाला उसने मुझे जबकि सारी रात मैं उसी की तरफ देखता रहा था, उसी से बातें करता रहा था। तब भैया ने कहा, बन्द भी करो ये प्रेम कहानी और जल्दी से फ्रेश हो जाओ। नाश्ता करना है कि नहीं? हाँ करना है भैया, डाँटोगे तो नहीं न? नहीं, मैं बात करूँगा उस लड़की के पिता से। तो अनिकेत बोला वो हमारे मुकाबले का नहीं है भैया। उसके पिता एक बहुत बड़े बिजनेसमैन हैं। तो भैया ने कहा तो क्या हुआ अनिकेत, हम भी पिछड़े लोग नहीं हैं। क्या नाम है उस लड़की का? श्वेता। कहाँ रहती है वो? इसी शहर में। ठीक है मैं ढूँढ लूँगा उसे। ऐसा कह भैया बाथरूम चले गये। अनिकेत भाभी के पास बैठ गया। भाभी, वो लड़की मुझे मिल सकती है न? भाभी वो आपकी जैसी सुन्दर तो नहीं है। मगर तुम्हें तो पसन्द है न। हाँ। और एक तरफ मुँह घुमाकर बैठ गया। तभी भैया बाथरूम से लौटे और पूछा कि खाना-बाना खिलाने का इरादा है या भूखा ही रखोगी। तो भाभी ने हँसते हुए कहा, आज तो रविवार है। आपके ऑफिस में भी छुट्टी है। पता कर लो न उस लड़की के बारे में। तो भैया ने कहा, ऐसे कैसे पता कर लूँ? मैं किसी से पूछ भी लूँगा तब न? तो जल्दी पूछो न? तब भैया ने हँसते हुए कहा, कहीं श्वेता ये तो नहीं? ऐसा कह जेब से एक तस्वीर निकाली और उसे देख अनिकेत चौंक गया। ये आपकी जेब में? हाँ अनिकेत, मैं तुम्हारी भाभी से और तुमसे इसी बात का जिक्र करनेवाला था। मगर रात तुम नहीं मिले। मुझे नींद आ गयी और ऐसा कह हँसने लगे। पसन्द आयी तुम्हें

अपनी देवरानी नम्रता? तो भाभी ने कहा, देवर की पसन्द भाभी को नापसन्द हो सकती है। इसपर सभी हँस पड़े। अनिकेत ने एक तरफ चेहरा घुमाकर शरमाते हुए कहा, जल्दी करो न भाभी। मैं श्वेता को बिल्कुल पास देखना चाहता हूँ। भैया ने कहा, देर कैसे हो जायेगी जब लड़की हमने पहले ही पसन्द कर ली है। इस पर सभी एक बार फिर हँसने लगे।

और फिर एक दिन श्वेता के साथ अनिकेत की शादी हो गयी। भाभी ने उसकी नजर उतारी भी कर ली, मगर जब शादी की सुहागरात आयी, अनिकेत एक बार फिर घर आना भूल गया क्योंकि आज उसकी जिन्दगी उससे दूर हो चली थी। उसकी गाड़ी का ऍक्सिडैंट हो गया था। देवरानी की तलाश तो पूरी ही गयी उसकी मगर देवर ही इस जश्न की रात दुनिया से चला गया। अब भैया को खाना अच्छा नहीं लगता, बातें भी कम करते हैं वो। मगर भाभी बार-बार श्वेता की ओर देखती रहती जिसकी माँग में सिन्दूर भरने के बाद भी खाली रह गये थे। भैया एकदम से खामोश हो गये थे। कितना डाँटा था मैंने अपने बच्चे को जब वो जश्न मनाने निकला था घर से और जश्न की रात वो घर आना भूल गया था। आज जब जश्न मनाने के दिन घर में थे वो दूर हो गया था शोर-शराबे से।

कैसी बिडम्बना थी ये तकदीर की एक तरफ जश्न और दूसरी तरफ सारे अरमान और खुशियाँ दफन हो गयी। अब कौन किसे दिलासा देता। सब के ओठों पे तो खामोशी की मुहर लगा दी थी इस जश्न की रात ने।

क्या सोच रही हो रमना? मैं सोच रही हूँ कि जबसे आदित्य शहर गया है कमाने, हमें उसकी कोई खबर नहीं मिली। पता नहीं, वो कैसा होगा? तुम तो ऐसे ही हर वक्त गलत सोचती रहती हो। हमारा बेटा नौकरी करने गया है शहर। उसके पैसे से ही तो हम अपना चश्मा बनवायेंगे और वो हमें बड़े डॉक्टर के पास ले जायेगा। है न आदित्य की माँ? वे आगे बोले रमना, लोग बच्चों को इसीलिए तो पाला करते हैं कि एक दिन वो हमें छाया दे सकें। सोचो, अब हम बूढ़े हो गये। अब हमारे हाथ खेती के लायक नहीं रहे। कल कितना कमाता था मैं जब आदित्य नन्हा सा था। आज तो वो बड़ा हो गया रे, बहुत बड़ा। अब न हमें सूखी रोटी खानी पड़ेगी नमक के साथ न फटे हुए कपड़े पहनने पड़ेंगे। तो माँ ने कहा, पर इतने दिन हो गये उसे शहर गये और आदित्य ने हमें अपनी कोई खबर नहीं दी। वो इसलिए रमना कि हमारे पास अभी बहुत सामान है खाने को। हाँ है क्यों नहीं? घर में दो किलो आटा और पचास पैसे का नमक जो कल लाया था तुमने और कहते हो क्या नहीं है तुम्हारे पास? अरे बेटा नौकरी करने गया है, हम सूखी रोटी क्यों खायें? हमें यह सब अच्छा थोड़े ही लगता है। अब तो मुझे पकाने का मन भी नहीं करता तो पापा ने कहा रमना, बच्चा है वो। वो भी गरीबी में पला है। पहले उसका पेट तो भरे। तो माँ ने कहा, कह तो ऐसे रहे हो, जैसे मैं उसे भूखा रहने को कह रही हूँ। अरे वो इतने पैसे कमाता है जितना कि हमारे पुरखों ने आजतक नहीं देखा। तो क्या मेरा मन नहीं करता कि वो पैसे देखूँ, उसे घर के संदूक में रखूँ। उससे मैं अच्छे-अच्छे कपड़े पहनना चाहती हूँ। तुम्हारी धोती भी फट गयी है। तुम क्या पहनोगे? तो पापा ने कहा, आदित्य सब जानता है। वो घर के हालात से वाकिफ है रमना। मैं तो कहता हूँ वो कल ही आयेगा तुम्हारे लिए नयी साड़ी और मेरे लिए नई धोती लेकर। तो माँ ने कहा, तब तो तुम्हारा मुँह मीठा कराऊँगी मैं। आखिर बेटा किसका है आदित्य? है न? हाँ रमना, अच्छा चलो सो जाओ। वो आ रहा है न? तुम कहते हो तो आनेवाला ही होगा, माँ ने कहा। प्रतिदिन इसी तरह बातें करते-करते वो सो जाते। रात बीत जाती, सुबह आती। यह क्रम चलता रहता मगर उनका बेटा नहीं आता। अन्ततः सूखी रोटी पकानेवाला आटा भी खत्म हो गया। नमक डालकर वो पानी पी सो जाते। इससे पेट क्या भरता? जब उनका बेटा आया, वो दोनों दौड़ पड़े मगर उनकी आँखों के सामने अँधेरा छा गया। वो गिरने को हुए मगर उन्हें दीवार का सहारा लेना पड़ा। दीवार पकड़ खड़े हो गये दोनों मगर उन्हें इस उम्र में भी बेटे का सहारा न मिल सका। खैर, उन्होंने बेटे को मिठाई देने को कहा अपनी पत्नी से। उन्होंने चीनी का एक दाना लाया जिसे उन्होंने पता नहीं कब से बचा के रखा था। दो-चार दाने और थे जिन्हें वो तब खाते जब उनका दिल भूख से मचल जाता। मगर बेटा शक्कर खाने थोड़े ही आया था। वो तो सरकारी कागज पे अपने माँ-बाप के हस्ताक्षर लेने आया था। उसे ये घर बेचना था। बेचारे बूढ़े माँ-बाप एक दूसरे को देखते रह गये मगर समझ न सके। बेटे ने कहा पापा, हम शहर में मकान लेगे। अब हम शहर में रहेंगे। क्या रखा है इस गाँव के छोटे से घर में? तो उन्होंने कहा रमना, आदित्य ठीक ही तो कह रहा है। इस घर में तो हमें भी नींद नहीं आती। वहाँ शहर वाले मकान में पंखा लगा होगा न बेटा? हाँ पापा, बड़ी-बड़ी खिड़कियाँ होंगी, सामने बगीचा होगा। वहाँ से ताजी हवा

आयेगी। तो पापा ने कहा, सुना तुमने रमना हमारा बेटा बहुत बड़ा हो गया रे। अब हम शहर चलेंगे रहने को। कितना मजा आयेगा? वहाँ मोटर होगी, कारें होंगी। हम रिक्शे पे बैठ जायेंगे और शहर में घूमेंगे न आदित्य? तो वो बोला पापा, वो तो बाद में होगा न? पहले आप साइन तो कर दीजिए। तो पापा ने कहा, ये साइन-वाइन मैं नहीं जानता रे। मैं तो अँगूठा लगाऊँगा, अँगूठा। तो आदित्य बोला, सॉरी पापा! मैं तो भूल ही गया था। इतना कह वो उनसे अँगूठा लगवा गया कागजात पे और बोला, पापा ठीक है। मैं दो दिन बाद आता हूँ आपको लेने। मकान मैंने देख रखा है। ऊँचा है, बहुत ऊँचा। इतना कह वो चला गया। बाहर खरीदार खड़ा था। माँ-पापा बेटे की बातों को याद कर सपने सजाने लगे। रमना सोचो, हम शहर वाले हो गये। इसी दिन के लिए तो लोग बेटा माँगते हैं ऊपर वाले से। तो माँ ने कहा, मुझे तो शर्म आ रही है। मैंने बेटे के बारे में क्या-क्या नहीं सोचा था? तभी उन्हें जोरों की भूख लगी। वो बोले रमना, जरा एक गिलास पानी तो लाना। अब तो दो दिन की ही बात है। अब तो हमें पूरियाँ मिलेगी खाने को। दो दिन की तो बात है। हमें शहर वाले कमरे में कितनी अच्छी नींद आयेगी। यहाँ तो मच्छर परेशान करते रहते हैं। इसी तरह कई दिन बीत गये। बेटा दो दिन का बहाना कर गया था। हफ्ते गुजर गये पानी पीते-पीते उन्हें। आज उन्होंने बिस्तर पकड़ लिया। तो एक दिन पापा बोले रमना, आज पूरी खाने को बहुत मन कर रहा है। बेटे के लिए जो आटा बचा के रखा है उससे पका दो न? तो माँ सोचने लगी, आटा तो है ही नहीं मैं तेल कहाँ से लाऊँ? तभी उनकी नजर अपनी कलाई की चूड़ी पे पड़ी जिसमें सोने की एक चूड़ी थी, जिसे उन्होंने बहू की मुँहदिखाई के लिए रखा था। वो सोचने लगी बेटा बड़ा आदमी बन गया। उसकी पत्नी भला ऐसी चूड़ी पहनेगी? मैं इसे बेच आटा और तेल दोनों मँगवा लेती हूँ। तब पापा बोले, क्या सोच रही हो रमना? तब माँ बोली, मैं पका रही हूँ और जाकर दरवाजे पे बैठ गयी। मगर उन्हें सामान लाकर देता कौन? वो जिससे भी कहती आगे निकल जाता। पापा की भूख बढ़ती जा रही थी। उनकी अँतड़ियाँ भी सट सी गयी थी। अब वो खाना क्या बनाती, उनकी आँखों के आगे तो अँधेरा छाने लगा। उनकी साँसे टूटने लगी तो उन्होंने बर्तन पटकना शुरू किया। पापा बोलते जा रहे थे, रमना पूरी बना की नहीं। माँ कराहती कह रही थी, बना रही हूँ न देख नहीं रहे हो। पापा बर्तन की आवाज सुन रहे थे। उनके मुँह में पानी आ रहा था। मगर एकाएक बर्तन की आवाजें आनी बन्द हो गयी। माँ की साँसे टूट गयी। पापा ने समझा रमना आ रही है पूरी लेकर। वो हँस पड़े और उनकी साँसे भी टूट गयी। मगर उनके चेहरे पे गहरा संतोष था जैसे आज उनकी हर आरजू पूरी हो गयी हो।

ये कहानी है उन बदनसीब माँ-बाप की जिनके बच्चे ये कह कर शहर चले जाते हैं कि उनके जीवन में उजाला ला देंगे, उनके बूढ़ापे को सँवार देंगे, उनके कदमों में दौलत के ढेर लगा देंगे। मगर वापस कोई नहीं आता। उनके जीवन में अँधेरा छा जाता है। वो मर जाते हैं। यही सिलसिला चलता रहता है। मगर ये इन्तजार के पल भी यही बयान करते हैं कि एक दिन तेरा बेटा आयेगा, एक दिन तेरा बेटा जरूर आएगा।

इन्साफ का तराजू

बिड़ला बेटे, तेरे बाबा का बदन बुखार से तप रहा है। उनकी दवाई खत्म हो गयी। जाने कब से कराहते चले जा रहे हैं वो। थोड़े पैसे हों अगर तो दे दो। आखिर बीमारी बगैर दवा के जा पायेगी भला? उसपर बुढ़ापे का जिस्म बोझिल हो चला सो अलग। बिड़ला ने कोई जवाब नहीं दिया तो माँ उसकी कमीज से दो रूपये का सिक्का निकालने लगी। बेटे ने कहा, क्या कर रही है माँ? जेब में पैसे नहीं है। अगर पैसे नहीं हैं तो ये भारी कैसे हैं। इसमें कुछ बादाम दाने और कुछ छुहारे बीज भी हैं जो सुबह हमने मिताली के कहने पर लाये थे। उसका जी कुछ खाने को मचल रहा था। पर बेटा बादाम दाने और छुहारे बीज भी तो पैसे से ही आये होंगे न? हाँ आये तो हैं। तो दो बीज ही दे दे फिर अपने बाबा के लिए। उसे ही मैं चूल्हे पर गर्म कर खिला दूँगी उन्हें। उनका बुखार तो कम न हो इससे शायद पर उनकी खाँसी तो कम हो ही जायेगी। तो बिड़ला ने कहा, माँ छुहारे बीज गर्म होते हैं, बाबा को दस्त होने लगेंगे। अच्छा तो फिर एक रूपया ही दे दे। लहसुन खरीद लाऊँगी। उसे तेल में गर्म करके उनके जिस्म पे रगड़ दूँगी मैं। तो फिर बिड़ला एक नया बहाना ढूँढने लगा माँ को बताने को। उसने कहा, माँ! बुखार तो मामूली सा ही था बाबा को। फिर भी मैंने दवा मँगवा दी थी छोटू से। अगर पैसे ही चाहिए तुम्हें तो निठला के पास चली जा। बेटे बिड़ला! निठला के पास तो कमाई का कोई जरिया ही नहीं है तो वो कहाँ से लायेगा पैसे? तो बिड़ला ने कहा मूरख है तू माँ, मूरख। निठला सारी ऊमर बाबा की कमाई पर ऐश करता रहा और तू समझती रही वो अल्हड़ है इसलिए ऐसा करता है। माँ निठला की जेब में हमेशा सौ-सौ के पाँच-छह नोट से कम नहीं रहते। वो उन पैसों से कभी बाबा के लिए चाय लाने का बहाना कर निकलता है और चला जाता है अफीम की दुकान पर। उसने ही बाबा को थोड़ा-थोड़ा अफीम चाय में मिलाकर पिलाया है जिससे बाबा का तन कमजोर पड़ गया है। मूरख माँ जल्दी से निठला के पास जा और उससे कह कि अफीम की काट माँग लाये दुकानदार से नहीं तो बाबा सुरधाम चले जायेंगे। और तू बिस्तर पे बैठी रह जायेगी अकेली। मूरख माँ देर मत कर, जल्दी जा। निठला पान की दुकान पर बैठा मिल जायेगा बिड़ला बोला। माँ बेचारी सच में मूरख थी। घर से निकल गयी निठला को तलाशने। रास्ते भर सोचती रही बिड़ला अगर निठला के बारे में न बताता हमें तो निठला के बाबा तो सच में गुजर गये होते। जल्दी से निठला को तलाशती हूँ। ये पान की दुकान तो बन्द है। निठला किसी और पानवाले के पास बैठा होगा। अरे ये पान की दुकान भी खाली है तो निठला गया कहाँ? दो रूपये की खातिर ये बिड़ला कहीं मूरख तो नहीं बना गया हमें। नहीं बिड़ला बेटा ने सच में वो कहा जो निठला आज तक करता रहा हमारे साथ। कैसा बेटा निकला रे निठला तू। अरे ये पान की दुकान भी खाली है तो लोग पान खरीदने कहाँ चले गये। शहर में पता नहीं कितनी दुकानें होगी पान की, मैं कहाँ-कहाँ तलाशूँ निठला को? बिड़ला अगर दो रूपये के सिक्के दे देता हमें तो हमें ये दूरी तो तय नहीं करनी पड़ती। पर निठला के बारे में वो अगर सच-सच न बताता तो निठला के बाबा इस दुनिया में जी ही नहीं पाते। निठला की जेब में हमेशा पाँच-छह सौ के नोट भरे होते थे ओर मैं हमेशा बिड़ला के पास जाया करती थी, पैसे माँगने। भला उसकी पत्नी को तो खुद दिल की बीमारी है। बिड़ला ने यही तो कहा था तभी तो घर के सारे काम मुझे ही करने पड़ते हैं। खाना तक मैं ही बनाती हूँ। पर जब खाना पक जाता है,

बिड़ला का बेटा आकर कहता है दादी! दादा जी बुला रहे हैं और वो लोग सारा खाना खुद ही खाकर खत्म कर देते हैं। जो थोड़ी बहुत बचती है उससे हमारा पेट मुश्किल से भर पाता है। और निठला हमेशा माँस-मछली की खुराक मुँह में लिये घर लौटता है। निठला के बाबा को तो माँस-मछली खाये वर्षों हो गये। घर में बनाती भी हूँ तो बिड़ला की पत्नी ही खाती है सिर्फ। बिड़ला यही तो कहता है पकाते वक्त कि माँ अभी पैसे का जुगाड़ कम ही हो पाता है। सो आधा सेर माँस ही ला पाता हूँ घर। कल जब पैसे अधिक जमा हो जायेंगे, एक सेर माँस लाऊँगा ताकि तू और बाबा भी खा सके। पर कहाँ लाया बिड़ला आजतक एक सेर माँस। बिड़ला के बाबा हमेशा पूछ बैठते थे मुझसे कि बिड़ला कि माँ आज माँस पकाने जा रही हो न? मुझे भी मिलेगा न खाने को और मैं कह देती थी कि नहीं आज भी नहीं निठला के बाबा और वो चुपचाप मुँह फेर लेते थे मुझसे। अगर पहले मालूम होता तो निठला के बाबा के पास इतने भी कमाये हुए पैसे जमा थे कि जिससे हम हमेशा नहीं तो कभी-न-कभी एक सेर माँस खा सकते थे। मगर ऐसा नहीं होने दिया निठला ने। उसने सारे पैसे से अपने ही बाबा के लिए अफीम की गोली खरीद डाली और उन्हें ही धीरे-धीरे मिटाता चला गया ताकि एक दिन उनके सारे पैसे उसके हवाले हो जायें। लो चौथी पान की दुकान भी आ गयी। कुछ लोग यहाँ बैठे हैं। जरूर निठला भी यही बैठा होगा और मुझे देखकर छुप गया होगा। जाकर पानवाले से पूछती हूँ। मगर पानवाले के पास जब वो गयी उसने कहा कि निठला तो अभी-अभी पान लेकर मुन्नीबाई के कोठे पर चला गया। ये मुन्नीबाई का कोठा कहाँ होगा? क्या वहाँ मुझ जैसी शरीफ औरतें जाती होंगी? नहीं जाती होंगी। मैं भला अपने पति की इज्जत नीलाम करूँ, घर चलती हूँ। अलाव ही जलाकर निठला के बाबा के जिस्म को गर्म कर दूँगी जिससे उनका बुखार तो कम न हो शायद पर उनका जिस्म तो गर्म होगा, उनकी कंपकंपी तो कम होगी। मगर वो जब घर लौटी निठला के बाबा बिस्तर पे खामोश पड़े थे। वो चुपचाप उन्हें तकती रही और एक सन्तोष की मुस्कान ओठ पर लिए वहीं बिस्तर पे बैठ गयी। सर्दी की रात आहिस्ता-आहिस्ता गुजरती चली गयी। सुबह होने से पहले निठला ने माँ को आवाज दी। वो नशे में घुत्त था। माँ ने कुछ नहीं कहा तो बिड़ला ने ऊपर से ही कहा, माँ तेरा निठला आ गया। दरवाजा खोल दे। पर माँ तो सो रही थी। सुन न सकी। आज पहली बार उन्हें इतनी गहरी नींद आयी थी। सारी रात तो वो अपने पति की फिक्र में जागती रह जाया करती थी। आज जब जरा सी आँख लगी तो बेटे की पुकार चीख-चीख कहने लगी, माँ दरवाजा खोल। मगर वो जाग न सकी और मजबूरन बिड़ला को नीचे उतरना पड़ा। उसने दरवाजा खोल दिया और निठला अन्दर चला आया। आज सुबह जब बर्तन माँजने का शोर न हुआ तो निठला और बिड़ला ने मिलकर माँ को आवाजें दी। माँ तूने अभी तक बर्तन भी नहीं माँजे खाना नहीं पकेगा क्या? और उनकी ही आवाजें टकराकर उन तक वापस आती रही। आखिरकार झकझोर डाला उन्होंने उन्हें तो बाबा एक तरफ मुड़ गये बिड़ला के, माँ एक तरफ और बिड़ला की पत्नी बिस्तर पे लेटी रहने का बहाना तबतक करती रही जबतक की मुहल्लेवाले आकर मातम में जमा न हो गये।

तो क्या जो बिड़ला की माँ और उसके बाबा के साथ हुआ वो इन्साफ था? या ये इन्साफ की हार थी? क्या था ये? इन्साफ का तराजू डोल-डोलकर बताता रहा संसार को?

गोपी

नीता ससुराल जा तो रही थी लेकिन उसके दिल से गोपी का बचपना निकल नहीं पा रहा था। उसने बहाना बनाकर उसे शहर भेज दिया था अपनी बुआ के साथ ये कह कि गोपी तू बुआ के साथ जाकर अपनी पसन्द के नये कपड़े बनवा ले। मैं तुम्हारा इन्तजार करूँगी। क्या तुम मेरा इन्तजार करोगी दीदी? हाँ गोपी, मैं तबतक तेरा इन्तजार करूँगी जबतक कि तू आ न जाये दर्जी से कपड़े सिलवाकर। गोपी दौड़ता-भागता, नाचता-गाता चला जा रहा था बुआ के साथ ये कहते हुए कि बुआ, दीदी ने हमारे लिए शहर में जो नये कपड़े बनवा दिये है न हम जल्दी ही लेकर लौट आयेंगे न। हाँ रे गोपी, तुम्हारी दीदी तो दो-तीन घण्टे बाद जायेगी और शहर तो आधे घण्टे में ही आ जाता हैं। नीता मन-ही-मन उस अनाथ गोपी के बचपने पर हँस भी रही थी, रो भी रही थी। मैंने कितना गलत किया उसे शहर भेजकर। क्या पता वो आधे रास्ते से ही लौट आये? बुआ की तीखी निगाहें उससे बर्दाशत नहीं होगी। कहार वाले बैठे थे मगर नीता अपने पति से बार-बार यही कह रही थी थोड़ी देर और रूकने कहिए कहारों को, शायद गोपी आता ही हो। तो उन्होंने कहा भी नीता, गोपी को तो तुमने बुआ के साथ भेज ही दिया शहर, फिर वो वापस आये तो कैसे? शायद आये, मुझे ऐसा लगता है। नीता वो नहीं आयेगा। चलो। शाम होने में थोड़ा ही वक्त वाकी है। गोपी अब लौटकर नहीं आयेगा। वो पागल बेचारा अपने लिये नये कपड़े बनवाने गया है शहर। उसे पागल मत कहो कबीर, वो हमारा भाई है। हाँ हमारे गाँव का अनाथ गोपी हमारा भाई है। तुम तो चिढ़ गयी नीता। भला एक अनाथ बच्चे पर मैं गलत निगाह रखूँगा। मुझे भी तो वो अच्छा लगता है, मगर हरकतें ही ऐसी करता है कि जी कुढ़ जाता है। नीता हँस पड़ी। क्यों क्या किया कबीर उसने तुम्हारे साथ? वो क्या है न जब मैं तुम्हारे घर आ रहा था पीछे से गुलेल मारी मेरे पैरों में। मैं दर्द से तड़प उठा। मगर वो था कि लगातार हँसता ही जा रहा था। पहले तो बहुत गुस्सा आया मुझे उसपर। मगर बाद में मुस्कराकर रह गया क्योंकि वो मेरे सामने बहुत ही बच्चा था और बच्चे के बचपने से नफरत कैसी? नीता शाम घिरने ही वाली है, चलो जल्दी से तैयार हो जाओ। तभी नीता की माँ ने कहा, क्यों बेटा, इतनी जल्दी क्या है? थोड़ी देर और रूक जाओ। वो पागल गोपी का क्या, कब आ जाये? तुम्हारा रास्ता भी तो ज्यादा लम्बा नहीं। कहार वाले भी नहीं उठे अभीतलक तो कबीर ने कहा वो बात नहीं माँ, घर पर सभी लोग इन्तजार कर रहे होंगे हमारा। हमने कहा था कि बारह बजे तक लौट आयेंगे और तीन बज गये। अभी तक गोपी नहीं आया। गाँव का सफर है। दो घण्टे तो लग ही जायेंगे। तो माँ ने कहा, वो बात तो ठीक है बेटा मगर नीता का दिल ये बाट जोह रहा है कि गोपी आने ही वाला होगा। तो नीता बोली, माँ अब गोपी नहीं आयेगा शायद। कबीर, तुम्हें भी जल्दी है। चलो। माँ, कहारों को तैयार करो, मैं आती हूँ डोली में। तो कबीर बोला, हाँ माँ। नीता तैयार होती है, आप कहारों को बोल दीजिए। माँ ने जाकर कहारों से कहा कि अपने-अपने हिस्से के नाश्ते कर लिये न तुम लोगों ने कहार बाबू। अब जल्दी से कांधे को हल्का करो। हमारी नीता आती ही होगी। तो कहारों ने कहा, हाँ माँजी। हम तो कब से दरवाजे पे तैयार बैठे हैं? तुम्हारी ही तरफ से देर थी। नीता तैयार हो रही थी। उधर गोपी को जब बुआ ने गाड़ी में बिठाया तो गोपी बोला, कितनी देर हो गयी बुआ। अभी तक

हम दर्जी के पास नहीं पहुँचे। उस पर पता नहीं, उसने हमारे कपड़े सीले हैं कि नहीं। तो बुआ ने कहा अरे पागल, जब तेरी दीदी ने तेरे लिए कपड़े बनवाये ही नहीं तो वो सिलेगा कहाँ से? वो तो बहाने बना तुम्हें हमारे पास छोड़ गयी ताकि तू उन्हें तंग न करे। वो तो कब का डोली में बैठ गयी होगी। तभी किसी ने कहा, क्यों ड्राईवर बाबू? कितना वक्त हुआ? चार बज गये साहब। क्या चार बज गये? अब दिन ढल ही रहा होगा। हाँ साहब। थोड़ी देर में दिन तो ढलेगा ही। शाम का वक्त है। ऊपर से सर्दी का मौसम भी अपना रंग दिखाने लगा है। अभी-अभी धूप भी डूब गयी। हाँ रे, शाम तो जल्दी ही होने वाली है। चल जल्दी से खोल गाड़ी और कितने लोगों का इन्तजार करेगा? तभी गोपी को लगा, नीता दीदी शाम को जानेवाली थी। कहा था, दो घण्टे में वापस आ जाना। वो रोने लगा नीता दीदी, मैं कहाँ रह गया? तुम कहाँ चली गयी? गाड़ी वापस ले चलो ड्राईवर बाबू मेरे गाँव। कौन से गाँव से आया है तू? तो उसकी बुआ ने कहा, हम सतरंगी गाँव से आये है ड्राईवर बाबू। क्या? वो गाँव तो काफी पीछे रह गया। क्या हमारा सतरंगी गाँव काफी पीछे रह गया? अब हम कितनी देर में वापस जा पायेंगे? कल सुबह। इतना कह ड्राईवर ने गाड़ी खोल दी। गोपी चीखता रह गया। गाड़ी वापस करो। शाम के वक्त हमारी दीदी ससुराल जाने वाली थी। सभी लोग हँस रहे थे। मगर गोपी की आँखों के सामने नीता का चेहरा आ रहा था, जा रहा था। वो डोली में बैठ गयी होगी। कहार वाले तो आये हुए थे ही। मैं अपनी दीदी से दूर हो गया। पता नहीं, कहार वाले उसे लेकर कहाँ चले गये होंगे। ऐसा सोचते-सोचते वो बेहोश हो गया सदमे से और गाड़ी ने जब हिचकोले लिये वो गाड़ी से गिर गया। एक मोटरगाड़ी उसे कुचलकर चली गयी। इधर नीता जब डोली में बैठकर जाने लगी, उसके कानों में गोपी की दर्द भरी आवाज गयी। दीदी, तुम शाम तक मेरा इन्तजार करोगी न? तुम्हें मेरे कपड़ों से शर्म आती है न मुझे अपनी ससुराल वालों के बीच ले जाने में? तभी न कपड़े सिलबाने के लिए भेज रही हो मुझे शहर में दीदी। कितना अच्छा होता हमारे गाँव में ही मिलते सिले-सिलाये कपड़े। हाँ रे गोपी! अच्छा ही होता। इतना सोच नीता डोली में बैठ गयी। कहारों ने उसे कांधे पर बिठा लिया मगर अब गोपी को बिठानेवाले कांधे उसे अर्थी की ओर ले जा रहे थे। श्मशान घाट उतना दूर नहीं था गोपी की लाश से, जितनी दूर की उसकी नीता दीदी की ससुराल।

आँखों की नमी

हो आयी दोस्त की शादी से बेटी? हाँ माँ, हो आयी। बहुत मजा आया माँ। रोहित के घरवालों ने मेरी खूब खातिरदारी की। कहा, नेहा बेटे जरा रोहित का सेहरा तो लाना तब माँ मैं हँस पड़ी कि चाची रोहित का सेहरा मैं बाँधूँ? अगर गलती से कुछ कह बैठी तो शादी भी नहीं कर पायेगा वो। तब माँ रोहित को अपनी तरफ आता देखा मैंने और छुपा दिया उसके सेहरे को। वो मुझसे जल्दी करने की जिद कर रहा था। उसे तो ब्याह करने जाना था। बेचैन था बेचारा। मगर माँ, मैंने भी उससे कह दिया कि रोहित चाची ने खूब छूट दे रखी है हमें तुमसे मनमानी करने की। तब माँ, रोहित गिड़गिड़ाने लगा था। नेहा प्लीज, मेरे साथ मजाक मत करो। जल्दी से सेहरा लाओ। मैं बाँध लेता हूँ। तब मैंने कहा न माँ कि जनाब को सेहरा बाँधने की जल्दी है। मगर मैंने तो सेहरा बनाया ही नहीं अभी तक। उसमें और मोती टाँकने बाकी हैं। अगर तुम्हारी दुल्हन ने तुम्हारे गले में वरमाला डालने से इनकार कर दिया तो? तब रोहित रो पड़ा था माँ। ऐसी बातें मत कहो नेहा। मेरा कितना मजाक उड़ा लेती हो तुम और मैं तुम्हें कुछ नहीं कहता। इसका मतलब ये तो नहीं कि तुम मुझे परेशान करो। तब मैंने उसके आँसू पोछते हुए कहा था न माँ ले आये आज के दिन आँखों में आँसू। रोहित, सेहरा तो सुबह ही तैयार कर दिया था मैंने और तुम्हीं ने तो गुजारिश की थी मेरे सामने सेहरा बनाने की। ये लो पहन लो। चाची काजल लेकर आती ही होगी। तब माँ रोहित ने मेरा हाथ पकड़ लिया था। कहाँ जा रही हो नेहा? साथ नहीं चलोगी क्या? नहीं रोहित, मैं घर जा रही हूँ। जब मैंने ऐसा कहा न माँ तो बैठ गये जनाब एक तरफ मुँह बिजकाये और जब चाची ने काजल का टीका लगाना चाहा वो बोला माँ, नेहा के हाथों से टीका लगवाऊँगा। तब पता है माँ, चाची कैसे हँस पड़ी थी। आँखों में काजल का टीका एक लड़की के हाथों लगवायेगा तू। अरे पागल कोई तो रश्म अदा करने दे मुझे। तब पता है माँ, रोहित ने क्या कहा था। कहा था कि माँ नेहा ही मेरी सबकुछ है। और तब मैंने पूछा कि और जिसे ब्याहने जा जा रहे हो वो क्या है तुम्हारी नजरों में रोहित? तब वो तपाक से बोल पड़ा था माँ कि वो मेरी पत्नी है होनेवाली जिसका हक मैं तुम्हारे बाद समझता हूँ नेहा। ऐसा कह मुझे उसने सीने से लगा लिया था माँ और रो पड़ा था। कभी छोड़कर मत जाना नेहा। तब मैंने कहा न माँ कि अगर तुम्हारी पत्नी को एतराज हो हमारी दोस्ती पे तो रेहित? तो मैं आत्महत्या कर लूँगा, ऐसा कहा था उसने माँ। तब चाची ने उसके मुँह पे हाथ रखकर कहा कि ऐसी बातें करना तुम्हें किसने सिखा दिया रोहित बेटा? भला चाँद से चाँदनी को कोई जुदा कर सकता है। और फिर माँ मैंने रोहित के माथे पे सेहरा बाँधा, उसकी आँखों में काजल का टीका लगाया, ललाट को चन्दन की सुगन्ध से स्वच्छ और सुन्दर बना दिया ताकि जो भी देखे कह सके कि दूल्हा बेमिसाल है और माँ फिर रोहित के साथ जब मैंने गाड़ी में बैठने से इनकार कर दिया तो पता है रोहित ने क्या कहा? कहा कि भिजवा दो गाड़ी माँ। हमारा ब्याह नहीं होगा। तब एक बार फिर चाची ने हँसते हुए कहा कि कैसा प्रेम है तुम दोनों के बीच बेटा जिसे मैं समझकर भी समझ नहीं पा रही। अच्छा चलो नेहा, तुम भी रोहित के साथ बगलवाली सीट पर बैठ जाओ। और माँ फिर मैं रोहित के साथ गाड़ी में बैठ गयी। वक्त तेजी से गुजर रहा था। पूरे रास्ते रोहित मेरी ही बातें करता रहा माँ। मैंने रोहित को टोकना चाहा कि कुछ तारीफ अपनी

होनेवाली पत्नी की भी करो रोहित। तब माँ पता है रोहित ने क्या कहा? कहा कि नेहा मैं जीवन में अगर कुछ जानता हूँ तो वो है तुम्हारा नाम। सुबह-शाम, सोते-जागते मैं तुम्हारा ही नाम लेता हूँ। किसी और का नाम मेरी जुबान पे आता ही नहीं। हर पल, हर लम्हा मैं तुम्हारे साथ रहना चाहता हूँ। नेहा, तुम्हारी दोस्ती ही मेरी जिन्दगी है। नेहा तुम मेरे लिए जीवन हो और ये सारे जमाने के किस्से मुझे मौत की ओर ले जाते है। तब मैंने उसके मुँह पे हाथ रखते हुए कहा कि रोहित अब तुम्हें मुझे भूलना होगा और मेरे बगैर जीने की आदत डालनी होगी। और जिसे तुम ब्याहने जा रहे हो आज से उसका हक बनता है तुमपर। मैं तो कल से परायी हो जाऊँगी तुम्हारे लिए। तब माँ रोहित इतनी जोर से रो पड़ा कि मैं चौंक गयी। ये कैसा चाहनेवाला है जो एक दोस्त की दोस्ती को जीवन से बेहतर मान रहा है और माँ फिर जब मैंने उसका हाथ पकड़ा कि रोहित ये हाथ इनकी तरफ देखो, इनमें किसी की दी हुई निशानी है। आज के बाद से मैं अलग हो जाऊँगी तुम्हारे लिए। आज तुम्हारी शादी हो रही है, कल हमारी होगी। कल तुम्हारे बच्चे आ जायेंगे इस दुनिया में। तो फिर आनेवाले कल में हम दोनों ही बाल-बच्चे वाले हो जायेंगे। रोहित, आज के बाद से तुम्हारी जिन्दगी में बदलाव आ जायेगा। जब तुम अपनी पत्नी को देखोगे, मुझे भूल जाओगे। तब माँ उसने मेरा हाथ पकड़ते हुए कहा था कि नेहा, मैं तुम्हें भूल जाऊँ ये नहीं हो सकता। तुम कहो, तुम तो मुझे याद रखोगी न? तब माँ मैंने उसके हाथ से अपना हाथ छुड़ाते हुए कहा कि रोहित कल किसने देखा है? नहीं नेहा, वादा करो मुझसे। ऐसा कह उसने एक बार फिर मुझे सीने से लगा लिया। ये हमारी ऐसी पवित्र दोस्ती थी जिसे कोई नापाक नहीं कह सकता था और जब गाड़ी रूकी मैंने रोहित को नीचे उतरने को कहा तो उसने मेरा हाथ पकड़ लिया। चलो न नेहा तुम भी मेरे साथ। मगर माँ मैं कैसे जा सकती थी उसके साथ? लोग देख रहे थे। जब रोहित की नजर उतारी जा रही थी, मैं एक तरफ खड़ी हो गयी थी। तभी पीछे से रोहित ने मेरा हाथ पकड़ लिया कि कहाँ जा रही हो नेहा? यहीं रहो न तुम। तब माँ मैं स्टेज की तरफ इशारा करते हुए बोली थी कि रोहित देखो, वहाँ कौन बैठा है? कौन है नेहा? तुम्हारी होनेवाली पत्नी और फिर उसे लेकर स्टेज पे चढ़ गयी थी। लड़की की तरफ देख रोहित ने मुँह बना लिया था कि नहीं डालूँगा मैं वरमाला, ये तो काली है। तब मैंने उसे चिढ़ाते हुए कहा कि बन्दर को बन्दरिया ही तो चाहिए रोहित। जल्दी से डालो वरमाला और अदा करो इस रस्म को। और फिर मेरे कहने पर उसने वरमाला डाल दी थी। सभी हँस पड़े थे ये कौन है दामाद बाबू? तब रोहित ने मेरा हाथ पकड़ते हुए कहा था ये मेरी कौन है? ये मेरी आन है, शान है, मेरी जिन्दगी है। माँ तब दुल्हन का चेहरा उतर गया था मगर मैंने बातों-बातों में बात बदल डाली थी। और फिर जब फेरे शुरू हुए मैं उससे दूर खड़ी थी। तब भी रोहित ने मुझे पास बुलाते हुए कहा कि नेहा पहले मैं जाऊँ या वो जायेगी। सभी लोग हँस पड़े थे मेरी तरफ देखकर। आप इनकी क्या लगती हैं? तब मैंने कहा कि कुछ भी नहीं और माँ वो एक बार फिर नाराज हो गया था मुझपर और सारे लोगों के सामने बोलने लगा था। मेरी कौन है ये? मेरी बारात और शहनाई है ये। मेरी आँखों में लगा काजल और सेहरा है ये। मेरे माथे पे चमक रही चन्दन की सुगन्ध है ये। तब सभी हमारी इस दोस्ती पे दंग रह गये

थे। माँ मैंने शरमाते हुए निगाहें झुका ली थी और कहा था आहिस्ता से कि रोहित और कितना शर्मिन्दा करोगे मुझे तुम और माँ जब विदाई का वक्त आया वो मुझे फिर ढूँढने लगा। नेहा! नेहा! गाड़ी में बैठो, घर चलना है और तब दुल्हन की माँ मुझे अजीब नजरों से देखने लगी थी। माँ मगर मुझे इन सब से क्या लेना देना था। मैंने रोहित के साथ उसकी बगलवाली सीट पर दुल्हन को बिठा दिया और खुद पीछे जाने लगी तभी रोहित ने मेरा हाथ पकड़ते हुए कहा कि कहाँ जा रही हो नेहा, यहाँ बैठो न? मेरा सर भारी लग रहा हैं जरा सेहरा तो हटाओ यहाँ से। तब उसकी पत्नी ने कहा था कि लाइए मैं हटा देती हूँ। तब वो जोर से बोलने लगा कि नहीं रहने दीजिए मैं नेहा से उतरवा लूँगा। और माँ जब गाड़ी घर आयी थी मैं चुपके से भाग रही थी मगर रोहित की शातिर निगाहों ने मुझे देख लिया। माँ भी बोली कि नेहा बेटे जरा बहू को उसके कमरे में तो ले जाओ और माँ फिर मैंने सारे कमरे को सजा दिया ताकि रोहित अपनी सुहागरात की फूलों की महक को महसूस कर सके और मेरी तारीफ करना छोड़ दे। मगर माँ वो तो पल-पल मुझे ही तलाशता रहा। दुल्हन के पास बैठने की फुर्सत ही नहीं थी उसे और माँ इसी बीच मैं तुम्हारा बहाना बनाकर भाग आयी। पता नहीं रोहित मुझे कहाँ-कहाँ तलाश रहा होगा। माँ ऐसा प्यार देखा है कहीं? नहीं देखा नेहा मगर तुम्हारी नम आँखों ने मुझे सब मन्जर दिखला दिये। माँ, ये एक दोस्त की कहानी सुनाते-सुनाते रो पड़ी। इनमें किसी की परछाई छुपी है और मुझे सारा जीवन इस नमी को छुपाये रखना है क्योंकि रोहित मुझे तलाशता आता ही होगा मेरे पास। उसकी आँखें भी तब नम होंगी माँ। ये हमारे आँखों की नमी हमारे प्यार को एक नयी जिन्दगी देगी माँ। ऐसा कह अपने कमरे में चली गयी और अन्दर से दरवाजा बन्द कर लिया। आज उसकी आँखें रोने को उतावली जो हो रही थी।

अरे सुभद्रा, मार पत्थर इस बाबूजी पे। जाने कहाँ से आज फिर आ गये ये। मार सब मार। आ नंदा तू भी आ, अरे ओ मीता तू भी आ न? जाने कहाँ से चले आते है ये भूले-भटके लोग हमारे बीच प्यार का झूठा ढोंग रचाने। ऐसा कह सबने पत्थर मारना शुरू किया उस आदमी पे। वो हैरान हो उन लोगों को ताकने लगा। तब उन सबने कहा, क्यों ऐसी निगाहों से ताककर खा जाओगे हम सबको? हमने तुम्हें आज से पहले भी यहाँ आते देखा था बाबूजी। तब तुम एक नहीं थे, कई थे। सब हमसे प्यार का जाल बुनकर चले गये थे। धोखे के शिकार तो हम हुए न? तुम्हारा क्या गया इसमें? हाँ, तुम्हारा क्या गया, कुछ भी तो नहीं। बोल बाबूजी जवाब दे, क्या तुम्हारा कुछ गया, नहीं न? मारे तो हम गये न जिसने तुम जैसों को अपने घर में आसरा दिया। ठहरने और रहने की जगह दी। आराम करने को बिस्तर दिया, ओढ़ने को रजाई दी और खाने को चावल भी दिये। पर बोल बाबूजी, पहले तो हमदर्दी के दो बोल बोले भी तुमने। फिर जहर का ऐसा नश्तर चुभोया कि हमने तुमपर एतबार करना ही छोड़ दिया। बाबूजी, तुम याद करो वो लम्हें, क्या तुम अपने कुछ दोस्तों के साथ नहीं आये थे हमारी बस्ती में डेरा गिराने? हमने तुम्हें चाय का गर्म प्याला नहीं थमाया था क्या? अगर नहीं बोला न तो जला डालूँगी तेरा मुँह। बोल जवाब दे। मेरी हर बात का जवाब हाँ में देना। अरे सुभद्रा पूछ इस जनाब से, क्या इसने हमारे साथ प्यार का खेल नहीं खेला था? ऐ बाबूजी, याद कर उन लम्हों को जब तू गाड़ी से उतरकर हमारे घर की तरफ मुड़ा था। वो क्या था मीता, हमारी बस्ती में कोई आता नहीं था न रे तभी तो हमने सब कुछ गंवा लिया था, वरना कब का हमारा भी ब्याह हो चुका होता। हमारे हाथों में भी मेंहदी रची जाती, हमारे बालों में भी गजरे बाँधे जाते। पर नंदा हमारे तो अब बाल ही नहीं रहे रे, अब इस बाबूजी ने प्यार का वास्ता दिया तो हम दुल्हन कैसे बनेंगी रे, हमने तो अपने ही हाथों नफरत से अपने ही बाल मुड़ डाले रे। अब हम कैसे बाँधेंगे गजरे रे। अरे ओ बाबूजी, क्या तू हमारे साथ इसी हाल में रहेगा? क्या तू बगैर बालों में गजरे बाँधे हमें ब्याह कर ले जायेगा। वो अजनबी क्या बोलता, बड़े असमंजस में पड़ा इन लोगों की बातें सुनता रहा। अरी ओ सुभद्रा, इस जनाब का पता पूछ तो ले कम-से-कम। बड़ी मुश्किल से हाथ आया है ये। अगर आज हमें दुल्हन बनाये बगैर चला गया न तो हम तो सारी उमर इसे ढूँढती रह जायेंगी। कम-से-कम इसको पकड़कर तो रख ही सकते हैं न हम। नहीं रे नंदा ये मर्द है, हम सब से बलबान। हमसे हाथ छुड़ाकर भाग जायेगा। क्यों रे? हम इसे यूँ ही भागने देंगे, मार न डालेंगे साले को पत्थर से। अब तो हमारे हाथों में चूड़ियाँ पहनायेगी न तू। बोल नंदा। अरी ओ मीता, जा जरा सन्दूकची में देख तो हमारी लाल ओढ़नी वहीं पड़ी थी। हम आज ही ओढ़ लेंगे उसे। क्यों रे तू ओढ़ेगी और हम क्या करेंगे? हमें भी तो यही बाबूजी पसन्द है न। पर नंदा वो क्या करेगी अकेली? तू रहना उसके पास। पहले इसके साथ हमारा ब्याह हो जाय फिर हम बाकी सब को ढूँढ लायेंगे रे, तू फिक्र न कर। अरे ओ बाबूजी, आ बैठ। पीढ़ा ला सुभद्रा जरा बाबूजी को बिठाने को। हमारी तो आज ही रोसगद भी होगी न? यही तो कहा करती थी हमारी अम्मा कि जब ब्याह हुआ था उनका तो हमारे बाबूजी पीढ़े पे बिठाये गये थे अपनी ससुराल में। अब इस बाबूजी का यही ससुराल हुआ न बिठा इसे भी इसी पर। बोल बाबूजी बैठेगा न इसपर। फिर हम भी अपने बच्चे को अपनी पुरानी कहानी सुनायेंगे। क्यों नंदा तुम्हारे भी बच्चे होंगे न? हाँ सुभद्रा, हम सब माँ बनेंगी एक दिन और एक दिन हम सब के बच्चे इस संसार में आखें खोलेंगे। वो आदमी बेचारा हक्का-बक्का

वहीं बैठा रहा उन लोगों के पास। सबने उसे चारो तरफ से घेर जो लिया था। अब तो जाने का रास्ता ही नहीं मिल पा रहा था उसे इस जगह से। वो सब कह जो रही थी अगर हिला भी न तो पत्थर से मार-मार कर सर फोड़ डालूँगी मैं तुम्हारा। अरी ओ नंदा, जा जरा पीला पत्ता ले आ तो। इस बाबूजी के माथे पे बाँधनी है न पटवासी के रूप में। अरे पागल है तू खुद भी तो बाँधेगी न। जा जरा संदूकची को खोल के देख तो कहीं लाल चुनर की तरह पीली पटवासी भी तो नहीं बना रखी थी हमारी माँ ने। हाँ याद आया, उस मकान में एक बार शादी का समारोह हुआ था। तब हमने चुरायी थी वहाँ से दूल्हे की पटवासी। अरी ओ मीता, बाबूजी के लिए धोती भी तो लानी है न? अरे हाँ! बाबूजी तू बैठ, हम अभी सारा इन्तजाम कर आते हैं। अगर हिला भी न यहाँ से तो पत्थर से मार-मार कर लहूलुहान कर दूँगी हाँ। उस आदमी ने उसकी बात मान ली और बैठ गया काठ के उस पीढ़े पर। जब वो लोग जाने लगी तो बोला जल्दी आना। शाम का वक्त है, कहीं अँधेरा हो गया तो बिजली का बन्दोबस्त भी तो करना पड़ेगा तुम लोगों को। हाँ ये बात तो बड़ी ठीक लगी हमें तुम्हारी बाबूजी। तुम तो भले आदमी लगते हो क्या तुम हम सबसे ब्याह कर लोगे? क्या तुम हमें हमारी ससुराल तक रोसगद कराकर ले जाओगे। बोलो न बाबूजी ले चलोगे न हमें हमारी सुसराल। हाँ और तुम सब को एक घर भी दूँगा रहने को। कैसा घर बाबूजी? जिसको कि तुमने आजतलक नहीं देखा। देखा बाबूजी! हमने ऐसा घर बहुत बार देखा। पर वो क्या है न हमने जो घर बनाया न अपने-अपने ख्वाबों में वो हमारे पास रह न सका। पर क्यों, क्या हुआ था ऐसा तुम लोगों के साथ? किसने काट डाले तुम्हारे बाल? बड़ी लम्बी कहानी है ये बाबूजी, पर तुम सुनोगे न? हाँ सुनूँगा। पर एक बार हमसे रोसगद कर लो न फिर वो सारी बातें हम तुम्हें साफ-साफ बता देंगी। तो जल्दी करो न हम तो कब से बैठे हैं। तो फिर हम सब जायें। हाँ जाओ, पर कोई चालाकी मत करना बाबूजी। हमने धोखे जो बहुत खाये हैं जिन्दगी में। अब इस आखिरी धोखे को खाकर हम जी नहीं पायेंगे बाबूजी। ऐसा कह वो सब चली गयी उस आदमी पे एतबार कर और अपने-अपने घरों से वो सब तलाशने जो एक दुल्हन पहनना चाहती है, जो एक दुल्हन का शृंगार होता है। पर कहीं भी उन्हें कुछ नहीं मिला। न लाल ओढ़नी ही मिली, न पीली पटवासी ही, न चूड़ियों की कतारें ही। सब तो बस पुरानी ही बातों को याद किये बैठी थी जो उन्हें किसी अनजान मुसाफिर ने ख्वाब में पहनाये थे और जिसकी झलक दिखाकर जाने कहाँ चले गये थे। अब उनके पास जब कुछ था ही नहीं तो वो दुल्हन कैसे बनती। दुल्हन बनने के लिए तो सबसे पहले माँग सजाने होते हैं। पर वो भी तो नहीं थे उनके पास। जाने क्या कहानी थी उनकी, कौन सुनने को बैठा रहता ऐसे लोगों के बीच। जब वो लोग लौटकर खाली हाथ ही वापस आयी तो ये भी भूला दिया कि यहाँ हम किसी को बिठाकर भी गये थे। वो सब एक बार फिर उस पीढ़े को उठाकर वहाँ से ले आयी और सोचने लगी इसी पे बैठकर एक बार हमारे बाबूजी चले भी गये।

तो क्या ये अजीब लोगों की बस्ती थी जिसमें गलती से कोई भला आदमी आ गया था? ऐसे ही भले आदमियों के वेश में छुपे लोगों ने इनका ऐसा हाल हो जाने पर मजबूर कर दिया था जिन्हें एक आसियाँ बनाने की फिक्र थी। असल में तो वो एक आसियाँ बनाती है किसी के प्यार को पाकर और उन्हें बिखरता हुआ देखकर ऐसा अजीब हाल बना डालती है अपना जिनकी तरफ कि कोई फिर पलटकर तकना भी नहीं चाहता। क्यों वो इन्सान कम, अजीब किस्म का एक जीव ज्यादा नजर आने लग जाती हैं?

सारी औरतें बातें कर रही थी कि एक औरत और आयी है आज हमारी खोली में रहने जिसकी गोद में एक बच्चा भी है, साथ में उसकी माँ है। तो एक औरत हँसते हुए बोली, क्या बात करती हो नीला की माँ? कल तुम भी इसी तरह खोली में नीला को साथ लेकर आयी थी और तेरे साथ भी तेरी बूढ़ी माँ ही थी। तो तुने किसका पाप लाया था नीला के रूप में। तो वो पड़ोसिन चिढ़ सी गयी और कहा, और तेरे पेट में पल रहा ये बच्चा ये किस मर्द की निशानी है कमला बाई? तेरे साथ भी तो तेरा पति नहीं था। तब वो और शरमा गयी और ये कह वहाँ से उठकर चली गयी कि हम तो है हीं बदनाम औरत। मगर वो जो नयी नवेली दुल्हन आयी है वो किसी बड़े घर की लगती है। चल सुबह बातें करेंगे उससे। अभी हमारे बच्चे जाग जायेंगे, शोर सुनेंगे तो। तो एक औरत हँसते हुए बोली और अगर कोई नया मर्द आ गया तो। तो तू क्या कम शोर करेगी? हमारा तो काम ही है शोर कर सभी को बताना कि हमारी खोली में एक नया मर्द आया है। हो सके आज कोई नया मर्द ही आ जाये तो सभी हँस पड़ी। जब कोई जबां मर्द आयेगा हमारे पास तो मुट्ठी भर पैसे होंगे और सुबह मिलने का बहाना कर सभी अपनी-अपनी खोली में वापस चली गयी।

रात घिरने को आयी। सभी अपनी-अपनी खिड़कियों से झाँकने लगी। तभी एक बूढ़ा आशिक हाथ में शराब की बोतल लिये उस नयी औरत की खोली में घुस गया। वो चीख पड़ी माँ। और माँ ने उस बूढ़े आशिक को धक्के देकर बाहर कर दिया। वो ये कह चला गया कि साली आयी है पुरानी खोली में रहने और साथ में एक माँ नाम की औरत सम्हाल रखी है। दूर हो जा मेरी नजरों से। ये कह वो खुद-ब-खुद चला गया और सभी जैसे आपस में कोलाहल करने लगी। अरी ओ कमला बाई, मेनका, सुभद्रा, वो औरत शरीफ घर की लगती है रे। उसने उस बूढ़े आशिक को धक्के देकर खोली से बाहर निकाल दिया। तो सभी बोल पड़ी। नहीं रे तारा बाई, वो शरीफ होती अगर तो हमारी खोली में रहने नहीं आती। शुरू-शुरू में तो हम भी शरीफ ही दिखती थी मगर हर जवान और बूढ़े आशिकों की गंदी नजर ने हमें धंधेवाली बना दिया क्योंकि हमारी गोद में एक-एक बच्चा है। चल आ, चलते है उस नयी औरत के पास। सभी चल पड़ी उस नयी औरत के पास उसकी खोली में। वो रो रही थी तो उसकी माँ तसल्ली दे रही थी ये कह कि अरे ओ सौम्या, चुप हो जा। तुम्हें कहा था न मैंने कि इस नयी दुनिया में पुराने लोग तुम्हें कहीं नहीं मिलेंगे। सभी फुसफुसाने लगी। अरे हमारा नाम तारा, मेनका, कमला और सुभद्रा बाई है और इस नयी छोकरी का नाम सौम्या है। कह दे इससे कि अपना नाम बदल ले तो वो गिड़गिड़ाने लगी। क्यों आयी हो मुझे तंग करने? मेरी गोद में पाप की निशानी नहीं। मेरी अपनी बेटी है ये। इशिता नाम है इसका। इसके पिता कुछ दिनों पहले गुजर गये हैं। मेरी सास ने हमें धक्के देकर घर से निकाल दिया है। हमारे पास पैसे नहीं थे तो हम इस पुरानी खोली में रहने आ गये। किसी ने बताया था हमें कि यहाँ बहुत सारी अनाथ औरतें रहती है। तो तारा बाई बोल पड़ी। क्या करते थे तेरी बेटी के पिता? शराब पीते थे या शराब पिलाते थे तो उस औरत ने कहा, पीते-पिलाते थे। तो क्या हमारी गोद में जो बेटियाँ पल रही है वो बगैर किसी मर्द के जन्मी है? सौम्या रो पड़ी। मत करो ऐसी बातें। मैं मर जाऊँगी शर्म से। तो कमला बाई ने कहा,

अगर शर्म होती तो हमारी तरह जीने नहीं आती इस खोली में गोद में बच्ची लेकर। इसे जनमने से पहले ही मर जाती तो सौम्या की माँ बोली, चली जा यहाँ से। मैं सुबह ही ये खोली खाली कर देती मगर हमारे पास रहने को सिवाय खुली सड़क के कुछ भी नहीं है। ये मेरी बेटी नही। मुझ गरीब बुढ़िया की बेटी इतनी खूबसूरत नहीं होती बेटी। ये मेरी मालकिन है जो किसी अमीर घर में ब्याही गयी थी। मगर इसके पिता के मरते ही इसके पति और सास ने इसे घर से निकाल दिया तथा खुद वो किसी तवायफ के कोठे पे दिल बहला रहा है इसके पैसे से। तो फिर एक औरत ने कहा, अभी-अभी तो यह कह रही थी कि इसका पति मर गया। वो तो झूठ कह रही थी यह ताकि अब कोई पति नाम का आदमी तुमसे इसका पता पूछ यहाँ न आ जाये। तब वो औरतें वापस अपनी-अपनी खोली में आ गयी और सो गयी। रात गुजर गयी। कोई जबां मर्द नहीं गुजरा आज उनकी गली से।

सुबह सब अलसाती हुई उठी। आज नींद का मजा नहीं रहा मेनका! साली बिस्तर काँटा बन चुभ रही थी दिल में। हाँ हमारी भी आँखें उस आनेवाले मर्द पे ही टिकी रह गयी जो हमारी खोली में आनेवाला होता था। सौम्या ने सबकी बातें सुनी और अपनी आया से बोली, आया माँ क्या ये सब औरते हैं या सिर्फ मैं औरत हूँ? मैं चिढ़ती हूँ उन शराबियों से और ये उनकी राह देखती हैं। तो उनकी आया ने कहा, ये बात नहीं बेटी ये औरतें पेशेवाली बन गयी है आज क्योंकि इनके पास भी हमारी तरह एक घर नहीं है रहने को। कल ये भी तुम्हारी तरह ही रही होंगी। आज ये कुकर्म करने की आदी हो गयी हैं। तो सौम्या ने कहा, आया माँ मैं पूछती हूँ उस ईश्वर से कि ये जो मेरी गोद में बच्ची है, तू बता सकता है ये पाप की निशानी है या पुण्य की। ये जायज है या नाजायज। इसके पिता कौन हैं तू बता सकता है? अगर वो कुछ नहीं बोले तो पुछूँगी फिर मैं उससे कि ये जो औरतें सो रही हैं इस खोली में। जिनकी गोद में एक बेटी है वो सजा की हकदार हैं या सजा का हकदार वो मर्द है जो इनकी गोद में एक बच्चा दे गुजर जाता है। हम तो सजा के हकदार नहीं थे। हम तो लाचार थे जिसे तूने ये सजा दी और जो सजा के हकदार थे, जिन्होंने हमारी गोद में बच्ची डाल दी, उसे तूने कभी भी कोई सजा न दी।

पूजा देखो न! वो लड़का मेरी ही तरफ देख रहा है। कौन योगेश और वो समीर? हाँ, तुमनें ड्रेस ही ऐसी पहन रखी है, पैंट और शर्ट। कितनों के पास रह पाती होगी ऐसी ड्रेस? मेरे पापा इस मुल्क के सबसे अमीर आदमी हैं। क्या नहीं है हमारे पास? कार, वी॰सी॰आर॰, बैंक-बैलेंस, बंगला, सोफा और पता नहीं कितने सामान। क्यों पूजा, मैं झूठ तो नहीं बोल रही न? नहीं तनिशा तुम्हारे पापा हैं ही शहर के सबसे नामचीन आदमी। कौन तुम्हें नहीं जानता? तुम्हारी तस्वीर तो हमेशा अखबर में छपती रहती है। लड़के दोनों की बातें सुन रहे थे और तनिशा उन्हें जला रही थी। समीर ने योगेश से कहा यार, लड़की तो बड़ी अमीर लगती है। हाँ समीर, ये तो खूबसूरत भी है और बड़े बाप की बेटी भी। कैसी कमीज पहन रखी है इसने देखो तो? कह रही है अमेरिका से इसके बाप ने मँगवायी है। नहीं यार मँगवायी नहीं है। ये खुद गयी है उनके साथ अमेरिका। क्या? यार लड़की बिन्दास लगती है, पटा लें। चलो पूजा को पटाते हैं पहले और ऐसा कह वे दोनों आहिस्ता से आगे बढ़ने लगे। पूजा से कोर्स की एक किताब माँगी उन्होंने। पूजा ने कहा, सॉरी समीर मैं घर पर भूल आयी। तो इनसे कहो न? मैं छुट्टी में कल लौटा दूँगा। तब पूजा ने तनिशा से कहा, देगी तनिशा किताब? नहीं मैं अपनी चीज किसी को नहीं देती, तनिशा ने कहा। तब योगेश ने कहा कि हम पराये कहाँ हैं तनिशा? हम तो इसी कॉलेज के छात्र हैं। क्या ये सब हमारे ही साथ पढ़ते हैं पूजा? हाँ तनिशा हमारे ही कॉलेज में हमारी ही क्लास में। मगर मैंने तो इन्हें हमेशा इसी जगह बैठे देखा है। क्लास रूप में तो ये कभी नजर ही नहीं आये। क्या हम तुम्हें नजर नहीं आये? हमें तो पूजा अच्छी तरह जानती है तनिशा और तुम पूजा की सहेली हो। इस नाते हमारी भी जान-पहचान हो गयी। अब तो दे दो किताब। उससे कुछ लिखना था हमें। नहीं जी, हम अपनी चीज किसी को नहीं देते। तो अपनी गाड़ी में लिफ्ट दे दो, हम घर जाकर ले आयेंगे। क्या पागल हो गये हो? पूजा ऐसे लोगों के साथ रहती हो तुम जो कॉलेज भी आते हैं तो बीयर के नशे में। और तुम तनिशा! क्या तुम्हें नशा नहीं है जवानी का? है तनिशा, तभी तो जिस्म को झलकाया करती हो। तब तनिशा ने उसके गाल पे एक तमाचा मारते हुए कहा कि अगर चाहूँ तो अभी-अभी पुलिस बुलाकर तुम्हें अरेस्ट करवा दूँ मगर कुत्ते को जंजीर में बाँध देने से कुत्ता पालतू नहीं बन जाता। उसके लिए पहले वफादारी सीखनी पड़ती है। जाओ और पहले हमारी नजर में वफादार बनो। फिर हम तुम्हें अपनी गाड़ी में लिफ्ट जरूर देंगे। योगेश तनिशा की ओर देखता रह गया और समीर ने योगेश का हाथ पकड़कर कहा यार, हम इस लड़की के थप्पड़ का जवाब जरूर देंगे ताकि इसे पता चल सके कि बिन्दास होना कितना बड़ा अभिशाप है एक लड़की के लिए। ये कहते हुए वे दोनों चले गये। तभी तनिशा की मोबाइल बजी। उसके पापा बात कर रहे थे। तनिशा बेटी, घर कब आ रही हो? जरा आकर देखो तो हम तुम्हारे लिए क्या लाये हैं? क्या लाये हो पापा? एक नयी कार की चाभी, एम्बेस्डर है तनिशा। तो मैं जल्दी घर आ रही हूँ पापा। फिर वो पूजा से लिपटकर बोली पूजा, मेरे पापा ने स्विट्जरलैंड से मेरे लिए एम्बेस्डर गाड़ी मँगवायी है। चलो, आज हम इसी पे चढ़ कहीं घूमने चलेंगे। नहीं तनिशा, गाड़ी तुम्हारे पापा ने तुम्हारे लिए लायी है। तुम घर जाओ, मेरे बैठने से खराब हो जायेगी। योगेश और समीर की दुश्मनी से डर रही

थी वो। उसे ये सब अच्छा नहीं लगा था जो अभी-अभी तनिशा ने उनके साथ किया था। किताब माँगने आये थे वो। नहीं देती मगर इन लड़कों को सबके सामने थप्पड़ तो नहीं मारा होता। उधर वो दोनों भी तनिशा को इसी नजर से देख रहे थे और कह रहे थे कि हम कल की बात कर रहे थे यार हमें तो इससे बदला लेने का मौका आज ही मिल गया। शाम को बड़े बाप की लाडली गाड़ी लेकर निकलेगी ही। हम शाम को ही इसकी बिन्दासी का मतलब इसे सिखला देंगे। ऐसा कह वो दोनों एक तरफ हो गये और तनिशा पूजा को टा-टा कह घर वापस चली गयी। योगेश ने कहा कि हमें उसके घर से थोड़ी दूर रहना है समीर। किसी झुरमुट में छुपे रहेंगे हम और जैसे ही गाड़ी गुजरेगी, हम उसके पीछे वाली सीट पर बैठ जायेंगे क्योंकि वो वहाँ जरूर रूकेगी। मैं जानता हूँ कि तनिशा को सामने के तालाब के किनारे बैठना कितना अच्छा लगता है और जब वो दोबारा गाड़ी में बैठने आयेगी हम उसे पकड़ लेंगे। ऐसा समीर और योगेश सोच रहे थे जिससे तनिशा बिल्कुल अनजान थी। घर पहुँचकर पहले तनिशा ने अपने पापा को बधाई दी। उसके पापा किसी दोस्त के साथ बैठे थे। तनिशा उनके गले लग गयी और कहा मेरी गाड़ी की चाबी लाओ न पापा? बेटा, आप पहले अंकल के साथ बैठो तो कुछ देर। नहीं पापा हम अभी लेंगे चाबी। तब उनके दोस्त ने कहा तनिशा बेटी, हमारे साथ ही चलना। नहीं अंकल, हम अभी जायेंगे गाड़ी में बैठकर घूमने। पापा देर हो गयी कि नहीं। बेटा, कपड़े तो बदल लो। नहीं पापा, पहले तुम मेरी गाड़ी की चाबी दो। ये लो मेरी जान। तू मुझे पागल कर डालेगी बेटा। पापा, जब मैं न रहूँ तब तुम पागल होना न? अभी तो मैं तुम्हारे सामने जीती-जागती खड़ी हूँ, तनिशा ने कहा और गाड़ी लेकर गुजर गयी। नौकर पुकारता रह गया। तनिशा मेम साहब, साहब ने आपके लिए समोसे मँगवाये हैं। नाश्ता कर लीजिए। जब वो गाड़ी लेकर तालाब के किनारे गयी, पीछे से योगेश और समीर ने गाड़ी के पहिए की हवा निकाल दी और तनिशा अल्हड़पन करती, नाचती-गाती वादियों में घूमती रही। मगर तभी उसके पापा ने फोन कर कहा उसे कि तनिशा बेटी, गाड़ी से नीचे मत उतरना। मगर क्यों पापा? दुश्मन लग सकते हैं। मगर उसने इन सब बातों को दिमाग से झटक दिया और जब मौज-मजे हो गये, वो वापस कार के पास आ गयी। गाड़ी स्टार्ट करनी चाही तो नहीं हुई। तभी उसके हाथ की मोबाइल बजी। उसके पापा ने कहा कि तनिशा बेटे, घर आ जाओ। अब बहुत सैर-सपाटे हो गये। हमें तुम्हें कुछ और भी तो दिखाना है जो हम खास तोहफे के रूप में खरीदकर लाये हैं स्विट्जरलैंड से। क्या पापा? मैं तो बीच रास्ते में ही भटक गयी। गाड़ी स्टार्ट नहीं हो रही है। क्या? ठीक से स्टार्ट करो बेटा। नहीं तो रूको, मैं मैकेनिक को भेजता हूँ। पापा, मुझे बहुत डर लग रहा है। पापा मुझे यहाँ से ले जाओ। तनिशा बेटे, तुम कहाँ से बोल रही हो? तालाब के किनारे से पापा। तालाब के किनारे से। बेटा, मैं नहीं जानता उस जगह के बारे में। हमें बताओ, हम तुम्हें लेने आ रहे हैं। पर बेटे तुम शहर की इतनी छोटी जगह पे घूमने क्यों गई? पापा, आप जल्दी आइए। मुझे किसी के कदमों की आहट सुनाई दे रही है। तभी योगेश और समीर चेहरे पे नकाब डाले आये और उसे पकड़ लिया। तनिशा चीखती रह गयी पापा.....! और उसके हाथ से मोबाइल गिर गयी। उसकी चीख पापा को सुनाई देती रही। जबतक वो वहाँ पहुँचे, उसकी इज्जत लूट उसके

सर पे गहरी चोट मार वे दोनों फरार हो चुके थे। जब पापा की नजर उसपे पड़ी, वो दौड़ पड़े। तनिशा बेटे, तुम्हारी ऐसी हालत किसने की? कौन था तुम्हारा दुश्मन? और उसे ऍमब्यूलैंस में डाल हॉस्पिटल ले गये। वहाँ पर उसका इलाज चला। उसके जख्म तो ठीक हो गये पर उसके सर पे लगी चोट के कारण उसकी दिमागी हालत खराब हो गयी। रूस, अमेरिका, स्विट्जरलैंड सब जगह दिखाया पापा ने उसे। मगर अमीरी और उनके कायम रूतबे ने उसे फिर कभी बिन्दास बनने नहीं दिया। न ही वो किसी समीर और योगेश को गिरफ्तार करवा सकी क्योंकि वो दोनों ही चेहरे बदल इस शहर से गायब हो चुके थे और तनिशा उनकी पहचान खो चुकी थी।

उस दिन घर में कितना हो-हल्ला मचा था जब छोटी ने पापा से कहा था पापा, मैं राहुल से प्यार करती हूँ और शादी भी उसी से करना चाहती हूँ अगर आप एतराज करें तो भी। हम सब हैरान रह गये थे। छोटी ने आज इतनी बड़ी बात कह डाली पापा के सामने। पहले तो पापा कुछ नहीं बोले। पर जब अजीत ने कहा कि छोटी क्या इज्जत रह जायेगी हमारी? जरा सोचो, हमारे खानदान में आजतक किसी ने अपनी पसन्द के लड़के से शादी नहीं की और राहुल तो हमारी जात का भी नहीं। तब उसने कहा था भैया, अगर आपकी तरह मैं पापा के उसूलों के आगे घुटने टेकती रही न तो एक दिन मैं भी सुषमा दीदी की तरह ब्याह दी जाऊँगी कहीं। जरा सोचिए, कितने अच्छे घराने के थे राजेश भैया जिन्हें सुषमा दीदी पसन्द करती थी। पर पापा ने उनकी एक न सुनी कभी। हमेशा अपनी इज्जत की दुहाई देते रह गये। बेचारी रह गयी न अकेली। तब मैंने कहा था, छोटी बस भी कर। भूल जा इन पुरानी बातों को। मेरे पास क्या नहीं है? तुम हो, अजीत है, रोहण भैया और उनके बच्चे हैं। पर क्या राजेश भैया हैं तुम्हारे पास दीदी? बोलो, जवाब दो। देखा न, पापा की पसन्द कैसी थी। आज अगर राजेश भैया से तुम्हारा ब्याह हुआ होता तो आज तुम्हारे पास भी वो सब कुछ होता जो रोहण भैया और शीला भाभी के पास है। क्या ये सब हमारे अपने नहीं है छोटी। नहीं दीदी, ये सब तुम्हारे अपने नहीं है क्योंकि बंटी को भी समझ आ गयी है कि हमारी बुआ हमारे पास बोझ है और नीता तो जैसे हमेशा ही तुमसे चिढ़ा करती है। जाने दे न रे वो अभी बच्चे हैं, नादान हैं। धीरे-धीरे हमारे साथ रहना सीख जायेंगे वो। कैसे सीखेंगे दीदी? सीख भी जाते लेकिन भाभी कौन सी उन्हें तुम्हारे पास फटकने देना चाहती हैं। दीदी, मनहूस मानते हैं वो तुम्हें। जाने दे छोटी, मैं सब सह लूँगी। पर तेरे साथ ऐसा नहीं होगा रे। तेरे लिये पापा ने एम0 ए0 पास लड़का चुना है। देखने में भी गोरा-चिट्टा है और बातें भी अच्छी किया करता है। वो किसने सुनी दीदी? तुमने, नहीं न? सुनी भी होगी तो किसने? रोहण भैया और बड़ी भाभी ने जिनके तो मन्सूबे ही रहते हैं कि हम जलें, जलकर राख हो जायें। क्या कमल बाबू अच्छी बातें नहीं किया करते थे जिनसे मिलवाया था पापा ने तुम्हें और जाने कब कार्ड भी छपे थे और शादी भी हो गयी थी तुम्हारी। पर क्या सुखी रह पायी तुम उनके साथ, नहीं न? क्या वजह थी रिश्ते में दरार पड़ने की दीदी, बोलो जवाब दो। यही न कि राजेश भैया से एक रोज सड़क पर मुलाकात हो गयी थी तुम्हारी। उन्होंने तुमसे तुम्हारा हाल पूछा था और जिन्दगी जीने के दिलासे दिये थे। पर ये तुम्हारे माथे पे कलंक के निशान ऐसे पड़े कि वो घर ही तुम्हारा अपना न रह सका। उस घर का एक कमरा भी तुम्हारा अपना न रह सका। यहाँ तक कि सीढ़ियाँ भी परायी हो गयी तुम्हारे लिए जिसपे उतरने का हक भी गंवा बैठी तुम और चली आयी धक्के खाकर फिर इसी चौखट पर। पर देखना दीदी, एक दिन यह चौखट भी तुम्हारे साथ वो ही बर्ताव करेगी जो कमल बाबू के घर की सीढ़ियों ने किया था। मैंने तब छोटी के गाल पे तमाचे मारने को हाथ बढ़ाये ही थे कि अजीत ने रोक लिया था हमें। सुषमा दीदी, ऐसा मत करो। छोटी कोई गलत बात नहीं कर रही। हमसब एक बन्दिशों के शिकार होते चले जा रहे हैं। रोहण भैया ने भी कभी निशा भाभी से प्यार किया था। पर पापा के आगे कहने की हिम्मत नहीं जुटा पाये कभी वो क्योंकि वो भी राहुल की तरह गैर जाति की थी और पापा के खानदान इतने ऊँचे थे कि अगर रोहण भैया कहते तो इनकी नाक ही कट जाती। तो देखा न, कितनी अच्छी बहू ले आये घर में जो हमेशा इन्हें नचाती रहती है अपनी उँगलियों पर। वो नाचते भी हैं क्योंकि वो निशा भाभी की तरह गरीब घर

की नहीं, इनके इकलौते दोस्त सिन्हा साहब की लाडली बेटी जो ठहरी। चाचाजी कहा करती थी न इन्हें हाथ जोड़कर नमस्ते जो किया करती थी। कीमती सोफे पे बिठाकर चाय पीने की जिद्द जो किया करती थी। कहाँ से लाते बेचारी निशा भाभी के पिता इतने कीमती मकान और इतनी कीमती सजावट। उनके पास तो छत भी नहीं थी और पापा ठहरे आलीशान बिल्डिंग के मालिक। इनकी शान में कमी न पड़ जाती। पर आज ये सब देखकर मैं ये सोचने पर मजबूर हो गया हूँ कि अगर ऐसा ही होता रहा न सबके साथ तो देखना एक दिन हमसब के कदम एक साथ इस घर से बाहर चले जायेंगे क्योंकि मैं भी बता देना चाहता हूँ पापा को कि मैं भी दिव्या से प्यार करने लगा हूँ। कलतक तो वो मेरी सिर्फ दोस्त थी पर आज इस घर के मंजर ने मुझे उससे रिश्ता जोड़ना सिखा दिया है। इतने दिन से खामोश था मैं तो फकत इसलिए कि छोटी की बात पे पापा आज मान जायेंगे अपनी हालत को देखकर। पर नहीं इनके उसूल तो आज तक नहीं बदले। देखना दीदी, एक दिन हमसब भी तुम्हारी तरह बर्बाद होके रह जायेंगे। पापा तो उस वक्त वहाँ से चुपचाप चले गये थे पर दूसरे ही दिन उन्होंने फैसला सुनाया था कि जिसे भी मौजमस्ती करनी है वो घर छोड़कर चला जाये और फिर कभी वापस आने की बात को भूल जाये। माँ बेचारी रोती चली जा रही थी बस, और छोटी ने तुरन्त अपना सामान पैक कर लिया था और जाने लगी थी तभी मेहता साहब आ गये थे अपने बेटे के साथ। बोले, कहाँ जा रही है बेटी? छोटी ने कोई जवाब नहीं दिया था। तब उन्होंने अपने बेटे की ओर इशारा करते हुए कहा था दमन, यही है हमारी लाडली और इस घर की सबसे प्यारी मेहमान जो एक दिन हमारे घर में आनेवाली है। क्यों बेटी, मैंने ठीक कहा न? छोटी तो गुस्से में थी ही बोली, जी नहीं अंकल मेहमान आप होंगे इस घर के। आपको बुलाया गया है यहाँ बैठिये, चाय नाश्ता कीजिए। मुझे न आपसे कोई मतलब है न आपके लाडले दमन साहब से। मैं बाहर जा रही हूँ, देर हो रही है। मुझे किसी दोस्त से मिलने जाना है जिससे बड़े ही गहरे ताल्लुकात हैं हमारे। कौन है वो खुशनसीब, जरा मैं भी तो सुनूँ। सुनना चाहेंगे? जरूर, तो सुनिए। मेहर आँटी का बेटा राहुल। क्या? नाम तो जाना-पहचाना लगता है। पर है तो मुसलमान न? जी नहीं। उन्होंने एक हिन्दू लड़के से शादी की है और अब वो एक हिन्दू नारी हैं। आप शायद भूल रहे हैं कि हमारे यहाँ खानदान पिता के नाम पर चलता है और राहुल भी इस नाते हमारी जात का ही है। क्या आज जमाना इतना नया हो गया कपूर साहब? मैंने आज पहली बार सुना, वो भी आपकी ही बेटी की जुबान से। जब सुन ही लिया तो कृपया करके कोई और सवाल मत कीजिए। मुझे आपके बेटे की सूरत जरा भी पसन्द नहीं। तो फिर ठीक है, जाओ न? जाती हूँ दमन साहब, जाती हूँ। मैं तुम्हारे जवाब के इन्तजार में नहीं बैठी थी। मैं तो तुम दोनों बाप-बेटे को बस अपना परिचय दे रही थी तो सुन लिया न? हाँ सुन लिया। वो भी खुद तुम्हारी ही जुबान से। फिर छोटी तो जाने कब की चली गई। उसे तो जाता देखा मैंने, पर दमन भी कब चला गया ये नहीं देखा था। पापा तो शर्मिन्दा थे ही मेहता अंकल के सामने। पर थोड़ी ही देर बाद जब वो चले गये तो दरवाजा खटखटाया किसी ने। पापा ने पूछा भी नहीं कि कौन है? माँ ने ही जाके दरवाजा खोला तो वहाँ एक लड़का खड़ा था। बोला आँटी मैं। मैं छोटी से मिलने आया था। किसकी बात कर रहे हो? वो अब इस घर में नही रहती। चली गई किसी राहुल के पास। क्या? आँटी ये आप क्या कह रही हैं? राहुल तो मैं ही हूँ। पर वो तो मुझे मिली ही नहीं। धोखे से चले आये हो न बाबू, तो जाओ खोजो उसे रास्ते में ही। वो घर में नहीं है।

मैं हैरान हो रही थी उसकी बातों पर। अगर वाकई में वो राहुल था तो छोटी मिलने किससे गयी और जाने से पहले इसी राहुल का तो जिक्र भी किया था उसने। मैं आगे जाने की सोच ही रही थी कि पापा ने पीछे से पकड़कर रोक लिया मुझे। जाने दे सुषमा पहले ही हम शर्मिन्दा हो चुके हैं। इस नये नाटक को देखने का शौक नहीं है मुझे। इससे कह दो ये चला जाये और माँ ने फिर पापा के कहने पर दरवाजा बन्द कर दिया था। राहुल वापस चला गया था पर अजीत को जाने क्यों लग रहा था जैसे राहुल की बातों में सच्चाई थी। ये हो सकता था कि राहुल छोटी से सच में न मिला हो। उसकी बातें फ्रॉड नहीं लगी उसे। उसने किसी से कुछ पूछे बगैर घर से जाना उचित समझा। अजीत के चले जाने के बाद मैं अपने कमरे में चली गई थी और पापा अपने कमरे में। सब के सब अपनी आन और शान की ही बातें कर रहे थे। तभी रोहण भैया अपनी पत्नी और बच्चे के साथ आ गये थे जो कुछ समय के लिए बाहर गये हुए थे। जब घर में इतना सन्नाटा देखा तो पूछा क्या बात है सुषमा? पापा ने कहा, कुछ नहीं। अजीत कहाँ है? उसके लिए एक लड़की पसन्द की है हमने। ये फोटो भी लाया हूँ। देखिए न कैसी है? पापा ने फिर भी कुछ नहीं कहा। माँ ने कहा तो बस इतना कि अजीत ने अपनी पसन्द की लड़की चुन ली रोहण। और छोटी वो कहाँ हैं? दमन आया था? उससे मिली थी वो, बातें-बातें हुई थी दोनों की? नहीं वो लोग आये ही नहीं। क्यों माँ उन्हें तो आज ही आना था न? हमने मना कर दिया था बेटा। पर क्यों पापा? क्योंकि छोटी ने भी अपनी पसन्द के जीवनसाथी का चुनाव कर लिया है। वो सिन्हा साहब के रिश्ते की बात तो पुरानी हो गयी बेटे। पर हमने तो बात पक्की कर ली थी न पापा? कर ली थी बेटा, पर उससे पूछा जो नहीं था। ठीक है, जैसी उसकी मर्जी। पर लड़का हमारी जात का ही है न पापा। पता नहीं बेटे, हमने कभी देखा नहीं। तभी अजीत छोटी की लाश को गोद में उठाये आया और बोला, छोटी यहाँ है भैया। पापा की पसन्द का ये अन्जाम है। दमन ने बीच सड़क पर इसकी इज्जत लुटकर मार डाला इसे। इतना ही नहीं भैया, बाहर चलकर देखिए। एक लाश और पड़ी मिलेगी आपको। किसकी? राहुल की, जिसे गुण्डों ने बड़ी बेरहमी से मार डाला। हमारी आँखों ने सारे मंजर देखे हैं भैया। यही सब देकर गये पापा के उसूल। पहले सुषमा दीदी का घर बसते-बसते रह गया। फिर आपका घर भी तो बसने के काबिल न रह सका। भाभी को आप कभी पसन्द न आ सके। आपकी वजह से निशा दीदी सारी उम्र के लिए बैठी रह गयी कँवारी ही अपनी बूढ़ी माँ के पास जिन्होंने आपको अपना बेटा मानकर जाने कितने ख्वाब देख डाले थे। ख्वाब हमने भी देखे थे भैया और छोटी ने भी। पर सुषमा दीदी की तरह हम सबके कदम सिसकते हुए यहीं खड़े रह गये इन लाशों के बीच। अब न रास्ते का पता है हमें न मंजिल का। बोलिए भैया, क्या छोटी की ऐसी हालत को देखकर अब कभी हमारे सर सेहरा पहनना कबूल कर पायेंगे? नहीं भैया, ऐसा कभी नहीं कर सकेंगे हम क्योंकि छोटी चाहे किसी की कुछ न हो पर हमारे लिए सबसे अच्छी दोस्त थी वो जिसके बगैर ये घर, ये रिश्ते-नाते सब छूट गये हमारे लिये। ठीक है भैया, पापा से कहिए सम्हालें अपनी आन और शान को। ये तो इन्हीं के पास रह ही गये न आखिर। चले भी तो फकत हमारे और आपके सिसकते हुए कदम ही न? क्यों दीदी? अब भी रूकना ही होगा हमें? हमने कुछ कहा तो नहीं था पर उसके जाने की आहट तो आ ही रही थी आज भी हमारे कानों में।

माँजी, आज आप जल्दी तैयार हो जायँ। क्यों, क्या है बहू? आज दामाद बाबू आने वाले हैं न नन्दिनी को लेने। अरे हाँ, मैं तो भूल ही गयी थी। सुबह से तेरे बाबूजी ने कुछ खाया-पीया की नहीं? नहीं माँजी, बस एकटक छत की तरफ देखे चले जा रहे हैं। मैं कहती हूँ तो कहते हैं रहने दे बहू, अब तो ये घर सूना ही हो चुका। इसमें चाय की चुस्कियों का शोर सुनकर अब क्या करूँगा मैं? कब नन्दिनी इतनी बड़ी हो गयी, हमें पता ही न चला। ऐसा लगता है जैसे आज भी वो बाबूजी-बाबूजी कहती हमारे पास आ रही हो और कह रही हो बाबूजी देखो न भैया ने मेरी कंघी तोड़ डाली। अब कैसे बाँधूँगी मैं अपने बाल? खेलने जाऊँगी तो सब हँसेंगी न हमपर। लता, सुनीता और सुष्मिता वो सब तो हमें चिढ़ाती रहती है। कहती है ऐ नन्दिनी, तेरे बाबूजी ने तेरा गौना करवा दिया है रे, अब तो रूखसती होनेवाली है। तो क्या बाबूजी आप हमें सच में रूखसत कर देंगे इस घर से? पर बाबूजी हमारा तो अभी ब्याह ही नहीं हुआ फिर गौने की बात क्यों करती हैं वो हमसे? ऐ बाबूजी सुन लो मेरी भी बात, मैं ब्याह अपनी मर्जी से करूँगी। नहीं तो नहीं करनी मुझे किसी दूसरे की पसन्द के लड़के से ब्याह। बहू, हमने तो उसकी कोई हसरत पूरी ही नहीं की। वही किया जो उसको पसन्द नहीं था। खेल-खेल में ही दुल्हन का जोड़ा पहना डाला हमने उसे। पर कभी उसे बाल सँवारते हुए नहीं देखा हमने। कई बार कहा भी बेटा तू बड़ी हो गयी है, तेरा ब्याह हो चुका है। कम-से-कम इन बिखरे बालों को तो सँवारना सीख बेटे पर कहाँ मानी उसने मेरी बात? कह-कह के तो उसकी माँ भी थक गयी। पर हर बार यही जवाब दिया उसने कि जो चीज मुझे पसन्द ही नहीं, उसे क्यों करूँ मैं? सच कहूँ बड़ी नाराज है नन्दिनी हमसे। हमने बड़ी ज्यादती की है न उसके साथ? उसकी सारी सखियाँ जो कहा करती थी उससे, वो शिकायतें लेकर तो हमेशा चली आती थी हमारे पास। पर जो एक शिकायत वो करना चाहती थी उसे हमने उसकी जुबान से कभी निकलते देखा ही नहीं। सीढ़ियों पे चढ़ते-चढ़ते कैसे रूक जाया करते थे उसके कदम। जाने क्या सोचकर वो पलटती भी थी कुछ कहने को, पर कहाँ कह पाती थी। पर हमें उस वक्त ऐसा लगता था जैसे वो कहे बहू कि ऐ बाबूजी, मुझे आपसे एक शिकायत करनी है। पर कहाँ कहा कभी उसने हमसे ऐसा? कभी उड़ते परिन्दों को तकती रह गयी तो कभी रंगबिरंगी तितलियों की तरफ। पर मेरे कान उस वक्त भी उसकी वो आवाज सुनने को तरस रहे थे जो वो कहा करती थी उस जमाने में। बाबूजी ऐ बाबूजी, ये देखो मैंने तितली पकड़ी। कितनी सुन्दर है। है न बाबूजी और प्यारी भी। इसके पंख तो देखो कितने कोमल हैं। हमने छू दिये तो टूट के रह गये हमारे हाथों में। बाबूजी ऐ बाबूजी, क्या पंछी भी कभी हमारे हाथ आ सकते है जो उड़ा करते हैं बगीचे में। क्या उनके पंख भी इतने ही कोमल हुआ करते होंगे बाबूजी जितनी की हमारी तितली के थे? पर बहू वो जमाना तो जाने कब का चला गया हमसे हमारी बेटी छीनकर। अब तो वो ऐसा नहीं कहती क्योंकि हमेशा वो हमसे रूठी रहती है। बहू, कभी-कभी जब उसे चुप बैठा देखता हूँ न तो लगता है जैसे गुनहगार हैं हम उसके। हमने उससे उसका बचपना छीन लिया। वो शोर आज भी गूँजते हैं हमारे कानों में जो उस वक्त सुनाई दिया करते थे। वो छत से कहा करती थी। माँ, ओ माँ। बाबूजी आ गये। सुन अगर नहीं आये तो जब आयें कह देना, नन्दिनी छत पे है। जाना है तो ऊपर ही चले जाओ। वो नीचे आनेवाली नहीं। उसके भी पैर दुखते हैं हाँ। उसकी आवाज को सुन लिया करता था मैं और जाकर उसकी माँ से कहता था मत बताना कि मैं घर आ गया हूँ। आ जायेगी हमें मारने जब देख लेगी तो। भई मैं तो थक गया

हूँ, जरा आराम कर लूँ। जब नीचे आयेगी तो कह दूँगा, मैं तो अभी-अभी आया था बेटे। ऊपर जा ही रहा था कि तुम नीचे आ गयी। अब तो जाने की जरूरत ही नहीं रही। चलो ये भी अच्छा ही किया तुमने। अब हम यहीं इकट्ठे बैठकर बातें करेंगे तभी उसकी आवाज आती थी। माँ, ओ माँ बाबूजी आये की नहीं? मैं कह देता था उसकी माँ से कि कह दो नहीं और वो धमाधम सीढ़ियों से उतरती आती थी और मेरी तरफ जूते लेकर दौड़ पड़ती थी। तो बाबूजी, आज पकड़े गये न आखिर। अब तो हमारी कुट्टी ही हो गयी समझो। अब मैं आपसे बोलने वाली नहीं। तब मैं तकिये के नीचे से वो मिठाई का डब्बा निकालता था और कहता था अब भी नहीं और तब वो ऐसे हँस पड़ती थी जैसे सच में सारे झगड़े ही खत्म हो गये हों हमारे। सच बहू, पता ही न चला कि कब हमारी नन्दिनी हमसे बिछड़ गयी। माँजी अब आप ही बताइए, ऐसे मौके पर उन्हें खाने को पूछ सकती हूँ मैं भला? जाइए आप ही जाके उनसे कहिए कि कुछ तो खा पी लें वो। नन्दिनी शाम को जा रही है। कबतक भूखे बैठे रहेंगे वो? पर बहू, नन्दिनी इस वक्त कहाँ है? अपने कमरे में उसी तरह बिखरे बाल लिये बैठी है। क्या? मैं तो कह-कह के थक गयी हूँ उससे कि आज के दिन तो बाल बाँध लो नन्दिनी और ये साड़ी पहन लो और जाने कितना कुछ कहा मैंने उससे माँजी। पर कहाँ सुनती है वो हमारी बात? रात उसके भैया भी बड़ी अच्छी चूड़ी लेकर आये थे उसके लिए। वो भी लेकर गयी उसके पास, कहा कि कम-से-कम ये तो पहन लो नन्दिनी। तुम्हारे भैया लाये हैं इसे। पर हमेशा की तरह बैठी रही। न बाल बाँधे, न साड़ी पहनी, न चूड़ी ही लिया। तो क्या करें हम बहू? दामाद बाबू अगर उसे इस हालत में देखेंगे तो क्या सोचेंगे हमारे बारे में? अगर ले जाने से इनकार कर दिया तो? कैसी बातें करती हैं आप माँजी? नन्दिनी की शक्ल इतनी बुरी नहीं कि कोई उसे साथ ले जाने से इनकार कर दे। मैं जाती हूँ न उसके पास, वो मेरी बात मानेगी। बचपन से रही है वो मेरे साथ। एक दोस्त की तरह बर्ताब किया है मैंने हमेशा उससे। आज वो अपनी ही सखी की बात नहीं मानेगी। तो फिर जा बहू तू उसके पास। मैं तेरे बाबूजी को देखती हूँ। ठीक है माँजी और वो नन्दिनी के कमरे में गयी। उसे देखकर तो वो दंग ही रह गयी। कितना सुन्दर जूड़ा बना रखा था उसने। चूड़ी भी पहन रखी थी उसने अपनी कलाई में। माथे पे लाल बिन्दिया तो ऐसे शोभ रही थी जैसे सितारे सज गये हों उसकी माँग में। सच आज तो नन्दिनी का ऐसा रूप देखकर वो दंग ही रह गयी। बोली जाके सबसे माँजी! बाबूजी! जल्दी आइए। अरे देखिए तो सही, आज हमारी नन्दिनी कितनी सुन्दर लग रही है? उसने वो सब पहन रखा है जो हमने उसे दिया था पहनने को। क्या? हाँ माँजी! माँ बाबूजी के पास जाके बोली। बाबूजी भैया के पास जाके बोले अरे ओ कृष्णा, तेरी बहन आज सच में दुल्हन बन गयी रे। आज उसने वो सब कुछ करना सीख लिया जो हम चाहते थे। आज राजी-खुशी से जायेगी वो हमारे घर से। अब हमें कोई चिन्ता नहीं। मगर जब हम उसके कमरे में गये तो हैरान रह गये। वहाँ तो एक बुत की तरह बैठी थी नन्दिनी। रूप तो ऐसा निखरा था जैसे कली खिली हो बहार में कोई पर प्राण ही न थे उसमें। वो मुर्झा चुकी थी और जैसे कह रही थी हम सबसे कि बाबूजी यही रूखसती देना चाहते थे न आप हमको? हमने आपसे वो रूखसती ले ली बाबूजी। ये देखो बाबूजी मैंने बाल भी बाँध लिये, भैया की दी हुई इन चूड़ियों को भी पहन लिया, सितारे भी सजा लिये माँग में अपनी। पर सबकी आँखें अपने आँसूओं को भीतर समेटे ऐसे दृश्य को देखकर जाने क्यों खामोश रह गयी पर बाबूजी के ओठ तो आज भी उससे कुछ कह ही रहे थे जैसे।

कलम की ताकत

उस दिन मैंने ब्रजेश के हाथ में शराब की बोतल देखी तो सोच में डूब गया। हैरानी तो मुझे बिल्कुल न हुई। घर आकर सोचने लगा कि ये कौन मिला था मुझे सड़क पर अमीर घराने का रूतबा या जमीन पे पड़ा एक लाडला तो हैरानी हुई मुझे अपनी ही सोच पर। वो तो आज न अमीर घराने का रूतबा नजर आया था मुझे किसी भी तरफ से न जमीन पे पड़ा एक लाडला। वो तो मात्र एक शराबी नजर आ रहा था मुझे जिसके हाथ में शराब की खाली बोतल पड़ी थी। तब मुझे याद आने लगे थे वो पल जब बचपन में ब्रजेश मेरे हाथ से कलम छीनकर तोड़ दिया करता था और कहता था कि पैसे होंगे तेरे बाप के पास तो दूसरी ले देगा तुम्हें। मैं तब रोते हुए घर आता था और कहता था कि बाबूजी! ब्रजेश ने मेरी कलम तोड़ दी। मास्टर जी ने घर से हिसाब बनाकर लाने को कहा था। वो रो पड़े थे। बेटा रवि, ये ले पेंसिल। तू कलम से नहीं लिखेगा आज से। ये तो एक रूपये में जगह-जगह मिलती है। अगर उसने तोड़ भी दी तो दूसरी खरीद दूँगा मैं। तब मैंने बाबूजी से कहा था कि रोना मत बाबूजी। एक दिन मैं इसी टूटी कलम की ताकत से ब्रजेश को मात करूँगा। बाबूजी तब बहुत खुश हुए थे और फिर मैं पेंसिल से लिखने लगा था। बच्चे हँसते तो थे, मगर मुझे शर्म जरा भी नहीं आती थी। ब्रजेश मुझसे जीत चुका था शायद। उसके पास कई कलमें हुआ करती थी। वो मुझे ललचाना चाहता था अपनी रंगबिरंगी कलमों के जादू से। मगर एक गरीब किसी की चीज पे अगर ललचाने लग जाये तो क्या वो जी पायेगा और मेरी इसी सोच ने मुझे पढ़ाई में इतना आगे बढ़ने की प्रेरणा दी कि मैंने फिर कभी पीछे पलटकर देखा ही नहीं। स्कूल में इम्तहान पास कर लेने के बाद मैं कॉलेज चला गया। वहाँ पहली बार मुझे आजादी मिली। वहाँ ब्रजेश क्या, उसका साया भी नहीं था। ब्रजेश अमीर बाप का बेटा था। वो शहर के नामी गिरामी कॉलेज में पढ़ने चला गया था और मैं सिर्फ डिग्रियाँ पाने की चाहत लेके ही गया था कॉलेज में। मगर मुझे तो वहाँ जाके डिग्री भी मिली और कॉलेज में नाम भी मिला।

माना ब्रजेश का कॉलेज बड़ा था और मेरा कॉलेज छोटा। मगर यहाँ पढ़नेवाले लोग रहते थे और ब्रजेश के कॉलेज में अय्याशी का सामान पड़ रहता था जिससे वो लोग किसी की बेटी से खिलवाड़ करना सीख रहे थे, किसी की बहन पे बुरी नजर डाल रहे थे। किसी हमउम्र लड़की के आगे शादी का प्रस्ताव लेकर जाना चाह रहे थे। मगर मैं जहाँ पढ़ता था वहाँ ये सब कुछ नहीं था। मेरे बाबूजी आराम से जाते थे और प्रिंसिपल के सामने वाली कुर्सी पे बिठाया जाता था उन्हें। वहाँ लोग उनका आदर करते थे और मेरी होनहारी पर सम्मान भी देते थे। कहाँ मिलता शहर के नामी कॉलेजों में हमें ऐसा सम्मान? मैं भी खुश था। मेरे बाबूजी भी काफी खुश थे। एक दिन जब मैं कॉलेज की डिग्री लेकर लौट रहा था रास्ते में मुझे ब्रजेश का मकान दिखा जो बहुत बड़ा था और जब अपने घर की तरफ देखा तो लगा था जैसे ये पैबंद हो उसके सामने। मगर जब अन्दर गया था तो बाबूजी को चारपाई पर गहरी नींद सोये देखा था आराम से। तो पहली बार मुझे लगा था जैसे यहाँ जो सुकून है वो उस ब्रजेश के मकान में कहीं भी नहीं है और ऐसा सोच अपने बाबूजी के पास खाट पर बैठ गया था। जब खाट के चरमराने की आवाज सुनी थी बाबूजी ने तो उठ बैठे थे और मैं उनके कदमों को छूकर बोला था कि बाबूजी, मैं डिग्री लेकर आ गया। ये देखिये सारे इस फाइल

में बन्द हैं। तब बाबूजी ने मेरा माथा चूम लिया था और कहा था कि आज एक गरीब बाप के सामने ये मोटी-मोटी डिग्रियों के फाईल लेके आ गया तू बेटा जिसे सिवाय अँगूठे के निशान के कुछ समझ में न आ सका था सारी जिन्दगी। तब मैंने बाबूजी से कहा था कि ये तो कुछ भी नहीं है बाबूजी। मुझे शहर जाना है इन डिग्रियों को लेकर। कमाना भी है और पढ़ाई भी करनी है। तब बाबूजी ने मेरी हौसला अफजाई की थी और मुझे आशीर्वाद दे विदा किया था और शहर जाने से पहले मैंने एक बार फिर अपने और ब्रजेश के मकान के बीच की दूरी को देखा था और शहर चला गया था। वहाँ पर मैंने कई प्रयास किये नौकरी के, मगर नौकरी नहीं मिल पा रही थी मुझे। आखिरकार एक ऐसा मोड़ आया जीवन में जब बाबूजी की आश टूट गयी। वो बीमार पड़ गये। तब मैंने और ज्यादा मेहनत की और इस बार मैं सफल रहा। मुझे नौकरी भी मिली तो पुलिस सुपरिटेंडेंट की। मैं तब बाबूजी के पास जाके कह आया था कि बाबूजी ये देखिए मुझे ऐसी नौकरी मिली और तब बाबूजी इतने खुश हुए थे कि बोले थे बेटा रवि, अब तो कलम होगी न तेरे पास जो बचपन में तेरे पास नहीं रह पायी थी। तब मैंने कहा था बाबूजी! आज मेरे पास कलम ही नही, कलम की ताकत भी है और बाबूजी तब उठ बैठे थे बिस्तर से। उसी दिन ब्रजेश के पिता की अर्थी निकली थी जिसे कांधा देने के लिए मुझे बुलाया गया था क्योंकि ब्रजेश शहर में ही कहीं रंगरेलियाँ मना रहा था। वो लौटकर नहीं आया था। और फिर जब उसी ब्रजेश को सड़क पे शराब की बोतल लिये देखा था मैंने तब ये सोच हैरान रह गया था मैं कि कलम की इस ताकत ने मुझे उस अमीर ब्रजेश से भी बड़ा बना दिया था जिसके कांधे पे बैठकर ही उसके पिता आज आखिरी सफर पे निकले थे। आज उसका मकान मेरी सोच के आगे सच में छोटा हो गया था और पैबन्द उसी में झलक रहे थे आज मुझे।

रोशनी की आँखों के आगे वर्षों से अँधेरा छाया था। एक दिन उसने पिता से कहा, पापा क्या ऐसा नहीं हो सकता कि मैं कुछ पलों के लिए आपको देख सकूँ? पापा चौंके। ये बात उनके दिल में घर कर गई। आज से पहले रोशनी ने कभी भी ऐसी बात नहीं की थी। आज उसके दिल में ये बात पता नहीं कैसे आ गयी? पापा बोले रोशनी बेटा, मैं डॉक्टर से बात कर रहा हूँ। वो तुम्हारा इलाज कर रहे हैं। कुछ पलों के लिए क्या, एक दिन पूरी जिन्दगी तुम मुझे देख सकोगी। मगर रोशनी को पता था कि पापा झूठ बोल रहे थे। रोशनी अंधी ही नहीं, अपाहिज और दिल की बीमारी से भी पीड़ित थी। मगर पापा फिर भी चाहते थे कि रोशनी की आँखों की रोशनी लौट आये। ये विचार वो कई दिनों से कर रहे थे डॉक्टर से कि रोशनी को अगर किसी की आँखें मिल जाये तो वो देख सकेगी न इस दुनिया को? तो डॉक्टर ने कहा था सिन्हा साहब, आप बेटी के प्यार में ये भूल रहे हैं कि रोशनी को आँखें कौन देगा? आज उन्होंने फैसला किया कि मैं रोशनी को आँखें दूँगा और संयोग से आज रोशनी के दिल में भी ये अरमान जागा कि वो पापा को देखे। वो डॉक्टर के पास गये और यही बात डॉक्टर से भी की कि डॉक्टर मैं रोशनी को अपनी आँखें देना चाहता हूँ। डॉक्टर हैरान रह गया। ये आप क्या कह रहे हें सिन्हा साहब? आप अपनी आँखें रोशनी को देंगे? फिर आपका बूढ़ापा कैसे कटेगा सिन्हा साहब? वैसे भी रोशनी चन्द दिनों की मेहमान, एक लाचार अपाहिज लड़की है। वो तो कभी भी मर सकती है और आपके सामने आपकी पूरी जिन्दगी पड़ी है। एक बाप होने के नाते आप सोचते होंगे कि रोशनी सौ साल जीये। पर मेरी मानिये तो रोशनी अब एक महीने भी नहीं जी सकती। तो पापा ने कहा, डॉक्टर! माँ-बाप हमेशा औलाद की नयी जिन्दगी की, उसकी लम्बी उम्र की ही कामना करते हैं। तो डॉक्टर ने कहा, रोशनी को इस बारे में पता है सिन्हा साहब? तो पापा बोले, वो बहुत ही बदनसीब है डॉक्टर। ऐसी बातें कभी नहीं सोचेगी पर आज उसने एक बात कही मुझसे कि पापा क्या मैं कुछ पलों के लिए आपको नहीं देख सकती? डॉक्टर, मैं जानता हूँ वो अब मरनेवाली है और मैं उसकी ये आखिरी आरजू पूरी करना चाहता हूँ। डॉक्टर ने कहा, ठीक है उसे मेरे पास लाइए। तो पापा ने कहा, बहुत-बहुत शुक्रिया डॉक्टर आपने मेरी ये बात मान ली। पापा घर आये। देखा, रोशनी दीवार के सहारे खड़ी होने की कोशिश कर रही है। वो दौड़कर गये रोशनी को पकड़ने मगर रोशनी गिर पड़ी। उसके सर में बहुत गहरी चोट आयी। पापा ने ऍमब्यूलैंस बुलाया। रोशनी को हॉस्पीटल ले गये। उसके सर से बहुत खून बह रहा था। डॉक्टर ने कहा, सिन्हा साहब ये सब कैसे हुआ? पापा बोले, ये दीवार के सहारे खड़ी होने की कोशिश कर रही थी डाक्टर और गिर पड़ी। तो डॉक्टर ने कहा, मरीज के आखिरी दिनों में उसके सारे अरमान जाग जाते हैं सिन्हा साहब। वो चाहता है कि दुनिया की सैर करूँ। हरी-भरी दुनिया को देखूँ। ये पेड़-पौधे कब से स्थिर हैं, कब तक रहेंगे यही तमन्ना करते हैं वो। वैसे घबराईए मत। सभी डॉक्टर उसका इलाज कर रहे हैं। हो सकता है उसकी आरजू पूरी हो जाये। आखिरी दिनों में मरीज ऐसी-ऐसी हरकतें करता है जो उसकी जिन्दगी से अपोजिट होता है। तभी नर्स ने कहा, डाक्टर साहब चलिए रोशनी को होश आ रहा है। पापा दौड़ पड़े। मगर रोशनी ने आँखें नहीं खोली। वो फिर बेहोश हो गयी। डॉक्टर समझ गये अब ये केवल पन्द्रह दिनों की मेहमान रह गयी है। वो बोले, सिन्हा साहब आप क्या कहते

हैं आँखों के बारे में? तो पापा ने कहा, मैं अब भी तैयार हूँ डॉक्टर। तो ठीक है। मैं रोशनी की आँखों का ऑपरेशन करने को तैयार हूँ। पापा बोले, जल्दी कीजिए डॉक्टर कहीं देर न हो जाये? फिर एक दिन पापा ने रोशनी को अपनी दोनों आँखें दे दी। मगर अफसोस डॉक्टर ने कहा, सिन्हा साहब! आप इतने बदनसीब होंगे मुझे नहीं पता था। रोशनी के सिर पे गहरी चोट लगने की वजह से वो अब कभी दुनिया नहीं देख सकेगी। हाँ कुछ पलों के लिए वो आपको जरूर देखेगी। आपने बेकार में अपनी आँखें गंवा दी। तो पापा बोले, माँ-बाप की कुर्बानी बेकार नहीं जाती डॉक्टर। तभी रोशनी की आवाज सुनाई दी उन्हें। वो कह रही थी पापा! पापा! आप कहाँ हो? तो डॉक्टर ने कहा, रोशनी मुबारक हो। तुम्हें आँखें मिल गयी। तुम अब दुनिया देख सकोगी। अगले हफ्ते तुम्हारी आँखों की पट्टी खुलने वाली है। तुम अपने पापा को देख सकोगी, अपने आप को देख सकोगी। तो रोशनी ने कहा, डॉक्टर पर मैं जीऊँगी कितने दिन तक? रोशनी तुम तो अब बिल्कुल ठीक हो। तुम्हें अब कुछ नहीं होगा। पन्द्रह दिन में मैं तुम्हारा नाम काट दूँगा। तुम यहाँ से जा सकोगी वापस अपने पापा के घर। पर डाक्टर पापा कहाँ हैं? तो डॉक्टर ने कहा, वो यहीं हैं रोशनी। तुम्हें आराम की जरूरत है न? हाँ मैं तो अब हमेशा पापा को देखा करूँगी। इतना कह वो सो गयी। पापा सिसक पड़े। तो डॉक्टर ने कहा, आप तो महान हैं सिन्हा साहब। हौसला रखिए और इस तरह एक हफ्ता गुजर गया।

आज रोशनी की आँखों की पट्टी खुलनेवाली थी। पापा को कुर्सी पर बिठा दिया गया था। रोशनी ने यही तो तमन्ना की थी कि वो कुछ पलों के लिए पापा को देख सके। पापा के हाथों में मिठाई का डब्बा था। जब पट्टी खुली। सबसे पहले रोशनी की तस्वीर लायी गयी सामने। तो रोशनी ने कहा, ये कौन है डॉक्टर? ये तुम हो रोशनी। क्या मैं ऐसी हूँ? हाँ रोशनी तुम ऐसी ही हो। पापा! मेरे पापा कैसे हैं? वो भी यहीं है रोशनी। पापा यहाँ आओ। आज मैं तुम्हें बहुत करीब से देखना चाहती हूँ, रोशनी ने कहा। पापा करीब आये तो लड़खड़ा रहे थे। उन्हें दिख जो नहीं रहा था। रोशनी ने कहा पापा, ये आपको क्या हो रहा है? पापा आप लड़खड़ा क्यों रहे हैं? तो पापा ने कहा, खुशी से पागल हो रहा हूँ बेटे। तभी रोशनी ने पापा का हाथ पकड़ लिया और कहा पापा मैं आपको सहारा दूँगी। तभी उसकी आँखों की रोशनी चली गयी। तो उसने डाक्टर से कहा, ये अँधेरा क्यों हो गया कमरे में डॉक्टर? तो डॉक्टर ने कहा, बिजली चली गयी और रात का वक्त है बेटी। तो रोशनी ने कहा, पापा कोई बात नहीं। सुबह हम यहाँ से साथ-साथ चलेंगे तो पापा ने कहा, बेटे मैं तुम्हारे लिये मिठाई लाया था। ये लो खा लो। मंदिर से लाया हूँ। भगवान का प्रसाद है बेटे। रोशनी ने मिठाई का डब्बा पापा के हाथों से लिया और कहा, ये लो पापा मैंने मिठाई खा ली। अब आप भी खा लो। पापा भी मिठाई खाने लगे और खाते-खाते गिर पड़े। रोशनी हाथ में मिठाई का डब्बा पकड़े रही और कहा, पापा मुझे कुछ हो रहा है। पापा ये कैसा प्रसाद था पापा? तुम गिर क्यों गये पापा? इतना कह वो भी गिर पड़ी और मर गयी। सभी अचम्भे में थे कि इस मिठाई में आखिर क्या था? शायद जहर। वो बोले, रोशनी ये आँखें इतनी ही कुर्बानियाँ लेती है बेटे और कमरे की बत्ती जला दी।

सुबह

रात हो गयी अम्मा, हरामी लाला बाबू आता ही होगा, आज दरवाजा मत खोलना। सुभद्रा ने अपनी अम्मा से कहा मगर भूखी अम्मा तो कब से रोटी की राह देख रही थी। रात के पहले प्रहर में द्वार का पर्दा सरकाना चाहा अम्मा ने। सुभद्रा ने टोका, माँ ऐसी रोटी हमें नहीं चाहिए। रात के दूसरे प्रहर में कुंडी सरकानी चाही अम्मा ने। सुभद्रा ने फिर टोका, ऐसी रोटी हम जैसे गरीबों को तन उघारने पर मजबूर कर देती है माँ, मत सरका कुंडी। और रात के तीसरे प्रहर में अम्मा ने किवाड़ का पट खोलना चाहा तो सुभद्रा ने कहा, कुछ तो भ्रम बना रहने दे आबरू का माँ और एक किस्सा सुनाने बैठ गयी। एक बार जब एक गड़ेरिये को सर्दी लग रही थी न माँ तो वो चादर तलाश रहा था। मगर उसके पास चादर नहीं था वो सोचने लगा, अब तो मौत निश्चित है और अलाव ही जलाकर बैठ गया। अलाव की गर्मी ने उसे थोड़े पल की राहत भी दी मगर वो अलाव के साथ सोता कैसे, सोच में डूब गया। रात गहरी हो गयी। अब तो बैठे-बैठे कमर भी टेढ़ी हो गयी। सोचा अगर सो न सका तो सुबह भेड़ों को चराने कैसे ले जाऊँगा। ये बात जेहन में आते ही वो सोने को तड़प उठा। मगर वो सोता कैसे? सर्दी से बचने को तो उसके पास एक भी सामान नहीं था और न ही ठंड से बचने को कपड़े थे। बेचारा गड़ेरिया विवश हो आग के पास बैठ गया दोबारा और सोचने लगा। मैं तो विवश हो गया जागने को। तो उसके दिल से आवाज आयी। बेबसी को दूर करने का सामान तुम्हारे पास मौजूद है। तुम चाहो तो उससे अपनी बेबसी दूर कर सकते हो। तब गड़ेरिया बोला, वो सामान मुझे मिलेगा कहाँ? तो फिर उसकी आत्मा ने उससे कहा, तलाश करो तुम्हारे ही पास पड़ा है। मगर उसकी समझ में एक भी बात न आ सकी और वो एक बार फिर आग के पास जाके बैठ गया। थोड़े पल के लिए उसे लगा भी कि अगर सर्दी से बचने का सामान न तलाशा मैंने तो मेरी मौत निश्चित है। ये अलाव कितनी देर तक गर्मी दे पायेगी मुझे। ऐसा सोच वो किसी गहरी सोच में डूब गया और सर्दी की काली रात गुजरती रही आहिस्ता-आहिस्ता। सुबह होने में अभी भी काफी वक्त बाकी था कि वो बेचारा गड़ेरिया अपनी आत्मा के बताये हुए सामान को तलाशने निकल पड़ा। कहीं घास के मैदान मिले उसे, कहीं पानी के रेले, कहीं उँची-ऊँची ईमारतें मिली उसे, कहीं सड़क पे पड़े भिखमंगे जो कि खुद सर्दी में ठिठुर जम से गये थे। ये सब मिले उसे मगर अपने लिए तन ढँकने का सामान न मिल सका। रात थी कि गुजरती ही जा रही थी और ठंड थी कि बढ़ती ही जा रही थी। एक जगह एक रेशे पे नजर गयी उसकी। ये भेड़ों के जिस्मों के रेशे थे जिससे वो चाहता तो गर्म कपड़े का बन्दोबस्त कर सकता था। पहले तो उसने हजार बार सोचा फिर हिम्मत कर भेड़ों के पास गया। मगर उस अनबोलते जीव के जिस्म से रेशे उससे उखाड़े नहीं गये। और वो एक बार फिर अलाव के पास बैठ गया। ठंड से बचने का कोई सामान इकट्ठा न कर सका था वो। आखिरकार कमर तो टेढ़ी होनी ही थी। वो जमीन पर बैठा तो सुबह होने तक बैठा ही रह गया। और सुबह जब चमकीली धूप खिली तो सामने एक लाश पड़ी थी। जिसके हाथ-पाँव एक तरफ और कमर के सारे भाग एक तरफ टेढ़े-मेढ़े हो मुड़ से गये थे। सबने उसे देखा ओर उसकी तंगहाली पे हँस पड़े। मगर अम्मा हँस तो वो इन्सान रहे थे जो मालामाल थे। हम जैसा कोई इन्सान भला हँस सकता था गड़ेरिये की ईमानदारी

और उसकी बेबसी पर। अम्मा यही तो करते हैं हर रोज हम। गर्मी की तलाश में, सर्दी की ठिठुरती रात में हम लाला बाबू जैसे अनगिनत लोगों की साँसों की गर्मी महसूस करते हैं जबकि ये गर्मी हमे सर्दी से नहीं बचाती बल्कि जिस्म में कंपकंपी और बढ़ा देती है। मगर हम उस गड़ेरिये सा ईमानदार नही रह पाये माँ। अगर उसके जैसे नेक रास्ते पर चल के हमारी मौत भी हो जाती तो हमें ऐसे जीवन का सामना तो नहीं करना पड़ता। अम्मा हमें गड़ेरिये जैसा बनना चाहिए और ऐसा बन हम सुबह तक दिखा देंगे तुम्हें। तो उसकी अम्मा ने कहा, सुभद्रा ये थोड़े पलों का झूठा ढोंग मत कर। रात का आखिरी प्रहर आनेवाला है, मैं दरवाजा खोलकर देखती हूँ। तो सुभद्रा ने कहा, ठीक है अम्मा तू लाला बाबू की राह निहार। मैं मौत की राह निहारती हूँ क्योंकि गड़ेरिये की उस कहानी में कहीं-न-कहीं मैं छुपी जरूर थी अम्मा और ऐसा कह फाँसी पे लटक गयी। मगर उसकी अम्मा की भूख एक बार फिर से सुबह को भूल रात का इन्तजार करने लगी ताकि आज की आनेवाली रात में वो अपना चेहरा सुभद्रा के कफन में छुपा सके। न गड़ेरिये ने सुबह देखी थी, न सुभद्रा ने और रात की जो राह देखकर रात के गुजर जाने के बाद सुबह होने पर मातम मना रही थी वो थी भूखी बेगैरत अम्मा की भूख जिसको आज भी सुबह से ही नफरत थी।

तो क्या ऐसी सुबह का इन्तजार करना जरूरी था उसके लिए या उसकी पेट की ज्वाला के लिये शायद! कहकर रूक जाना ही पड़ता है।

बहू, देखना जरा दरवाजे पर पोस्टमैन खड़ा है अम्मीजान ने कहा। उनकी आवाज सुन नीलिमा बोली, अम्मीजान देखती हूँ और दरवाजे पर गयी। पोस्टमैन के हाथ से खत लिया। खत नासिर का था, नीलिमा के बचपन का दोस्त नासिर लिखा था–

नीलू

मैं तुम्हें आज भी उतना ही प्यार करता हूँ जितना कि कल करता था। पर आज किस्मत ने हमारी राहें बदल दी है। मैं आज ये कायनात छोड़ एक नये सफर पे जा रहा हूँ। तुम्हें तो पता ही है कि मैं बीमार हूँ। पर शायद तुम इस वक्त ये नहीं जानती होगी कि मैं मरनेवाला भी हूँ। तुम्हारी शादी को कई साल हो चुके हैं। अब तुम्हारे घर में एक नन्हा बच्चा भी खेल रहा होगा। मैं सब साफ-साफ देख रहा हूँ। मैं ये भी देख रहा हूँ कि कॉलेज के जमाने की नीलिमा अब ताहिर मियाँ के साथ बहुत ही खुश है। मैं भी तो यही चाहता था कि हमारी नीलू खुश रहे। तभी मैंने तुम्हारे प्यार की राह में कभी दीवार बनने की कोशिश नहीं की। पर नीलू, मैं तुम्हें कभी भूल भी न सका। आज जिन्दगी से एक साँस उधार माँग तुमसे दो बातें कर रहा हूँ। हो सके तो सुनना, नहीं तो खत दराज में छुपा देना। नीलू तुमने मेरा नाम, मेरा प्यार कितनी आसानी से भूला दिया। कभी सोचा कि जिस नासिर को तुम बीच सफर में छोड़ गयी हो वो नासिर कैसे जी रहा है? मैंने इन गुजरे सालों में तुम्हें कई हजार खत लिखे हैं, पर कभी पोस्ट नहीं किया। शायद ताहिर मियाँ की वजह से। तुमने तो अपना रास्ता इस तरह बदल लिया जैसे एक पत्थर हूँ मैं तुम्हारे रास्ते का। पर नीलू, मैं अपने आप को रास्ते का पत्थर नहीं, तुम्हारे कदमों की धूल मानता हूँ जिसे मैं अपने माथे पे लगा गर्व महसूस करूँगा। मुझे फख्र हो ये कहने में कि देखो ये मेरी नीलू के कदमों के निशान हैं। मगर शायद तुम अपने साथ वो निशान भी ले गयी नीलू जिसे एक सच्चा आशिक दिल से लगा लेता है। सोचो नीलू, आज अगर तुम मेरे पास होती तो मैं कितने मजे से जीता। मैंने तुम्हारे साथ बिताये क्षणों को इकट्ठा कर कई सपने देखे थे अपनी जिन्दगी के जिसमें बस तुम थी, मैं था तो ये ताहिर बीच में कहाँ से आ गया? नीलू! एक बात कहूँ, मुझे लगता है मेरी तरह तुम भी ताहिर के साथ खुश नहीं हो। तुम्हारे दिल के किसी कोने में कहीं-न-कहीं नासिर बैठा है, कदमों में सितारे लिये तुम्हारी माँग सजाने को। यही बातें कर रहा हूँ आज मैं तुमसे आखिरी बार। हो सके तो इस खत को मेरा आखिरी सलाम समझना नहीं तो ये कह फाड़ देना कि नासिर आज ही मर चुका और नीलू ये सच भी है। खत तुम तक पहुँचते-पहुँचते मेरी साँसे टूट जायेगी। मैं तुम्हारा जवाब पढ़ भी नहीं सकूँगा।

तुम्हारा नासिर

खत पढ़ते ही नीलिमा की आँखों में आँसू आ गये तो अम्मीजान ने कहा, किसका खत है बहू? तो नीलिमा बोली, मेरी एक सहेली का माँजी। उसका होनेवाला शौहर मर चुका है। परन्तु तू क्यों इतना उदास हो रही है? शौहर होनेवाला था न हुआ तो नहीं ना। नहीं अम्मीजान। तो ठीक है बेटे ये आँसू पोछ और जाके हाथ मुँह धो ले। ताहिर आता ही होगा। नीलिमा ने अम्मीजान के कहने पर अपने आप को फ्रेश किया और खत कहीं छुपा दिया। ताहिर मियाँ जब लौटे तो बीवी को उदास पाया तो बोले अम्मीजान! आपने नीलिमा को कुछ

कह दिया है क्या? ये बहुत उदास सी लग रही है। तो अम्मीजान ने कहा इसकी किसी सहेली का खत आया है बेटा। उसका होनेवाला शौहर मर गया है। ये तो बहुत बुरा हुआ अम्मी। फिर नीलिमा से बोला, नीलिमा मैं तुम्हारा दर्द समझता हूँ। पर तुम परेशान न हो। हम मिलकर दर्द बाँट लेंगे। हम चलेंगे उनकी मैय्यत में शामिल होने तो नीलिमा बोली नहीं ताहिर मियाँ उन्हें मरे तो हफ्ते भर हो चुके हैं। तो ठीक है। हम यूँ ही किसी दिन आपकी सहेली के घर मातम शरीक हो जायेंगे। अगर ऐसी बात है तो आज ही चलिए। मुझे अम्मी-अब्बू की भी बहुत याद आ रही है। ताहिर मियाँ झट राजी हो गये। दोनों ने वहाँ जाकर माँ-बाबूजी के पैर छूए और पूछा, अम्मीजान नासिर की मौत कैसे हुई? तो वो बोले, बीमार था बेचारा, मर गया। पता नहीं मरते वक्त वो किसे याद कर रहा था, ठीक से कोई समझ नहीं पाया। खुदा उसकी तड़पती रूह को करार दे।

तो नीलिमा हक्की-बक्की सी अपने अम्मी-अब्बू को देखने लगी। तो ताहिर मियाँ बोले अब्बूजान! हम इसी सिलसिले में आये थे। नीलिमा की सहेली ने नीलिमा को खत लिखा था कि उसके होने वाले शौहर नासिर की मौत हो गयी है। हाँ वो यही बता रही थी मुझे। ऐसा कह उन्होंने नीलिमा से नजरें मिलायी। उसने निगाहें नीची कर ली और दो दिन तक दोनों साथ रहे। मगर न अम्मी ने इसका राज जाना, न ताहिर मियाँ ने। मगर अब्बू जानते थे कि नीलू और नासिर कितने अच्छे दोस्त थे। दोनों के ताल्लुकात कितने पाक थे। दो दिन बाद ताहिर मियाँ ने उनसे इजाजत माँगी और जाने को हुए। बोले नीलिमा, तुम कुछ दिन रूक जाओ। मैं फिर तुम्हें लेने आ जाऊँगा। ऐसा कह चले गये। जाने से पहले एक बार पलटकर देखा नीलिमा को और हाथ हिला दिया। नीलिमा को ऐसा लग रहा था जैसे रोक ले ताहिर मियाँ को और कहे ताहिर, हमें भी साथ लेते चलो। मगर होंठ खामोश ही रह गये, बोल न पाये और ताहिर उसकी नजरों से ओझल होते चले गये। जब वो घर लौटे, अम्मी ने पूछा, आ गये बेटा। बहू नहीं आयी? उसे मैंने छोड़ दिया माँ! वो वहीं खुश थी। अच्छा किया बेटा, कुछ दिन तक अपने वालिद के घर रहेगी तो उसका मन बहल जायेगा। ताहिर मियाँ बोले, हाँ ठीक कहा आपने अम्मी मैं भी यही सोच उसे छोड़ आया हूँ। ऐसा कह अपने कमरे में चले गये और कपड़े बदलने के लिये जैसे ही अलमारी खोली खत जमीन पर जा गिरा। ताहिर साहब चौंके। ये खत तो नासिर का है फिर नीलिमा ने कैसे कहा कि खत उसकी किसी सहेली का है। खत उन्होंने पढ़ा। उनपे बिजली गिरी। वो नीलिमा से बहुत प्यार करते थे। उन्हें तो लग रहा था कि नीलिमा ने हमसे इतना बड़ा राज छुपाया कि खत नासिर का है और हम नासिर के मातम में शामिल होने जा रहे हैं। उनके दिल पे नासिर के खत के एक-एक शब्द हथौड़े चला रहे थे। वो इस सदमे को सह न सके और पागल से हो गये। वो पीने लगे और फिर एक दिन नीलू को खत लिखा।

नीलू

मैं आज तुम्हें नीलू पूकार रहा हूँ। पर शायद तुम सुन नहीं पा रही हो नीलू। इन लम्हों में मुझे तुम्हारी बहुत जरूरत है। पर तुम तो इतनी दूर बैठी हो। नीलू, मेरे कान में आज भी नासिर के कहे एक-एक शब्द गूँज रहे हैं जो उसने खत में लिखे हैं। वो मरने से

पहले भी तुम्हें याद कर रहा था नीलू। काश! तुमने मुझसे निकाह न किया होता। काश! तुम नासिर की हो गयी होती तो आज वो जिन्दा होता और तुम्हारे सामने खड़ा होकर कहता कि मैं तुम्हारे कदमों में चाँद-सितारे बिछा दूँगा। कलियों-फूलों से तुम्हारी माँग सजाऊँगा। हो सके तो मुझसे एक बार आके मिल लो। खत लिखने के बाद मैं जहर खा लूँगा।

तुम्हारा ताहिर

उधर नीलिमा के कानों में नासिर की आवाज गूँज रही थी कि वो आखिरी लम्हों में उसे ही पुकारता रहा। इधर ताहिर मियाँ ने जहर खा लिया। खत अम्मीजान ने नहीं देखा। समझी बेटा, पता नहीं क्यों बहू को इतना याद करता रहता है और आज जमीन पे ही सो गया। तभी उनके मुँह से निकला नीलू और सर एक ओर लुढ़क गया। अम्मी चीख पड़ी। नौकरों को बुलाया। मगर तबतक बहुत देर हो चुकी थी। प्यार का दीप बुझ चुका था। नीलू की साँसे थम सी गयी अम्मीजान ने जब ये पैगाम भेजा कि ताहिर की मौत हो चुकी है। नीलिमा दौड़ती-भागती आयी मगर तबतक तो मैय्यत भी सज चुकी थी। लोग ताहिर को कफन ओढ़ा चुके थे। तभी उसके कानों में फिर वो ही आवाज गूँजी नीलू! पता नहीं ये आवाज किसकी थी। नासिर की या ताहिर की या फिर उस खत की जिसने एक से जिन्दगी ही छीन ली तथा एक को तूफान में बहता छोड़ दिया।

माँ! रोहित भैया का फोन आया है। वो आज शाम को आ रहा है, आशा ने कहा। तो माँ बोली, रोहित आ रहा है, कब? आज शाम को। क्या? आज शाम को। मैं कह रही थी न कि रोहित आएगा आशा! तो आशा ने कहा, हाँ माँ। माँ ने रोहित के कमरे को अच्छी तरह साफ किया, उसकी पसंद का खाना बनाया और बैठ गयी दरवाजे पर। शाम होने को आयी। रोहित ने दस्तक दी दरवाजे पर। माँ ने दरवाजा खोला। आशा रोहित से लिपट गयी। माँ ने रोहित का माथा चूमा। तीनों घर के अंदर चले आये। माँ बोली, आशा! जरा रोहित के लिए बादाम का हलवा तो लाना। रोहित बेटा! ये लो बादाम का हलवा खाओ। मैंने खास तुम्हारे लिए बनाया है। आज अगर तेरे पिताजी जिन्दा होते तो शायद उनके मुँह में भी पानी आ जाता। तो आशा ने कहा, रोहित भैया! पानी तो मेरे मुँह में भी आ रहा है। तो रोहित हलवा उसके मुँह में भी डालते हुए बोला, ले खाले। पानी क्यों जाया करती है? ओठ सूख जाएँ तो चेहरे की रंगत फीकी पड़ जाती है। भैया! तुम भी ऐसी ही बातें करते हो। हाँ, इस बार ढेर सारी छुट्टियाँ लेकर आया हूँ। तेरी शादी के सपने हैं पलकों पे। कहो, आनन्द कैसा है? पता नहीं। चल हट पगली। तुझे पता नहीं। वो तेरा होनेवाला पति है ये तो पता है मुझे। तो आशा बोली, माँ देखो न भैया क्या बोल रहा है? तो माँ बोली, बिल्कुल ठीक कह रहा है। कौन सा आनन्द तेरे लिए सारी उम्र बैठा रहेगा? तो आशा बोली, तो आनन्द से कह दो माँ कि मैं भी उसके लिए सारी उम्र बैठने वाली नहीं। तो रोहित हँस पड़ा। मैं तो आजतक अपनी बहन के प्यार में खुद को कँवारा देख रहा हूँ। तो आशा ने कहा, अरे मैं तो भूल ही गयी भैया! तुमने शहर में लड़की पसंद की थी। कहो, बात कहाँ तक आगे बढ़ी। तो रोहित बोला, शादी तक आते-आते रूक सी गयी है। वो क्यों भैया? वो ठहरी नए जमाने की और हम हैं ओल्ड फैशन। बात बन नहीं रही। खैर छोड़ो आशा, हमारे गाँव में लड़कियों की कोई कमी नहीं। फिर बोला, माँ जरा पानी देना। तो माँ ने आशा से कहा, आशा बेटे! रोहित को जरा पानी देना। आशा जब पानी लाने गयी तो रोहित बोला माँ से कि माँ! आनन्द से बात की तुमने। मैं खास शादी के सिलसिले में आया हूँ। कौन जाने साँसे कब टूट जाए हमारी और आशा के सामने पूरी जिन्दगी पड़ी है। माँ, मैं कल सुबह आनन्द से बात करता हूँ। तो माँ बोली, बेटा बात कर ही ले। अब हम ज्यादा इन्तजार करना नहीं चाहते। आनन्द पढ़-लिख गया। कमाने भी लग गया है। हमारी आशा बहुत खुश रहेगी उसके साथ। तभी आशा पानी लेके आ गयी। मगर पहले ही घूँट में रोहित को पानी का स्वाद अच्छा नहीं लगा। बोला-पता नहीं इस पानी में कैसा टेस्ट आ रहा है। मेरी प्यास नहीं बुझ रही। पर क्यों बेटा? ये पानी तो पहले से पीता आया है तू। नहीं माँ आज नहीं पीया जा रहा। तो प्यासा रहेगा तू? कोई बात नहीं माँ। मैं जरा बाहर जाकर पानी पी लेता हूँ। शायद कहीं का पानी मुझे मीठा लगे। ये पानी तो बिल्कुल ही नमकीन है माँ। तो माँ हैरान होते हुए बोली, ठीक है बेटा! जैसी तेरी मर्जी। इस तरह रोहित बाहर चला गया पानी पीने। माँ से आशा ने कहा, माँ! भैया का तो टेस्ट बदल गया है, जरूर ये शराब पीने लगा है। तो माँ बोली, नहीं बेटी! बहुत दिनों बाद आया है न। इसलिए उसे हमारे घर का पानी पसंद नहीं। तो आशा बोली, शायद यही बात हो। फिर दरवाजे पे खड़ी हो रोहित का इन्तजार करने लगी। शाम, रात में बदल गयी। माँ

खाने के टेबल पर रोहित का इन्तजार करती सो गयी। आशा अपने कमरे में पड़ी-पड़ी आनन्द की तस्वीर देख रही थी। रोहित देर रात गये आया। देखा, माँ सो रही है तो जगाना नहीं चाहा माँ को और खाना खाकर सो गया। आशा और माँ की जब नीन्द खुली, वो दोनों अपने-अपने कमरे में सो रही थी। जब उन्हें रोहित का ख्याल आया बोली, आशा! रोहित ने खाना खाया रात को। तो आशा बोली वो कब आये माँ! रात को देर तक मैं उनका इन्तजार कर रही थी। तो रोहित के कमरे से आवाज आयी, मैं तो पहले से आ चुका था आशा! तुम दोनों को उल्लू बना रहा था। तो माँ बोली, चल हट मुझे बेवकूफ बनाता है अपनी माँ को। मैं तो तुम्हारी हर हरकत जानती हूँ। रात तू बाहर गया ही नहीं होगा। तो रोहित के चेहरे पे एकाएक खामोशी छा गयी। वो बुदबुदाया-माँ को कैसे पता चला कि मैं घर पे था। तभी आशा बोल पड़ी, खाना तो खत्म हो चुका माँ। भैया ने खाना खा लिया होगा रात में। चलो भैया जल्दी करो। उठो, मैं चाय बनाकर लाती हूँ। तो रोहित बोला, मैं पहले चाय पीऊँगा, फिर कोई और काम करूँगा। तभी माँ ने उसका हाथ पकड़ लिया बोली, बेटा रोहित! आनन्द के घर जाना है तुम्हें मैं तो चाहती हूँ शादी आज ही पक्की कर लो। हमारे सर से फिक्र हट जाएगी। हाँ, माँ। वक्त भी तो कम है हमारे पास। क्या कह रहे हो? कुछ नहीं माँ। मैं सोच रहा था कहीं हमारी बहन की पसन्द किसी और की पसन्द न बन जाय। तो माँ बोली, नहीं बेटा! आनन्द के पिता ने हमारी आशा को शगुन का कंगन पहना दिया है। वो उसे बहू मान चुके हैं बेटा। देर अब हमारी ही तरफ से है। तो रोहित बोला ठीक है माँ! देर अब नहीं होगी। रोहित उठा, बाथरूम गया और हाथ-मुँह धो वापस आ गया। माँ ने रोहित के लिए नाश्ता लगाया। रोहित एक पूरी उठाते हुए बोला, मैं चलता हूँ माँ! शाम होने से पहले आ जाऊँगा। माँ आज बहुत खुश थी। आशा, मन-ही-मन आनन्द को याद कर उसके सपने देखने लगी थी। आखिरकार शाम हुई। रोहित हँसता हुआ घर आया। माँ से बोला, माँ! शादी पक्की हो गयी। अब जल्दी से आशा के लिए दुल्हन का जोड़ा लेने शहर जाऊँगा मैं। तो माँ ने कहा, उसकी जरूरत नहीं बेटे। तेरे पिता ने न जाने कब से दुल्हन का जोड़ा बनवा के रखा है। सच माँ! हाँ, बेटा!

इस तरह वो दिन भी आया, जब आशा दुल्हन बनी। बारात आयी। आनन्द सेहरा बाँधे आया। रोहित के सर पे पीले रंग को पगड़ी बड़ी प्यारी लग रही थी। माँ ने आनन्द की आरती उतारी। उसे अन्दर बुलाया। मण्डप पे बैठ रोहित रो रहा था। तो माँ ने कहा, क्यों रो रहा है बेटा? तो रोहित बोला, मैं आज आखिरी बार देख रहा हूँ माँ अपनी बहन को। पता नहीं फिर कभी मुलाकात होगी या नहीं भी? माँ, फिर भी समझ नहीं पायी। बोली, बेटा! शादी एक-न-एक दिन हर लड़की की होती है। तो क्या हुआ? अगर तुने आशा की विदाई कर दी? तो रोहित आशा के करीब जाते हुए बोला, आशा बहन! मैं आज से तेरी दुनिया से दूर बहुत दूर हो रहा हूँ। हो सके तो अपने इस भाई को भूल जाना। तो आशा रोहित के गले लग रो पड़ी। रोहित बड़ी मुश्किल से उसे छुड़ा पाया खुद से और रात बीत गयी। आनन्द के साथ आशा अपने घर चली गयी। तभी रोहित ने माँ से कहा, माँ! मैं शहर जा रहा हूँ। मेरा बुलावा आ गया है। अबकी बार आऊँगा तो तुम्हें भी लेता जाऊँगा। माँ रो पड़ी और राहित माँ के आँचल से दूर वीरानी में जाके सो गया। तभी दरवाजे पे एक गाड़ी रूकी। माँ

ने देखा, किसी की लाश को लोग बाहर निकाल रहे थे। माँ दौड़ पड़ी। बोली, ये लाश किसकी है? आपके बेटे की माँजी! जो एक ऍक्सिडैंट में मर चुका है। तो माँ बोली, ये आप क्या कह रहे हैं? मेरा बेटा तो अभी-अभी बहन की विदाई कर शहर गया है। क्या? वो लोग हैरान हो गये। पर ये लाश तो हमें कई रोज पहले की पड़ी मिली है। शायद, इसे मरे पन्द्रह दिन हो चुके हैं। माँ ने लाश से चादर उठाया और चीख पड़ी। लाश का चेहरा बिगड़ चुका था। मगर वो रोहित ही था। माँ सोचने लगी कि रोहित को पानी क्यों नहीं अच्छा लगता था? वो बार-बार बिछड़ने की बातें क्यों किया करता था? शायद हमारा रोहित बहुत पहले मर चुका था। ये तो उसकी परछाई हमसे आ मिली थी।

▭

पालिका तू कहाँ जा रही है इतनी सज-धजकर? ससुराल और कहाँ? तो हम खेलेंगे किसके साथ? राघव हम वहाँ के फील्ड में खेलेंगे। हम अकेले थोड़े ही जा रहे हैं। माँ ने कहा है, वहाँ भी तुम सब मेरे साथ चलोगे। पर कैसे पालिका? तुम्हारी ससुराल तो बहुत दूर होगी न? नहीं रे राघव! वहाँ के फील्ड के रास्ते यहीं से होकर तो जाते हैं। ये देखो मेरी ससुराल का मकान इस फोटो में यहाँ पर है। पर पालिका, ये तो किसी गाँव का नक्शा लगता है। हाँ राघव! ये मेरे ही गाँव का नक्शा है जहाँ मुझे जाना है। तू फिक्र क्यों करता है? कहना सारे दोस्तों से कि पल्लो का घर जरा दूर हो गया है। उसे आने में वक्त लगेगा। मगर पालिका! वो मानेंगे तब न। मान जायेंगे राघव। नहीं पालिका मत जा। हमने सुना है जहाँ तू ब्याहकर जा रही है वहाँ के लोग लठैत होते है। जरा सी बात पर नाराज हो मार डालते हैं किसी को। क्या कहा तुमने राघव? वहाँ के लोग मुझे भी मार डालेंगे जरा सी बात पर। पता नहीं पालिका! मगर जो सच था वही तो कहा मैंने। राघव! अच्छा किया जो तूने बता दिया। मैं तो पता नहीं कितने दिनों से वहाँ जाने से डर रही थी। मगर माँ ने ही मुझे उल्टे-सीधे किस्से सुना दिये थे उस गाँव के बारे में। राघव! तू चल। मैं बीच रास्ते में डोली से कूद तेरे साथ भाग जाऊँगी। मगर पालिका! कहारों ने तुम्हे देख लिया तो? तो क्या? मैं उनसे तेज भाग जाऊँगी। तो ठीक है पालिका! मैं बाकी बच्चों के साथ तुम्हारी राह देखता हूँ। ठीक है राघव! तो फिर मैं डोली में बैठने जाती हूँ। तुम रास्ते में सीटी बजाना और ऐसा कह माँ के पास गयी। माँ, मेरी विदाई कब है? मुझे ससुराल कब जाना है? शाम को पाँच बजे। मगर माँ! तुमने तो कहा था कि अभी जाना है। कहा था, मगर दूल्हे राजा जरा आराम करना चाहते हैं। नहीं, उनसे कहो कि जल्दी करें। मुझे अभी जाना है। बेटी तू कैसी बातें कर रही है? मेहमानों में से किसी ने अगर सुन लिया तो क्या कहेंगे? क्या कहेंगे, मैंने कब कहा था तुमसे कि उन्हें बुलाओ? चलो हटो, मैं खेलने जाती हूँ। मेरे दोस्त इन्तजार कर रहे होंगे। क्या तू आज के दिन खेलने जाएगी? नहीं पालिका, तू कल खेल लेना जब डोली उस गाँव में रूकेगी। किस गाँव में माँ? पालिका तेरी ससुराल में बेटी! माँ, ये बेटियाँ ससुराल क्यों चली जाती है? रीत है जिन्दगी की ये बेटी। मगर माँ खेलना मेरा शौक है। तो फिर जा, कुछ देर के लिए राघव को बुला ला और खेल यहीं। यहाँ कहाँ जगह है माँ! जरा जल्दी कर न माँ। हम राघव के साथ कल सुबह खेलने जाएँगे। जब हम ससुराल से होके वापस आ जायेंगे। तब माँ मन-ही-मन बुदबुदाई, बेटी अब खेल किसके साथ खेलेगी तू। तू वहाँ की बहू है। ससुराल है वो तेरी। ससुराल में सर से पल्लू तो सरकाया ही नहीं जाता पालिका और तू खेलने की बात कर रही है। किस सोच में डूब गयी माँ? शाम होने ही वाली है। जल्दी से मुझे पानी पीला दे, प्यास लगी है मुझे। मुझे भागकर जाना भी तो है। अगर प्यास लग गयी रास्ते में तो। तू वहाँ से भाग पायेगी बेटी? रास्ते में तो पहरे बिठे होंगे तेरे नाम के। तो क्या हुआ माँ? मैं डोली से कूद तेज-तेज दौड़ूँगी और ऐसा कह माँ से लिपट रो पड़ी। माँ, ये घर किसके लिए बनाया था बाबा ने? जब मैं ही न रहूँगी तो किसके नाम की ज्योत जलेगी यहाँ। अँधेरा हो जाएगा इस घर में माँ। हाँ पालिका, अँधेरा ही हो जायेगा इस घर में। फिर बोली, अच्छा बेटी। नीचे से कोई आवाज दे रहा है हमें। शायद डोली आ गयी। क्या डोली आ गयी? तब तो जल्दी ही विदाई होगी हमारी। वो हँसने लगी और जाकर खिड़की से झाँकने लगी। राघव! मैं आ जाऊँगी। तुम मेरा इन्तजार जरूर करना। मगर राघव तो सुबह से दोपहर की चिलचिलाती धूप में बैठा-बैठा बेहोश हो गया था। उसके दोस्त जो साथ थे, पानी लाने चले

गये थे। जब डोली उस रास्ते से गुजरी, राघव ने सीटी ही नहीं बजायी और पालिका को भी नीन्द आ गयी। पर्दे के पीछे के अँधेरे ने उसके चेहरे को ढँक जो दिया था। जब डोली रूकी शोर-शराबे के माहौल ने जगाया उसे। कोई कह रहा था कि दुल्हनिया उठ। तेरी ससुराल आ गयी। वो रोने लगी। मेरी ससुराल आ गयी। ये लठैतों की बस्ती में आ गयी मैं। राघव कहाँ रह गया? यहाँ के लोग तो जरा-जरा सी बात पर मार डालते हैं उससे नाराज होकर। फिर किसी ने कहा, दुल्हनिया! उतरो किस सोच में डूबी हो? कुछ नहीं और उतर गयी। जब उसे घर के अन्दर ले जाया जाने लगा, वो चीख पड़ी कि राघव! मैं यहाँ नहीं रहूँगी। ये लठैतो का गाँव है। ये एक छोटा सा घर है जहाँ मेरा दम घुट जाएगा। राघव! यहाँ कोई रास्ता भी नही जो फील्ड की तरफ जाता हो। राघव! मैं क्या करूँ? मगर राघव तो वहाँ था ही नहीं। सबने उसे अन्दर ले जाकर एक कमरे में बिठा दिया। जब रात घिर आयी, पालिका रोने लगी। मुझे अपने घर वापस जाना है। नहीं रहना मुझे यहाँ तुम लोगों के साथ। ये घर तो पराया है। मेरा घर तो बहुत बड़ा था। वहाँ कई दोस्त रहते थे जिनके साथ मैं खेलती थी। बहू! वो घर मायका था तुम्हारा और ये घर ससुराल है। यहाँ ऐसी बातें नहीं करते लोग। तब पालिका उनसे लिपट फिर कहने लगी, सुबह मैं अपने घर वापस जाऊँगी न? हाँ, बेटी सुबह होगी तब तो। अब जाकर सो जा। जाने कब वहाँ से तुम्हारे पिता आ जायें तुम्हें लेने। ठीक है। मगर जब मैं सो जाऊँ, मुझे जगाना जरूर और ऐसा कह सो गयी। सुबह हुई। दोपहर भी ढली। मगर पालिका के घर से कोई उसे लिवाने नहीं आया। पालिका की आँखें खिड़की के रास्ते को तकती रह गयी। राघव किसके साथ खेलता होगा अब? मैं तो यहाँ कैद हो गयी। डोली क्या उस रास्ते से नहीं गुजरी जिस रास्ते पे राघव खड़ा था जो राघव ने आते-जाते मुझे नहीं देखा। फिर दो दिन, चार दिन बीतते चले गये। एक भी दिन उसके चैन से नहीं कट रहे थे। अब उसे घर के सारे काम करने पड़ते थे। जो लोग पहले दिन उतने प्यार से बोलते थे, वो अब जरा-जरा सी बात पर नाराज होने लगे थे। दरवाजा किस तरफ है, ये भी नहीं जानती थी वो और अनजान रास्ते से होकर जाने का उसका इरादा भी नहीं था। अगर भाग जाती तो डरती थी कहीं राह में खो न जाये और अगर इन लठैतों ने मुझे देख लिया तो मार डालेंगे। यही सोचती, मन को मसोसती रह गयी पालिका। एक रोज खिड़की से जब वो झाँक रही थी, सामने उसके पिता आते दिखाई दिये उसे। वो दौड़ पड़ी। मेरे बाबा आ गये मुझे बुलाने। मगर सास ने उसे अन्दर जाने को कहा और वो सर पे पल्लू रख अन्दर चली गयी। जब वो आये, पालिका ने शर्बत बनाया। पी लेने के बाद उन्होंने कहा कि पालिका बेटी, तेरा जी लग गया न? अब तुम्हें कोई तकलीफ तो नही। मगर बाबा, आप मुझे लेने आये हो न? नहीं बेटी, दामाद बाबू ने कहा है कि वो दो-तीन महीने बाद तुम्हें लेकर शहर चले जाएँगें तभी हमसे मिलवाने लायेंगे तुम्हें गाँव। मगर बाबा, माँ! वो कैसी है? अच्छी है। तुम्हारे लिए मिठाई भेजी है उसने। पालिका ने आहिस्ता से उनके हाथ से मिठाई का डब्बा लिया और अन्दर चली गयी और कहा कि बाबा! ये मिठाई माँ ने दी है तो रख लेती हूँ। मगर माँ से मेरी एक बात जरूर कहना कि पालिका अब जवान हो गयी। उसे मिठाई की नहीं, शगुन के थाल की जरूरत है क्योंकि वो अब माँ बननेवाली है। ऐसा कह फफक कर रो पड़ी। खेल-खिलौने यहीं तक के थे। राघव का साथ भी छूट गया था और माँ के इन्तजार की घड़ियाँ भी सिमटने लगी थी अब क्योंकि बेटी अब पूरी तरह ससुराल की हो गयी थी।

रोहित के कानों में आज भी राधिका की आवाज गूँज रही है। भैया, भैया! शहर से मेरे लिए एक दुल्हन का जोड़ा लेते आना। मैं अपनी गुड़िया की शादी रचाऊँगी। रोहित कहता, हमारी राधिका गुड़िया की शादी रचाएगी। इससे पहले मैं शहर से एक गुड्डा लेता आऊँगा जिससे अपनी बहन की शादी करूँगा। राधिका तब नाराज हो जाती, जाओ भैया मैं तुमसे बात नहीं करती। क्यों भाई? मैंने गलत कह दिया। हाँ बिल्कुल गलत कह दिया। पहले भाभी तो लाओ घर में। है न पापा। हाँ बेटे! तुमने बिल्कुल ठीक कहा। पहले बहू आ जाए तो मैं इस घर को फूलों से सजाऊँ। तब रोहित ने कहा था, पापा! मैं शादी नहीं करना चाहता। पता नहीं कैसी बहू आए आपके घर में? मैं अपनी बहन के प्यार को बाँटना नहीं चाहता। तो पापा ने कहा था, ये प्यार बाँटा ही जाता है बेटे। बाँटने से प्यार कम नहीं होता। फिर एक दिन रोहित ने राधिका के लिए एक भाभी लायी घर में। पापा ने बहू की मुँहदिखाई की रश्म में राधिका को देते हुए कहा था, बहू ये हमारी नन्हीं बेटी राधिका है। इसे हमने सदा पलकों पे बिठाके रखा है। बहुत प्यार दिया है हमने अपनी राधिका को। हो सके तो तुम भी इसे अपनी बेटी की तरह ही प्यार करना। तब बहू ने कुछ नहीं कहा था और रोहित राधिका का हाथ पकड़कर अन्दर चला गया था। रात में सीमा ने रोहित से कहा था, ये बहनें बेटी भी बन सकती है। ये आज ही जाना मैंने। तो रोहित हैरान होते हुए बोला था, ये तुम क्या कह रही हो सीमा? राधिका हमसे कई साल छोटी है। वो बच्ची है हमारी नजर में। मैंने उसे अपनी गोद में खिलाया है। तो सीमा ने कहा, कल को जब हमारे बच्चे हो जाएँगे तो हम इसे ही अपनी बेटी समझते रहेंगे क्या? हाँ सीमा! मैं बच्चे को आने ही नहीं दूँगा इस घर में और फिर एक दिन रोहित ने सीमा से छुपाकर अपना ऑपरेशन करवा लिया। वो अपनी राधा के प्यार को अपने बच्चे में भी बाँटना नहीं चाहता था।

इस तरह दिन बीतते रहे। एक रोज सीमा की माँ आयी, सीमा से मिलने। रोहित घर पर नहीं था। राधिका ने कहा, क्यों सासू माँ कहाँ चली आ रही हो? तुम्हारा दामाद नहीं है घर में। फिर किसी दिन आना। तब सीमा की माँ ने गुस्से से आँखें लाल करते हुए कहा कि बड़ी जुबान चलाती है तू। मैं तेरी जुबान खींच लूँगी। तो राधिका ने कहा, जुबान मैं तेरी भी खींच लूँगी बुढ़िया। जरा मेरे बराबर खड़ी होके तो देख। तभी सीमा आ गयी, बोली राधिका! बड़ों से ऐसी बातें करते हैं। तुम्हें शर्म नहीं आती ऐसी बातें करते हुए? तो राधिका ने कहा, तुम्हारी माँ कौन सा शरमा रही थी भाभी मुझसे ऐसी बातें करके। तब सीमा ने राधिका के गाल पर एक थप्पड़ मारा था। राधिका चीख पड़ी, भाभी! ये तुमने अच्छा नहीं किया और रोते हुए कहा, भैया! जल्दी आओ, भाभी ने मुझे मारा। शाम को रोहित जब घर लौटा, देखा राधिका चुपचाप खामोश बैठी है तो बोला, राधिका पापा कहाँ हैं? पता नहीं, भाभी ने मुझे मारा। क्या? सीमा ने तुम्हें मारा। हाँ भैया, वो भी उस बुढ़िया की खातिर। कौन बुढ़िया? उसकी माँ। रोहित सीमा के पास गया। राधिका क्या कह रही है सीमा? बिल्कुल ठीक कह रही है। मेरी माँ आयी थी। इसने मेरी माँ को गाली दी। मैंने उसे मारा। हाँ, मैंने उसे मारा क्योंकि सारी दुनिया मुझे बाँझ कहती है। मुझे तुम्हारा बच्चा चाहिए। हमारा बच्चा चाहिए। तुम इस शीशे से दिल बहलाते रहो। मैं इसे अपने सर पे सजा नहीं सकती। मैं इसे

तोड़ भी नहीं सकती क्योंकि इसे तोड़ने से मेरे ही हाथ लहूलुहान होंगे और तुम ये कभी नहीं चाहोगे रोहित। रोहित चीख पड़ा।

इस नन्हीं सी बच्ची ने दो बातें क्या कह दी सीमा, तुम इससे घृणा करने लगी। अरे, ये हमारे घर का चिराग है। इससे ही हमारा घर रौशन होता है। अगर तुने इसे बुझाना चाहा तो पूरे घर में अँधेरा छा जाएगा। सीमा ने गुस्से में दरवाजा बन्द कर लिया। पापा जब लौटे राधिका से पूछा, भाभी कहाँ है बेटे? रोहित आया कि नहीं। तो राधिका ने कहा, भाभी कमरे में बन्द है पापा। भैया आ गया है। पापा, भाभी ने मुझे मारा। तो पापा बोले क्यों मारा? उस बुढ़िया ने भाभी के कान भरे हैं पापा। कहा सारी दुनिया तुम्हें बाँझ कहती है और दामाद जी बच्चा नहीं चाहते। तो पापा ने कहा, अभी शादी के कितने दिन हुए है जो समधन बच्चा चाहने लगी तो रोहित ने कहा, चाहने दो पापा! इस घर में न कल कोई बच्चा आयेगा, न आज। राधिका हमारी बेटी, हमारी लख्तेजिगर है। इसे छोड़ हम कहीं और दिल लगा नहीं सकते। तो पापा ने कहा, बात ठीक है बेटे पर कोई औरत पराये बच्चे को अपना नहीं मान सकती। राधिका तुम्हारी बहन है, बहू की नहीं। तो रोहित रोते हुए बोला, मैं राधिका के बगैर नहीं जी सकूँगा पापा। तभी सीमा ने दरवाजा खोला और बोली, रोहित! मैं माँ के घर जा रही हूँ। अब कभी मेरे घर मत आना मुझे लेने। रोहित कुछ नहीं बोला। सीमा चली भी गयी। पापा ने रोकना तो चाहा, मगर खामोश रह गये। सीमा के जाने के बाद तीनों एक ही कमरे में बैठकर बातें करने लगे। बातों-बातों में राधिका को नीन्द आ गयी। तो रोहित बोला, पापा! राधिका अब हमारे प्यार को ज्यादा नहीं समझ पाती। कहीं ये बीमार तो नहीं। ये हर वक्त कहती है, भाभी बुरी है। कहीं सीमा से दिल-ही-दिल में नफरत तो नहीं करती। हो सकता है ये सोचती होगी, भैया किसी और को ले आया घर में। तो पापा ने कहा, हो सकता है रोहित! बिन माँ की बच्ची है न। राधिका तो हमारे सिवा कहीं और गयी भी नहीं। जब हमने इसे सड़क से उठा के लाया था, ये बिल्कुल खामोश दिख रही थी हमें। मगर पापा! सीमा भी तो शायद राधिका को गैर समझ ऐसा बर्ताब करती है उससे। नहीं रोहित, सीमा को ये सब किसने बताया होगा। शायद पास-पड़ोस वालों ने। हाँ, बेटे! यही ठीक कहा तुमने। तभी राधिका के ओठों से आवाज आयी, भैया! भाभी ने मुझे मारा। रोहित रो पड़ा पापा! हमारी राधिका, बिल्कुल पाकदिल है। ये किसी से नफरत नहीं कर सकती। मैं एक बार सीमा से पूछना चाहता हूँ कि हमारी राधिका तुम्हें क्यों नहीं पसन्द है? तुम्हें मेरा साथ चाहिए कि नहीं? पापा ने कहा तुम जन्म-जन्म के साथी बने हो रोहित। हो सकता है सीमा तुम्हारी बात मान ले। तो रोहित बोला ठीक है पापा, मैं सुबह जाता हूँ सीमा को लेने। सुबह जब राधिका की आँखें खुली तो उसने पूछा, पापा! भैया कहाँ है? तो पापा ने कहा, तुम्हारा भैया भाभी को लाने गया है। तो राधिका ने नाराज होते हुए कहा पापा! ये आपने अच्छा नहीं किया। उस चुड़ैल को मैं अपने घर में देखना नहीं चाहती। मैं उसके साथ नहीं रहूँगी। तो पापा ने राधिका को मनाते हुए कहा, वो तुम्हारी गुड़िया के लिए शहर से दुल्हन का जोड़ा ला देगी। सच पापा! हाँ बेटे! तो ठीक है, भाभी को आने दो। भैया ने मुझे आज तक दुल्हन का जोड़ा लाकर नहीं दिया। आते ही भाभी से माँग लूँगी। पापा भी रो पड़े। हमारी राधिका आज तक

बच्ची ही है। रोहित जब सीमा को लेकर लौटा राधिका दौड़ पड़ी। भाभी! मेरे लिए दुल्हन का जोड़ा ला दोगी न? सीमा ने मुँह फेर लिया। तो रोहित ने कहा, राधिका! मैंने तुमसे वादा किया है न, कि मैं तुम्हें दुल्हन का जोड़ा ला दूँगा। तो राधिका नाराज होते हुए बोली कितने दिन से कह रहे हो भैया! भाभी के लिए तो हजार जोड़े लाए। पता नहीं कितने-कितने पैसे की होगी। मेरे लिए एक भी नहीं। ला दूँगा मैं अपनी बहन के लिए भी हजार जोड़े ला दूँगा। पहले हमारी बहन जवान तो हो। तो राधिका ने कहा, आज ही जोड़ा ला दो न भैया! मैं जवान हो जाती हूँ। इतनी बातें हुई मगर ननद-भाभी की ये रंजिशें खत्म नहीं हुई। सीमा अपनी माँ के घर से जहर ले आयी थी। उसे राधिका से इतनी नफरत थी कि वो ये भी भूल गयी कि रोहित जी नहीं सकेगा राधिका के बगैर। उसने एक दिन रोहित के बाहर जाते ही राधिका से कहा, राधिका! जरा इधर आना तो। देखो तो मैं क्या लायी हूँ माँ के घर से तुम्हारे लिए। क्या है भाभी? ये मोतीचूर के लड्डू। इसे खा तुम जल्दी से जवान हो जाओगी फिर तुम्हारे भैया जल्दी से तुम्हारे लिए दुल्हन का जोड़ा ला देंगे। सच भाभी! लाओ, खा लेती हूँ। इतना कह राधिका ने एक नहीं, दो नहीं, पूरे चार लड्डू खा लिये। मगर तुरन्त बोली, भाभी! मेरे पेट में दर्द होने लगा। तो सीमा बोली कोई बात नहीं, तुम सो जाओ। भैया आयेंगे तो दवाई लाने को कह दूँगी। इतना कह सीमा ने राधिका को सुला दिया। जब राधिका सो गयी तो पापा ने पूछा, बहू! आज राधिका जल्दी सो गयी। क्या बातें हो रही थी तुम दोनों में? लगता है राधिका मान गई। हाँ, पापा! राधिका बड़ी प्यारी बच्ची है। जल्दी मान जाती है। इतना कह किचेन में चली गयी। शाम को जब रोहित लौटा, पूछा सीमा से कि राधिका कहाँ है? तो उसने कहा सो रही है। सीमा जरा जगाओ तो! देखो आज मैं उसके लिए दुल्हन का जोड़ा ले आया हूँ। खुद ही जगा लो, सीमा ने कहा। रोहित राधिका को जगाने गया। मगर वो जाग ही नहीं रही थी तो रोहित हँसते हुए बोला, सीमा! जरा पानी लाना। राधिका जाग नहीं रही। जाग नहीं रही तो मुझे क्या कहते हो? अब रोहित चीख पड़ा राधिका! पापा भी दौड़ते हुए आये। देखा राधिका बेहोश पड़ी है। वो दोनों उसे डॉक्टर के पास लेके गये। डॉक्टर ने कहा मुझे अफसोस है रोहित! ये मर चुकी। किसी ने इसे जहर दे दिया है। रोहित राधिका की लाश को कांधे पे उठा ला रहा था। आवाजें आ रही थी भैया! मेरे लिए शहर से दुल्हन का जोड़ा लेते आना।

खामोशियाँ

किसी के दिल की आवाज जब दूर से जाकर लौट आती है तो सोच में पड़ जाते हैं हम और एक बार फिर खामोशियाँ बोलने लगती है। पूजा को ऐसी ही एक आवाज वादियों में गूँजती सुनायी देती है, खामोशी की आवाज। एक रात पूजा जब सो रही थी किसी ने पुकारा उसे, पूजा! वो चौंकी और तभी जोर की आँधी आयी। कमरे की बत्ती बुझ गयी। अँधेरा छा गया। तभी पूजा के सामने एक नौजवान आकर खड़ा हो गया और बोला, पूजा! मुझे पहचाना मैं कौन हूँ। नहीं, पूजा ने कहा। तो वो बोला, मैं एक सदी से तुम्हारी राह देख रहा हूँ। तुम आज भी मुझे नहीं पहचान रही। नहीं। डरो मत पूजा। इतना कह लेने के बाद वो नौजवान पूजा के सामने से चला गया। पूजा को नींद आ गयी। पूजा ने जब सुबह उठकर आईने में अपना चेहरा देखा तो चौंकी, उसका चेहरा सादा हो चुका था। एक दुल्हन का चेहरा इतना सादा! न माँग में सिन्दूर, न माथे पे बिन्दिया। पूजा की बगल में बिस्तर पे गजरे रखे थे। पूजा मुस्करायी। तो जनाब रात को आये थे। मगर तभी माँ आ गयी। बोली, बहू। निखिल का फोन आया था। अभी महीने भर और लगेंगे उसे आने में। शहर में काम ज्यादा है। छुट्टी नहीं मिल रही। पूजा हैरान रह गयी कि ये फूल, ये गजरे किसने भेजे? मगर माँ को कुछ कहना चाहकर भी चुप रह गयी वो और नहा-धोकर तैयार हो गयी। पहले खाना बनाया, फिर माँ को बुलाया और बोली, माँजी मैं आज देर से लौटूँगी। खाना खा लेना। माँ ने पूछा, कहाँ जा रही हो बहू? तो पूजा ने कहा मन्दिर। आज पता नहीं क्यों मुझे देवी माँ के दर्शन करने का दिल कर रहा है। माँ बोली, निखिल का फोन आया तो? नही आयेगा माँ। ठीक है बहू जाओ। फोन आया भी तो कह दूँगी, बहू मन्दिर गयी है। पूजा ने थाल उठाया और मन्दिर चली गयी। जब लौटकर आयी तो देखा माँ घर में नहीं है। दरवाजा बाहर से बन्द है। वो दरवाजे पे बैठ माँ का इन्तजार करने लगी। तभी निखिल आ गया। पूजा को हैरानी हुई। वो बोली, निखिल तुम। धन्य है देवी माँ, जिन्होंने मेरी मनौती कबूल की। आज मेरा जन्मदिन है न। चलो तुम भी मेरे साथ देवी माँ के दर्शन को चलो, पूजा ने निखिल से कहा। निखिल बोला, पूजा मैं रात को ही आ गया था। माँ को मैंने ही मना किया था बताने से। मैं तुम्हें सरप्राईज देना चाहता था। चलो अन्दर। अन्दर जाकर पूजा ने देखा कि पूरा घर सजा है। तभी माँ आयी और बोली, बहू! निखिल कहाँ है? तो पूजा ने कहा, माँजी! वो तो अगले महीने आने को कह गये हैं न। मैं मजाक कर रही थी बहू। मैं भी तो मजाक ही कर रही हूँ माँ। तभी निखिल आया। बोला, माँ बहू को जन्मदिन की बधाई नहीं दोगी। तो माँ ने पूजा को सीने से लगा लिया। पूजा उनके कदमों में झुक गयी। उन्होंने उसे बहुत सारी बधाईयाँ दी। शाम को पार्टी रखी गयी। निखिल के सारे दोस्त आ गये। रातभर घर का माहौल सुहाना रहा। सुबह निखिल अपना सामान पैक करने लगा। तो माँ ने पूछा, क्यों रे कहाँ जा रहा है? तो निखिल बोला, जा रहा हूँ माँ। फिर आऊँगा। पूजा रो पड़ी और कहा, मुझे भी अपने साथ ले चलो न निखिल। तो निखिल ने कहा, माँ अकेली है न पूजा। मैं दो तीन महीने में तुम्हें और माँ को साथ लेता चलूँगा। पूजा ने कहा, ठीक है। माँ रो पड़ी, तू नहीं रहता हैं न रे तो ये घर वीरान हो जाता है। घर में बच्चे भी तो नहीं हैं। तभी पूजा के पेट में दर्द उठा। निखिल ने डॉक्टर को बुलाया। डॉक्टर ने कहा, पूजा माँ बननेवाली है। तो माँ ने पूजा की नजर उतारी और कहा,

रूक जा निखिल, आज बहू को तुम्हारी जरूरत है। मगर निखिल बोला, नहीं माँ। पूजा तुम ठीक से रहना। मैं चलता हूँ। ऐसा कह वो चला गया। पूजा को नींद आ गयी। जब सोकर उठी माँ ने पूछा, बहू कैसी तबीयत है तुम्हारी? तो पूजा ने कहा, ठीक हूँ माँ। शाम घिरने को आयी। रात होने वाली थी और पूजा चाँद को देख रही थी। आज चाँद जल्दी निकल आया था। पूजा ने चाँद से कहा, मेरा निखिल आया था। खामोश रातों से कहा कि मेरा निखिल आया था और जाकर कमरे में लेट गयी। तभी किसी नौजवान ने फिर आवाज दी उसे। पूजा पहचाना, मैं कौन हूँ? कमरे में अँधेरा छा गया। जोर की आँधी ने बत्ती बुझा दी। पूजा डर गयी तो वो नौजवान बोला, पूजा डरो मत। ये देखो, मैं तुम्हारे लिए क्या लाया हूँ? पूजा ने कमरे की बत्ती जलानी चाही। मगर किसी ने उसका हाथ रोक दिया और पूजा बिस्तर पे गिर पड़ी। पता नहीं फिर क्या हुआ। सुबह जब उसकी आँख खुली, देखा बिस्तर पे फूल बिछे हैं। कमरा ज्यों-का-त्यों दिख रहा है। उसे रात की घटना याद आयी तो आईने में अपना चेहरा देख आज फिर हैरान रह गयी। न माँग में सिन्दूर था, न माथे पे बिन्दिया। वो दुल्हन कम एक बेवा ज्यादा लग रही थी। उसने जल्दी से अपनी माँग भरी। तभी माँ कमरे के दरवाजे पे दस्तक देने लगी। पूजा ने कहा, अभी आती हूँ माँ। माँ बोली, बहू निखिल का फोन आया था। कह रहा था आज शाम को आ रहा हूँ तैयार रहना। पूजा बहुत खुश हुई और हैरान भी। फिर झटपट हाथ-मुँह धो खाना बनाया। माँ ने कहा, आज निखिल के आने के बाद ही खाना खायेंगे बेटी और सुन निखिल की पसन्द का ही खाना बनाना। पूजा ने खीर बनायी, समोसे बनाये, टमाटर की चटनी बनायी और वो सारी चीजें बनायी जो निखिल को पसन्द थी और बिस्तर सजाकर अपनी शादी की तस्वीरें देखने लगी। एलबम निकालते ही उसकी नजर एलबम के पहले पृष्ठ पे पड़ी जिसपे खून के छीटे बिखरे पड़े थे। पूजा ने माँ को नहीं बताया। झटपट अपने आँचल से पोछ दिया। माँ ने कहा, बहू कितने बजे? तो पूजा चौंकी। तभी किसी ने दस्तक दी दरवाजे पे। माँ ने दरवाजा खोला। सामने पुलिस की गाड़ी खड़ी थी। माँ ने पूछा क्या बात है? तभी पूजा आ गयी। उन्होंने कहा, निखिल आपका बेटा था? तो माँ बोली, हाँ क्या हुआ उसे? पुलिस वालों ने कहा, तीन महीने पहले उसकी मौत हो गयी थी। हम उसकी लाश ढूँढ रहे थे। आज मिली है, आप शिनाख्त कर दीजिए। ये सुन पूजा बेहोश होकर गिर पड़ी और माँ बोली, ये कैसी बातें कर रहे हैं आप इन्सपेक्टर साहब? मेरा निखिल तो अभी दो दिन पहले आया था पूजा के जन्मदिन पर। वो हमें लेने आने वाला था। आज सुबह ही उसका फोन आया था। वो शाम को आनेवाला था। पुलिस हैरान हो गयी और पूजा ने आखें मुन्द चाँद से कहा, मेरा निखिल आया था न? उसने रात से कहा, मेरा निखिल आया था न?

मगर उसके दिल के किसी कोने से एक ही आवाज आ रही थी खामोशी की आवाज जो चीख-चीख कह रही थी कि निखिल आज भी आयेगा। आज एक वर्ष बीत चुके हैं। पूजा पागलखाने में अपने निखिल का इन्तजार कर रही है। वो हर रात आता है और खामोशियाँ उसे लेकर गुजर जाती है।

माँ सोते से जाग गयी ये कहते हुए कि सुरजीत बेटा, तुझे ये क्या हो गया? तेरा जिस्म खून से लथपथ क्यों है? और बावरी बन दौड़ने लगी गली में। अरी ओ कमला! अरी ओ पारो! तेरे सुरजीत का जिस्म खून से लथपथ सड़क पे पड़ा है। हाय मेरा बेटा, मेरा सुरजीत। ऐसा कह दहाड़ मारकर रोने लगी। कमला बेटी जाके देख तो मेरे सुरजीत को। पारो बन्नो, तेरा सुरजीत कब से पड़ा है रे। बेटा, जरा जाके देख सड़क पे। तबतक बहुत सारे लोग माँ को घेरे हुए खड़े हो गये थे। माँ सबसे कह रही थी बिड़ला भैया, सलोनी दीदी सब देखो न मेरा सुरजीत जमीन पे पड़ा है। खून लगे हैं उसके हाथ-पाँव में। सब हैरान! सुरजीत तो कहीं नजर ही नहीं आ रहा। कहाँ है दीदी उसकी मृत देह? सबने पूछा तो माँ और रोने लगी। कमला बिटिया क्या तुझे विश्वास नहीं हो रहा? पारो बन्नो क्या तुझे भी विश्वास नहीं हो रहा? मेरा सुरजीत चला गया मुझे छोड़ के। अभी-अभी सुनी है मैंने उसकी अंतिम आवाज। वो कह रहा था अम्मा तुने रोटी पका रखी है न? मैं आ रहा था खाने को मगर रास्ते में ही मुझे नींद आ गयी। हाय रे मेरा सुरजीत! देखा था न बिड़ला भैया जब वो इतना सा था तब से गोद में खिलाया था उसे। सलोनी दीदी क्या तुम भूल गयी वो शरारतें करता चाची-चाची पुकारता आता था और तेरी पकायी सरसों की साग खा जाता था रोटी के साथ। सलोनी दीदी क्या तू भी भूल गयी आज मेरे सुरजीत को? तुम सब को क्या हो गया रे पागल? तेरा सुरजीत जो तेरे साथ खेला करता था वो सफर में बहुत दूर चला गया और तू है कि उसका ही इन्तजार कर रही है। कमला बिटिया! रोक इन बागों के महकते फूलों को, रोक इन हरे-भरे पौधों को, रोक इन मिट्टी के दरारों को जो तेरे सुरजीत को छुपाने चली है। पारो बन्नो! तू तो प्यार करती थी न सुरजीत से तो तेरा दिल कैसे पत्थर का हो गया? बिड़ला भैया, देखो तो सबके सब कैसे खड़े हैं खामोशी से। मेरी आवाज कोई नहीं सुन रहा। दीदी, तुम भी शायद उसकी आखिरी आवाज को सुनने से इनकार कर रही हो। कोई बात नहीं दीदी। मैं जाके थाल में रोटी सजा लाती हूँ। ये थाल से गायब होती है कि नहीं। मेरा बेटा रोटी खाने आता है कि नहीं। मैंने अभी-अभी सुनी है उसकी आवाज। कह रहा था वो, अम्मा! तेरे सुरजीत को बड़े-बड़े लोग तो मिल गये, शहरी नाम भी मिला, कमाई भी अच्छी हुई पर रोटी के साथ खानेवाली सलोनी ताई की सरसों की साग नहीं मिली। अम्मा जब से शहर आया अपनी पहचान गंवा दी मैंने। सुन रही हो न सलोनी दीदी क्या कह रही हूँ मैं? मेरा बेटा आज भी जिद कर रहा है तेरे हाथ की बनी सरसों की साग खाने की जिसे वो बचपन में खाया करता था तुम्हारे घर जाकर। आज जब उसकी इच्छा हुई तुमसब से बात करने की तो तुम सबने अपने कान बन्द कर लिये। सुनने से इनकार कर दिया। मगर मेरा दिल, एक मुँहबोली माँ का दिल ये बार-बार कह रहा है कि मेरा सुरजीत अब कभी मेरे पास नहीं आयेगा। कुछ भी कहो तुम सब, मैं झूठ नहीं कह रही। हाय रे मेरा बेटा, अपनी बावरी माँ को भूल गया। कैसा खेल खेला तुने रघुवीर? एक माँ से, मुँहबोली माँ से उसका अपना बेटा ही छीन लिया। ऐसा कह पागलों की तरह दहाड़ती अपने आँगन में प्रवेश कर गयी। सभी लोग अपने-अपने घर चले गये। कुछ समझ रहे थे इतने दिनों से सुरजीत ने अम्मा को चिट्ठी नहीं लिखी तो वो बावरी हो गयी। सोते से जाग गयी। सुरजीत तो माँ के अरमानों को सजाने शहर में निकल

पड़ा था। उसे इस मिट्टी से अगर इतना ही प्यार था तो रह जाता हमेशा इनके ही पास और रो पड़े सब लोग कि सुरजीत तो हम सबका चहेता ही था सलोनी दीदी! मगर जब से शहर गया हमसब को एक चिट्ठी भी नहीं लिखी। माँ अपने कमरे में रोती चली जा रही थी। इतने दिनों बाद जब बेटे से मिलने का जिक्र आया जुबान पर तो मेरे ही रघुवीर ने मेरे सुरजीत को छीन लिया। कैसा खेल खेला तुने ये रघुवीर? मेरा बेटा वहाँ भी रहता था जहाँ मैं रोटी पकाती थी। वहाँ भी रहता था जहाँ मैं सोया करती थी। मेरा सुरजीत बिस्तर के चादर में समाया था। मेरा बेटा चौपाई के नीचे भी छुपा हुआ है। मेरा बेटा चूल्हे को फूँक मारता वहाँ भी मौजूद है। मेरा सुरजीत तो हर जगह है। उस तरफ से आता था ये कहते कि अम्मा आज बहुत भूखा हूँ मैं और मैं जल्दी से थाल में रोटी रख देती थी। तब वो हँस पड़ता था और कहता था मुझे रोटी नहीं तेरा प्यार चाहिए अम्मा। खाने के एक निवाले का नहीं, तेरे प्यार का भूखा हूँ मैं। तब मैं उसके पास बैठ जाती और कहती बेटा, मेरी गोद में बैठ जा। कितना बड़ा था मेरा सुरजीत। मगर हर वक्त मेरे अँचरे में समाया रहता था। आज तो कहीं से उसकी आवाज सुनायी नहीं देती। मगर वो आज भी कहता है, अम्मा! मेरे लिए रोटी रख थाल में। मैं खाने आया हूँ। उधर शहर में सच में सुरजीत खून से लथपथ पड़ा था। ये माँ का वहम मात्र नहीं था। ये माँ के दिल की सच्चाई थी जिसे वो लोगों को बतला रही थी पर किसी ने बावरी माँ के प्यार को नहीं समझा, उसकी कद्र नहीं की और शहर में लोग उसकी पहचान तलाश रहे थे। कौन है? कहाँ से आया है? मजमे में तो इतने लोग थे वहाँ कि सुरजीत ही दिखाई कम देने लगा। मगर मजमे में ऐसे लोग नहीं थे जो कह सकें कि तेरा बेटा अपनी पहचान खो चुका है। वो आज भी यही समझ रही थी कि मेरे बेटे को लोग मेरे नाम से पहचान लेंगे और उसे लेकर जरूर आयेंगे चाहे वो मृत ही क्यों न हो? और फिर माँ का प्यार झूठा होने से बच गया। किसी ने लाश की पहचान कर ली। सुरजीत की माँ के पास लाया गया उसे। सभी लोग दरवाजे पे खड़े थे। माँ खिड़की से झाँक रही थी और पूछ रही थी कि ये मजमा कैसा है? ये लोग कौन हैं? वो लोग बस यही कह सके कि तेरा बेटा सच में खून से लथपथ आया है चाची! और तू जो कह रही थी वो उसे ही लेने पास आया है, सरसों की साग और गेहूँ की रोटी। पारो बन्नो अपनी कलाई मरोड़ चुकी थी। कमला बहन अपनी राखी के धागों को तोड़ चुकी थी। सलोनी दीदी रो-रोकर सब से कह रही थी कि अब हमारा सुरजीत कभी सरसों की साग माँगने हमारे पास नहीं आयेगा और उसकी मौन आँखें ये देख हैरान रह गयी कि अम्मा खिड़की में बैठी इतनी खामोश थी कि उन्हें ही लोग अगर जगाना चाहते तो जगा नहीं पाते। खिड़की खुली थी। वो झाँक रही थी। मगर उनकी आँखें तो बाहर आ चुकी थी। मजमा तो ऐसा था कि अम्मा को भी ये लग न सका कि कोई हमारे बेटे को पहचान पायेगा भी।

शुभी का पौधा

क्या कर रही है शुभी? एक पौधा लगा रही हूँ माँ अपने आँगन में। पर क्यों? माँ, हमारे पास छत नहीं है। लोग हमपे हँसते हैं। हम ईंट-पत्थरों के मकान में भला क्यों सोयें माँ जहाँ कि न ताजी हवा जाती है न मीठी नींद आती है। माँ, देखना एक दिन ये पौधा बड़ा होकर हमें इतनी छाया देगा कि लोग अपने-अपने घरों से निकलकर हमारे पास सोने आया करेंगे। तब माँ रो पड़ी। बेटी कौन आयेगा तेरी झोपड़ी में सोने? शुभी बेटा, हम नीच जाति के लोग हैं। सब हमसे नफरत करते हैं, मान नहीं देते वो हमारी भावनाओं को। तब शुभी बोली, देंगे माँ। एक दिन वो मजबूर हो जायेंगे हमें मान देने के लिए। ऐसा कह उसी जगह फिर एक पौधा लगाने लगी। माँ हैरान होकर बस उसके पागलपन को देखती रही। एक दिन बीते। दो दिन बीते। धीरे-धीरे शुभी का सारा ध्यान उन पौधों पे ही केन्द्रित हो गया। एक दिन एक आदमी गुजरा उस गली से। शुभी को जब पौधा लगाते देखा तो खड़ा हो गया। माँ घर में नहीं थी। शुभी ने उस आदमी से कहा कि बाबू क्या देख रहे हो तो वो आदमी बोला, तुम्हें देख रहा हूँ। तुम कौन हो? मेरा नाम शुभी है। ये मेरा ही घर है। मैं अपने आँगन में पौधे लगा रही हूँ। धूप तो तेज पड़ती है हमारे आँगन में। गर्मी से भला नींद कैसे आती? जागकर रातें काटनी पड़ती है। शुभी की इन बातों का मतलब उस आदमी की समझ में न आ सका। उसने शुभी से पूछा, शुभी पौधे कब जवान होंगे? तो शुभी बोली, बाबू! इतना भी नहीं जानते कि जिस तरह इन्सान पल-पल को गिन एक दिन ऊँची उड़ान पे चढ़ जाता है। उसी तरह ये पौधा है मेरा जिसको मैं हर दिन पानी देती हूँ, खाना भी देती हूँ और एक माँ बन इसकी परवरिश करती हूँ। देखो, परसों लायी थी उस पौधे को। उसकी जिन्दगी तीन दिन की हुई। पाँच दिन पहले लगाया था उस पौधे को। सोमवार आयेगा तो उसकी जिन्दगी दस-बारह दिन की हो जायेगी। और ये पौधा जो आज लगा रही हूँ मैं अभी इसकी उम्र निश्चित नहीं की है मैंने। तब वो आदमी उसकी बातों पे हँसते हुए बोल पड़ा। शुभी एक बात कहूँ, ये पौधे जिसे इन्सान सा जिन्दा पा रही हो तुम ये तुम्हारे लिए छाया नहीं बन सकते क्योंकि जिस दिन इन्सान पैदा लेता है उसी दिन उसकी मौत भी निश्चित हो जाती है। तुम पहले इन पौधों की मौत निश्चित कर लो फिर सोचो कि कितना साथ रह सकेगा इसके साथ तुम्हारा। तब शुभी हँसकर बोली, बाबू! इतना नादान समझ रहे हो मुझे। मै तो खुद ही नहीं जानती कि ये पौधे मुझे छाया दे पायेंगे या नहीं। क्या पता? इनके साये मुझे मार ही डालें। मगर ये तुम्हें तो छाया दे सकते हैं, तुम्हारे जैसे किसी दूसरे को तो छाया दे सकते हैं न। तुम तो मेरे साथ नहीं चले जाओगे। ऐसा कह फिर से पौधों में पानी डालने लगी। सारा आँगन गीला हो गया। वो आदमी उसपे हँसता हुआ आगे चला गया। मगर उसकी समझ में इतना तो आ ही गया कि शुभी किसी संत ज्ञानेश्वर की भाषा बोलती है। उसने आगे जा-जाकर सारे गाँव को इकट्ठा किया। लोग भीड़ लगाकर उसके पास आने लगे। शुभी का पौधा उम्र के फासले लांघता चला गया। जो तीन दिन का जीवन पाकर आया था वो तीस साल जीनेवाला था। जो बारह दिन की जिन्दगी लेकर आया था वो उम्रदराज होने का आशीर्वाद पा चुका था और जो एक दिन का था जिसका जीवन शुभी ने एक दिन बताया था वो एक हजार साल की आयु लेकर आया था इस मिट्टी पर। धीरे-धीरे शुभी का सारा आँगन पौधों से भरता जा रहा था। एक दिन ऐसा भी आया जब आँगन हरा-भरा हो गया चारो तरफ से। किसी तरफ से फूलों की महक आने लगी। किसी तरफ से बेलों की लतायें खुशबू बिखेरने लगी। किसी तरफ

से हरियाली नाचकर इशारा करने लगी लोगों को। किसी तरफ से मुस्कराहट बिखेरती डालियाँ झुकने लगी लोगों को अपने पास देखकर और संत ज्ञानेश्वर की भाषा बोलने वाली शुभी भी उन पौधों के साथ और अपनों के साथ पल-पल दिन गुजारने लगी कि अचानक एक रात उसको पौधों में सरसराहट होती सुनाई दी। उसने माँ से कहा माँ, लगता है कोई भूखा-प्यासा मुसाफिर हमारे आँगन में पानी और खाने की भीख माँग रहा है। जाकर देखती हूँ। तो माँ ने कहा, नहीं जा बेटी। हो सकता है वहाँ कोई जानवर ही घुस आया हो। नहीं माँ मुझे अपने ही बगीचे से डरा रही हो। अरे माँ, इसी की खातिर तो मैं बावरी बनी रही इतने वर्षों तक। ऐसा कह वहाँ से चुपके से उठी। माँ सोती रह गयी, कहा कुछ नहीं। शुभी जाकर बगीचे में टहलने लगी। अरे! यहाँ तो इतना खूबसूरत मोर बैठा है। लगता है इसके ही पंख फड़कने की आवाजें आ रही थी अभी-अभी। ऐसा कह वो उसके साथ खेलने लगी और खेलते-खेलते वहीं जमीन पर सो गयी। सुबह होने से पहले एक अनजान मुसाफिर ने उसे देखा और उसकी इज्जत लूट ली। कहा कुछ नहीं। शुभी ने भी कुछ नहीं कहा। इसे भी उसने पौधों की नादानी समझा। मगर जब शुभी की माँ ने उसकी इस हालत को देखा तो बोली, शुभी मर जा। तुझे शर्म क्यों नहीं आती? तू इन लोगों को हरियाली देने चली थी। ये मोर का मुखौटा था बेटी जिससे तू सारी रात खेलती रही। कैसी समझ हो गयी आज तेरी? जब जना था तुझे तब तो तू ऐसी नासमझ नहीं थी। शुभी ने कहा, माँ! मुखौटा लगाकर ही तो हर कोई हर किसी के पास जाता है। माँ किसी का हाथ पकड़ लेने से, किसी के गाल को चूम लेने से, किसी के जिस्म को छू लेने से कोई नापाक नहीं कर सकता किसी को। वो गलत था तो उसने गलती की। हमारे पास समझ है तो हम क्यों करे ऐसी गंदी बातों के चर्चे? चलो, सुबह होनी वाली है। मैं कपड़े बदलकर अपने कमरे में सो जाती हूँ। माँ हैरान उसे एक नजर देखती रह गयी फकत और जाके बिस्तर पर सो गयी। सुबह किसी को इस बात का पता तो न चला।

मगर क्या शुभी की सोच सही थी? क्या उसकी दिमागी हालत कमजोर थी या वो जन्म लेकर ही आयी थी ऐसी लड़की के वेश में जिसे किसी की इज्जत, किसी की मान-मर्यादा, किसी के लाड़-प्यार का अन्दाजा न था। कैसा खेल था ये किस्मत का? क्या एक दिन शुभी अपने ही लगाये उस जंगल में भटक नहीं जायेगी? क्या शुभी को कभी एहसास हो पायेगा कि ये जो हुआ उसके साथ वो गलत था या उसे अपनी ही इस बात पे गर्व होता रहेगा कि हमने जो किया लोगों को प्रेरणा देने के लिए किया। शुभी का आँगन एक दिन पर्यटकों का केन्द्र बन जायेगा या शुभी बदनाम हो एक दिन इस दुनिया से गुजर जायेगी। क्या उसकी माँ कभी उसे ये एहसास दिला पायेगी कि उसके साथ जो हुआ वो गलत था या शुभी की ही सोच सही था। इतने सवाल तो हर पल उठा करेंगे लोगों के दिलों में। मगर शुभी की माँ ने तो शुभी को निर्देश दिया कि तू अपवित्र हो गयी। इसलिए मर जा। वो सही था या शुभी ने जिन्दा रहकर दुनिया देखनी चाही, वो सही था। फैसला कीजिए और जवाब दीजिए। क्या मोर मुखौटे वाले इन्सान जगह-जगह नहीं हैं मौजूद। तो क्या शुभी भी जगह-जगह मौजूद नहीं है। हाँ है। मगर वो आम नारी बनकर जीती हैं इसलिए उन्हें शर्म आती है जीने में। मगर शुभी को शर्म न आ सकी क्योंकि वो आम नारी नहीं थी और सही मायनों में जीवन का अर्थ बता रही थी अपनी ही माँ को।

ऐ पाकी देख न, मेरे कपड़े कैसे हैं? अजीत ने ही पसन्द किये हैं। ये लाल रंग की ओढ़नी, ये पीली सलवार-कमीज, सब मेरे हैं रे। अच्छे हैं न? भला अजीत की पसन्द अच्छी न हो, ऐसा हो सकता है कभी। पल्लवी कहती जा रही थी। पाकी देख न, एक चीज हमने भी पसन्द की है उसके लिए। ये खूबसूरत गुलाब के फूल। सफेद हैं न, पर हैं तो कितने प्यारे। बोल न पाकी, कह न कि इसपे हर रंग चढ़ाये जा सकते हैं। चाहे नीले, पीले, हरे या भूरे क्यों न हों? तब मैंने कहा था, लाल क्यों नहीं? वो रंग ही अजीत को देना नहीं चाहती मैं। पर क्यों? मैंने पूछा था तो बोली थी वो कि हमेशा से लाल गुलाब से चिढ़ता आया है अजीत पाकी। कहता है, पल्लवी! तुम्हें नहीं पता शायद लाल गुलाब में काँटे ज्यादा हुआ करते हैं। तब मैं सोच में डूब गयी थी कि लाल रंग से इतनी चिढ़ हो गयी अजीत को। पर कब से? बचपन में तो वो हमेशा लाल गुलाब से खेला करता था। कहता था, पाकी ये लाल रंग मुझे बेहद अजीज हैं। देखो न इनमें कितनी खूबसूरती समायी है और मैं मुस्कराकर बस यही कहा करती थी जीवन में लाल रंग की ही अगर कमी पड़ जाये न अजीत तो जीवन का क्या मतलब रह जायेगा फिर? और आज पल्लवी ने उसके लिए सफेद गुलाब चुने थे। ये देखकर एक पल को जाने क्यों खोयी-खोयी सी रह गयी थी मैं। तब उसने मुझे टोका था। ऐ पाकी रह-रह कर कहाँ गुम हो जाती है? कितनी बातें करनी है मुझे तुझसे अजीत के बारे में। सुन न। मैं कल जब उसके घर गयी थी न तो चाची ने मुझे खीर और पुलाव खाने को दिये थे। कहा था, मीठे के साथ नमकीन शुभ माना जाता है। कल अजीत का जन्मदिन था न? तुम्हें भी ढूँढ रही थी चाची। पर अजीत ने जाने क्यों कह दिया कि पाकी आना ही भूल गयी लगता है माँ। ऐ पाकी, क्या तू सच में उसके घर जाना भूल गयी थी रे। काकाजी कितना कह रहे थे बुला ला अजीत जाके पाकी को। क्या बात है जो उसने घर आना ही छोड़ दिया है? अजीत ने तब क्या कहा था पल्लवी? कहा था कि मुझसे क्या पूछती हो? जाके पूछो न अपनी उसी चहेती से जो हमेशा मुँह फुलाये बैठी रहती है। जब भी बोलना चाहता हूँ, कहती है मूड नहीं है अजीत। पर मैंने फिर भी कह दिया कि कल का दिन याद है न तुम्हें। उसने फिर भी कुछ नहीं कहा। बोला था, बाबा। जाओ खुद ही मना लाओ उसे। मैं नहीं जाता ऐसी नकचढ़ी लड़की को मनाने। पल्लवी के साथ आ नहीं सकती थी क्या वो? पर देखा न आयी? क्यों रे तूने कहा नहीं था उससे? तब हमने कहा था न पाकी कि हमें तो कुछ पता नहीं काकाजी, ये दोनों कब लड़ पड़ते हैं? पर पाकी, तूने झगड़ा क्यों किया रे? क्या उसके घर जाना तुम्हें अच्छा नहीं लगता? मेरे रिश्ते की बात चलायी है बाबा ने इसलिए। मैं हक्की-बक्की पल्लवी की तरफ देखने लगी थी और कहा कुछ भी नहीं। पर मैं ये जरूर सोच रही थी कि मैं एक दिन अजीत से मिलकर ये जरूर पुछूँगी कि कब बुलाया था तुमने मुझे अजीत? तुम्हारे जन्मदिन की बात तो पता ही नहीं थी मुझे। पर कहाँ पूछ पायी कभी। पल्लवी ने जो इतना कुछ सुना डाला मुझे। कहती रही, ऐ पाकी सुन न, तू उसके लिए कुर्त्ता तैयार कर देना तुझे तो बनाना आता है। कढ़ाई करना है उसमें मुझे अपने हाथों से। कितना अच्छा लगेगा न जब वो यही कुर्त्ता पहनकर हमारे घर मेहमान बनकर आयेगा। मैंने पल्लवी की बात मान ली थी पर जब कुर्त्ते का नाप माँगा था मैंने अजीत से तो बोला

था कि रहने दे पाकी, कुर्त्ता मैं दर्जी से सिलवा लूँगा। बाकी का काम पल्लवी कर लेगी। ऐसे मौके पर पहनने वाले कपड़े थोड़े नये होने चाहिए न? तुम्हें तो कुछ नया करना आता ही नहीं। मैंने तब बड़ी मुश्किल से आँसू रोके थे और पूछा था उससे कि इस बेरूखी की वजह मैं जान सकती हूँ अजीत। बचपन की बात और थी जब हम लड़ पड़ते थे पर आज लड़ने की उम्र नहीं रही हमारी। पर उसने हमारी बात का कोई जवाब नहीं दिया था और पल्लवी से बोला था कि कुर्त्ता पहले से ही सिलवा लिया है हमने और सिर्फ तुम्हें इसपे कढ़ाई करनी है। पल्लवी ने मुझसे पूछ-पूछ कर ही जाने कितने रंग चढ़ा डाले थे उसपर जो इतने बेकार लग रहे थे कि मुझे तो कभी-कभी ऐसे लोगों के प्यार पर हैरानी होती है। वही कुर्त्ता अजीत ने इतनी पसंद से पहना था कि वाकई में रोना आ रहा था हमें अपने नसीब पर जिसपे प्यार की परछाई ऐसी पड़ी थी कि सारा वजूद मिट चुका था हमारा। पल्लवी हमेशा की तरह आज भी मुझसे पूछ-पूछ कपड़े पहन रही थी और कह रही थी पाकी ये ही चुनर ओढ़ूँ न मैं? यही साड़ी पहनूँ न मैं? तुम्हें पसन्द है न? अजीत के घर से आयी है। मैं क्या कहती बस हाँ में ही गर्दन हिला रही थी। पर सच में मुझे इन लोगों की पसन्द जरा भी भा नहीं रही थी। माँ ने मेरे साथ जाकर एक हरे रंग की साड़ी खरीदी थी पल्लवी के लिए और बाबा को भी पसन्द आयी थी वो साड़ी। पर जाने क्यों उनलोगों को ही पसंद न आ सकी जिनके घर बहू बनकर जा रही थी पल्लवी। कहा बहन जी शगुन का सवाल है आज तो कम-से-कम बिटिया हमारे घर के भेजे कपड़े ही पहनेगी और अजीत ने एक गुलदस्ता भिजवाया था किसी के हाथ जो वो मुझे देकर चला गया। मैं पल्लवी को देने ही वाली थी कि किसी ने पीछे से कहा तुम्हारे लिये ही है बीबी जी। मैं हैरान हो रही थी तभी उसमें छुपे एक खत पर नजर गयी हमारी। लिखा था...

पाकी

तुम हमेशा मुझसे कहा करती थी न कि हर खेल में तुम मुझसे जीत जाओगी। पर देखा न? आज कैसा खेल खेला हमने जिसकी सारी बाजी मैं ही ले गया। तुम तो मोहरों के साथ ऐसी पिटी की ताश के पत्ते भी हैरान रह गये तुम्हे देखकर। तुम्हारी आँखों के सामने से ही मैं पल्लवी को ले जाऊँगा दुल्हन का जोड़ा पहनाकर और तुम अपने सफेद हाथों को तकती रह जाओगी। बहुत नाज था न तुम्हें अपने आप पर। पर देखा न मैंने कैसे तुम्हारे लाल गुलाब को काँटों की नोक से उठाकर फेंक दिया और सफेद फूल चुन लिये अपने आँगन के बहार के लिए। पल्लवी न कल मुझे पसंद थी, न आज पसंद है पर क्या करता मैं? बेचारी मुझसे प्यार जो करने लगी थी। क्या मैं उसके सूने माँग को सजाये बगैर छोड़ देता? विधवा थी बेचारी। उपकार कर दिया हमने।

अजीत

मैं दौड़कर पल्लवी के पास गयी थी और कहना चाहा था कि उतार दे ये कंगन पल्लवी! इनमें सुहाग की निशानी नहीं, नफरत की जलन झलक रही है मुझे। पर कह न सकी क्योंकि मैंने देखा था कि वो अपने माथे पर बिन्दिया सजा रही थी और माँग में फिर से टीका पहन रही थी। उसके बदन पे आज लाल रंग की साड़ी को देखकर ऐसा लग रहा

था जैसे ये एक विधवा के रूप-शृंगार को उधार माँग लायी हो कहीं से। मैंने रोकर बस मुँह फेर लिया था और सोचा था तो इसलिए अजीत ने पल्लवी से ताल्लुकात बढ़ाये थे अपने। पर तकदीर का खेल था ये सारा जिसे तो होना ही था। ऐसे माँग के सिन्दूर का क्या नाम दे सकता था कोई जिसका कि रंग ही सफेद हो। ऐसे चुनर का क्या नाम दे सकता था कोई जो माथे पे चढ़ने से पहले ही सरक जाने को बेताब हो। अजीत आया तो उसकी तरफ देखकर मैंने मुँह फेर लिया और आहिस्ता से बस इतना ही कह सकी कि अजीत, मेरे बदले की आग में मेरी विधवा बहन की चिता मत जला देना। उसके साथ ऐसी नाइन्साफी हरगिज मत करना। खेल तुमने मेरे साथ खेला था। हार-जीत का वास्ता उसे क्यों दे रहे हो तुम और खामोशी से उस आसमान को तकती रह गयी थी जिसका रंग ही नीला हो चला था आज। चाँद-सितारे जाने कहाँ खो गये थे?

▭

यार आकाश, क्या बात है? क्यों बैठा है इतना खामोश? कुछ नहीं यार। नहीं कैसे, कुछ तो बात जरूर है? बता न यार! राजीव मुझे एक लड़की पसन्द आ गयी है। मगर डरता हूँ, कहीं उससे कहूँ और वो नाराज न हो जाय। बस इतनी सी बात। बता वो लड़की कौन है? हमारे ही साथ पढ़ती है। सुगन्धा नाम है उसका। क्या सुगन्धा तुम्हें पसन्द आ गयी? हाँ यार! तो ठीक है समझ ले बात पक्की हो गयी। देखना एक दिन मैं उसे तुम्हारे सामने लाके खड़ा कर दूँगा दुल्हन के लिबास में। सच राजीव! हाँ आकाश! और इसके बाद दोनों की राहें अपनी-अपनी सोचो पर कायम न रह सकी। आकाश सुगन्धा पे दिलोजान लुटाना चाह रहा था। उधर सुगन्धा हर मुलाकात में राजीव के करीब आती जा रही थी। वक्त तेजी से बीत रहा था। आकाश की चाहत का पौधा धीरे-धीरे जवान हो रहा था और राजीव के पौधे में कपोलें निकलने ही वाली थी कि ऐसे में एक दिन आकाश ने पूछा राजीव से कि राजीव, सुगन्धा बीमार है। तू मुझे उसके घर ले चल। मैं उससे मिलना चाहता हूँ। तब राजीव ने कहा कि आकाश दो दिन बाद सुगन्धा आयेगी यार तुमसे मिलने। वो हमेशा तुम्हारी ही बातें किया करती है। वो कहती है कि राजीव अगर मुझे पता होता कि आकाश जी मुझसे इतना प्रेम करते हैं तो कब का मैं उनसे मिलने का प्रोग्राम बना लेती। खैर कोई बात नहीं। मैं जब अच्छी हो जाऊँगी, सबसे पहले उन्हीं से मिलूँगी। तब आकाश मन-ही-मन सुगन्धा को याद करने लगा कि सुगन्धा तुम कितनी सुन्दर हो और प्यारी भी। राजीव आता, वो पूछता कि सुगन्धा अब कैसी है? मगर राजीव अब बात को टालने लगा था। आकाश की समझ में कोई बात नहीं आ रही थी। सुगन्धा उससे मिलने भी फिर कभी नहीं आयी। फिर कभी क्या जिस सुगन्धा के प्यार में वो इतना बेकरार था वो सुगन्धा तो उसके बारे में कुछ जानती ही नहीं थी। राजीव ने तो कभी आकाश का जिक्र उसके सामने किया ही नहीं। मगर आकाश की सोच नहीं बदल पायी। वो राजीव की बातों को सच मान बस सुगन्धा के ही बारे में सोचता रहा। ख्वाब बुनी निगाहें कभी उसके साथ घूमने निकल जाती, कभी आसामान को छूने लगती। जमीं पे तो उसके पाँव पड़ ही नहीं रहे थे। भला सुगन्धा को वो जमीन पर बिठाता। उसके ख्वाब आसमां से भी ऊँचे थे। जब से सुगन्धा की बीमारी की खबर उसे मिली वो हमेशा उसी के बारे में सोचता गुम रहने लगा। जब भी पूछता राजीव से कि यार सुगन्धा अब कैसी है? वो कहता, क्या एक लड़की के बारे में सोच-सोचकर दिमाग खराब करता है अपना भी और मेरा भी। भूल जा उसे। वो बेवफा थी यार। भूला दिया तुझे और शादी कर ली किसी के साथ। क्या ये तू कह रहा है राजीव? हाँ मैं सच कह रहा हूँ आकाश। सुगन्धा जैसी लड़की तुम्हारे घर में आ नहीं सकती यार। तेरी माँ के अरमानों का क्या होगा? वो ठहरी एक आवारा किस्म की लड़की और तुम इतने अच्छे घराने के हो। तब अकाश ने राजीव के गाल पे तमाचा मारा और कहा, तू मेरे प्यार को गाली देता है राजीव! तुझे मेरे सामने ऐसा कहते हुए शर्म नहीं आती। नहीं, क्योंकि जिसकी चाहत में तू दुनिया भूलाये बैठा है न आकाश सच में वो आवारा है, किसी के बच्चे की माँ बननेवाली है। क्या? हाँ आकाश! सुगन्धा तुम्हारी नहीं हो सकती अब, कभी नहीं। मगर ऐसा कब हुआ राजीव? तब आकाश, जब तुमने मुझे उसके पीछे लगा दिया। क्या मतलब? कुछ भी नहीं यार मैं तो बराबर उससे तुम्हारी ही बातें करता

रहा। मगर उसकी चाहत का परवाना कोई और बन गया आकाश! राजीव तू ये क्या कह रहा है? खैर छोड़ इन बातों को। मैं सुगन्धा को भूल जाऊँगा। माँ से मैंने जो बातें कही हैं वो बदली भी तो जा सकती है। मैं माँ से कह दूँगा कि सुगन्धा मुझसे नहीं मिली। वो किसी और से प्यार करती थी माँ। गलतफहमी हो गयी थी मुझे। माँ! अब मैं तुम्हारी ही पसंद की लड़की से ब्याह करूँगा। माँ मान जायेगी राजीव! बोल तू माँ को मनायेगा न? हाँ आकाश! मैं मनाऊँगा माँ को, राजीव ने कहा और आकाश ने अपने आँसू मुँह घुमाकर पोछ डाले।

आकाश का प्यार पहली बार आज धरती पे पड़ा तड़प रहा था कि ऐसे में एक दिन राजीव ये कहने आया कि आकाश! मेरी माँ ने मेरी शादी पक्की कर दी है। मैं तुम्हारी माँ से कहकर तुम्हारी भी शादी पक्की करवा दूँ? नहीं राजीव सुगन्धा को भूलने में मुझे वक्त लगेगा। क्या फिर सुगन्धा की बातें करता है तू। नहीं यार! गलती से जुबां पे आ गयी थी और एक बार फिर मुँह घुमा लिया। आँखें अब भी भर आयी थी उसकी। वो अब खोया-खोया सा रहने लगा था। एक दिन ऐसे में राजीव एक लड़की की तस्वीर लेकर आया ये कहने कि आकाश ये लड़की कैसी है? पता नहीं। मुझे दिखायी नहीं दे रही। क्या? हाँ राजीव! मुझे रात से ही आँखों के आगे अँधेरा छाता लग रहा है। कब से यार? जबसे तुमने माँ की बनायी हुई मिठाई खाने को दी है। ये कैसी बातें कर रहा है आकाश तू? वो तो मेरी माँ ने शगुन के तौर पे भिजवाई थी। मेरी शादी जो होनेवाली है। तभी आकाश चीख पड़ा। राजीव मुझे कुछ दिखाई नहीं दे रहा! क्या? आकाश तुम्हें कुछ दिखाई नहीं दे रहा। कैसा प्यार किया तूने सुगन्धा से आकाश जो अपनी आँखें तक गंवा डाली। अब तेरी माँ का क्या होगा? वो बेचारी किसके सहारे जीयेगी? मगर उसने कुछ नहीं सुना और राजीव बोलता चला गया। आकाश, मेरी पसन्द की लड़की तुम्हें पसन्द आयी की नहीं? तुमने बताया भी नहीं और इतनी जल्दी सुगन्धा के प्यार से हार मान बैठे। जरा देख लो मेरी होनेवाली पत्नी कैसी है। आकाश ने कुछ नहीं सुना। पता नहीं उस मिठाई के खाने के बाद उसे क्या हो गया था। वो जमीन पे पड़ा तड़प रहा था और राजीव आहिस्ता से वहाँ से दूर चला आया था।

ये कैसी दोस्ती थी? एक तरफ शहनाई का शोर था। एक तरफ सुनने और देखनेवाली निगाहें तड़प-तड़प कर अपने प्यार की भीख माँग रही थी। राजीव ने सुगन्धा से ब्याह भी किया और आकाश के सामने सुगन्धा को लाकर खड़ा भी किया ये कह कि आकाश मेरी पत्नी से नहीं मिलोगे? संयोग से इसका भी नाम सुगन्धा ही है मगर अब उसे किसी सुगन्धा के हाथों में रची मेंहदी दिखाई नहीं दे पा रही थी। इस विश्वासघात ने ऐसा मजाक किया था एक जिन्दगी से कि ऊपर बैठा वो भगवान भी हैरान हो गया था ये सब देखकर। किसी के प्यार को छीन कर जो गुनाह राजीव ने किया उसे उसकी सजा तो कुछ भी नहीं मिली और सुगन्धा का प्यार भी मिल गया और आकाश एक तरफ खामोश खड़ा बार-बार सुगन्धा की आवाज को सुनकर भी हैरान न हो सका।

एक रात की दुल्हन

सुहैल अपनी शादी की तैयारियों में खोया हुआ था। उधर टीना सोच रही थी कि सुहैल मुझे भूल गया। उसने कॉलेज का वो जमाना याद किया जब वो सुहैल के साथ घंटों घूमा करती थी। कैम्पस में रोज चाय पीती थी। आज सुहैल की शादी उसकी अपनी पसन्द की लड़की नीला से हो रही थी। सुहैल ने टीना से कभी प्यार ही नहीं किया और टीना के सपनों में वो रोज आता था घोड़े पे सवार शाहजादे के वेश में। दोनों एक दूसरे से अनजान अपने-अपने प्रेम की यादों में खोये थे। टीना बार-बार कह रही थी कि सुहैल तुम शादी कर रहे हो। मैंने तुम्हें लेकर न जाने कितने ख्वाब देखे। मगर सुहैल कहाँ सोच पा रहा था ये सब। एक दिन तो उसने मजाक में टीना से कहा भी था कि टीना तुम जिसे भी पसन्द करोगी, वो तुमसे दूर चला जायेगा क्योंकि प्यार नसीबवालों को मिलता है और तुम्हारा नसीब तो वो ऊपरवाला ही जाने। तब टीना को ये बात शायद बहुत चुभ गयी थी। मगर उसकी चुभन आज महसूस हो रही थी उसे जब सुहैल उसकी दुनिया से दूर हो चुका था। उसके नसीब वाकई अच्छे नहीं थे। शादी की तारीख करीब आ रही थी। टीना की मनोदशा बिगड़ती जा रही थी। वो एक जिद्दी लड़की थी। उसे हर हाल में सुहैल चाहिए था। मगर सुहैल की नीला कब से उसके कदमों में संसार बसाये सो रही थी। टीना को बार-बार यही लग रहा था कि सुहैल से जाकर कहूँ मगर सुहैल से कहे तो कैसे? उसकी हिम्मत खत्म हो रही थी। उसकी साँसे तेज होती जा रही थी। उसे माँ-पापा की बातें बार-बार याद आ रही थी। जब उन्होंने कहा था, बेटे प्यार एक परछाई है और जिन्दगी हकीकत। बेटे, परछाईयाँ अक्सर धोखा दे जाती है इन्सानों को और हकीकत में सामने सिवाय मौत के कुछ नहीं आता और टीना ने मरने का इरादा कर लिया। वो एक बार फिर सुहैल को याद करने लगी। कितने दिनों से सुहैल मुझसे बातें नहीं कर रहा है। वो तो हमें ऐसे भूला गया जैसे लोग अनजान मुसाफिरों को भूल जाते हैं। हाथ में जहर की शीशी थी और पलकों पे एक ख्वाब, खुद को सुहैल की दुल्हन बनाने का। उसने सुहैल के नाम एक खत लिखा।

सुहैल

मैं तुम्हारी दुनिया से दूर जा रही हूँ। पर शायद तुम्हें यकीन न हो। इसलिए ये खत लिख रही हूँ। हो सके तो इसे एक बार जरूर पढ़ना और मुझे याद करने की कोशिश करना। सुहैल शायद तुम कॉलेज का वो जमाना भूल गये जब हम घंटों साथ बैठा करते थे, बातें किया करते थे। मैंने जब पहली बार तुमसे दोस्ती की थी यही सोचा था कि एक दिन तुम मेरे जरूर बनोगे। तुम तो नीला के हो गये। उस नीला के जिसके माँ-बाप ने तुम्हें पसन्द किया। वो तुम्हारे पापा के अच्छे दोस्त थे। पर तुम ये नहीं सोच पाये कि मैं भी तुम्हारी अच्छी दोस्त थी। सोचो मैं तुम्हारी वो मुलाकातें कैसे मिटा दूँ दिल से? तुम हर मुलाकात में मुझे एक तोहफा दिया करते थे। तुम्हारे प्यार की दीवानी बनी मैं आज भी तुम्हारी गलियों में घूम रही हूँ। पर शायद आज मैं तुम्हें नजर नहीं आती। तुमने रास्ते तो बदल लिये सुहैल मगर प्यार के रास्ते जब बदल जाते हैं उनका अन्जाम यही होता है मौत। हाँ मौत या फिर कुर्बानी। मगर मैं मौत की बाहों में सो जाना जानती हूँ, प्यार पे कुर्बान होना नहीं। जीते जी तुम मेरे हो न सके। मैं मर रही हूँ। मैं ये कुर्बानी नहीं दे सकती सुहैल कि खुशी-खुशी तुम नीला

के हो जाओ। मेरी पलकों पे तुम्हारी दुल्हन बनने के ख्वाब सजे हैं जिसे मैं मिटा नहीं पा रही हूँ। तुम्हारी याद में जी भी नहीं पा रही मैं। हो सके तो मुझे एक बार देखने आ जाना। मेरी मैय्यत जब उठने लगे तो मेरी अर्थी को कांधा दे देना।

तुम्हारी टीना

खत लिख उसने डाक में डाल दिया। दो दिन बीत गये। जब उसे लगा कि खत सुहैल तक पहुँच गया होगा, उसने जहर खा लिया। उधर सुहैल की माँ ने खत देखा तो सोचा कि शादी ब्याह के मौके पे सुहैल को परेशान नहीं करना चाहिए। पता नहीं, ये पागल लड़की कौन है और खत दराज में छुपा दिया। शादी की रात करीब आ गयी। आज सुहैल बारात के साथ नीला के घर जा रहा था। उसके सर पे सेहरा था। साथ में नीला के ख्वाबों की दुनिया। उधर टीना की मैय्यत को लोग कांधा दे चुके थे। खत सुहैल ने पढ़ा ही नहीं तो उसकी आखिरी आरजू भी पूरी न हो सकी। सुहैल ने नीला से शादी कर ली और टीना एक कोने में खड़ी अपनी इस हार पे रो रही थी। जब नीला दुल्हन का लिबास पहन घर आयी तो माँ ने उसकी आरती उतारी। तब टीना ने आरती का दिया बुझा दिया और कहा, माँजी! आपने मेरा खत छुपा दिया था। मेरा सुहैल मुझसे छीन लिया था। माँ के हाथ काँपने लगे। थाल हाथ से छूट जमीन पर जा गिरा। माँ ने इसे अपशकुन माना। पर सुहैल इन सब बातों से अनजान अपनी नीला के साथ खुश रहने की बातें ही सोच रहा था। पलकों में हर लम्हें एक नये ख्वाब आ रहे थे, जा रहे थे। आखिर रात होने को आयी। नीला सुहैल के इन्तजार में बैठी थी घूँघट ओढ़े। तभी कमरे की बत्ती बुझ गयी और टीना की आत्मा रौद्र रूप लिए खड़ी हो गयी। उसने नीला से कहा, नीला! तुम अपने आप को सुहैल की दुल्हन मत समझना। सुहैल की दुल्हन मैं हूँ मैं! जिसकी पलकों पे एक ख्वाब है दुल्हन बनने का। हाँ, सुहैल की दुल्हन बनने का। तुम जाओ यहाँ से, नहीं तो मैं तुम्हें मार डालूँगी। नीला हक्की-बक्की माँ को पुकारने लगी तो टीना ने उसके गाल पर एक तमाचा मारा। वो बेहोश हो गयी। टीना ने उसे बिस्तर से उठा पलंग के नीचे सुला दिया और दराज से खत निकाल सुहैल की दुल्हन बन बैठ गयी पलंग पर। सुहैल जब आया तो टीना ने खत सुहैल की ओर बढ़ा दिया। खत पढ़ते ही सुहैल डर गया। टीना मर गई। टीना तुमने ऐसा क्यों किया? एक बार भी मुझसे कहा होता तो मैं शादी कर लेता तुमसे। तुम्हें ऐसा नहीं करना चाहिए था तो टीना ने घूँघट उठाते हुए कहा, सुहैल! तो आज कर लो न मुझसे शादी, भर दो न मेरी माँग में सिन्दूर, मुझे बना दो न एक रात की दुल्हन? सुहैल डर गया और नीला पलंग के नीचे बेहोश पड़ी रही। रात बीत गयी। सुबह नीला को होश आया। उसने सुहैल को मरा हुआ पाया तो बदहवाश माँ को पुकारने लगी। माँ जब आयी तो देखा खत बिस्तर पे पड़ा है और सुहैल की आँखें बाहर, ओठ कुछ कहने को तत्पर मगर साँसे रूकी थी। टीना की प्यासी आत्मा खूंखार होकर इन कारनामों को अंजाम दे रही थी। माँ ने कहा, बेटा तुने टीना का खत क्यों पढ़ा? आज की रात तुम्हें ऐसा नहीं करना चाहिए था। नीला की पलकों में सजनेवाले सारे सपने बिखर गये। उसके चेहरे पे सफेदी छा गयी। वो तो फकत एक दुल्हन की काली परछाई बन चुकी थी। असली दुल्हन तो सुहैल की बाहों में सो चुकी थी। रात बीत चुकी थी।

शोभा आशीष के ख्यालों में खोयी पता नहीं कब से जाग रही थी। माँ ने पूछा, शोभा बेटे! तुम अभी तक जाग रही हो। सो जाओ। रात काफी हो गयी है। तो शोभा कुछ नहीं बोली। माँ ने कमरे की बत्ती बुझा दी। वो समझी, शोभा सो गयी है। सुबह जब वो उसे चाय देने गयी तो पूछा, रात कब सोयी याद है तुझे? बत्ती मैंने बुझायी थी तुम्हारे कमरे की। बेटी ये जवानी जब रातों को जगाने लगे तो नींद पंछी बन उड़ जाया करती है और पता भी नहीं चलता कि हम कहाँ-से-कहाँ आ गये। तो शोभा ने सोचा कि माँ से कहे कि माँ मेरी नींद तो पंछी बन उड़ गयी। माँ मैं किसी अनजान परदेशी को अपना दिल दे बैठी। मगर खामोश रह गयी। माँ मुस्करायी, बेटी शरमा गयी। पर हमारी शोभा इतनी भी शर्मीली तो नहीं थी। इस तरह बातों-बातों में वक्त बीतता चला गया। शोभा, आशीष की बातें करती नहीं थकती। आशीष भी घर आता, माँ से भी बातें करता। माँ समझती रही शोभा और आशीष पक्के दोस्त हैं। मगर उन्होंने कभी आशीष को शोभा के जीवनसाथी होने का ख्वाब नहीं देखा। वो तो बस यही सोचती रह गयी कि बात आगे कब बढ़ती है। शोभा घर पे नहीं थी। आशीष उससे मिलने को आया। माँ ने उसे बिठाया। चाय पीने को दी तो आशीष बोला, आँटी आप शोभा की शादी के बारे में क्या सोचती हैं? तो माँ ने कहा, जिस दिन शोभा की पसन्द का जीवनसाथी मिल जायेगा। हाथ पीले कर दूँगी उसके। तभी माँ की तन्द्रा टूटी। ये आशीष ऐसी बातें क्यों कर रहा है? बोली आशीष से कि तू ये क्यों पूछ रहा है बेटे? तुझे तो पता ही होगा कि शोभा कहाँ जाती है, किससे मिलती है? तो आशीष बोला, जानता हूँ माँ। तभी तो कह रहा हूँ। वो किसी लड़के से प्यार करने लगी है। बातों-बातों में उसका जिक्र कर देती है। सच! माँ ने कहा। बिल्कुल सच! आशीष बोला। आज जब आये पूछ लेना। इतना कह अशीष जाने लगा तो शोभा ने उसका कान पकड़ते हुए कहा, अच्छा तो मैंने अपनी पसन्द का लड़का देख रखा है। मैं उससे रोज मिलती हूँ। उसका जिक्र भी करती हूँ तुमसे। तो आशीष बोला अरे नहीं नानी माँ, मैं करता हूँ प्यार किसी से। मैंने तुम्हारी पसन्द का लड़का देखा है। उसकी शक्ल बन्दर जैसी है। आखिर एक बन्दरिया को बन्दर ही तो चाहिए। तो शोभा नाराज होते हुए बोली, अच्छा तो मैं तुम्हें बन्दरिया दिखती हूँ। आशीष, तुम ऐसा मजाक तो न करो। मैं पागल हो जाऊँगी। तो माँ शोभा की ओर देखती रह गयी और आशीष भी। उसने पहली बार शोभा की आँखों में आँसू देखे थे। वो सोच में पड़ गया कि शोभा आखिर पसन्द किसे करती है? शायद शोभा मुझसे प्यार करती है। मगर अब तो बहुत देर हो चुकी है। मेरी तो शादी हो रही है काजल से। मैं तो शादी का कार्ड देने आया हूँ। मैंने तो आजतक शोभा को इस नजर से देखा ही नहीं। वो चुपचाप चला गया। माँ ने शोभा को सीने से लगाते हुए कहा, रो क्यों रही है बेटे? वो तो मजाक कर रहा था। तो शोभा ने कहा, मुझे ये मजाक पसन्द नहीं आया माँ। मैं समझती हूँ बेटे। शायद तू उसे अपना समझती है, बहुत अपना। पर बेटा अपनों की कोई बात दिल से नहीं लगाते, दिल टूट जाता है। इतना कह माँ भी रो पड़ी और शोभा के लिए चाय बनाने किचेन में गयी। शोभा को बार-बार आशीष की बातें याद आ रही थी। उसकी आँखों के सामने आशीष का चेहरा बार-बार आ रहा था, जा रहा था। वो ऐसे सोच रही थी आज जैसे आशीष सच में उसे छोड़ गया हो। उसका दिल जोर-जोर से धड़क

रहा था। तभी माँ ने चाय लाके दी उसे। बोली, शोभा बेटे! जिन्दगी बहुत लम्बी है और सच्चे लोग बहुत कम मिल पाते हैं इस जिन्दगी में। मैं सोचती हूँ कि भैया से बातें करूँ तेरी शादी की। सुना नहीं तुमने आशीष क्या कह रहा था? कह रहा था कि शोभा की शादी कब करोगी आँटी? बेटे, क्या तू आशीष को पसन्द करती है? पर बेटे वो तो तुझे एक बहन की तरह प्यार करता है। मगर माँ, मैंने तो आशीष को कभी इस नजर से नहीं देखा है। तो माँ ने कहा, ये जवानी है बेटे जो रिश्ते पहचानने में अक्सर भूल करती है। तो शोभा ने खामोशी से माँ की ओर देखा और माँ ने शोभा की ओर और शाम को अपने भाई को खत लिखा।?

भाई साहब

शोभा की शादी करना चाहती हूँ मैं। आप कोई लड़का पसन्द कीजिए न? मैं कई दिनों से बताना चाह रही थी आपसे कि शोभा की पढ़ाई पूरी हो गयी है। आप बस हमारी मदद कीजिए। आपको तो पता ही है कि जब से शोभा के पापा गुजरे हैं, मैं कितनी अकेली हो गयी हूँ। भाई साहब, आपने बार-बार मेरी मदद की है। इस बार अच्छा सा घर देखना मेरी बेटी के लिए। हो सके तो मुझे जवाब भी देना।

आपकी बहन नन्दा

खत लिख माँ ने शोभा से कहा बेटे, जरा ये खत डाक में डाल तो आना सुबह? तो शोभा ने कहा, ठीक है माँ मैं डाल दूँगी। सुबह मुझे अपनी सहेली काजल के घर जाना है। उसकी शादी है न? खरीदारी करनी है। अरे हाँ, याद आया मैंने उसका कार्ड देखा भी नहीं। कोई बात नहीं, देख लूँगी बाद में। वैसे भी मैं उसकी खास फ्रेंड हूँ। इतना कह कमरे में चली गयी। सुबह नहा-धोकर तैयार हो गयी और माँ से जल्दी आने को कह गयी। माँ ने कुछ पूछा भी नहीं। वो तो सब जानती थी। शोभा काजल के घर गयी तो काजल ने उसे अन्दर बुलाते हुए कहा, शोभा जरा मेरी पसन्द तो देख लो। उसकी तस्वीर आयी है। कहाँ है? देखूँ तो जरा, हमारी काजल ने किसकी आँखों में सूरमा लगाया है अपना? वो बोली, जल्दी दिखा। अभी दिखाती हूँ। इतना कह काजल वो तस्वीर लाने गयी। शोभा को तस्वीर दिखाते हुए बोली, ये देखो कितना हैंडसम है। तुम देखोगी तो जल जाओगी। शोभा ने कहा, ऐसी बात है। मैं भी तो देखूँ वो हैंडसम कौन है? तभी काजल ने तस्वीर को पलटा। शोभा पे बिजली गिरी। ये आशीष था। उसकी आँखें फटी-की-फटी रह गयी। ओठ कुछ बोलना चाहकर भी रूक गये। काजल ने हँसते हुए कहा, क्यों मेरी लैला? मेरे मजनूं पे फिदा तो नहीं हो गयी तुम। शोभा ने कुछ नहीं सुना, काजल बोलती रही। आखिरकार शोभा को होश आया, जब बाल्टी भर पानी ला काजल ने उसे भिगो दिया। बोली, तुम्हें नशा आ गया था क्या? बेहोश हो गयी एक तस्वीर देखकर। जब सामने देखोगी तो क्या करोगी? आँखें बन्द कर लूँगी। सच! हाँ काजल बिल्कुल सच। अरे तुमने मेरे कपड़े खराब कर दिये, मैं घर कैसे जाऊँगी? कोई बात नहीं मैं पंखा चला देती हूँ सूख जायेगा। अगर सर्दी लग गयी तो? तो बुखार भी आ जायेगा, फिर हमारी शोभा को निमोनिया हो जायेगा। वो इस दुनिया से दूर चली जायेगी, बहुत दूर। तो शोभा ने कहा, तुम्हारी मजाक करने की आदत नहीं गयी काजल। इतना कह कपड़े बदले और घर वापस आ गयी। माँ ने समझा खत डाल दिया होगा बेटी ने डाक

में। वो बोली मिल आयी काजल से। हाँ माँ। कैसी लगी उसकी पसन्द। अच्छी लगी माँ। वो काजल से बहुत प्यार करेगा। शादी कब है? दो दिन बाद। अच्छा ठीक है। तू अपने लिए कपड़े बनवा लेना। ठीक हैं माँ, थोड़ी देर बाद निकलती हूँ और सो गयी। माँ ने जगाया उसे और बोली, तुम्हें बाजार जाना है कि नहीं? माँ आज मन नहीं कर रहा। कल चली जाऊँगी। तो माँ ने कहा, बेटी उदास क्यों होती है। एक दिन हर रिश्ते छूट जाते हैं। साथ कोई नहीं जाता। हाँ माँ, तुम बिल्कुल सच कह रही हो, साथ कोई नहीं जाता। मैं अकेली जाऊँगी माँ। तुम भी अकेली जाओगी, है न माँ? माँ समझ नहीं पा रही थी कि शोभा को होता क्या जा रहा है? बोली, मैं खाना लगाती हूँ खा ले। भूख नहीं है माँ, शोभा ने कहा। क्यों नहीं? शादी काजल की हो रही है भूख तेरी क्यों मर गयी है? वो मेरी बचपन की सहेली है न माँ? जा रही है मुझसे दूर, बहुत दूर। तो माँ ने कहा बेटे, यही सांसारिक रीत है जिसे सबको निभाना पड़ता है।

शोभा ने अपनी पसन्द के कपड़े खरीदे बाजार से। माँ को दिखाया। माँ हैरान रह गयी ये देख कि शोभा शादी के मौके पर उजले रंग की लिबास पहनेगी। बोली, ये क्या पसन्द किया तुने बेटी? तो शोभा बोली, एक यही लिबास पसन्द आया मुझे माँ। तुम्हें तो पता ही है मुझे बचपन से उजला लिबास ही पसंद है। तो माँ ने कहा, बेटे मुझे ये ड्रेस बिल्कुल पसन्द नहीं। तुम कोई और कपड़े खरीद लो। तो शोभा बोली, माँ शादी काजल की हो रही है मेरी नहीं। वो तो ठीक है। पर बेटे, जवान बेटी उजले लिबास में अच्छी नहीं लगती। मगर शोभा ने काजल की शादी पे वही ड्रेस पहनी। आशीष ने जब शोभा को वहाँ देखा तो हैरान हो गया। बोला, तुम काजल की शादी में आयी हो शोभा? हाँ आशीष। तुम क्या समझते हो, कार्ड के बगैर मैं तुम्हारी शादी में आ गयी हूँ। अरे हाँ, लिबास तो तुमपर बहुत खुलता है। शोभा, आज तुम चाँद की शहजादी लग रही हो। तो शोभा ने मुस्कराते हुए कहा, आज तुमने मुझे शहजादी कहा आशीष। कल तो बन्दरिया कह रहे थे मुझे। वो बन्दरिया चाँद की शहजादी कैसे हो गयी तुम्हारी नजर में आशीष? तो आशीष बोला, वक्त-वक्त की बात है। तभी काजल की माँ ने कहा, दोनों झगड़ते ही रहोगे या अन्दर चलोगे। काजल कब से तैयार बैठी है? इस तरह शोभा वापस आ गयी और यही सोचती रह गयी कि आशीष को मेरा ये लिबास पसन्द तो आया। घर आते ही माँ से बोली, माँ आशीष को मेरा लिबास बहुत पसन्द आया और तुम कह रही थी मैं कोई और ड्रेस पहनूँ। तो माँ ने कहा, बेटी तुने मेरे सवालों का जवाब नहीं दिया। किन सवालों का माँ? तो माँ ने खत उसके पर्स से निकाला और कहा, जिन्दगी उजले लिबास में खूबसूरत नहीं लगती। उसे लिबास बदलना पड़ता है बेटे। हाँ बेटे, हर मोड़ पे उसे लिबास बदलना पड़ता है। मगर तुमने तो इसे ही अपनी जिन्दगी बना ली। तो शोभा ने कहा, कोई बात नहीं माँ अब यही मेरी जिन्दगी है। इतना कह गिर पड़ी। माँ ने देखा, शोभा के हाथ में जहर की शीशी थी। वो बोली, अकेले जा रही हो बेटी। हाँ माँ। तुमने ही तो कहा था कि सबको एक दिन अकेले ही जाना पड़ता है। हाँ बेटे, कहा था मगर इस तरह नहीं।

उस शाम राजीव कहने आया था दीदी! नीतू के घर जा रहा हूँ, पार्टी है। किस खुशी में, मैंने पूछा था? उसके भैया की शादी की सालगिरह है। अच्छा तो जाओ। दीदी, नीतू ने आपको भी बुलाया है। मगर क्यों भला? शादी की बात आप ही करोगी न? अच्छा बाबा जाऊँगी, पहले तुम जाओ तो। ये कैसे होगा, मैं अकेला चला जाऊँ? उसने आपको साथ लाने की बात कही है। अच्छा तो भैया, पहले तुम तैयार तो हो लो। आईने को फुर्सत हो तब तो मैं खुद की सोचूँ। नहीं दीदी, पहले आप तैयार हो जाइए और ऐसा कह वो एक तरफ मुँह बनाकर बैठ गया था। मैंने उसे मनाते हुए कहा था नीतू की बात तो जनाब को इतनी बुरी नही लगती है। तुमसे मतलब। तो ठीक है, मैं नहीं जाती हूँ। तब उसने मुझे मनाते हुए कहा था कि दीदी, तुम कैसे बच्चों सा बर्ताब करती हो। चलो मैं तैयार होता हूँ। तुम अपनी पसन्द की साड़ी निकालो। अच्छा बताओ वो पीलीवाली कैसी रहेगी? अच्छी है, मगर नीलीवाली ज्यादा अच्छी है। नहीं राजीव, मैं नीलीवाली नहीं पहनूँगी। वो तब की है जब मैं कॉलेज में पढ़ती थी। किसी ने गिफ्ट दी थी मुझे। तब उसने कहा था कि दीदी तुम तो उसे ही पहनकर जाओगी आज मेरे साथ। शायद गिफ्टवाला वहाँ मिल जाये? तब तो मैं जाऊँगी ही नहीं। क्यों भला? सालों पुरानी पहचान होगी आपकी। अच्छा बाबा, हम बातें ही करते रहेंगे या तैयार भी होंगे। शाम के सात बजे गये और जाने में आधे घण्टे लग ही जायेंगे। ठीक है दीदी। मैं गाड़ी निकालता हूँ। तुम जल्दी से तैयार हो जाओ और ऐसा कह वो चला गया था वहाँ से। मैं तैयार होने लगी थी। मैंने उसकी पसन्द की साड़ी ही पहनी और जब तैयार होकर उसे बुलाने गयी वो वहाँ नहीं था। मैं डर गयी। गाड़ी दरवाजे पर खड़ी थी और राजीव कहीं नहीं था। मैंने उसे आवाज दी राजीव, अरे कहाँ चले गये तुम? तभी उसने पीछे से आके मेरी आँखें बन्द कर दी। मैं तो पास ही था दीदी। आपको डरा दिया न? मैंने रोते हुए कहा इस तरह कभी गायब मत हो जाना राजीव, मुझे बहुत डर लगता है। जल्दी से फिर हम दोनों तैयार होकर निकले। तभी नीतू का फोन आ गया। दीदी, आप और राजीव कब आ रहे हैं? मैंने राजीव से कहा, और देर करो तुम्हारी चहेती का फोन आ गया न। लाओ दीदी, मुझे दो। मैं बात करता हूँ और उसने मेरे हाथ से फोन लेते हुए कहा कि नीतू हम तो तुम्हारे ही दरवाजे पे कब से खड़े हैं। जरा दरवाजा तो खोलो और फोन रख दिया। मैं फिर उसके साथ गाड़ी में बैठ गयी। रास्ते में उसने मुझे बहुत सारी जगहें दिखायी। मेरी चाहत कभी थी ही नहीं कि मैं बाहर की दुनिया भी देखूँ। उस दिन राजीव ने जब मुझसे बाहर जाने की बात की थी तो मैं इनकार न कर सकी थी। और तब मुझे उसके साथ घूमने में मजा भी आ रहा था। मुझे अपना कॉलेज का जमाना भी याद आ गया था। इसी तरह मैं इन रास्तों से अनिल के साथ गुजरी थी कभी। हमारे प्रेम का पौधा जवान भी हुआ था। हमारे आँगन में कलियाँ भी खिली थी। मगर वो कली जब फूल में बदल गयी, अनिल ने मुझसे रिश्ता तोड़ लिया था। फिर वक्त बीतता चला गया था। मैंने फिर उस फूल की परवरिश की और अनिल के साये तक से मुझे नफरत होने लगी थी। मैं सोच भी नहीं सकती थी कि वही अनिल दोबारा इतने सालों बाद मुझे मिल सकता था। जब हम पार्टी में पहुँचे, नीतू ने हमारा खूब सत्कार किया। राजीव से जरा सी नाराज थी वो। राजीव ने आने में देर भी कर दी थी और उसे दरवाजे

पे रहने की बात भी की थी। नीतू ने हम दोनों को भैया-भाभी के पास ले जाते हुए कहा कि भाभी ये हैं दीदी, राजीव की बड़ी बहन और भैया आप भी इनसे मिलिए न? हमने इन्हें अपनी तरफ से बुलाया है। तब वो हमारी तरफ पलटा था और मै उसे देखकर दंग रह गयी थी। ये कैसा संयोग था? नीतू का भाई था वो जिससे राजीव बेहद प्यार करता था। मैं वहाँ पार्टी में अनमने ढंग से बैठी रही। तभी राजीव ने पीछे से आते हुए कहा दीदी, भैया-भाभी कैसे लगे? अच्छे। अच्छा राजीव तुम थोड़ी देर रूको, मैं आती हूँ। तभी राजीव ने मेरा हाथ पकड़ लिया था। कहाँ जा रही हो दीदी, शादी की बात नहीं करोगी? राजीव, फिर कभी कर लेंगे। नहीं आज ही करो न? आज के दिन भैया ने हमारी मंगनी तय की है नीतू के साथ। तभी तो इन्होंने हमदोनों को बुलाया है। नहीं राजीव, मैं बहुत नाराज हूँ तुमसे। क्यों दीदी? क्योंकि तुमने मुझसे पूछे बगैर मंगनी की तैयारी कर डाली। तब अनिल बोला था, नीतू के लिए हमें और भी रिश्ते मिल जायेंगे आशा जी। अगर आपको हमारी बहन पसन्द नहीं तो हमारी तरफ से कोई दबाव नहीं है। नीतू, आओ मैं तुम्हारी मंगनी आज ही करवाऊँगा। लड़कों की कोई कमी नहीं है हमारी पार्टी में। मगर भैया राजीव? राजीव को भूल जाओ। वो आशा का भाई है और आशा जैसी लड़की के भाई से मैं भी तुम्हारा रिश्ता तय नहीं कर सकता। तुम्हारी मंगनी अजय से होगी और वो भी आज ही। ठीक है भैया। और राजीव मेरी तरफ देखकर बस खामोश रह गया था। मैंने उसे इशारे से बाहर बुलाते हुए कहा राजीव, चलो घर चलते हैं। इतने अमीर नहीं हैं हम जो ऐसे रिश्ते मिलेंगे हमें। तब राजीव ने मुझसे पूछा भी नहीं था कि दीदी ऐसी क्या बात है आप दोनों की जिन्दगी की जो भैया आपको ऐसा कह गये? गरीबी-अमीरी की दीवार इतनी ऊँची होती होगी, मैं नहीं जानता था और आते ही राजीव बिस्तर पे लेट गया था। मैंने उसे मनाते हुए कहा कि कोई जरूरत नहीं राजीव किसी की खातिर दिल जलाने की। जिन्हें हम पसन्द ही नहीं थे, उनके दिलों में झाँकने की जरूरत क्या? और जाकर किचेन में चाय बनाने लगी थी कि राजीव की आवाज सुनाई दी मुझे। वो चीख रहा था, दीदी! मैंने क्या कर लिया देखो? मैंने गोली मार ली अपने सीने में और मैंने गोली की आवाज भी नहीं सुनी। मुझे भी कुछ सुनाई नहीं दिया था। वो साईलेंसर लगी रिवाल्वर से गोली दाग गया था अपने सीने में। मैंने दौड़कर उसे अपने से लिपटा लिया था ये कहते हुए कि राजीव तू मुझसे इतना नाराज हो गया रे। नहीं दीदी, मैं नाराज तुमसे नहीं उस कमीने से हूँ जिसने तुम्हें गाली दी, अपशब्द कहे। हमारा अपमान किया। मैंने कहा, जानता है बेटा वो कौन था? तेरा बाप। क्या? और तुने उस कमीने की खातिर अपने आप को मिटा दिया। मगर दीदी! मेरी माँ। गौर से देख राजीव, मैं ही तेरी माँ हूँ। क्या? और उसकी साँसे टूट गयी थी। हमने कभी सोचा न था कि ऐसा हो जायेगा और अपनी अकेली जिन्दगी पे रो पड़ी थी। आज भी वो लम्हें मेरे जेहन में गूँजते हैं और मैं राजीव को भूल नहीं पाती।

तिलस्मी नागिन

नागमाता! तिलस्मी नागिन एक सपेरे की कैद में तड़प रही है। नागमाता, कोई रास्ता ढूँढो उसे वापस लाने का। तो नागमाता गुस्से से तमतमाते हुए बोली, संरक्षिका! जरा मेरा शीशे का दर्पण तो लाना। कई दिनों से मैंने शृंगार नहीं किया। संरक्षिका हैरान हो गयी। नागमाता शृंगार करेगी इस उम्र में। मगर क्यों! तभी नागमाता ने फिर कहा संरक्षिका शीशे का दर्पण लाओ, मैं शृंगार करूँगी, सुना नहीं तुमने। तो संरक्षिका बोली, अभी लाती हूँ नागमाता और जैसे ही शीशे के सामने गयी वो अंधी हो गयी। नागमाता अट्टहास कर उठी। मेरे शृंगार पर एतराज कर रही थी तुम संरक्षिका। देख मैं किन आभूषणों से सुसज्जित होती हूँ। आज एक युवती की तरह शृंगार करूँगी मैं। तुझे जलन हो रही थी न मेरे चेहरे की लाली को देख। क्या तू भूल गयी कि नागमाता सोलह साल में एक बार शृंगार करती है। आज के दिन मेरे शृंगार के सोलह वर्ष हो चुके हैं। आज के दिन जो मेरा चेहरा देखता है वह फिर कभी संसार नहीं देखता संरक्षिका। तुने तो मेरा शीशे का दर्पण देख लिया। संरक्षिका रो पड़ी। गलती हो गयी नागमाता। मेरी आँखों के दीये फिर से रोशन कर दे। मगर नागमाता ने एक न सुनी। सोलह आभूषणों से सुसज्जित होकर नागमाता चल पड़ी तिलस्मी नागिन की तलाश में। वो एक पेड़ के नीचे कुंडली मार बैठ गयी। वहाँ से एक नौजवान गुजरा। नागमाता ने युवती का वेश धरा और जाकर उस नौजवान से बोली, सामने का रास्ता सीधा जाता है या टेढ़ा? तो उस नौजवान ने कहा आप मुझसे क्यों पूछ रही हैं? आपको जाना कहाँ है? इस सूनसान इलाके में आप किसका इन्तजार कर रही हैं? तो नागमाता बोली, अपनी किसी सहेली की। वो कह गयी थी कि यहाँ पेड़ के नीचे बैठना मैं तुमसे मिलने आऊँगी। तो वो नौजवान बोला, किसी नवयुवती का यूँ अकेले रहना खतरे से खाली नहीं। आप खामखाह उनके लिए परेशान हो रही हैं। यहीं पास में मेरा घर है। चलिए, वहाँ से आगे जाने की बात सोच लेना आप। नागमाता ने पहले नखरे किये, फिर चल पड़ी उस नौजवान के पीछे। नौजवान की नजर उस नवयुवती पे तो गयी थी मगर उसके सोलह आभूषणों में से एक भी उसे चकाचौंध न कर सके। तब नागमाता ने एक चाल चली। उस नौजवान के पेट में जोरों का दर्द उठा। वो बोला, आप मेरे घर के अन्दर जाइए। भूख से मेरा पेट दर्द कर रहा है। मैं जरा जीविका का सामान लेकर आता हूँ। इसी बीच अगर आपकी सहेली मुझे मिली तो मैं उन्हें अपने साथ लेता आऊँगा। तो नागमाता ने कहा, एक जवान खूबसूरत नवयुवती को तुम यूँ हीं छोड़कर जा रहे हो नौजवान। अगर इसी बीच कोई नवयुवक मुझसे छेड़छाड़ करे तो? तो उस नौजवान ने कहा, मैं कोई तरकीब सोचता हूँ और फिर अचानक हँसते हुए बोला कि जबतक मैं बाहर रहूँ, आप दरवाजा बन्द रखना। जैसे ही मैं लौटकर आ जाऊँ आप दरवाजा खोल देना। नागमाता ने हामी भर दी और उस नौजवान के जाते ही उसके बिस्तर पे लेट गयी। नौजवान के सीने में जोरों का दर्द उठा। वो मन्त्रमुग्ध होता चला गया। अब उसे जीविका का सामान नहीं चाहिए था। उसको पीड़ा शान्त करने के लिए बिस्तर चाहिए था। वो दौड़ता-भागता घर आया और आते ही दरवाजा खटखटाया। दरवाजा खुलते ही अन्दर गया तो उस नवयुवती ने उसका हाथ पकड़ लिया। नौजवान मन्त्रमुग्ध हो उसके साथ हमबिस्तर होता चला गया। जब उसकी आँखें खुली, उसके सामने से वो नवयुवती गायब हो चुकी थी। बिस्तर पे आभूषण

का एक टुकड़ा पड़ा था। नौजवान को रात की सारी घटना याद आ गयी। वो शर्म से पानी-पानी हो गया। सोचने लगा कि जब मेरी प्रेमिका को इस बात का पता चलेगा तो वो मर जायेगी। इससे पहले की उसे मरना पड़े, मैं ही मर जाता हूँ। उसने आत्महत्या कर ली। नागमाता के शृंगार और जवान हो गये। उसे सोलह वर्षों बाद इतना अच्छा हमसफर मिला था। उसके मरते ही संरक्षिका की आवाज आयी, नागमाता! दर्पण टूट गया। तिलस्मी नागिन किसी की कैद में तड़प रही है। तो नागमाता ने अपने जिस्म की ओर देखा जहाँ आभूषणों के एक भी निशान न थे। सारे आभूषण गायब हो चुके थे। तभी संरक्षिका ने फिर कहा नागमाता! तिलस्मी नागिन जीवन के आखिरी कैदखाने में कैद हो गयी है। आप जिस नौजवान के साथ हमबिस्तर बनी उसने आत्महत्या कर ली। अब कौन करेगा आजाद तिलस्मी नागिन को उस सपेरे से। इसके लिए उसे सोलह साल और इन्तजार करना होगा। तभी आवाज आने लगी। नहीं नागमाता कुछ कीजिए। मैं तड़प रही हूँ। तभी नागमाता ने फिर कहा, सपेरे को अपने वश में करने के लिए मुझे सोलह शृंगार और करने होंगे। इस सोलह शृंगार में मुझे सोलह वर्ष लगेंगे। तो तिलस्मी नागिन बोली, नहीं नागमाता! इतने वर्षों में तो मैं बूढ़ी हो जाऊँगी। तो नागमाता ने कहा, ठीक है। तुम सपेरे को किसी तरह अपने वश में करो। मैं अपने शीशे के आयने में समय बढ़ाने की कोशिश करूँगी। फिर आवाज आयी, नागमाता! वो दर्पण टूट चुका। तो नागमाता खीज गयी और कहा, संरक्षिका! तेरी ये मजाल कि तू मुझसे जुबान लड़ाये। तो संरक्षिका बोली, नहीं नागमाता! मैं जुबान नहीं लड़ा रही। मैं तो अंधी हूँ। लाचार हूँ न? हा, हा.....कर नागमाता अट्टहास कर उठी। तू अंधी है, तू लाचार है, तू मेरा क्या बिगाड़ सकती है? कुछ नहीं, कुछ भी नहीं। तो संरक्षिका बोली, पर तिलस्मी नागिन शायद तेरा कुछ बिगाड़ दे नागमाता। जल्दी से उस सपेरे से उसे आजाद करा दे। तो नागमाता बोली, नहीं! पहले सोलह वर्ष होने दो। तभी आवाज आयी, अभी-अभी तो तुमने कहा था कि सोलह वर्ष जल्दी बीत जायेंगे तेरे शीशे के दर्पण में। हाँ कहा था, मगर मेरा चेहरा इस बात की गवाही नहीं दे रहा। तभी संरक्षिका हँस पड़ी और कहा, नागमाता! तुने मान लिया न कि तू एक बूढ़ी और बदसूरत काली नागिन है। हाँ, मान लिया। इतना कह संरक्षिका की ओर झपटी। मगर सामने उसका चेहरा आ गया। शीशे के एक टुकड़े पे नजर पड़ गयी उसकी और वो तड़पने लगी। उधर सपेरे की कैद में सो रही तिलस्मी नागिन का दिल सपेरे पे आ गया। सपेरे को वो मन्त्रमुग्ध देखती रह गयी। देखते-देखते सोलह वर्ष बीत गये। आज फिर नागमाता ने युवती का वेश धरा और सोलह शृंगार कर चल पड़ी सपेरे की तलाश में। संरक्षिका इन सोलह वर्षों की कैद में तड़प-तड़प कर मर चुकी थी। नागमाता फिर जंगल में जाकर बैठ गयी। सपेरा उसी रास्ते से गुजरा। नागमाता ने युवती का वेश धरा और सपेरे से बोली, मुझे विश्राम करना है। मैं थक गयी हूँ। बहुत दूर से आयी हूँ। जरा तुम बता सकते हो कि ये रास्ता किस गाँव की ओर जाता है। तो सपेरे ने कहा, ये रास्ता किसी गाँव की ओर नहीं जाता। ये रास्ता मेरे घर की ओर जाता है? युवती बनी नागमाता हँस पड़ी शिकार मिल ही गया आखिर इन सोलह वर्षों में फिर और सपेरे के पीछे-पीछे चल पड़ी। सपेरा बीन बजाता जा रहा था। नागमाता उसके बीन की धुन पे मदमस्त अपने उम्र के बीते दिनों की ओर झाँकना

भूल गयी। वो धीरे-धीरे काली और बदसूरत होने लगी। एक-एक कर के सारे आभूषण उसके गले से उतर गये थे। वो नाचती-नाचती एक ओर लुढ़क गयी। तभी संरक्षिका की आत्मा प्रकट हुई और बोली, नागमाता! तिलस्मी नागिन की तलाश में निकली थी तू पर तेरे स्वार्थ ने तुझे जीते जी तेरी सारी तिलस्मी ताकतों से जुदा कर दिया और तिलस्मी नागिन को तू सपेरे की कैद से छुड़ा न सकी। मगर वो तिलस्मी नागिन जीत गयी। परसों रात वो तिलस्मी नागिन आजाद हो जायेगी क्योंकि उसकी आजादी में तू रूकावट थी। तू अपने स्वार्थ में आकर उसे छुड़ाने की बात भूल गयी थी। तीसरी रात को तिलस्मी नागिन एक नायाब तोहफे से सजी अपने मुल्क को प्रस्थान करेगी। वो आजाद हो एक अथाह तिलस्मी ताकतों की मालकिन बन जायेगी। नागमाता की आत्मा तड़प उठी। मगर ये उसकी आखिरी तड़प थी। संरक्षिका की आत्मा बोल रही थी कि आज के बाद कोई नागिन तेरी तरह साजो शृंगार नहीं करेगी। किसी मर्द को मुग्ध नहीं करेगी, वो किसी मर्द से मुहब्बत नहीं करेगी। वो हार कभी नहीं मानेगी मर्द जाति से। एक जीत की खुशी जरूर होगी उसे कि जिस तिलस्मी कैद में वो तड़प रही थी, उसी तिलस्मी जाल से वो मुहब्बत कर बैठी जहाँ कैद भी उसे आजादी ही नजर आयी।

▭

एक आखिरी उम्मीद

भूख से बेहाल लोमड़ी जगह-जगह खाने को तलाश कर रही थी। एक कौआ, जो कब से पेड़ पे बैठा था बोला, लोमड़ी दीदी! तुम किसे तलाश रही हो जंगल में? लोमड़ी कुछ नहीं बोली। कौआ फिर बोला लोमड़ी दीदी, बताओ न तुम किसे तलाश रही हो यूँ परेशान होकर? लोमड़ी फिर भी कुछ नहीं बोली तो कौआ पेड़ की डाल से उतरकर जमीं पे आकर बैठ गया लोमड़ी के पास और बोला लोमड़ी दीदी! क्या तुम्हें जुकाम हो गया है या सर्दी लग गयी है या किसी ऐसी चीज को तलाश रही हो तुम जो गुम हो गयी है? तब लोमड़ी ने कहा कि कौवे भाई, मैं कई दिनों से भूखी भटक रही हूँ। इस जंगल में मुझे खाने को एक भी सामान नहीं मिल रहा। पेड़ पर जो फल लगे हैं, वो सब कसैले हैं? तुम्हें मेरी इतनी ही फिक्र सता रही है तो भैया जरा ऐसा फल तलाश करो इस जंगल में जो मीठे हों और मुझे खाने में अच्छे भी लगें। तब कौवे ने कहा दीदी, मैं जिस पेड़ पे बैठा था वहाँ चिड़िया का एक घोंसला था और उस घोंसले में नन्हें-नन्हें दो बच्चे थे। अगर उसकी माँ से कह तुम्हारे लिए खाने का इन्तजाम कर दूँ तो? तो लोमड़ी ने कहा कि हाँ कौवे, इससे अच्छी कोई दूसरी बात हो ही नहीं सकती। चलो मुझे वहाँ ले चलो।

कौआ उड़ गया और लोमड़ी उसके पीछे-पीछे चलती रही। चलते-चलते कौआ एक स्थान पे रूका और बोला लोमड़ी दीदी, वो पौधा मिल गया और वो चिड़िया भी मिल गयी जो अपने बच्चों के लिए दूर से खाना लेकर आती है। लोमड़ी की भूख और खाने की बेकरारी बढ़ती जा रही थी। जब चिड़िया के पास जाके कौआ बोला कि बहन, मेरी एक समस्या है। मैं जिस जगह रहता हूँ वहाँ एक लोमड़ी रहती है जो कई दिनों से भूखी है। अगर आज उसे खाना नहीं मिला तो वो मर जायेगी। तब चिड़िया ने कहा कि भाई, बात तो ठीक है पर मैं ठहरी एक छोटी सी चिड़िया। मेरी चोच में तो छोटे-छोटे दाने ही समा पाते हैं। मैं खुद दो दिनों से भूखी हूँ। मैं अपने बच्चों को खाना कहाँ खिला रही हूँ। मैं तो अपने दूध में पानी मिला इन्हे पीला रही हूँ ताकि इनकी जान बची रहे। कहाँ है वो लोमड़ी जो भूखी है? मुझे उसके पास ले चलो। कौवे ने पेड़ के नीचे इशारा करते हुए कहा कि वो नीचे बैठी है। चलो उसके पास। लोमड़ी जो भूख से बेहाल अपनी आँखें मुन्दे बैठी थी, चिड़िया की आवाज को सुनकर बोली, भैया खाना ले आये हो क्या? तो कौवे ने कहा कि उसी का इन्तजाम तो करने आया हूँ। तो लोमड़ी ने चिड़िया के आगे हाथ जोड़ते हुए कहा बहन, मेरे लिए कम-से-कम एक रोटी ला दो। तो चिड़िया बोली, दीदी! मैं जिस जगह से खाना लाने जाती थी वहाँ बाढ़ का पानी भर आया है। कीड़े तो मिल नहीं रहे मुझे, मैं भला रोटी कहाँ से लाऊँ? मेरे बच्चे खुद भूख से बेहाल रो रहे हैं। तब निराश लोमड़ी कौवे से बोली, भैया यहाँ तो खाना भी नहीं मिला, उल्टे भूख की लालच और बढ़ गयी। मैं बड़ी उम्मीद से इस जगह आयी थी तो चिड़िया ने कहा दीदी, सब्र करो। मैं देखकर आती हूँ बाढ़ का पानी निकलता कब है?

लोमड़ी फिर उम्मीद में वहाँ से उठी और कौवे से बोली, भैया क्या पानी जल्दी निकल जायेगा? पता नहीं दीदी। मैं तो उस तरफ कभी जाता भी नहीं, कौवे ने कहा। तो लोमड़ी बोली, आज चलो न मेरे साथ भैया? तो वो कौवा बोला, कहाँ-कहाँ भटकती फिरोगी

भूख से बेहाल दीदी? यहीं आराम से बैठो और खाने का इन्तजार करो। हो सकता है, कोई राही ही मिल जाये जिसके पास खाने का सामान हो। तब लोमड़ी फिर से उठकर बैठ गयी और पूछा क्या इस तरफ कोई राही भी आता है भैया? हाँ दीदी, राही तो एक दिन में कई आ जाते है। आखिर ये रास्ता मुसाफिरों का ही है न, कौवे ने कहा। लोमड़ी उम्मीद करती फिर रोटी का इन्तजार करने लगी। एक राही आया भी वहाँ तो कौवे ने लोमड़ी को जगाया दीदी, राही आ गया। क्या खाना है उसके पास, लोमड़ी ने पूछा? होगा दीदी। उसके सर पे भारी गठरी है। लोमड़ी ललचाती उस राही के गठरी को देखने लगी। कौआ बोला, दीदी मैं इसके सर पे बैठ जाता हूँ और देखता हूँ कि इसकी गठरी में खाने के कितने सामान हैं। तो लोमड़ी बोली, जल्दी से जाओ भैया। नहीं तो ये राही चला जाएगा। कौआ वहाँ से उठा और जाकर पेड़ पे बैठ गया। मगर उसकी गठरी से खाने का सामान नहीं निकाला और जाकर बोला लोमड़ी से कि दीदी मैं तो उसकी गठरी को खोल-खोल परेशान हो गया। उसमें खाने के ढेर सारे सामान रखे थे मगर गाँठ ही बड़ी जटिल थी उस गठरी की।

लोमड़ी फिर नाउम्मीद हो गयी और ललचाने लगी। उसकी गठरी में खाने का इतना सामान था। आज अगर इस कौवे से उसकी गठरी खुल जाती तो कितना सारा खाना खाने को मिल जाता हमें। तभी कौवे की आवाज गयी उसके कानों में। उसने कहा, दीदी मैं भी जा रहा हूँ, अब भूख मुझे भी सता रही है। तो लोमड़ी बोली, तुम जहाँ खाने की तलाश में जा रहे हो भैया, वहाँ मुझे भी ले चलो न। तो कौवे ने कहा, तुम कहाँ जाओगी दीदी, मैं जहाँ जा रहा हूँ, उस तरफ तो एक नदी बहती है। मैं तो उड़कर नदी पार चला जाऊँगा मगर तुम तो नदी में डूब जाओगी। ऐसा कह वो उड़ गया।

कौवे के उड़ते ही लोमड़ी भूख से छटपटाने लगी और सोचने लगी कि कौवे को तो भरपेट खाना भी मिल जायेगा जबकि उसे भूख भी कम ही सता रही थी। और मुझे, मैं कई दिनों से भूखी हूँ मेरा क्या होगा? ऐसा कह रोने लगी। तभी एक छोटी सी गिलहरी आयी। उसके मुँह में रोटी का एक टुकड़ा पड़ा था। वो लोमड़ी के पास जाकर बोली, बहन क्यों रो रही हो? लोमड़ी ने आँखें खोली और पूछा, तुम कौन हो? खाना दोगे मुझे? तो गिलहरी बोली, तुम्हें भूख लगी है? क्या रोटी के एक टुकड़े से भूख मिट पायेगी तुम्हारी? लोमड़ी बोली, हाँ। मेरी भूख रोटी के एक निवाले से मिट जायेगी। ऐसा कह लोमड़ी उसके पास बैठ गयी। गिलहरी ने रोटी के उस टुकड़े को लोमड़ी को खिला दिया। लोमड़ी की आत्मा तृप्त हो गयी। वो वहाँ से फिर कभी उठ नहीं पायी क्योंकि भूख से बेहाल लोमड़ी की साँसे अब टूट चुकी थी। ये सोच कि जिनके पास खाने को तलाशते मैं इतनी बार मिन्नतें लेकर गयी, उन्होंने मुझे खाना नहीं दिया और जिसे मैं हमेशा अपने पंजों से कुचलती रही, उसने मुझे रोटी का एक निवाला खिला दिया जिससे शायद उसकी भूख तो मिट जाती मगर मेरी भूख और बढ़ गयी।

यही कहानी है संसार के हर एक मोड़ पर कि जिनके पास रोटी होती है, उन्हें भूख नहीं सताती पर जिनके पास रोटी नहीं होती वो ऐसे ही मारे-मारे फिरते हैं, फिर भी रोटी नही मिल पाती।

तालाब में हंसों का एक जोड़ा रहा करता था। बहुत प्यार था दोनों को एक दूसरे से। जब भी हँसनी अकेली होती, यही सोचती कि मेरे बाद हंसा का क्या होगा? इतना ही याद करती कि हंसा, हँसिनी! मेरी हँसिनी! पुकारता चला आता। दोनों एक दूसरे के प्यार में डूब जाते। घंटों एक-दूसरे को निहारा करते। एक दिन हँसिनी ने कहा, हंसा! मेरे हंसा! मेरे बाद तुम जी पाओगे। तो हंसा ने कहा, हँसिनी! हमने साथ जीने-मरने की कसमें खायी है। हमें कोई जुदा नहीं कर सकता। हँसिनी को लगता कि कितना प्यारा है हमारा हंसा। वो मंद-मंद मुस्काती। एक दिन हँसिनी के दिल में दर्द उठा। वो कराहने लगी। उस वक्त हंसा वहाँ नहीं था। वो तड़पती रही। तभी उसकी नजर हंसे पे पड़ी जो अपनी चोच में एक सुनहरी मछली लिए हुए आ रहा था। हंसा को देख वो अपना सारा दर्द भूल गयी। उसने सोचा, जब हंसा को मेरे दर्द का एहसास होगा, वो जी नहीं पायेगा। उसने अपने सीने पे हाथ रखा और हंसा की ओर पलटकर देखा। वो अभी थोड़ी दूर था। वो चलने लगी और हंसा के करीब पहुँची। आज हंसा बोल नहीं पा रहा था क्योंकि उसने चोच में मछली दबा रखी थी। हँसिनी ने जब उसकी आवाज नहीं सुनी, व्याकुल हो गयी। उसे लगा, इस मछली की वजह से हमारा प्यार कम हो गया। उसने ऐसे चोच मारा कि मछली गिर पड़ी और गिरते ही पानी में तैरने लगी। तैरते हुए बोली, हँसिनी बहन! तुमने आज मेरी जान बचाकर मुझपे जो अहसान किया है, इसके लिए मैं सदा तुम्हारी आभारी रहूँगी। जब भी तुम्हें मेरी जरूरत हो, मुझे आवाज देना। मैं दौड़कर आ जाऊँगी। आज से तू ये जान ले बहन तू कि मैं तेरे अहसान के बदले तेरी जिन्दगी बनूँगी। आज तुने मेरी जान बचायी है। कल मैं तेरे लिए जीवन-सहारा बनूँ, यही मेरा अरमान है। हंसा ने दोनों की बातें सुनी तो उसे जलन होने लगी। उसने कहा, हँसिनी! इस मछली ने हमारे प्यार में दरार डाल दी है। आज से हमारा प्यार बँट गया। तुमने अपना आधा प्यार इस मछली को दे दिया और मुझे किसी की छोड़ी हुई चीज पसन्द नहीं। मैं कितने प्यार से तेरे लिए मछली पकड़कर लाया था। मगर तुम्हें मेरी जिन्दगी प्यारी नहीं। इस मछली में प्राण हैं तुम्हारे। आज से तुम मेरी कोई नहीं। हम तुम्हारे कोई नहीं। इस मछली से दिल लगा लो। तो हँसिनी ने रोते हुए कहा, नहीं मेरे हंसे! मुझे तुमसे प्यार है, सिर्फ तुमसे। अगर तू मुझे छोड़कर चला गया तो मैं कैसे जीऊँगी? हंसा ने कहा हँसिनी! मुझे तुमसे भी ज्यादा खूबसूरत हँसिनी मिल जाएगी जिससे मैं दिल लगा लूँगा। तो हँसिनी ने कहा, पर हंसा! मुझे तुम्हारे जैसा हंसा नहीं मिलेगा। सोचो, मैं अपना दिल कैसे लगाऊँगी। तो हंसे ने कहा, मछली से और इतना कह मुँह फेर लिया। हँसिनी के दिल में दर्द उठा। वो तड़पने लगी। बोलती रही, हंसा! मेरे हंसा! लौट आ। मैं जी नहीं पाऊँगी तेरे बगैर। देख, एक बार मेरी ओर पलटकर देख ले। नहीं तो फिर दुबारा मुझे कभी नहीं देख सकेगा। मगर हंसे ने पलटकर नहीं देखा। उसने वो तालाब ही छोड़ दिया। हँसिनी अपने सीने पे हाथ रखे हुए बार-बार हंसा की याद में रोती रही। उसका दर्द बढ़ता रहा। उस तालाब में और भी कई हंस-हँसिनी थे जिनके प्यार को देख वो सोचा करती थी कि कहाँ चला गया हंसा? कल हमारा प्यार भी इतना ही सच्चा था मगर आज झूठा हो गया। उसने आसमान की ओर देखा और खुदा से दुआएँ माँगी कि हे खुदा! मेरा हंसा, जहाँ भी रहे, खुश रहे। मछली ये सब कई दिनों से देख रही थी। उसे

अपनी जिन्दगी से नफरत हो रही थी। वो बार-बार यही सोच रही थी कि काश! हंसा ही हँसिनी के पास होता। मैं मर जाती तो कितना अच्छा होता। मगर माँगने पर मौत भी मिल जाती अगर तो ये दर्द, ये आँसू कहाँ से पनपते। धीरे-धीरे मछली दर्द में डूबी बीमार रहने लगी। मगर उसने यही देखा कि हँसिनी आज भी हंसा की याद में रोती रहती है। मगर उसे आज तक याद नहीं किया हंसा ने। अब उसने दोनों की गलतफहमी दूर करने की कोशिश की। वो इतनी बीमार हो गयी कि चल भी नहीं पाती थी। मगर उसे तो हँसिनी की खुशियाँ प्यारी थी। उसने हँसिनी को जिन्दगी देने का वादा किया था। उसने हंसा को ढूँढने का फैसला किया। पूछते-पूछते एक दिन उसका पता मिला उसे। वो चल पड़ी उसे बुलाने। वो बार-बार गिर पड़ती। मगर आज प्यार की दीवानगी सवार थी उसके ऊपर। आखिर उसकी नजर हंसा पर पड़ी जो दूर तालाब के किनारे बैठा रो रहा था। मछली ने उसके करीब जाते हुए कहा, हंसा! मुझे पहचाना। मैं वही सुनहरी मछली हूँ जिसे तुम अपनी चोच में दबाकर ले गये थे एक दिन और मेरी वजह से तुम्हारे प्यार में दरार पड़ गयी थी। तुम्हारी हँसिनी बहुत बीमार है, वो मर जाएगी! चलो मेरे साथ। आज अगर तुम नहीं गये तो शायद जीवन में फिर कभी उतनी प्यारी हँसिनी नहीं पा सकोगे तुम। अब हंसे को लगा कि इस मछली के दिल में कितना प्यार है हमारे लिए। जिसे मैं मारने चला था वो आज हमारी जिन्दगी की फिक्र कर रही है। वो दौड़ पड़ा हँसिनी! हँसिनी! पुकारते हुए। मछली भी पीछे-पीछे चल पड़ी। हँसिनी जो आखिरी साँसे ले रही थी, उसने जब हंसे की आवाज सुनी। जी उठी। हंसा जब उसके करीब पहुँचा, बोला मुझे माफ कर दे हँसिनी! तो हँसिनी ने कहा, नहीं हंसा! माफी मत माँग मुझसे, हमारा प्यार ऐसा नहीं था जो कम हो जाता। मुझे विश्वास था, तुम जरूर आओगे। तब हंसा ने रोते हुए कहा, हँसिनी! हमें उसी मछली ने मिलाया आज जिसे कि मैं मारने चला था, और तुमने उसे एक नयी जिन्दगी दी थी। हँसिनी ने कहा, कहाँ है वो मछली? तो हंसा बोला, पता नहीं। तभी उसकी नजर मछली पे पड़ी जो दोनों के प्यार को देख खुदा का शुक्रिया अदा कर रही थी। वो दोनों मछली के पास गये मगर तबतक वो मर चुकी थी। तब याद आया हँसिनी को कि एक दिन मछली ने वादा किया था कि मैं अपनी जिन्दगी कुर्बान कर दूँगी तुम पर। आज उसने अपना वादा निभा दिया। दोनों ने खुदा के दरबार में सर झुकाए और कहा, तेरा हर एक बन्दा सलामत रहे, यही सिखाया है हमें मछली ने आज। आज उसके त्याग ने हमें जीवनदान दिया है। खुदा! तू हमें माफी दे।

भाग-२
निबन्धा संग्रह

भूमिका

मेरी हर लेखनी में मेरी कोई-न-कोई भूमिका जरूर रही। कहीं मैं कपड़े कतरनेवाली एक नादान, बददिमाग लड़की की भूमिका में आयी तो कहीं मैं ऐश्वर्य कमाती ऐसी नारी की भूमिका में सजी जिसे धरती का दर्जा दिया मेरी लेखनी ने। मैं हर एक के पास गयी ये कहने कि मुझे सजा दो। मैं विधवा का सादा जीवन नही जी सकती। मुझे वालों का गजरा लाके दो, मेरे हाथों में मेंहदी रचाओ, मेरी कलाई में रंग-बिरंगी चूड़ियाँ पहनाओ। मेरे माथे पे बिन्दिया सजाओ। मेरे जिस्म की सफेदी को लाल, नीले, हरे, पीले रंगों के लिबास से सजाओ। कहीं मैं किसी के पास ये कहने गयी कि मैं बिछोह में तड़प रही हूँ। मेरा मिलन करा दो यहीं पर। हर एक भूमिका में बँधी मैं आवारा बादल बन हमेशा उड़ती रही। मैंने कभी किसी से कोई शिकायत नहीं की। मैं हमेशा अपनी भूमिका से खुश रही। उदास भी रही कहीं मैं कि किस वेश में आके किस गली की राह देखने लगी हूँ।

वर्षों बीत गये मुझे इस जगह खड़े और जब मेरे पैर दुखने लगे, मैंने खुद से कहा, अब और इस जगह मत रहो। चलो चटाई बिछी है, जमीन पर सो जाओ और जब मैं जमीन पर सो गयी, मिट्टी की खुशबू मेरे जेहन में दौड़ने लगी। मैं एक बार फिर एक भूमिका में सजी। मिट्टी की अमरता की पहचान में इस मोड़ पे आके ऐसे खड़ी हुई जैसे एक लड़की अपने आप से शिकायत करती खड़ी हो कि मुझे आजतक क्या मिला? मैंने जब से इस धरती पे कदम रखा, मैं रोती ही रही। मगर जवाब में मुझे कुछ भी न मिला और फिर मैंने बूढ़ी ताई की भूमिका में खुद को खड़ा किया जहाँ कई बच्चे मेरी मौत के शोक में व्याकुल हो रहे थे। उनके माता-पिता मुझे विदाई देने आये थे। जब मेरी विदाई हो रही थी, सभी की आँखें नम थी।

मैंने अपनी बन्द आँखों से सबको देखा और आशीर्वाद दे उनके घर से निकल गयी एक अनजान सफर पे। यही सोचती कि मैं संसार से दूर जा रही थी तो मुझे विदा करने इतने लोग आये थे। कहीं मैं अपनी भूमिका में खुद को ऐसे सजा रही थी कि मेरी आत्मा मुझे रोक रही थी। मैं हारकर एक कोने में बैठ जाती हूँ। किसी की बारात जाती है, किसी की जिन्दगी में ग्रहण लग जाता है। मेरी हर कहानी में मेरी ऐसी भूमिकाएँ रही जिसमें मैंने खुद को बखूबी दर्शाया। मैं एक ऐसी नाजनीन परदेवाली की भूमिका में आयी किसी लेखनी में कि मैं खुद अपना ही चेहरा देखने को तरस गयी। दवा में जहर की शीशी, ओठों पे सिसकियाँ और चेहरे पर गहरा घूँघट पड़ा। ये सब भूमिकाएँ मुझे टोकती है बार-बार। मगर मुझे ऐसी ही भूमिका पाना अच्छा लगता है। मैं हर एक बोल में सजी ऐसी अभिनेत्री हूँ जिसकी सारी भूमिका में मैं किसी से मेल नहीं खाती थी। पहले पृष्ठ से आखिरी पृष्ठ तक मेरी भूमिका एक ही कहानी कहती है लोगों से कि मैं एक बेबस नारी हूँ, बेबस बेटी हूँ। मगर मैं आँख में आँसू लिए उस मोड़ पे खड़ी हूँ जहाँ से कि अनगिनत लोग गुजरते हैं। कोई कहता है, मैं एक नादान लड़की हूँ खिलौने से खेलनेवाली। कोई कहता है, मैं बेवाक हूँ। मगर नहीं। मैं एक कलाकार हूँ, तरह-तरह की भूमिका में सजी। अगर मैं किसी मोड़ पे पगली माई का लिबास ओढ़ लेती हूँ तो इसमें मेरा पागलपन नहीं, मेरी कलाकृति का नमूना है। मेरी किसी भूमिका में मेरी माँ मेरे मुँह में जहर खुलेआम नहीं डालती, वो मुझे खीर खिलाती

है और सुला देती है। ये सच है कि मैं मर भी जाती हूँ। मगर शर्म से नहीं, बूढ़ी माँ की बेबसी से। ये सब भूमिकायें है मेरी जिसे निभाकर मुझे गहरा संतोष होता है। अगर मैं जगह-जगह मृत पड़ी औरत की भूमिका में लाती हूँ खुद को तो इसमें भी मुझे मेरा जीवन मजाक नहीं लगता बल्कि समझ होती है मुझे दुनियादारी की कि संसार में इतने तरह के लोग रहते हैं जो कि हम जैसे लोगों को नीच नजर से देखते हैं।

अगर मैं अपनी किसी भूमिका में किसी लाला बाबू का कत्ल होते देखती हूँ तो इससे मैं गुनहगार नहीं कहला जाती बल्कि मैं एक ऐसी लड़की बन जाती हूँ तब जिसे खुशी होती है ये देखकर कि माँ ने किसी का खून किया है मेरी इज्जत बचाने के लिए। इन सब भूमिकाओं में मैं खुद को कभी छोड़ना नहीं चाहती क्योंकि मुझे ऐसा लगता है कि मैं फिर एक और किस्म का रोल करूँ जिसमें मेरी भूमिका कुछ और हो। अपने इस बेमतलब जीवन में मैंने इतनी सारी भूमिकायें की कि मैं अपने धैर्य और ऐश्वर्य पर नतमस्तक होना सीख गयी। मुझे पहली बार लगा कि मैं खालिस जिन्दगी जीने के लिए नहीं आयी इस धरती पर बल्कि इस मिट्टी की जमीन पर मेरी इतनी भूमिका रही। आगे से और भूमिका मुझे नये-नये रोलों से सजायेगी ताकि मैं गर्व से कह सकूँ कि हाँ मैं सच से श्रेष्ठ हूँ। हाँ मैं एक प्रशस्त मार्ग से आगे जाने को तैयार हूँ। मेरे कदमों में सितारे बिछे हैं। मेरे माथे पे तिलक है विजय का। ये सारी भूमिकायें मेरी लेखनी का कमाल थी जिसमें मैंने खुद को दर्शाया, खुद के लिए दिखलाया ।

मैंने कई किस्से लिखे अपनी जिन्दगी में और हर बार अपनी कहानी में एक भूमिका पायी मैंने अपनी। कहीं मैं चंचल हिरणी बन बागों में दौड़ती रही, कहीं स्याह काली रात बन झिलमिल दीये की रोशनी में अपना अक्स देखती रही। मैं हर एक बार अपनी भूमिका को सजग करती गयी और मेरी लेखनी लगातार चलती रही। किसी रोज मैं किसी से झगड़कर घर वापस आ गयी तो किसी रोज माँ की डाँट भी पड़ी हमें। किसी रोज मैं सागर किनारे गयी तो किसी रोज सराय पास में ही पाया मैंने। मेरी हर भूमिका एक जान डालती रही मेरी कहानियों में। कहीं मैं पीपल के पत्ते से खेलती रही तो कहीं कटोरे में पानी भर उसमें छेदकर बहाती रही। मेरी यही सब कलात्मक बातें मेरे फण को लगातार साकार करती रही। मैं हर पल, हर लम्हा किन्हीं यादों में खोयी रही और कहीं से मेरा हमराज आया और मुझे अपने साथ लेके जाने लगा। मैंने पूछा किस गली में घर है तुम्हारा? उसने कहा, पतली गली में। मैंने पूछा, किस रास्ते का नाम प्रीत बन्धन है। उसने कहा, मेरे मंजिल के रास्ते का और मैं उसके साथ निकल पड़ी। रास्ते में उसने मुझसे पूछा कि कैसा एहसास हो रहा है तुम्हें मेरे साथ चलने में। मैंने कहा आनन्द का। तो वो एक जगह रूकते हुए बोला बस यही सवाल करने थे तुमसे हमें और आगे चला गया। मैं रोती रही और फिर आँसूओं ने मेरी इस भूमिका को साकार कर दिया। मेरा हमराज तो चला गया पर मेरा बालपन का अन्दाज जुदा न हो सका मुझसे। मैंने अपने लिए एक खिलौना खरीदा। मोरनी बाग से एक मोर लाया और चढ़ गयी पेड़ पर। मेरी मोरनी मेरे मन के बाग में नाचती रही।

मैं उमंगे सजाये उसका मजा लेती रही। न सूरज डूबने की फिक्र हुई मुझे न शाम ढलने की। मेरी इस भूमिका में मेरी मोरनी हमेशा साथ रही। कभी पंख पसारे तो कभी पंख समेटे और मैं हँसती-मुस्कराती उसके साथ खेलती रही। मगर जब रात का अँधेरा घिरा अपनी दूरी का एहसास हुआ मुझे। मैं घर से काफी आगे निकल आयी थी। मैं मोरनी हाथ में लिए आती रही, आती रही और पीछे से मेरी माँ की आवाज लगातार गूँजती रही। घर आजा, घर वापस आजा। शाम घिर आयी है। मेरे ऐसे नाज-नखरे कई बार उठाये मेरी माँ ने। कभी मैंने उनसे नई पोशकों की फरमाईश की तो कभी खीर-पूए जैसे पकवानों की। ये सब मैं एक साथ खाना चाह रही थी और वो मुझसे जरा भी चिढ़ नहीं पा रही थी। वो बना रही थी और मैं खा रही थी। मेरी इस कहानी की ये भूमिका तो काफी जानदार रही क्योंकि इस कहानी में मेरी माँ ने मेरे उमंगो की बातें कई बार की थी। मेरे बारे में कई बार सोचा था और ऐसे बालपन के खेलों पर कई बार मुस्करायी थी। मैं हर पल, हर लम्हा एक ही बात दोहराती रही कि मेरी आरजू क्या है जीवन में। तो पाया कि भूख से बचना। बेबस निगाहों के दायित्व से उबरना। रोटी तकती निगाहों को बरसने से बचाना और मेरी ऐसी सोच ने मुझे ऐसा बना भी डाला। मुझे भूख-प्यास की तृष्णा से मुक्ति भी मिली। मुझे माँ की कही बातों को समझ पाने का ज्ञान भी मिला और सबसे बड़ी बात मेरी आत्मा तृप्त भी हुई। मैंने ऐसी ही कई रचना की, कितनी करती रही और मेरे माथे की बिन्दिया तब मेरे माथे से सरकती महसूस हुई मुझे और मैंने अपने को तलाशना चाहा। पर यह क्या हमारे हाथों में महकनेवाले एक भी बेले नहीं थे। तो मैं पूछ बैठी अपनी जिन्दगी से कि ये कैसा रूप रचा तूने हमारा। उसने

कहा, सादा और फिर मैंने सफेद साड़ी पहन ऐसे शौक से लज्जा को अपनाया कि मेरी लेखनी खुद दंग रह गयी मेरे ऐसे रूप को देखकर और फिर मैंने बाल बिखरा हुआ पाया अपना। कानों की बाली डोल रही थी और गले में पड़े हार को उतारकर छोड़ डाला हमने। सबकुछ एक साथ किया हमने ऐसे मौके पर अपनी ऐसी भूमिका में और जब सुकून से एक पल गँवाये बैठी मैं तो एक शोर सुना मैंने। गली में कुछ लोग एक औरत पे पत्थर मार रहे थे। कह रहे थे कि इसे यहाँ से जाने को कहो। मैं हौले-हौले कदमों से चलती वहाँ गयी और सबसे कहा, इसे जाने दो। मगर लोगों ने उसे जाने न दिया। तब एक गाड़ी गुजरी। वो उसके नीचे दबकर मर गयी और मेरी लेखनी में एक नया दर्द उभरा। मैं कसक की आग में जलती तड़पती रही। ऐसे सारों को लिखकर और फिर एक ऐसा शेर लिखा मैंने जिन्दगी को साक्षी रखकर जिसे पढ़ लेने के बाद किसी को हमसे ग्लानि न हुई। मगर फिर भी हँसते लोगों की कमी न हुई इस जमात में और इस तरह मैं पल-पल सुलगती रही कि कहीं से ऐसे में हवा का एक झोंका आया। मेरा मन-आँगन सुरभि की ताजी कलियों से सज गया। मैं मुस्करा पड़ी और मेरी साड़ी के छोरों को पकड़कर एक बच्ची खड़ी हो गयी। मैंने तब जान लिया कि एक बार फिर से मेरी कहानी में मेरा बालरूप जिन्दा हो गया और इस तरह मैंने अपनी कलम को सराहा और अपनी रचना की किताब में अपनी नयी भूमिका को किस रूप में साकार करना है, इस बारे में सोचने बैठ गयी। पर एक बार भी ऐसा न लगा मुझे कि इतनी सारी मेरी भूमिकाएँ एक बार भी मुझे मेरे ही किस्सों से बाहर निकलने पर मजबूर कर सके। यही तो लिखने की कला और मेरी लेखनी का ध्येय रहा कि मैं अपनी कहानी का एक पात्र मात्र हूँ जिसमें मेरी भूमिका हर जगह है।

एक और किस्सा

मेरी कहानियाँ मुझसे मेरी पहचान माँगती है और उसके पात्र मुझे अपने से लगते हैं। कहीं पर एक नन्हीं सी लड़की बन खेलती नजर आती हूँ मैं, तो कहीं एक जवान जिस्म को फूलों की सेज पे सुलाती हूँ मैं। लोगों की जुबां पर मेरा नाम अनेक बार आता है, पर मुझे कोई परख नहीं पाता। मेरी माँ मुझसे पूछे बगैर गुजर जाती है और मेरे बाबा मुझसे उम्मीद की एक किरण माँगते हैं। मेरी सखियाँ मुझसे मिलने का बहाना लेकर आती है और मुझे डोली में बिठा चली जाती है।

मैं बार-बार तड़पती हूँ उनके बीच और कोरा कागज मेरी लिखाई के साथ मुझे जोड़ता चला जाता है। कहीं पर मैं परिन्दा बन चिड़ी के बाग में विचरण करने निकल जाती हूँ तो कहीं मेरे हाथों में पीपल का पत्ता देख मुझसे पूछते हैं मेरे सारे दोस्त कि कहाँ से लाये हो ये पत्ता तुम और मैं जवाब में उसे पेड़ की ऊँचाई को दिखा देती हूँ और कहती हूँ वहाँ से लायी हूँ मैं। है तुम्हारे पास चिड़ी के बाग से पत्ते चुराने को पंख? है तुम्हारे पास मेरे जितनी समझ? तब वो कहते हैं हमसे कि तुझे उड़ना किसने सिखाया? मैं कह देती हूँ, कहानी के पात्रों ने, कोरे पन्नों ने और एक बार फिर से कोरा कागज लेती हूँ मैं और खुद को एक नये अन्दाज में पेश करने लग जाती हूँ। इस बार खुद से खिलवाड़ करती एक अल्हड़ लड़की का लिबास ओढ़ लेती हूँ मैं चेहरे पर और जाकर दर्ज हो जाती हूँ उस सादे कागज पर। रात गुजर भी नहीं पाती कि मेरा बचपना बीत जाता है। मेरे हाथों से छीमियाँ छीन ली जाती है। मेरे बिखरे बाल और उलझ जाते हैं। मेरी खूबसूरती, मेरा अल्हड़पन खो जाता है। हर एक भूमिका में यही होता है मेरे साथ कि मैं पहले तो खूब मजे लेने लग जाती हूँ जीवन का लेकिन जब अन्त होता है मेरी कहानी का तो मैं अर्थी पे सुला दी जाती हूँ। ज्यादातर कहानियों में मेरी मौतें जहर खाकर होती है और सोचों के अनुसार मेरा जिस्म उसी पात्र की तरह जहरीला होता चला जाता है। मेरी सखियाँ मेरे हाथ से, मेरे पाँव से, मेरे जिस्म से सारा जहर उतार लेती है और मैं उन्हें एक बार फिर धन्यवाद देती खुद पे नाज करती रह जाती हूँ।

किस्सा आगे बढ़ जाता है। कहानी का पात्र एक नयी भूमिका को तलाशता फिर मेरे ही पास आता है कभी ईश्वर बनकर, कभी सुनन्दा बनकर, कभी राधा बनकर, कभी मोरनी बनकर, कभी हिरणी बनकर और इसे कोरे कागज पे उतारकर अपने अक्स में छुपा लेती हूँ मैं। वो मेरे सीने से फिर गुबार बन बाहर होने को मचलने लग जाते हैं और कहानियाँ एक नया मोड़ लेती हैं। इस नये मोड़ में मेरी पहचान बदल जाती है। यहाँ तो मैं एक पारसमणि सा पाक बना डालती हूँ खुद को। मेरा नाम शौक से लिया जाता है यहाँ पर और मैं गर्व से अपने सीने को चौड़ा कर लेती हूँ। लोग पूछते हैं मुझसे कि किसका नाम है पारस? मैं कहती हूँ मणि का। फिर वो पूछते हैं मणि कौन है? मैं तब खुद की तरफ इशारा कर देती हूँ और उनके जाने के बाद खुद को एक बार फिर से अपाहिज बना डालती हूँ मैं क्योंकि मणि की चमक में चमक रही थी मैं और इससे मेरी खुद की पहचान नहीं बन पा रही थी। मेरी भूमिका मुझे तलाश भी रही थी।

मेरी कहानी का पात्र तो एक बार फिर मुझे ही बनना था। मैं फिर एक कोरा पन्ना उठा लाती हूँ और एक खत भेज देती हूँ लिखकर कहानी के पात्रों को ये कहते हुए कि मैं आ रही हूँ थोड़े पलों के बाद। तबतक इसे ही पढ़ना तुम और जब वापस आती हूँ तो सबसे पहले अपने आप को तलाशने लग जाती हूँ। इसमें मेरी भूमिका क्या थी? लिखनेवाला कैसा था। पढ़नेवाले ने पढ़कर मुँह तो नहीं फेर लिया और इसी बीच मेरा चेहरा एक ऐसा लिबास ओढ़ लेता है प्रेमिका का जो खुद अपने ही हाथों अपने दोस्त, अपने प्रेमी का निकाह किसी दूसरे से करा देती है और घर आकर माँ से लिपट रोती है। माँ कहती है बेटे क्या हुआ? तब वो एक तस्वीर की तरफ इशारा कर देती है और तब माँ समझदारी से काम लेती है। जोड़ देती है बेटी के टूटे दिल को एक बार फिर से हाथ में खिलौनों की डिबिया थमाकर और वो लड़की खेलने लग जाती है उससे। मगर ये जीवन बर्बाद हो चुका था उसके लिए। वो खुद को फिर से पहले जैसा कहाँ बना पाती है और पर्दा गिर जाता है।

कहानियाँ सिमटकर भी सिमट नहीं पाती। रात गहरी हो जाती है। चन्द्रमा बादलों की ओट तले छुप जाता है और तारे जुगनू बन चमकने लग जातें हैं आकाश में। पूरा ब्रह्ममाण्ड इस बात की रजा दे देता है और मैं अपनी कहानियों के बारे में सोचती एक नयी भूमिका में सजने की तैयारी करने लग जाती हूँ। भूमिका मिलती भी है मुझे मगर रात के अँधेरे में वो कोरा पन्ना ही दिखाई नहीं देता हमें और हम आईने के अक्स के पीछे जाके खड़े हो जाते हैं ये कहते हुए कि फिर जब कहानी बनेगी तो उसमें एक भूमिका जरूर शामिल करूँगी मैं अपनी और ऐसा कह रात के साये को तकती मेरी निगाहें कब सो जाती है, पता भी नहीं चलता और एक किस्सा पनप भी जाता है जेहन में।

मैंने हमेशा अपने आपको आईने के सामने खड़ा कर देखा है और सोचा है कि मेरे बावरेपन का क्या होगा? कौन समझ पायेगा इसे? कौन सोच पायेगा कि मेरी हँसी एक मजाक नहीं उम्मीद है जीने की। मेरे आँसू एक जज्बे के साये हैं फकत। मेरी बोली एक दीये की झिलमिल लौ है मात्र जिससे रोशनी बाहर नहीं आ सकती। मेरा नाम एक कागज पे लिखा नहीं जा सकता। मुझे लोभ नहीं किसी बात का। मुझे फिक्र नहीं इन बढ़ते हुए किस्सों की। मैं तो बस एक साया बनके रह गयी हूँ जिन्दगी का। कुछ सोचते हैं नाज है मुझे अपनी कला पर। पर कैसे सोचूँ मैं ये सब मेरे पास तो कुछ भी नहीं सिवाय कच्चे? रंगों के। मैं तो न एक प्रतिबिम्ब हूँ, न एक सच्चा रूप। मैं तो धूमिल रूप मात्र हूँ एक चेहरे का। मेरा अरमान क्या लिख पायेगा कोई अपनी बातों से? मेरी पहचान क्या ले पायेगा कोई मेरी भावनाओं से? मैं तो एक रचित किस्सा हूँ जिसे जितनी बार पढ़ेंगे वो, उन्हें उतनी बातों का पता चलेगा। एक मुलाकात मात्र हूँ मैं किसी मुल्क का, जज्बात मात्र हूँ मैं किसी जिस्म का, एक आघात मात्र हूँ मैं किसी रिश्ते का। मेरा शृंगार क्या देख पायेगा कोई? सामने तो एक सादा रूप ही नजर आ पायेगा उन्हें। फिर कैसे नाज हो मुझे अपने आप पर। मैं सुन्दर हूँ या कुरूप क्या मालूम? मुझे कहनेवाले जो भी कहें, सुनना है मुझे। पर चर्चे में तो मेरी लज्जा ही आती है, मेरा रूप कहाँ। मेरी पहचान तो एक कोरा कागज ही जानता होगा मात्र जिसपे मैंने कुछ लिखकर अपने आप को दर्शाया भी है। तो बाकी के लोग क्या जानें मेरे बारे में जिन्हें सिर्फ मेरा लिबास झलकता है। जिन्हें सिर्फ मेरी आँखें झलकती है। जिन्हें सिर्फ मेरे बिखरे बाल झलकते हैं जिन्हें मैं कंघी करना भूल जाती हूँ। तो क्या ये नाज करने की चीज है जिसपे मैं नाज करूँ? मेरे सुन्दर लिबास मेरी सुन्दर आँखें या मेरे बिखरे बाल। कहाँ सोच पायी मैं कभी इनके बारे में। एक बार भी नहीं जान पायी मैं कि आईने से खूबसूरत हूँ मैं या आईना मुझसे ज्यादा खूबसूरत है। मैं एक ऐसी नादान चिड़िया हूँ जिसे पर तो दे दिये हैं किसी ने पर उड़कर वो किस रास्ते से जाये ये बताया ही नहीं। फिर क्या करे वो ऐसे परों का? कैसे नाज हो उसे अपने पंखों पर जो फड़फड़ाना तो चाहते हैं पर उड़ नहीं पाते।

कैसी है ये परकटी जिन्दगी, ये एक पर वाला पंछी ही जाने? न रास्ते को फिक्र हो सकती है उसकी, न आसमान को इन्तजार हो सकता है। अगर ऐसी हालत हो जब किसी की तो वो बेचारा जीव क्या करे सिवाय जमीन पर रेंगने के, तड़पने के? क्या उसे कभी पता चल पायेगा कि किस जगह की जिन्दगी अच्छी होगी और कहाँ जाकर सुकून मिलता होगा किसी को। नहीं तो फिर ऐसी हालत हो जाने पर कितनी समझ बाकी रह जायेगी किसी को जिसने न आगे का रास्ता देखा, न पीछे का मार्ग। वो कैसे जी पाये इन उड़ते पंछियों की जिन्दगी?

तो क्या ये जिन्दगी उसके लिए एक अँधेरी कोठरी के सिवा कुछ रह जायेगी, नहीं सोच सकता कोई क्योंकि किसी ने ऐसा जीवन जीकर नहीं देखा। किसी के पास महल होंगे ख्वाबों के। वो उससे झाँक लेते होंगे। किसी के पास आसमानी रंग होंगे जिन्दगी के। वो उसमें सराबोर हो लेते होगें पर जिसके पास कुछ भी नहीं वो क्या सुने इन बादामी गूँजों को जिसे न सुर का पता है, न ताल का। जिसे न ख्वाबों का पता है न जाल का।

मेरी जगह

कितनी बार मुझसे पूछोगे मेरा पता पापा? ये जो गली के मोड़ पे खड़ी एक ऊँची दीवार है, ये हैं मेरे। ये जो रास्ते पे खामोश पड़ी मिट्टी की दरारें हैं, ये हैं मेरे। ये जो सामने की दीवार के सहारे लगे पौधे की लतरें हैं, ये हैं मेरे। तब ये सुनकर पापा रो पड़ते है और कहते है बेटी जीवन में एक घर भी बनाना पड़ता है इन्सान को। मुझे बता तेरा घर कहाँ है, किस मुल्क में है, और उसका पता क्या है?

तब मैं कहती हूँ पापा, जिस इन्सान को घर बनाने की चाहत होती है वो मैं नहीं हूँ। जिसके मुल्क में जाके तुम मुझे एक घर तलाशने को कहते हो वो मुल्क, उस मुल्क की निशानी तक मेरे पास नहीं है। मेरे किसी भी मुल्क में छुपे किसी भी घर का कोई नाम नहीं है तुम्हारे जैसी इन्सानी बस्ती में । मेरे घर का पता तो आसमान जानता है। तुम उसी से पूछ लेना। तो पापा पूछते हैं मुझसे अगर ये लतरें वाले पौधे तेरे हैं, ये गली के मोड़ पे खड़ी ऊँची दीवारें तेरी है, ये रास्ता जो खामोश पड़ा है मिट्टी के साथ तेरा है। तो फिर हम कौन हैं तुम्हारे? तब मैं कहती हूँ तुमलोग मेरे कोई नहीं हो पापा सिवाय संसार में लाये एक माध्यम के। तुम तो मुझे संसार में लाने का एक जरिया मात्र बने हो। मैं तो तुम्हारे घर में तुम्हारे पास फकत दो कतरा आँसू बहाने आयी हूँ। मैं तो एक जर्रा हूँ और जर्रे जब धरती पर इन्सान बन रेंगने के लिए आते है तो इन्सानों की एक नयी जिन्दगी मिल जाती है उन्हें। मै हैरान होती हूँ ये देख कि संसार में कौन कैसा है? किसी के पास ऊँचे मकान हैं तो घमण्ड से अपनी दहलीज से नीचे देखता है लोगों को। जिसके पास रहने को एक झोपड़ी भी नहीं वो आँख उठाकर ऊँचे लोगों को देखता है। जिसके पास खाने का एक भी सामान नहीं वो भूखे पेट आराम से सो जाता है और जिसके पास खाने को अनगिनत सामान हैं, वो यही सोच-सोच जागकर आधी रात कर देता है कि आज क्या खाना पकाऊँ? कौन क्या खायेगा? किसको क्या पसन्द है? और वहीं ऊँची बिल्डिंग पर खड़ा खुद वो अपनी ही नासमझी पे लोगों को ताने देता फिर रहा है कि तेरे पास खाने को क्या है? कुछ भी नहीं। तुम तो कंगाल हो। तो क्या जो भूखा सो गया था रात को वो कंगाल था। या वो कंगाल हो गया जिसके पास खाने के इतने सामान होने के बावजूद खाने की फुर्सत नहीं मिली उसे। खाने का वक्त नहीं मिला उसे।

पापा! मैं जब भी इस संसार को देखती हूँ तो लगता है ये क्या है और कैसा है? कौन है इसकी पनाहों में? कोई भी तो नहीं। सब तो एक तरफ से नीलाम दीखते हैं, एक तरफ से मालामाल। तब पापा मेरी इस तर्क के आगे कुछ कह तो नहीं पाते मगर इतना जरूर पूछते हैं कि तेरी जगह कौन सी है बेटे इस संसार में? तब मैं अपने पास एक शीशा रख लेती हूँ और कहती हूँ पापा! शीशे के एक पहलू में मेरी जगह छुपी है। आईने के अक्स में मेरी जगह छुपी है। मेरे पास जो खामोश बैठा है, इन दीवारों में मेरी जगह छुपी है और मेरे इस जवाब पे पापा रो पड़ते है और कहते है बेटी! खुद को इससे आगे कहाँ तक देखा तुने? क्या कहीं और निगाह दौड़ायी तुने? क्या किसी और जगह अपने लिए जगह बनाकर देखा तुमने? तब मैं कहती हूँ पापा ये जो सामने खिड़की खुली है, ये मेरी जगह है। ये जो खामोश पड़ा है ये बिस्तर, इसमें मेरी जगह है, ये जो हौले-हौले से मुझसे बातें कर रहा

है, ये दीवारें मेरी है और सबसे आगे ये कहती हूँ मैं कि वो जो ऊपर आसमान में सितारे जगमगा रहे हैं, उन सब में मेरी जगह है। वो जो बादल उमड़-घुमड़कर बरसने को बेताब हैं, उनमें मेरी जगह है।

तुम्हारे संसार में मेरी जगह कहीं नहीं है और इतना कह लेने के बाद मैं खामोश हो जाती हूँ और एक नजर संसार को, एक नजर संसार में बैठे इन्सानी जमात के बारे में सोचती हूँ और हैरान होती हूँ ये देख की संसार में मेरी एक जगह और भी है, इन इन्सानों के दिलों में छुपी नफरत में। मेरी जगह है इनके ओठों में छुपी हँसी में। मेरी जगह है इनकी जुबानों से बोलती गन्दी बोलियों में जो मुझे देखकर भी नहीं देख पा रहे कि मैं कौन हूँ। मैं इनकी दुनिया की हूँ भी या नहीं ?

कितना शोरोगुल था मेरे आसपास के महौल में। हर पल यही डर लगता था कि कहीं दिल में खामोशी न छा जाए। कभी इस जगह तो कभी उस जगह बस जगह ही बदलते गए हम। मगर दिल की वीरानी कम न हुई। न सागर ने गहरा समझा मुझे न तूफान ने मौजा। लहरें उठती रही और हम बेबसी के गम में तड़पते रहे कभी इस किनारे तो कभी उस किनारे। मगर कहाँ करार पाया मेरी निगाहों ने। कभी किसी ने तुच्छ बनाया मुझे तो कभी साया। मैं बस इस उम्मीद में जीती रही कि एक दिन कहीं-न-कहीं से कोई फरिश्ता आएगा जिसके हाथ-पाँव कुण्ठित न हो सकेंगे मेरे पास आके। मगर ये क्या, वातावरण ही उम्मीद खो चुका, तड़प ही जवान रह गयी। मगर माया का ये रचित सार न बदल सका। दरिया का रूख मेरे सामने से ऐसा मुड़ा कि हैरान होकर बस इतना ही कह सकी मैं कि ये किस वेश में मिला तू मुझसे नादान? न परिक्रमा की मेरी, न दरियादिल कोई मिला मुझे, न दामन ही पिघला किसी का। किया तो बस इतना ही कि दिल में लगी आग को और बढ़ा दिया। पर कौन सुन सका था मेरी आवाज को। मेरे पास तो न मौजें थी, न दरिया का कोई साख माया। मैं जुड़ी भी तो किससे, खाली बंजर धरती से जिसने न मुझे शीतलता दी न अमर ज्योति बनने का वरदान। मैं बस पानी की खोज में भटकती रही। ऐसी रचित काव्य थी ये मेरी लेखनी कि सागर की स्याही ही खत्म हो गई, धरती की अंगड़ाई ही खत्म हो गई। मगर पवन देव ने दीया बुझाने का काम न छोड़ा अपना। मैं पल-पल बुझने लगी और बुझते-बुझते एक ही बात सोचती रही कि क्या कोई फिर से जला पाएगा मुझे? मगर फिर भी हवा के झोंके कम न हुए। मैं बुझते-बुझते भी हल्की सी ज्योत लिए जवान रही और मेरी इस थोड़ी से ज्योति ने मुझे एक बार फिर से जलते रहने की प्रेरणा दी। फिर मैंने सोचा कि हवा चाहे कितनी भी तेज क्यों न हो, मुझे जलते जाना है। फिर मैंने कविता लिखी, रचित काव्य लिखा, वीरान जीवन का सार लिखा और सबसे बड़ी बात दर्द की बुलन्दी लिखी। मैं जानती थी कि अमरत्व का दीपक भी मुझे ही मिलेगा ओर जीवन्त रूप की शिखा भी मुझसे ही जुड़ेगी क्योंकि मैं जानती थी कि रात का अँधेरा ही फकत जीवन ज्योत नहीं जलाती दिन का दीपक भी रोशनी देता है। और फिर मेरी इसी सोच ने मुझे जिन्दा किया। मैं हारकर भी जीतती रही पर कभी अपने बहे हुए आँसूओं से शिकायत नहीं की क्योंकि मैं जानती थी कि ये मेरी बीमार आत्मा के लिए मरहम है और बीमार तन के लिए गहरा जख्म।

मगर मैं फिर भी हार न सकी जीवन से। मैंने फिर कलम उठाया और फिर एक कहानी लिखी। इस बार मैंने अपना ही किस्सा लिखा पर अफसोस की बातें नहीं लिखी। दर्द का आलम बयां किया पर अपनी मासूमियत को रूसवा न किया मैंने।

मेरी ऐसी धारणा पहले भी रही है कि एक कागज के मुड़ जाने से किताब का हर पन्ना मुड़ नहीं जाता । अगर वो भी मुड़ गया तो फिर किताब खुला नहीं रह सकेगा और ये तो सभी जानते हैं कि जीवन पुष्प कभी नहीं मुर्झाता और जीवन्त रचना किसी की कभी बन्द नहीं होती, प्रशंसित होने से वंचित नहीं रह पाती। इसलिए मैंने अपने को फिर लिखने को उत्प्रेरित किया और लिख डाला एक सार जीवनी अपने ही काव्य के रूप को निखारकर और मुझे इतनी खुशी हुई फिर ये सोच कि आदि से अन्त तक और प्रशस्ति से रास्ता तक

कभी मेरा मार्ग नहीं बदल सकता। मैं मानवी रूप हूँ जीवन का। पर इससे पहले मैं एक आम इन्सान भी हूँ। भले ही मैं रचित रचना का सार नहीं बनना चाहती। पर मैं जानती हूँ कि एक दिन मेरे आँगन में भी सूरज का गोला चमकेगा और एक दिन मुझे भी सारे जग से खुशबू मिलेगी क्योंकि मैं पुष्प ही तो हूँ संसार का खिला। मैं बहार ही तो हूँ कायनात का। शोभित मान ही तो हूँ मैं। मैं स्याह अँधेरी रात नहीं हूँ जो अँधेरे में विलीन हो जाऊँ। मैं तो एक केन्द्र बिन्दु हूँ पहली किरण का। सूरज अपना मार्ग मुझे देखकर भले ही बदल ले, मगर अम्बर मुझसे हट तो नहीं सकता न क्योंकि वो विशाल भी है और मेरे सर के ऊपर भी है। फिर कैसी फिक्र अपने आँसूओं की? कैसा मातम जिन्दगी के गमों का? ये तो मुझे लिखने की प्रेरणा देते हैं और रचना करने को उकसाते हैं फिर एक नयी बात, फिर एक नई कहानी, फिर एक नया किस्सा।

मेरी इन निगाहों ने हर एक नजर को परखा है और हर पल यही पाया है कि सामने धोखा है। मगर धोखे की परख करने वाली मेरी निगाह जब खुद पे पड़ती है तो हैरान हो जाती हूँ मैं अपनी ही नजर में। मैं तो एक महान हस्ती हूँ। मेरी तारीफ करनी चाहिए लोगों को। और फिर सोचती हूँ कौन तारीफ करेगा मेरी? मेरे सामने तो लूल्हे-लंगड़े और बददिमाग लोगों की कतारें खड़ी हैं। मेरी इन निगाहों का अन्दाजा किसे होगा? मैं एक ऐसा रूप हूँ जीवन का जिसे देख पाना, समझ पाना और महसूस कर पाना किन्हीं अज्ञानी लोगों के वश की बात नहीं है। मेरे पीछे वो बदनामी लेकर आते हैं। हम शौक से उस दौर से गुजर जाते हैं। वो फिर दूसरा वार करने चले आते हैं दूसरा चोला पहनकर। हम अपनी निगाह को झुकाते तो नहीं और उनसे आँखें चार कर लेते हैं। उनमें से कुछ मुझपे हँसते हैं, तो कुछ मुझसे गन्दी जुबान से बोल बोलने को कहते है। मगर वो जितना चालाक समझते हैं खुद को, हम उससे भी ज्यादा तजुर्बेकार बना डालते हैं खुद को। वो एक आँसू देते हैं हमें। हम सैकड़ों फूल खिला लेते हैं अपने वीरान दिल के कोने में। मेरी तरफ से उन्हें कोई जवाब नहीं मिलता। उनकी तरफ से उनकी बदचलनी का पता जरूर चल जाता है हमें। जमाने तो कई देखे हमने अपनी जिन्दगी में और लोगों की भीड़ में शामिल भी हुए, मगर हाँ, कटे-कटे ही रहे। एक तरफ लोग मुस्कराकर मुझे हँसने को मजबूर कर रहे थे। एक तरफ मैं अपने को हँसी से दूर ले जाना चाह रही थी क्योंकि वो हँसी मेरी तबाही का इशारा कर रही थी। वो हमें हँसाकर हमारा मजाक उड़ाना चाह रहे थे। हम मौन बोली बोलकर उनकी चालों को मात करते जा रहे थे। यही तो सही परख थी हमारी निगाहों की कि चाँद और सूरज जब एक साथ उगना चाहकर भी उग नहीं पाते तो हमारा क्या? हम तो धरती की गोद में सो रहे एक मामूली इन्सान हैं, सूरज अगर चाहता भी है तो चन्द्रमा को अपनी शीतलता प्रदान करने से नहीं रोक देता। उसी तरह मैं खुद को शीतल कर देना चाहती हूँ ताकि फिर कोई नया सूरज न निकल आये आसमान में जो कभी भी अस्त न हो और ऐसी शिक्षा देकर हम अपनी निगाहों को और कामयाब कर देते हैं। वो संसार को ऐसे निगाह से परखना चाहती है कि किसी को खबर भी न हो और हम अपने आप को मंजिल की ओर लेकर चले भी जाएँ। मेरी मंजिल क्या उनकी मोहताज है जो उनकी निगाहों की हँसी में खुद को बदल डालेगी। हम एक सार पढ़-पढ़ संसार में जीते रहेंगे और वो हमारे पीछे अज्ञानी बने भटक रहे होंगे। कितना फर्क है मेरी और उनकी निगाहों में? मेरी निगाह तो एक इन्सान को परख भी लेती है मगर उनकी निगाह हमसे मिलकर भी अछूत रह जाती है। कितना चाहते हैं वो हमें मिटाना और हम मिटते दिल को भी जीना सीखा देते हैं ताकि कोई ये न कह सके कि मेरी परख झूठी है, मेरा आत्मसम्मान झूठा है। वो अगर एक बोतल शराब पीकर खुद को कॉफी का कप बताते फिरते हैं। तो उन्हें क्या समझ पानी और शराब की? वो तो दो बूँद पानी पी लेने के बाद खुद को सागर में डूबा हुआ पाते हैं। मगर हम तो दरिया ही दिल में बसाये हुए हैं। मेरी प्यास बुझाने को मुझे कुएँ के पास ले जाकर क्या करेंगें वो? हम तो खुद ही प्यास से अछूते हैं। हमे कहाँ प्यास है किसी सागर की? हमारी प्यास तो आदर और सम्मान ने बुझा भी दी है। मगर जो खुद की प्यास बुझाने की खातिर हमसे पानी माँगने को ललक

रहे हैं उनका क्या होगा? सोचे वो और तय करें सफर की वो कहाँ जाकर सिमट जाते हैं और हम कहाँ जकर खुशबू बिखेरते हैं। मेरी निगाहों को कई ऐसी भाषा का ज्ञान है जिसके एक लहजे को तरस जाते होगें लोग। हम आन और शान में लिपटा अपने आप को ऐसी ऊँची उड़ान पर ले जाने वाले हैं जहाँ से कि धरती तुच्छ और धरती के इन्सान जर्रे नजर आएँगे मुझे। है ऐसी सोच किसी की? चाहत है किसी को हमारी तरह मंजिल पाने की? वो डूब रहे हैं हमें डूबोकर और हम तो डूबकर भी शीतल बन बाहर आने लगे हैं। कौन मेरी निगाहों की भाषा पढ़ पाएगा फिर? हम तो ऐसी जगह खड़े हैं आज कि जहाँ से हमें सारे संसार में फैले हर इन्सान की बोली, उनकी जुबान, उनकी भाषा को अपने दिल के किसी कोने में दर्ज करने का मौका मिल रहा है। हमें हर बुराई की परख है आज। हमें सारथी बन रथ को खींचना नहीं है, हमें तो रथ पे चढ़ अर्जुन का तीन-कमान बनना है ताकि विजय निश्चित हमारी हो।

नम आँखें कुछ सोचती है, टूटा दिल कुछ सोचता है। मन का मयूर नाचता है। दूर कहीं पंछियों का शोर सुनाई देता है। हमारी निगाह उस तरफ चली जाती है और फिर मेरे कानों में एक गूँज सुनायी देती है। ये गूँज संसार में बिखरी धुनों के थे। ये गूँज मानव और मानवता की सोचों के थे। किसी जगह शहनाई बज रही थी, किसी जगह लकड़ियाँ सुलग रही थी। किसी जगह राग-रंग का फलसफा था, किसी जगह से गम के फलसफे की उम्मीद हो रही थी हमें।

कैसा अजब खेल था ये तकदीर का कि एक तरफ नमी मौजूद थी आँखों में, एक जगह खेल चल रहा था हँसी-खुशी का। ये सांसारिक रिश्तों की डोर कितनी कमजोर थी कि किसी को किसी की फिक्र नहीं थी। माँ-बाप, भाई-बहन सब परायी नजरवाले हो चुके थे इस जहां में और हमारी सोचें बार-बार हमसे पूछ रही कि तुमने जमाने में क्या देखा, क्या नहीं देखा? और हम यही सोच रहे थे कि जो भी देखा वो अपने को ही देखा।

जब दुनिया राग-रंग में डूबी थी, हम वहीं मौजूद थे। जब दुनिया लकड़ियों में सुलग रही थी, हम वहीं मौजूद थे। सब तरफ जा रही थी मेरी निगाह और फिर भी हम कुछ नहीं देखने का बहाना करते जा रहे थे। आँखें रोशनी को छूकर गुजर चुकी थी। पुतलियाँ शहनाई की रोशनी को देखते-देखते हैरान हो चुकी थी। मन में मोरनी ऐसे नाच रही थी जैसे संसार के हर एक साये में उसके निशान मौजूद हों। ये सब हो रहा था मेरे दिल में और मैं बार-बार यही सोच रही थी खुद के बारे में कि मुझसे पूछे कोई कि तुम्हें कैसा लगता है? चर्चा हो जब किसी की तो उसमें मेरा नाम भी आये। मगर नहीं, कहाँ आ पाया मेरा नाम कभी लोगों की जुबान पर। वो तो अपने-अपने किस्सों में मशगूल थे और हम अपने आँसूओं में डूब चुके थे।

कितना अजब था ये रिश्ता तेरा-मेरा? एक धुन बज रही थी दिल में सितार की और आँखों से बह रही थी आँसूओं की धार। कैसा खेल था ये किस्मत का? मानव को मानवता की भूख सता रही थी। अन्न से पेट खाली होता जा रहा था। प्यार के एक निवाले नहीं मिल पा रहे थे उसे। कैसे निभते फिर इन्सानी रिश्ते? अलग हो गये हर बंधन से। आँखों ने किनारा कर लिया। मौन धड़कनों ने खामोशी की चादर ओढ़ ली और संसार एक कोने में समा गया।

मैं बार-बार खुद के बारे में सोचती सांसारिक रिश्तों को तलाशने लगी और जब मुझे कोई मिल न सका, बैठ गयी मैं भी एक कोने में सिसकती और पूछा दरो-दीवारों से कि तुम कैसा महसूस कर रहे हो, मुझे तो तंगहाली का एहसास हो रहा है। तब वो कहता है कि मैं संसार के साथ जुड़ा हूँ। मुझे तो खामोश रहना ही है। अगर मैं तुमसे दो बातें कर लूँ चुपके से तो संसार मुझे टोक देगा और एक बार फिर मैं इसी तरह खामोश रह जाती हूँ, निरूत्तर हो जाती हूँ और हार जाती हूँ। आँखें नमी को पा लेती हैं। दिल इस बात की रजा दे देता है। मन का मयूर नाचने में एक बार फिर मग्न हो जाता है। शोर फिर होता है गली में और भीड़ तो लगते हैं तमाशे देखने को पर मेरी तरफ कोई नहीं देखता। मैं खुद के बारे में सोचती इसी कोने में बैठी रह जाती हूँ और मेरे सामने से हर एक नजारा गुजर जाता है

जिसमें कहीं शहनाई की गूँज शोर मचा रही थी, कहीं मौसम अठखेलियाँ खेल रहा था। कहीं लकड़ियाँ सुलग-सुलग धुआँ उगल रही थी। सबकुछ साफ-साफ दिखाई दे रहा था मुझे और मैं सब देखकर भी कुछ देख नहीं पा रही थी। मेरे सामने तो हर चीज का नजारा था, मगर सब-के-सब मेरी नम आँखों में समा चुके थे।

कितना अजब खेल हो रहा था ये मेरे साथ। सब कुछ पराया हो चुका था। पारम्परिक बंधन टूट चुका था और मेरी आँखें खामोशी से मेरा नाम बुदबुदा रही थी क्योंकि उसी के साये में तो खो चुके थे हम संसार के हर बंधन से छूटकर, हर रिश्ते को ठोकर मारकर और दिल भी ये सोचकर अब हैरान न था कि कौन कितने सवाल करता है हमसे। वो तो बस एक ही चीज की रट लगाये बैठा था कि संसार से कुछ पूछें हम और हम बार-बार उससे यही कह रहे थे कि हमने किनारा पा लिया है।

इन सांसारिक लोगों से हम सवाल करें भी तो कैसे? न मुझे कोई देखेगा, न मेरे बारे में कोई सोचेगा, न किसी को मेरी याद आयेगी।

काबुल

ये सारा जग मुझे काबुल लगता था। मैं इसकी सैर में खो गयी थी। कहीं मुझे तितलियों के झुंड मिले थे, कहीं बहते पानी के सरारे। कहीं मुझे पहचानी हुई डगर मिली थी, कहीं किनारे। कहीं बादल घिर आये थे, कहीं पानी बरसने को उताहुल हो चुका था। मैं हर जगह किसी काबुलवासी को तलाश रही थी। ये काबुल का गाँव बहुत ही दूर तक फैला हुआ था। एक जगह रूकने पर मुझे परिन्दों की टोली दिखाई दी। एक जगह रूकने पर पहाड़ों के नजारे। मिला-जुलाकर सारा नजारा बहुत ही खूबसूरत था। इस नजारे में खोयी मेरी निगाहों ने माँ की रोटी को भूला दिया, पापा के कांधे की सवारी को भूला दिया। मैं बस आगे, बहुत आगे भागती रही। बच्चों की कतारें पीछे रह गयी। यारों की मंडली में कोई और काबुलवासी शामिल हो गया और मेरा काबुल मुझे भूल गया। एक जगह रूकने पर मुझे किसी की आवाज सुनाई दी। मैंने पूछा, कौन? आवाज आयी काबुल की परछाई। मैं चौंक उठी। इतनी दूर तक आ जाने के बावजुद भी जब काबुल मेरे पीछे आ ही गया तो क्यों न मैं काबुल के बारे में दो शब्द कहूँ अपने आप से। ऐसा लगने पर पहले तो मैं पीछे पलटी। फिर पूछा अपने दिल से कि काबुल जाना चाहोगे? उसने कहा, पहचान गंवा दी हमने। हमने फिर पूछा, पहचान पा लेने के बाद? वो बोला, पंगर्डोडियो पे चलनेवाले पाँव गंवा डाले हमने और ऐसा कह खामोश हो गयी मैं। तभी पीछे से फिर किसी नन्हें बच्चे की आवाज सुनाई दी हमें। हमने कहा, कौन? तो आवाज आयी, काबुलवासी हूँ मैं। मैं हैरान तो हुई पर परेशान होना नहीं चाहा क्योंकि आज मैं किन्हीं काबुलवासियों को नहीं जानती थी। मैंने अपनी आत्मा को सबसे बड़ा काबुलवासी माना और उसकी रजा ये हुई कि अब हमें दुबारा उस जगह नहीं जाना। काबुल का वो छोटा सा गाँव जो कल छोड़ा था हमने, वो आज विशाल हो चुका होगा और ऐसा बदला हुआ नजारा देखने का आज मुझे कोई शौक न था कि ऐसे में अचानक किसी बच्चे के रोने की आवाज सुनी हमने। वो आँसू और वो तड़प कह रही थी कि मैं पुराना निवासी हूँ काबुल का। मुझे काबुल ले चलो। भला मुझे ऐसी आँसूओं से, ऐसी तड़पों से क्या मतलब हो सकता था? मैंने उस आवाज को सुनने से इनकार कर दिया और चल पड़ी किसी खामोश किनारे की तलाश में। बैठे-बैठे मुझे एक छोटा सा नाम याद आया जिसकी पहचान अब बदल चुकी थी। मैंने जब उस नाम की चर्चा सुनी तो पुरानी यादों के भँवर में खोती चली गयी मैं। एक मकान था हमारा, एक चाहत भरी मंजिल थी हमारी। छोटे-छोटे पाँव थे हमारे, लम्बी सी डगर थी हमारी और सबसे बड़ी बात एक छोटा सा कमरा था हमारा जिसमें मेरे सारे खिलौने करतब दिखा रहे थे। मैं उनके खेलों को देख खुश हो रही थी। खिड़की-दरवाजे बन्द थे और सामने काला गहरा धुआँ छाया था दिलों में। न मोर की पँखुड़ियों दिख पा रही थी हमें, न गाड़ियों की जलती-बुझती रोशनियों की झलक पा रही थी मैं। अँधेरे में चाबी घूमाने की अदा ही खो चुकी थी मैं। कार्टून में पड़े खिलौने शोर मचा अपनी-अपनी तरफ से परिचय देते चले जा रहे थे हमें। कोई कह रहा था, पहले मुझे निकालो। कोई कह रहा था पहले मुझे निकालो और हम थे कि खामोश बस उनके शोर को सुनते चले जा रहे थे। न कार्टूनी करामात मुझे अपने पास बुला पा रही थी, न कार्टूनी खिलौनों की जमात। मैं अँधेरे में जाने से कतरा रही थी कि ऐसे में काबुल के यहाँ से घण्टियों

के बजने की आवाज सुनाई दी हमें। मैं अपने पास अपनी दुनिया में वापस आ गयी। माँ की पकायी रोटी तवे पे जलकर राख हो गयी। पापा के कांधे मेरे बोझ को सह न सके, झुक गये और मैं काबुल का वो मनमोहक नजारा अपने पास लाना भूल गयी क्योंकि आज मेरे पास वैसा कुछ भी नहीं था। तितलियो के पंख टूट चुके थे। उड़ते हुए परिन्दे आसमान को छोड़ वापस जा चुके थे और काबुल का चेहरा बदल चुका था मेरी नजर में। मैं कुछ देखने और कुछ सोचने से पहले हजार बार काबुल की यादों को दोहरा लेना चाह रही थी। काबुल का मेरा वो पुराना मुल्क आज आबाद हो चुका था और उसी काबुल के निवासी थे हम जो बर्बाद हो चुके थे। मैं यही किस्सा पढ़ पा रही थी फकत और याद कर पा रही थी फकत। काबुल मेरे पीछे खड़ा था और मैं अपने उस पुराने काबुल के नजारे को भूल जाना चाह रही थी। मेरे सारे खिलौने करतब तो आज भी कर रहे थे। पर उनका मजा लेने वाला चेहरा, वो निगाह जो मेरे पास था, वो बदल चुका था। मतलब काबुल पुराना हो चुका था मेरे लिए और ये नया काबुल तोहफे से दब सा गया था और मैं तोहफे से सज सी गयी थी। मैं काबुल की परछाई को पीछे आता देख उससे दूर भाग रही थी और काबुलवासी मेरी इन सोचो पर मेरी पहचान तलाशने मेरे पास आनेवाले थे क्योंकि काबुल की पहचान सिवाय मेरे जितने किसी के पास न थी। आज सबकी नजरों में काबुल नया हो चुका था। पर एक मैं ही ऐसी थी जो काबुल को पुराना और काबुलवासी को नया बता रही थी और लोग मेरे इसी प्रश्न का हल तलाशने मेरे पास आनेवाले थे क्योंकि काबुल का पुराना रूप आज उन नये लोगों के बीच कहीं नहीं था और मैं उसके उसी रूप को अपने पास बर्षों से बिठाये थी।

मेरी कला का ध्येय

मेरा नाम कलाकार है। मैं कला की एक खूबसूरत हस्ती हूँ। मेरी कला एक आम इन्सान की भाँति किसी की मोहताज नहीं। मैं तो शुरू से लेकर आखिरी पन्ने तक खुद को विचार करती गुजर रही हूँ। मेरे रूप अनेकों हैं इस कागजी पृष्ठ पर। मेरे नाम अनेकों है इस लेखनी में। पर मैं वो ही एक हूँ। एक आम इन्सान की भाँति रंग नहीं बदला करती मैं। मैं पहले पृष्ठ से लेके आखिरी पृष्ठ तक एक सादापन ही लिये खड़ी रहती हूँ अपने जीवन में। मेरा फण ऐसी काव्य धारा का सार बन गया है जिसका कि नाम पाक था। जिसकी की पहचान पाक थी। मुझे न कला के साथ दौलत का मोह है न नाम का। मुझे तो जब भूखे की भूख पुकारती है मैं दौड़कर आ जाती हूँ। मुझे तो जब प्यासे की प्यास तड़पती दिखाई देती हैं मैं दौड़कर आ जाती हूँ। मेरा तो कोई स्वार्थ कहीं है ही नहीं अपने लिए अपनी लेखनी में। मेरी चर्चा ही लोग एक ऐसी हस्ती के रूप में करते हैं जिसका रंग-रूप सादा, जिसकी उमंग सादी, जिसका परिचय सादा हो। तो फिर मैं कैसे पहनूँ चोला किसी ऐसी हस्ती का जिसको कि अपने रूप-रंग पर घमण्ड हो। जिसे कि अपने सामने के लोग तुच्छ दिखाई देते हों। मैं तो ऐसा रूप लेकर आयी हूँ कला के साथ जिसका की वर्णन ही अवर्णनीय है। कोई मेरी कला पर मेरी तारीफ यूँ ही नहीं कर सकता। वो न चाहकर भी कहने पर मजबूर हो जाता है। मेरा किस्सा ही ऐसा था उस कविता में। मेरी बातें ही ऐसी थी उस कविता में। इस पुरानी कहानी में मेरी धारणा ही ऐसी थी उस जिन्दगी में। कहीं हाथ में रसगुल्ले लेने की ललक है किसी से तो कहीं कोई भूख के साथ ऐसे तड़प रहा है कि उसके लिए रोटी पकानी ही पहुँच से बाहर हो गयी है। मुँह में पानी तो आ रहा है पर पीऊँ कैसे। पानी तो मुझे चाहिए ही नहीं। मुझे तो रोटी की भूख है। मुझे तो एक निवाला चाहिए रोटी का। मैं माटी की गंध से निकली ऐसी सुरीली कविता हूँ जिसका कि अर्थ समझ पाना किन्हीं आमलोगों के वश में नहीं है। किसी का नाम ऊँचे लोगों में आता है क्योंकि उसकी बिल्डिंग ऊँची है। किसी का नाम रूतबेवाले इन्सान के रूप में आता है क्योंकि उसके पास जान-पहचान वाले कई थे उसके जो उसकी तारीफ बराबर करते हों। मगर है कोई मुझसा रूतबेवाला। मेरा नाम भूखे की भूख के रूप में आया है। किसी भूखे की जुबान हूँ मैं। मेरा नाम वस्त्रहीन लोगों के बीच आता है क्योंकि मेरे पास सादा लिबास जो था। वो बस भूखे के भूख की पहचान थी। उसने जिसने भी कहा मेरा नाम ऊँचा है। क्या एक सादा लिबास भी दे पाया वो किसी को जिसको कि रूतबेवाले कहकर चले गये लोग। कैसे थी ये पहचान उन लोगों की जो मेरी निगाह देखती है वो कहीं भी नहीं है जमाने में। जो मेरा दिल गाता है वो गीत कहीं भी नहीं जमाने में। जो मेरे रूठने पर मुझे खिलौने लाकर देता है, उसके जैसा भी कोई नहीं है जमाने में।

तो किस काम की ऐसी जिन्दगी जिसको की भूखे की भूख नहीं सताती। जिसको कि प्यासे की तड़प नहीं दिखाई दी चिलचिलाती धूप में। यही तो मेरी कला का मतलब है। मैंने तो सब देखा अपनी लेखनी में। मैंने वो सब पाया अपनी लेखनी में। तो लिखते तो कई होंगे अपने जीवनकाल में कुछ बातें। पर मेरे जैसा कलम का मालिक न आनेवाले कल में कोई होगा, न गुजरे हुए कल में कोई था। मुझे तो नाज होता है, मुझे तो घमण्ड होता है

अपनी काव्यधारा पर। मुझे तो लोगों की निगाहों को पाने में ऐसा महसूस होता है जैसे वो भीतर से कंगाल हों और ऊपर से अपनी ही बातें करते फिर रहे हों हर तरफ। ऐसे ही लोगों के चर्चे हैं जिनके पास न धर्म के नाम पर कुछ है न जिनका इमान ही पास है। पर हमने तो ऐसे लोगों के बारे में हजार बार लिखा कि ऐसे लोग मतलबपरस्ती वाले होते है। ऐसे लोग काबिलेतारिफ चाहते हैं फकत खुद की। मगर ऐसी तारीफ न मैंने कभी की है किन्हीं लोगों की न कभी अपनी लेखनी में करनेवाली हूँ। मुझे तो पता है कि किसकी जरूरत कहाँ पर है। कौन पहाड़ पर जाना चाह रहा है। कौन अन्धे कुएँ में झाँक रहा है। कौन भूखा मेरे पास आके खड़ा है रोटी के लिए। कौन नंगा मुझसे एक सादा वस्त्र माँग रहा है। मुझे तो सबकी खबर है और हर एक को देने को मेरे पास वो सबकुछ है जिसकी जरूरत है इन्हें। पर न मैं इन्हें रोटी देती हूँ, न इन्हें पानी देती हूँ। कहाँ से लाऊँ मैं इनके लिए रोटी? इनकी माँ के पास तो पैसे ही नहीं है। कहाँ से लाऊँ इनके लिए वस्त्र? इनके पिता तो खुद नंगे खड़े हैं। कहाँ से लाऊँ मैं इनके लिए भूख की दवा? तो कैसी है हमारी लेखनी। कैसा है हमारा कलात्मक जीवन। किसी को देखने की जरा भी फुर्सत नहीं। कुछ लोग कहते है, मुझे नाम देकर गये हैं। कुछ लोग कहते हैं मुझे कलम देकर गये हैं। पर मुझे तो सिवाय एक कलम के कुछ भी नहीं देके गये लोग।

कवयित्री

मैं एक कवयित्री हूँ। मैंने अपने काव्य लेखन में प्रकृति के भिन्न-भिन्न रूपों को दर्शाया है। कहीं मैंने लिखा कि ये जीवन एक बाग है और इन्सान पेड़-पौधे। संसार एक माली है। वो बाग सींच रहा है। बागवां फलिभूत हो रहा है। कहीं मैंने लिखा कि धरती एक पाषाण प्रतिमा है जिसपे जितना भी बोझ डालो उफ नहीं करेगी वो। मैं एक कवयित्री जिसने इतना कुछ लिखा इतना कुछ वर्णित किया, पर असल में मेरा जीवन कितना तन्हा है, ये कौन जान पाया। सबने देखा कि कवयित्री का पहला दोहा एक जीवन के उतार चढ़ाव को महसूस कराता है। मगर कहाँ देख सका वो कि उस कवयित्री का जीवन कितना महान है जिसे जुबां से लोग एक हस्ती कहते हैं। मैं एक लेखिका का ऐसा वर्णन हूँ जिसकी पहली पंक्ति से लेकर आखिरी पंक्ति तक लोग एक ही चीज लिखा पा रहे हैं कि कवयित्री एक दर्द का बदला हुआ रूप है। कवयित्री एक नन्हें रूप-शृंगार का बदला हुआ रूप है। कवयित्री एक औरत का पहला प्यार है। ये एक कवयित्री का ऐसा काव्य-वर्णन है जिसे जुबां से लोग बयान तो कर दते हैं मगर पढ़कर भी पढ़ नहीं पाते वो उस कवयित्री के जीवन को। मैं एक कवयित्री पल-पल खुद अपनी कलम के सार में उतरती जा रही हूँ। मैं जिस पल तड़पती हूँ उस पल को पानी का बहता हुआ रेला लिखा है मैंने। मैं जिस पल सिसकती हूँ उसे जीवन मायूसी की गंगा माना है मैंने। मैं पल-पल खुद अपनी कलम से रचती एक कवयित्री खुद पे हैरान होकर जीती हूँ कि मैं क्या हूँ। मैंने अपने बारे में इतना कुछ लिख डाला मगर समझ न सकी मैं कि मैं किस कागज के कौन से पृष्ठ पर अपना नाम लिख रही हूँ। किस कागज के किस पृष्ठ से अपना नाम मिटा रही हूँ। मैं एक कवयित्री जिसे प्रकृति का इतना वर्णन आता है, उसे जिन्दगी क्यों ऐसी तड़प दे रही है? पूछती हूँ मैं अपने दिल से कि कवयित्री के वेश में मैं कौन हूँ? मैंने लिखा कि सांसारिक बन्धन एक मायाजाल है। इसे तोड़कर चल देना किसी जीव के वश में नहीं। मैंने लिखा कि इस कायनात में एक औरत को मजाक समझते हैं लोग। उन्हें ऐसा करते वक्त खुद पे शार्मिन्दा होना चाहिए। मगर जब अपनी तरफ देखा तो पाया कि वो मजाक तो मैं खुद हूँ। तो क्या एक कवयित्री खुद की कलम से रूसवाई का चर्चा बयान करती है? क्या एक कवयित्री अपनी लेखनी में बेबसी पे खुद शर्मिन्दा होती है। तो क्या मैं एक कवयित्री इतनी विवश ही हूँ तो क्यों वर्णन करूँ मैं जिन्दगी को, जीवन नैया में चल रहे झाँकियों की जिसके हाथ में पतवार ही नहीं। तो मैं एक कवयित्री आज से प्रकृति का वर्णन छोड़ दूँगी क्योंकि इस प्रकृति में हर एक को वर्णित सार से जोड़ना पड़ता है मुझे।

मैं हार गयी आज लिखते-लिखते। मेरी कलम रोज-रोज के दर्द को बयान करते-करते थक गयी। मैं अब चन्द पलों के लिए आराम करना चाहती हूँ। नहीं चाहती मैं अपनी लेखनी में आगे भी कुछ लिखूँ जीवन के बारे में क्योंकि मेरा जीवन खुद एक वर्णित कविता है तो मैं दूसरों का दर्द कैसे बाँटू अपनी काव्यधारा में। मैं एक ऐसी लेखिका हूँ जिसे लिखने के साथ-साथ पढ़ना भी आता है। मैं एक दिन में कई बार कई बातें लिख डालती हूँ। मगर मैं संसार रचने वाली एक कवयित्री खुद अपनी रचना पे हैरान हूँ कि मैं अपना जीवन नहीं बदल पाती अपनी कलम से। मैं पल-पल एक ही बात लिख डालती हूँ कि जीवन एक महुआ है और हम सांसारिक लोग है जिन्हें इस रस को पीने में मजा आता है और हमें ऐसे

लोगों की तरफ देख शर्मिन्दगी होती है। मैं कैसे लिखूँ कि मैं हँसकर जी लूँगी। मैंने तो पल-पल दर्द ही देखा अपने जीवन में आगे-पीछे डोलते हुए। फिर मैं कैसे कहूँ, किस मुँह से कहूँ कि संसार का वर्णन करनेवाली मेरी निगाहें, तुम उन्हें मत देखो। मैं एक ऐसी कवयित्री हूँ जिसका नाम एक अमर कृति है, स्वर्णाक्षर है जिसे देखनेवाले देखकर हैरान होते है, सुननेवाले सुनकर रो पड़ते है। तुम मुझे देखो और मेरी बातों पर सोचो कि एक कवयित्री की कलम ने तुम्हें किस तरह से लिखकर बयान किया है।

कलाकार

मैं एक कलाकार हूँ। मैंने अपनी कलाकृति से तरह-तरह के जीव बनाये। मैंने पौधे से पौधे उगाये। मैंने बीज से बीज निकाले। मैंने अपनी रचना में एक सुन्दर घर भी बनाया रहने के लिए। कहीं मैंने रेत जोड़े, कहीं मैं पानी डालना भूल गया। सब एक तरफ खड़े थे, मैं एक तरफ। तभी सामने मेरी कलाकृति का ऐसा नमूना आया कि जिसे देख मैं दंग रह गया। मैंने इन्सान बनाये थे अपनी कला से। हाँ मैंने इन्सान बनाये थे। उसकी रचना की थी मैंने। एक तरफ मैं था एक तरफ मेरी जिन्दगी का बदला हुआ हर वक्त जहाँ मैं वक्त का मोहताज न रह सका। मैंने प्यास लगने पर पानी बनाये, भूख लगने पर रोटी। ये सब किसी रचना का सार था। हाँ मैं था इन सबके बीच में। सब मेरी रचना का सार था। मेरी कलाकृति थी ये। कपड़े से कपड़े बनाये हमने। उनमें तरह-तरहकी करीगरी की थी हमने तन को सुन्दर बनाने के लिए। एक कपड़ा पुराना हुआ, दूसरे की जरूरत हुई। मगर हमने अपने लिए जब इतने सामान पैदा किये तो साथ में पैसे का जुगाड़ भी किया। धीरे-धीरे वो पैसा ही पैसे कमाने का जरिया बन गया। मैं अपनी जरूरत के मुताबिक कमाता चला गया। पैसे से पैसे को बढ़ाता एक दिन मैं सफर के आखिरी पड़ाव पे आ गया कि ऐसे में आवाज सुनी हमने। ऐ कलाकार! कलाकारी कर तेरे जाने का वक्त हो चला है। एक नमूना छोड़ धरती पर अपने जैसा कोई। तो वो कलाकार चौंका हूँ, तो बातें भी करता है हमारा दिल। ये तो मैंने आवाज की रचना कर डाली। फिर जिन्दगी में शाम हो जाती है कलाकार की। वो रात की राह तकता जाने कब सो जाता है मगर सामने अपनी कलाकृति लिए कोई दूसरा तो आ जाता है। रातें सुबह में बदल जाती है। पौधे उगानेवाले, रेत से रेत जोड़नेवाले हम फिर अपनी कलाकृति को निखारने चल पड़ते हैं। सारी की सारी जरूरतें फिर से पलने लगती है जेहन में। ये मेरी ख्वाब सजानेवाली आँखें इस अजब से करिश्मे को एकटक देखती रह जाती है। मैं एक कलाकार हूँ ये तभी तक याद रहता है हमें जबतक कि अपनी रचना की तरफ देख नहीं लेता मैं। शाम के गहरे साये मुझे टोकते हैं। मेरे हाथ किसी अनजान राह पे मुड़कर भी मुड़ नहीं पाते। एक बार फिर मैं अपनी कलाकृति के सार से रचित इस धरती को देखने लग जाता हूँ। कहीं मैंने पौधे लगाये थे, कहीं रहने का बन्दोबस्त किया था हमने, कहीं रूपये पैसे से खरीदारी की हमने। कहीं पैसे उगानेवाले मशीन लगाये थे हमने, कहीं मशीन पे ये एक पंक्ति भी लिखी थी हमने कि पैसा एक लालची शय है इसलिए इसे कम ही निकालेंगे हम एक समय में। इसपे विचार करने को मैं एक और चीज बना पाता तो शायद मैं एक अच्छा कलाकार कहला पाता। मैंने दिल से दिल में उठती गम का तो अन्दाजा लगा लिया मगर मैं प्यार डालना भूल गया। जगह-जगह नफरत के मेले लगे देखने हमने। हमने ये पूछा इस धरती से कि ये कौन चला गया तो बदले में धरती ने मुझे ऐसे मंजर दिखलाये कि जिसे देख मैं दंग रह गया। धरती ने पहले मुझे मेरी रचना का रूप दिखाया। फिर मुझसे बातों-बातों में कहा कि ऐ मानव जाति! तुमने खुद नफरत वो तो दिये अपने-अपने घरों में। एक कलाकार की कलाकृति तो जवान हो गयी। साथ में अहम् भी जवान हो गया उनका। वो साथ-साथ रहते थे। मगर अब उनमें लड़ाई होने लगी। कोई छोटा, कोई बड़ा हो गया। एक सा कोई बचा ही नहीं। फिर ये नफरत, ये वहशत, इसकी चाह तो उठनी ही थी दिलों में।

कहीं आदमी का खून गन्दा हो रहा है। कहीं गरीबी दामन पसारे खड़ी है हमारे बीच। फिर कौन किसकी तरफ देखे। एक के पास पैसे का गुरूर है, एक के पास नशा है जवानी का। न अमीर कम होना चाह रहा है न गरीब क्योंकि दोनों की रंगों में बहनेवाले इस खून का रंग तो एक ही है। मैंने पानी मिलाया। मैंने मिट्टी को उसमें साना फिर मूर्ति गढ़ी इन्सान की। मैंने मिट्टी सान-सान चेहरा भी बनाया जिसमें तरह-तरह क रंग निखारने पड़े थे। मैं साँवली सूरतवाला मूर्तिकार हर रंग की तस्वीर बनाता रहा। मगर मैं कभी भी अपनी रचना से संतुष्ट न हो सका। कहने को तो मैंने इतना कुछ बना डाला मगर हाथ तो खाली ही पड़े रह गये हमारे। वक्त तेजी से बीता आज क्योंकि मैंने रचना ही ऐसी की थी। हमने एक बुजुर्ग बाप के चेहरे पे पड़ी काली परछाई बनायी थी। हमने उसके माथे के सिकन को पढ़ा था, वो हमारी सोच में डूबा बिस्तर पे पड़ा छत को निहार रहा था। मेरे बाद मेरे बच्चे का क्या होगा मैं बूढ़ा हो गया, कौन देगा हमारे पौधों में पानी। पानी डालनेवाले हाथ तो बूढ़े हो गये। मेरे बाद मेरी निशानी को कौन जिन्दा रखेगा। यही देखते-देखते मैं एक कलाकार अपनी कलाकृति पे हैरान होने लग जाता हूँ। मैंने इतना कुछ बना डाला अपनी रचना से। मैं हूँ कौन? तो बदले में एक बार फिर आवाज आयी। तुम एक कलाकार हो। तरह-तरह की रचनाएँ करना तुम्हारा पेशा है। तुम एक शिल्पकार हो, तुम एक आकार हो जीवन का। तो ये सारी बातें सुन मैं रो पड़ता हूँ। मैं इतना महान हूँ। मैंने ऐसी ही रचनाएँ की है। पर मैं धरती पर आया कब? सदियों पहले। शायद मैं तब आया जब ये धरती अपने जिस्म पे एक खूबसूरत नगीना जड़ा हुआ पा रही थी। मगर इसी नगीने के सारे मोती संसार में बिखेर एक कलाकार ने अपनी कलाकृति के सार से जोड़ा और यही कहकर खामोश रह गया कि मैं फिर आऊँगा।

ऐ धरती मेरे इन्तजार में दरवाजा खुला रखना हर तरफ। क्या पता मैं किस दरवाजे से वापस आ जाऊँ अपनी कलाकृति का नमूना लेकर, अपनी जिन्दगी को एक मकसद बनाकर।

कला

कला के कुछ छन्दों से सजाया है मैंने अपने आपको। वरना क्या रखा था मेरे इस सादे जीवन में। एक इतिहास ही तो बन के रह गयी थी मैं गुजरे जमाने का। कितना कुछ रचा है मैंने अपनी कला से इस जीवन में। कहीं मैंने कागज के टुकड़ों पे उड़ते पंछियों को जिन्दा किया है कच्चे रंगों से तो कहीं ख्वाबों के जाने कितने महल बना डाले हैं हमने अपनी कला के माध्यम से। क्या कुछ नहीं रचा मैंने अपने छोटे से इस जीवन में? प्रेम का ऐसा इतिहास लिखा है मैंने जिसे पढ़कर जाने कितने लोगों की आँखें भर जाया करती होंगी। पर वो जब मुझे तकने लग जाते हैं तो ऐसा महसूस होता है जैसे ये मेरी कलात्मक चीजें मुझे अपनी तरफ चले आने का कुछ ऐसा इशारा करती है जो मुझे कुछ कह पाने पर मजबूर कर ऐसे चली जाती है जैसे छुई-मुई के पौधे आये हों हमारे पास। अपनी ही रची रचना पे कभी-कभी हैरान भी रह जाती हूँ मैं। कहाँ सोचा था हमने कभी कि ऐसा कुछ भी कर डालूँगी मैं। एक नन्हें बच्चे की आवाज के सिवा क्या थी मैं? एक अजनबीपन के सिवा क्या था हमारे जीवन में? पर आज जब भी इन तस्वीरों की तरफ देखती हूँ मैं तो ऐसे खो जाती हूँ इनमें जैसे ये दोस्त बन गये हों मेरे। अनजाने में ही जाने कितने सवाल कर डालती हूँ मैं इनसे जिसके जवाब को पढ़ते-पढ़ते खुद की नजरों में ही बेगानी बन जाती हूँ कभी-कभी मैं। कभी-कभी तो ऐसा लगता है जैसे रात के सन्नाटे मेरे जीवन के इतिहास को सुन रहे हैं मुझसे। कितना कुछ ले गयी है हमसे तोहफे में ये रातें। कभी मीठे गीतों का आनन्द दिया है मैंने इन्हें तो कभी कोरी कलमों की स्याही से अपनी कला के जरिए रंगा भी है इन्हें। जाने कितने किस्से सुनाये हैं मैंने अपने और अपने लोगों के। जाने कितनी बातें कह डाली है मैंने इनसे जग-जग के। कभी-कभी तो ऐसा लगता है जैसे कोई मुझे अवाजें दे रहा हो। कह रहा हो, ऐ सुन! मैं तेरी कला के साथ जुड़ने चली आयी। उठा न कागज, बना न कुछ इनपे। मुझे साकार कर न और ये रात का अँधेरा ही तो एक कलाकार की जिन्दगी को, उसकी कला को रौशन करता है। देखना, तुम्हें एक दिन मैं अपने साथ कहाँ-कहाँ ले जाता हूँ। हर युग में एक कलाकार ने जन्म लिया है। हर युग ने कला की कद्र की है और फिर ये युग तो कला का आदिकाल से प्रशंसक रहा है।

यही तो जीवन की सबसे बड़ी पूँजी है। जिसने कला की दौलत पायी, वही सबसे बड़ा भगवान है संसार में। ये नाम, ये रूतबा, ये ऐशोआराम, ये ऊँचे-ऊँचे महल कहाँ रास आ पाते हैं उसे। उसकी तो निगाहें हमेशा प्रकृति के इन रंगों की तरफ खींची रहती है जिससे कुछ सीखने हैं उसे। जिससे कुछ रंग उधार मांगने है उसे। किसने देखा इन पौधों को उस नजर से जिस नजर से कि एक कलाकार ने देखा। किसने देखा इन आसमानी रंगों के साथ बिखरी इन घटाओं को। सबको तो काली-काली रेखायें ही खींची दिखी आसमान में। पर एक कलाकार ने वो देखा जो प्रकृति ने दिखलाने चाहे उसे। सारी दुनिया एक कला की शय है और एक कलाकार की उम्रभर की कमायी पूँजी है। कितना कुछ दे डाला हमने यही सोचकर अपनी कला को। जाने कितनी रातें समर्पित कर डालीं इनपे कि एक दिन सबेरा होगा। यही तो बातें किया करते थे मुझसे वो हरे-पीले रंगों से बने मकान, वो उड़ते पंछी। उनके चहचहाने की आवाज से ही तो जागा करती थी मैं। कितना कुछ दे डाला मुझे इस

जीवन ने कला के रूप में नहीं तो मेरे पास क्या था? जबसे लोगों से दूर हुई थी मैं उनसे पीछा ही तो छुड़ाना चाह रही थी। सच मुझे भी गर्व होता है अपनी कला पर। जाने कितने हौले-हौले से उठाये थे मैंने वो हाथ जिनपे रंगों से भीगे ब्रश ऐसे काँप रहे थे जैसे हमारी जिन्दगी ने ही कंपकंपी चादर ओढ़ रखी हो। जाने सर्दी की ठिठुरती रात चली आयी हो हमारे पास। पर धीरे-धीरे वो सब करना सीख गयी मैं जिससे कि डरा करती थी मैं कभी। और आज अपनी कला की कलम से निकले ऐसे-ऐसे रूपों को ऐसे-ऐसे छन्दों को लिखकर और पढ़कर खुद ही हैरान रह गयी हूँ मैं।

आज भी जब अपने बारे में सोचकर उदास होने लग जाती हूँ मैं तो आवाज आती है एक यही कि मैं तो एक कलाकार हूँ। मेरा तो जीवन ही कला को समर्पित है। फिर किस बात का गम? आगे और आगे जाने कितना कुछ लिखना है मुझे। जाने कितनी कलात्मक चीजों को रचना है मुझे।

कला

ये मेरी जिन्दगी एक कला है और मैं कलाकार। मैं ऐसी फण की मालकिन हूँ जिसका गुलाम सारा संसार है। कभी मैंने अपनी कला से धरती-अम्बर के सार को जोड़ा। कभी मैंने अपनी कला से एक नारी की भूमिका को दर्शाया। मैं ऐसी कलाकार हूँ जिसकी कला से एक औरत मरकर जिन्दा हो जाती है। जिसकी कला से एक बूढ़े-माँ बाप अपना दिल बहला लिया करते हैं। अपने इस कलात्मक जीवन में मैंने ऐसी-ऐसी रचनाएँ की जिसे सुनकर, जिसे देखकर इस कायनात की धरती पे मेरे कदम पड़े। पहले मैंने गलियों में दौड़ता हुआ पाया है खुद को फिर मैंने खेतों की पगडंडियों की तरफ अपना रूख मोड़ा है। इन्ही सारों को तराश-तराश निखारा है मैंने अपनी कला से। मैं जब भी अपनी लेखनी में अपने गाँव की याद को ताजा करती हूँ तो पाती हूँ कि वो आज भी मेरे ही इन्तजार में खड़ा होगा। मगर जब कलात्मक जीवन से बाहर आती हूँ मैं तो पाती हूँ वो तो मैं वर्षों पीछे छोड़ आयी। पर मेरा फण ही उसे बार-बार मेरे सीने में जिन्दा कर देता है। मैं एक कला की पूजारिन एक दिन संसार से विदा हो जाऊँगी और मेरे फण को सराहते लोग मेरे पीछे खड़ रह जायेंगे। मैंने अपनी कला से किसी बेबस के आँसू पोछे हैं। मैंने अपनी कला से किसी भूखे की भूख मिटायी है। मैंने वर्षों जीया है तन्हा जीवन। मगर जबसे मुझे मेरा फण मिल गया, जबसे लोगों ने मेरी कला को सराहा, मैं अपनी सारी तन्हाई को भूल गयी। एक जमाना था जब मेरे हाथों में किताब और ओठों पे किसी कवि की कविता हुआ करती थी। मगर आज मेरे हाथों में रचना का सार है। कवयित्री बन गयी हूँ आज खुद मैं। अब मेरे जेहन में अपनी ही लेखनी बार-बार गूँजती है। मैं सोचने लग जाती हूँ उस पहले पृष्ठ पर मैंने क्या लिखा था? इस आखिरी पृष्ठ पे मैं क्या लिखने बैठी हूँ? मैं कला का ऐसा रूप हूँ जिसे साक्षात देवी का दर्जा दिया जा सकता है। मैं सौन्दर्य के अथाह सागर में डूबी ऐसी स्याही हूँ जिसको लिखते-लिखते कभी मेरे कलम खाली नहीं हो सकेंगे। मैं एक ऐसी हस्ती हूँ जिसे जमाना एक नन्हीं कली, एक नन्हीं बच्ची और कम उम्र का पहरेदार कहता है। मैं उम्र के ऐसे मोड़ पे खड़ी हूँ आज जहाँ से जिन्दगी मुझे बचपन की ओर ले जा रही है क्योंकि मेरी कला मुझे जवान समझना नहीं चाहती। मैं कला की एक छोटी सी धरोहर बनकर आयी थी इस धरती पर मगर आज भी मैं वही छोटी सी प्रतिमा बनकर रह गयी। थककर और हारकर मैं कभी छोड़ भी देना चाहती हूँ इस संसार को। मगर तभी ऐसे वक्त में मेरी कला मुझे पुकारती है और कहती है, कहाँ जाते हो तुम। तुमने तो खुद कहीं लिखा है सांसारिक बन्धन एक ऐसा बन्धन है जिसके बिछोह को सहन कर पाना एक इन्सान के वश की बात नहीं।

मैंने अपनी कला के हर एक रूप को पढ़ा है और यही पाया है कि हर मोड़ पे मैं कहीं-न-कहीं सजती संवरती रही। किसी लेखनी में मैंने जितने भी फण लिखे, जितनी भी रचनायें की उसमें मैं पहले पृष्ठ से आखिरी पृष्ठ तक कहीं-न-कहीं जरूर थी। मैं कहीं बुलबुल और तितली पकड़ रही थी। मैं कहीं आसमान में उड़ते परिन्दों की जगह जाना चाहती थी तो कहीं मैं अपाहिज बन वैशाखी को तलाश रही थी चलने के लिए। कितनों की जुबां ने मुझे ये भी कहा कि ये कैसा कलाकार है जिसके हाथों में कलम की ताकत है और ओठों पे सिसकियाँ है। ये कैसा कलाकार है जिसके आँख कुछ कहना चाहकर भी कह नहीं पा

रहे है। ऐसी बातों के बीच खुद को तब से देख रही हूँ जबसे मैंने लिखना शुरू किया था। मैंने लिखा भी तो ऐसा लिखा कि सुननेवाले मुझे फण की मालकिन समझ बैठे। मगर एक कलाकार का जीवन कितना बोझिल होता है, उसे एक फण, एक कला के सिवा कोई नहीं जान सकता है। मैं एक ऐसी कलम हूँ जिससे दर्द के अनगिनत सार निकलते हैं। मैंने कभी हारकर पीछे नहीं देखा। मैं आगे बस आगे चलती रही। हाँ, कुछ आँसू रोये हैं हमने। कुछ क्या अनगिनत आँसू रोये है हमने। मगर इनमें भी एक रचना का सार छुपा होता था। एक तरफ मैं सिसकती थी, एक तरफ मेरी कलम नये फण को रचती थी। मैंने फण क्या सीखा, जिन्दगी ने मुझे कलाकार बना दिया। धरती से आकाश को जोड़ा हमने। आकाश से प्रकाश को जोड़ा हमने। प्रकाश से विश्वास को जोड़ा हमने। हमने हर एक लेखनी में लोगों से इतने ही दर्द बाँटे कि लोग रोते-रोते रह गये। मैंने कभी बचपन के अल्हड़पन को दर्शाया है अपनी लेखनी में। कभी मैंने खामोश चादर ओढ़ सुला भी दिया है खुद को। मैने हर मोड़ पे एक नयी रचना रचती इस धरती, इस मिट्टी, इससे आनेवाली खुशबू से यही कहा कि मैं एक कलाकार हूँ। मुझमें अपना फण देखो। एक नन्हीं बच्ची की किलकारी हूँ मैं। एक जवान जिस्म की आभारी हूँ मैं। हाँ, मैं हर एक के पास मौजूद हूँ। जहाँ-जहाँ कि एक कला है, एक फण है। हाँ मैं एक कलाकार हूँ। ऐसा कलाकार जिसकी कला से माटी बोलने लगती है। जिसकी कला से मृत लोग जीने को बेचैन हो जाते हैं। इतने में शाम ढल जाती है और मैं एक नयी रचना के सार को छुपाये इस धरती पर सुबह होने का इन्तजार करती हूँ ताकि सुबह की किरणें भी लोगों से यही कह सके कि मैं एक कलाकार हूँ। मुझे पढ़ लो तुम और तबतक पढ़ेंगे वो हमें जबतक कि रात का अँधेरा एक कलाकार की जिन्दगी पे छा न जाये।

हाँ, मैं कला की राह तकती एक ऐसी तपस्विनी हूँ जिसको कि समझ पाना ऊपर वाले के वश में नहीं है। कहने को सृष्टि-रचयिता हैं वो मगर इससे पहले हम एक कलाकार हैं। सृष्टि को वर्णन करनेवाले, सृष्टि को लिखनेवाले, सृष्टि को पढ़नेवाले।

एक विशालकाय लम्बा रास्ता है जीवन जिसपे चलना हमारी फितरत है। हम हर लम्हा, हर मकाम पर तन्हा इन रास्तों से होकर गुजरते हैं इसी उम्मीद में कि एक दिन मंजिल पा लेंगे। मगर ये क्या? इन रास्तों पे चलने पे तो मंजिल मौत की ओर इशारा करती है और हमारे महल, हमारे रूपये-पैसे हमारी जागीर यहीं रह जाती है तन्हा रास्ते पे पड़ी। हमारे पास लोग कुछ पलों के लिए आते हैं और हमारी मृत काया को मिट्टी में दफन कर गुजर जाते हैं। उस वक्त हमारे पास सिवाय शिकवे के कुछ नहीं होता। हमारी निगाहें मरने के बाद खत्म तो हो जाती है पर उन्हीं को फिर से तलाशती है जो साथ मिलकर चले थे हमारे और जिनके साथ का हमने खूब मजा लिया था। वे हमें शौक से रिश्ते की डोर से बाँध रहे थे और हम शौक से उनके दिलों में झाँक रहे थे। वो कहने को हमारे सिर्फ माँ-बाप, भाई-बहन लगते थे मगर उन सब के बीच एक रिश्ता ऐसा भी था जो प्यार से जिन्दा था। हर रिश्ते में पहले पहल एक प्रेम की झलक पायी थी हमने और जब मौत ने हमें आहिस्ता से अपने पास बुला लिया, वो सब मुझसे दूर हो गये थे। मगर हम उन्हीं को तलाशते आज भी कब्रिस्तान में भटक रहे थे। सोच रहे थे कि आज वो हमारे पास कहीं नहीं थे। कहने को रिश्ते में वो हमारे हरपल के साथी थे मगर मौत ने क्या दस्तक दी उनके बीच परायेपन का रिश्ता पनप गया। अब हम चाहकर भी सिसक नहीं पा रहे थे। चाहकर भी उन्हें दिल से निकाल नहीं पा रहे थे और वो भी हमारे पीछे रो रहे थे। तो क्यों दफन कर गये वो हमें मिट्टी के इस बोझ के तले? जबकि उन्हें भी हमारी याद आ रही थी, हमें भी उनकी याद आ रही थी। वो रास्ते जिसपे चलके हमने इतने रिश्ते बनाये वो सबके सब टूटकर बिखर गये थे हमारे दामन से। कितना बड़ा धोखा था ये जीवन का हमारे साथ। मृगतृष्णा बना डाला उसने हमारी निगाहों को। हम हर उस जगह दौड़ रहे थे जहाँ पर कि उनकी झलक हमें मिल रही थी। कहीं वो परछाई बन हमारे सामने आ रहे थे। कहीं हम परछाई बन उनके आगे-पीछे भटक रहे थे। मगर आज पहचान बदल चुकी थी। वो आज भी इन्सान के वेश में थे हमारे सामने जिन्हें हम पल-पल देख रहे थे मगर वो हमें नहीं देख पा रहे थे। वो हमें पास बिठाना चाहकर भी बिठा नहीं पा रहे थे। बिस्तर पे सुलाना चाहकर भी सुला नहीं पा रहे थे। तो अब उनका साथ कैसे मिलता हमें जिनके साथ कि हम दो पल बिताया करते थे।

मौत ने हमें आज इस मकाम पे लाके छोड़ दिया था जहाँ पर कि हर एहसास एक रूहानी तड़प को जन्म दे रही थी। हर रिश्ते एक ख्वाब से लगने लगे थे हमें जिन्हें हम कल तलक अपना हमराज बता रहे थे वो हमारी तड़प से ऐसे तड़प रहे थे कि हमें ही अपनी तड़प से चिढ़ हो गयी थी। तो किसलिए हमने इतना बड़ा रास्ता तय किया जीवन का, किसलिए हमने हमराज बनाये थे अपने किसी हमदम को? हमने आज अपने ही माँ-बाप, भाई-बहन सबके दिलों में दूरी बना ली। कितना बड़ा अभिशाप था ये जीवन हमारे लिए। हर मोड़ पे हम तड़प-तड़प जी रहे थे। मौत एक काली जुबान बोलने लगी थी और जिन्दगी धीरे-धीरे एक सफेद चादर ओढ़ा सुलाने लगी थी हमें। कितना बड़ा मजाक था ये जीवनसफर का हमारे साथ। जीवन का सफर हमारे लिए एक टेढ़ा-मेढ़ा रास्ता था जिसपे आसानी से हम दो कदम भी नहीं चले थे और हम फिर भी अपने कदमों के निशान को

तलाश रहे थे ताकि जी के ऊब जाने पर, अकेलापन लगने पर और अपनों की याद आने पर हम वापस लौट आएँ। मगर सामने तो एक सीधा रास्ता खड़ा था जिसपे हमारे कदमों के एक भी निशान नहीं थे और सारे रिश्ते हमें तन्हा छोड़ गये थे। एक बार भी हमें उनकी झलक सामने नहीं मिल पा रही थी। हम बार-बार उनके करीब जाना चाह रहे थे और वो बार-बार हमसे दूर होते चले जा रहे थे क्योंकि आज हमारा वजूद नहीं रह गया था। साया बन चुके थे हम और साये को चलने के लिए कदमों के निशान की जरूरत नहीं होती। हम एक जगह से दूसरी जगह एक पल में चले जा रहे थे तो वो कैसे कहते कि हम लौट आयें? उन्होंने तो हमें विदा कर दिया था अपने घर से। साजोसामान के साथ मेरी अर्थी को हजारों लोगों ने विदाई दी थी और कहा था कि एक ही नाम लेना तुम राम का और हम थे कि बार-बार अपने रिश्तों का ही नाम ले रहे थे जिन्होंने हमें सफर में छोड़ अपने रास्ते वापस मोड़ लिये थे।

तो आज जाना हमने कि जीवनसफर का ये विशालकाय रास्ता एक मोड़ पे ऐसा ही नजरिया दिखला जाता है जैसा कि उसने हमे दिखलाया था और जिसे देख हमें एहसास हो पाया कि हम अकेले ही रोते रहे थे पहले भी और आज भी क्योंकि पहले भी हमारे रिश्ते नाते हमसे दूर हो चले थे और अब भी जब हम उनके दायें-बायें भटक रहे थे।

बचपन का वो छोटा सा गाँव

मैं बचपन के उस छोटे से गाँव की, छोटी सी गली में दौड़ रही नन्हीं सी एक बेटी हूँ जिसने कल एक ख्वाब देखा था कि जब मैं बड़ी हो जाऊँगी, मेरे पापा मुझे शहर ले चलेंगे। आज उसी गाँव की याद में खड़ी मैं सोच रही हूँ कि बचपन कैसे बीता? मैंने माँ से पूछा, माँ! ये गाँव, यहाँ के लोग मुझे कब से जानते हैं? क्यों जानते हैं? तो माँ ने कहा, ये तुझे बचपन से जानते हैं। इसलिए जानते हैं कि तू इस गाँव की एक छोटी सी धरोहर है। तेरे पापा गाँव की उस छोटी सी गली में घुमाने ले जाते हैं तुझे तो लोग कहते हैं ये एक बेटी है, गाँव की बेटी, नन्हीं बेटी।

तो मैं गाँव की वो नन्हीं बेटी पूछ रही हूँ उस गाँव से कि मैं कहाँ हूँ? कहीं मैं खेतों खलिहानों में दौड़ रही हूँ। कहीं मैं गिरने पर चोट खाते हुए सिसक रही हूँ। कहीं कुकरौंधे मेरे घावों से बहते हुए खून को रोक रहे हैं। कहीं मेरे दोस्त मेरे घावों पे मरहम लगा रहे हैं। मैं तुतलाते हुए कह रही हूँ दोस्त! मेरे जख्म मुझे तड़पा रहे हैं। वो कह रहे हैं दोस्त, घर जाकर माँ से कहना किसी ने मुझे मारा माँ! तो माँ उसे डाँटेगी और तुम्हें कुछ नहीं कहेगी। मगर क्या किसी और पे इल्जाम लगाने से मेरे जख्म भर गये थे। नहीं, ये तो बचपन का बचपना था। माँ तो घावों को देख रो पड़ी थी। फिर कहने की जरूरत ही नहीं पड़ी कुछ। माँ ने पापा से कहा, इसके पैर छिल गये हैं दवा ला देना। पापा भी कुछ नहीं बोले थे। तो मेरे जख्म पे मरहम भी लग गये और मुझे डाँट भी नहीं खानी पड़ी। हम दूसरे दिन फिर निकल पड़े यार दोस्तों की मंडली के साथ और उनसे कहा दोस्त! न माँ ने कुछ कहा, न पापा ने। ये देखो मेरे घुटने पर पट्टी लगा दी पापा ने। दोस्त बोले, चलो खेलने चलते हैं।

तो ये थी मैं गाँव की नन्हीं बेटी, जिसके पैर हर दिन छिलते थे। मरहम की जगह हम हर दिन कुकरौंधे लगाया करते थे और हर गम से दूर माँ की गोद में सो जाया करते थे। कभी पापा की डाँट नहीं पड़ी मुझे बचपन में। कभी माँ ने नहीं मारा मुझे बचपन में। पर तकदीर ने मारा मुझे, वो भी भरी जवानी में। मैं गाँव की वो ही नन्हीं बेटी हूँ जो आज ऐसा कह रही हूँ। मेरे गाँव की वो गली मुझे आज भी याद है जिसमें जगह-जगह ईंट-पत्थर बिछे थे। वो खेतों-खलिहानों में जाने वाले रास्ते, वो गाँव की आड़ी-तिरछी गली, वो गली के मोड़ पे बादाम और मेवों की दुकानें, वो खट्टी-मीठी इमली के दाने आज भी मुँह में पानी ला देते हैं जो यह कहते हैं मैं गाँव के उसी मोड़ पे खड़ी आज भी तुम्हारी राह देख रही हूँ।

पर क्या जो गाँव से चले गये वो वापस फिर आ सके? नहीं, कभी नहीं। किसी के बचपन का गाँव नहीं रह गया। मेरे गाँव के सारे साथी वहीं रह गये। गाँव के उसी सूनसान मोड़ पर जिसे हमने छोड़ दिया। जिसकी ओर पलटकर हमने कभी नहीं देखा। हाँ, मैं गाँव की वो ही नन्हीं बेटी, आज ये सोच रही हूँ कि माँ से कहूँ मैं एक बार गाँव को जाना चाहती हूँ। पापा! मुझे एक बार गाँव की उस गली में ले चलो जहाँ पर कि ईंट-पत्थर के रास्ते खड़े मुझे आते हुए देख रहे थे। पर मैं न माँ से कह सकी, न पापा से और यहीं तन्हा सिसकती एक सूनसान मोड़ पे खड़ी रह गयी जहाँ तक न मेरे नन्हें दोस्त आ सके, न गाँव की वो गली। वो खेतों में बनी पगडंडियाँ मुझे वापस न बुला सकी।

यही सोचते-सोचते बचपन बीत गया। मगर वो यादें धुँधली न पड़ सकी। पापा की

दाढ़ी सफेद हो गयी। माँ के चेहरे पे झुर्रियाँ आ गयी जो उम्र के बीत जाने पर अफसोस में बस यही कह सकी शायद कि अब हम बूढ़े हो गये। न वो गाँव है यहाँ, न वो गाँव के लोग, न वो नुक्कड़ पे बनी दुकान है यहाँ जिनमें इमली के खट्टे-मीठे दाने मिलते थे। न वो बादाम, न वो मेवे हैं यहाँ, जिन्हें हम दस पैसे में खरीदा करते थे। सब बदल गये। वो जमाना ही बदल गया। न आज दस पैसे के वो सिक्के रहे, न आज हम गाँव के वो नन्हें बच्चे रहे जो जब चाहें दुकानों में चले जाते थे।

आज तो हजार नजरें हमें घूरती नजर आती है। आज तो सर उठाकर चलने में हमें शर्मिन्दगी होती है क्योंकि आज हम जवान हो गये। गाँव की वो नन्हीं बेटी आज शहर की सड़कों पर बहुत कम निकला करती हूँ ये सोच कि कहीं कोई हमें देख कुछ बोल न दे। न यहाँ के लोग मेरे गाँव जैसे हैं, न हम गाँव की वो नन्हीं बेटी रहे आज। आज तो वक्त काफी बीत चुका। आज तो पैर के कटने पर कुकरौंधे के पौधे तलाशा नहीं करते हैं हम क्योंकि ये शहर की सड़क है गाँव की गली नहीं जहाँ जगह-जगह कुकरौंधे के पौधे हमें मिल जाते थे।

आज मैं पापा से कह रहीं हूँ, पापा! चलो हम गाँव की उसी गली में चलते हैं जहाँ पर हमें लोग ये कहते थे कि ठीक से चल बेटा। रास्ता ऊँचा-नीचा है। पापा! मुझे आज भी वो ही रास्ते चाहिए जो आड़ी-तिरछी हुआ करती थी गाँव में। तो पापा कुछ नहीं कहते हैं और हम पापा से यही कहते हैं कि आज पापा! शायद हमारा बचपन बीत गया। पापा! वो गाँव हमें भूल गया होगा। अब वो गाँव की गली चिकनी हो गयी होगी पापा! वहाँ के सारे लोग बदल गये होगें पापा! उनमें से कुछ जवान, कुछ बूढ़े, कुछ बहुत ही बूढ़े हो गये होगें। यही कह मैं गाँव की वो नन्हीं बेटी शहर के इस मकान में सो रही हूँ। मगर नहीं आती आज नींद हमें। मुझे बार-बार वो लोग याद आते हैं, वो बचपन याद आता है। वो खेतों में बनी पगडंडियाँ याद आती है। वो ऊबड़-खाबड़ रास्ते याद आते हैं जो सिसक-सिसक कहते हैं शायद हम दूर हो गये, तुमसे बहुत दूर हो गये।

कहीं बादलों की ओट में चाँद छुप रहा है, कहीं रिमझिम बरसात हो रही है, कहीं परिन्दे आसमान की सैर कर रहे हैं। हाँ, ये प्रकृति है जिसकी गोद में हजारों लोग पता नहीं कब से सो रहे हैं। कहीं हँसते हुए फूल, कहीं हरे-भरे पीपल के पत्ते, कहीं क्यारियों में नन्हीं-नन्हीं दूब। हाँ, ये सब प्रकृति है। हम एक नयी जिन्दगी की ओर जा रहे हैं। कहीं मेरे नन्हें दोस्त मुझे बुला रहे हैं, कहीं सुनहरे परों वाली नीली-पीली तितलियाँ मुझे बुला रही है। मैं दौड़ रही हूँ। मैं प्रकृति की गोद में सदियों से दौड़ रही हूँ। हाँ, मैं एक नन्हीं सी तितली जिसे कभी कोई पकड़ लेता है, तो कभी कोई आता है, कोई जाता है, मैं खड़ी देखती रह जाती हूँ। मैं एक जीव हूँ, इन्सानी जीव। मैं एक बेटी हूँ, इस प्रकृति की बेटी, जिसके न जाने कितने दोस्त, कितने संगे-संबंधी हैं। पर मैं अल्हड़ हवा बन उड़ रही हूँ यहाँ से वहाँ। कभी मैं दोपहर की चिलचिलाती धूप में उड़ने वाली पतंग बन जाती हूँ, कभी हाथ में बैलून लिए दौड़ने लगती हूँ खेतों-खलिहानों में। मैं नदी की ऐसी धारा भी बन जाती हूँ कभी जो उल्टी बहती है। मैं ऐसी लहर भी बन जाती हूँ कभी जिसे पावन गंगाजल कहते हैं। मैं इस प्रकृति की ऐसी लेखनी हूँ जो किसी कलम से बयां नहीं की जा सकती। मैं यूँ ही आड़ी-तिरछी लिख जाती हूँ अपनी इस धरती पर। ये धरती मुझे मेरी माँ नजर आती है और पिता आसमान। मैं इसी माँ-पिता की गोद में पलनेवाली एक ऐसी लड़की हूँ जिसे जुबां से बेटी कहते हैं, बहन कहते हैं। हाँ, मैं इस प्रकृति की बेटी भी हूँ, बहन भी हूँ। मुझे यहाँ हर तरह के सुख मिले। मगर मुझे वो सब नजरअन्दाज कर जा चुके। बर्षों से प्रकृति की गोद में खेलती मैं नन्हीं सी तितली, हाँ, नीली-पीली तितली, आज जवान हो गयी। मुझे अपने साथ-साथ वो दोस्त भी जवान होते नजर आ रहे हैं जिन्हें मैंने गाँव की एक गली में देखा था। कभी मुझे हरे-भरे वो मैदान बुलाते हैं, हरी-भरी फूलों की डालियाँ बुलाती है तो कभी वो उड़ते हुए आसमान बुलाते हैं जिनमें मैं कहीं-न कहीं समायी हुई हूँ। मुझे वो कुकरौंधे बुलाते हैं, मुझे वो चोट खाये पैरों के निशान बुलाते हैं। मगर मुझे वापस जाने का रास्ता नहीं मालूम। मैं प्रकृति की गोद में खो गयी हूँ। मुझे बुलाने वाले सारे हाथ मुझसे दूर हो गये। मैं इसी प्रकृति में पल-बढ़ जवान हो गयी मगर वो हरे-भरे पौधे मुझसे ओझल न हो सके। मैं हर दिन उस पीपल को याद करती रही जिसके पत्ते से मैं कटोरे बनाया करती थी। मुझे नदी-नाले में बहने वाले पावन जल बुलाते हैं जिन्हें हम भूल गये हैं। मुझे प्रकृति की हर शय बुलाती है जिन्हें छोड़ चुके हम। मगर अफसोस कि आज जिन्दगी उसी प्रकृति को दुबारा तलाश रहीं है मुझे वो ही गाँव के लोग, वो ही गाँव की पगडंडी वो ही ऊबड़-खाबड़ रास्ते आज भी नजर आते हैं मगर वो सब मुझसे बहुत दूर हैं। आज मुझसे मेरी प्रकृति दूर हो गयी है। मुझसे मेरा शहर, मेरे गाँव को छीन ले जा चुका। मैं खामोश यही सोच रही हूँ कि वो गाँव की गायें, वो गाँव की भैंसे जो पोखर में तैर रही थी कल, वो सब कहाँ गये। शायद वो सब उसी गाँव में सो गये उसी प्रकृति की गोद में। मैं आज भी उन्हीं खेतों-खलिहानों में खुद को दौड़ता देख रही हूँ। वो मेले जो दशहरे के दिनों में अक्सर लगा करते थे। उनमें से मैं गन्ने खरीदा करती थी, वो गन्ने के मीठे-मीठे रस, वो मीठी पान की दुकान, वो उड़ते हुए जहाज सब बिकते थे मेरे गाँव के मेले में जिसे हम बहुत ही सस्ती कीमत में खरीदा करते थे। आज वो मेले मुझे

कई साल पीछे छोड़ आये। आज मैं उसी गाँव की एक झलक को तरस गयी हूँ क्योंकि मैं जानती हूँ वो गाँव मेरी प्रकृति थी, मेरी माँ की गोद थी मेरे लिए। तो आज मैं उस प्रकृति से दूर सोच रही हूँ कि मैं दुबारा उसी गोद में जाके खेलूँ और देखूँ कि वहाँ मेरा खिलौना है की नहीं, दो रूपये वाली वो गन्नें की दुकान है की नहीं। वो मीठी पान जो मैं खरीदा करती थी वो मुझे याद करती है कि नहीं। तो मुझे याद आता है कि वो मेरे बचपन की दुकान थी जो मेरे साथ जवान हो शहर चली आयी। वो प्रकृति जवान हो गयी आज, वो पीपल का पत्ता जवान हो गया आज। वो गाँव की पगडंडी पे पड़नेवाले धूल जवान हो गये।

आज सब मुझे छोड़ गये उसी मोड़ पे जहाँ पर जिन्दगी एक नन्हें लिबास में सजी सोना चाह रही थी। सब चले गये मुझसे दूर। ये प्रकृति बदल गयी। इस प्रकृति में मैं नहीं मेरे गाँव के लोग सो रहे हैं। मैं तो जवान हो गयी। जो लोग बूढ़ापे की चादर तान सो रहे हैं, मैं उन्हें जगा नहीं पाती, पूछ नहीं पाती की बाबा, मेरा गाँव कहाँ गया? बाबा, मेरी प्रकृति कहाँ गयी? बाबा तुम्हारा और हमारा वो नन्हा बचपन कहाँ गया? मगर बार-बार पूछना चाहकर भी पूछ नहीं पाती हूँ और प्रकृति के जन्माये इस देश में खामोश सो जाती हूँ। रातें यहाँ भी आती हैं, यहाँ भी दिन निकलता है, यहाँ भी सूरज आता है, चाँद बादलों में छुपता है, पर यहाँ पर मेरा वो गाँव नहीं है, मेरा वो बचपन नहीं है। वो मेरे नन्हें-नन्हें चलनेवाले कदम यहाँ नहीं है।

कला और कलाकार

कला अवर्णनीय है। कला का चित्रण सिवाय एक कलाकार के कोई नहीं कर सकता। कलाकार कई रूपों में अपने आप को निखारता है। कभी कला को वो नारी का नारीत्व बना डालता है, कभी सुहाग-सिन्दूर। कभी कला को वो बच्चे का बचपना बना डालता है, कभी खेल-खिलौने तोड़ भी देता है। अपनी कला के अगले रूप में कलाकार के दिल से जो कला पनपती है, वो धरती और अम्बर के सार से निकलती है। कभी उसकी कला से बारिश होती है, कभी दोपहर की चिलचिलाती धूप में वो नंगे पाँव निकल पड़ती है।

कितने रूप हैं इस कलाकार के जिसे संसार में लोग फटे कपड़े पहननेवाले, सर पे तेल का मालिश करने वाले और बदन पे सफेद धोती लपेटनेवाले पागल इन्सान समझते हैं। कला को अनेक रूपों में ढाला गया है यहाँ पर और कलाकार की रात सिगरेट और सादी चाय पीते गुजर रही है। कलाकार बार-बार रोता है। मैं इतनी जिन्दगियों के बोझ को एक साथ कैसे उठा पाऊँगा मगर दूसरे ही पल वो कागज में अपने आप को ढाल लेता है। कला न रात देखती है न सुबह। कला तो हर पल, हर लम्हा पनप रही है और इसका वर्णन करने वाले कई हाथ भी पनप रहे हैं। कला ने कलाकार से कहा था एक रोज कि क्या तुम्हारे पन्ने खत्म हो गये? क्या तुम्हारे कलम की ताकत कमजोर पड़ गयी जो तुम सो रहे हो। उठो और वर्णन करो मुझे और एक कलाकार की नींद खुल जाती है। वो एक बार फिर कला का नया और अच्छा वर्णन करने लग जाता है। इस बार कलाकार कला का ऐसा रूप पेश करता है कि आसमान के सितारे जमीन पर आने को मचल जाते हैं। पहले वो कहता है मैं धरती को देखना चाहता हूँ। कलाकार उसे अपनी ताकत से धरती पे ला देता है नये नाम ओर शोहरत के साथ। कभी वो कहता है मैं तुम्हारे साथ रोशनी बन चमकना चाहता हूँ। कलाकार अपनी कलम उनकी ओर बढ़ा देता है और कहता है चमकने का इससे अच्छा तरीका और कोई नहीं है। ज्ञान के प्रकाश में चमकना सीखो तुम और ऐसा कह अपनी कलम से एक नयी कला के रूप का वर्णन करने लग जाता है। जमीन वहीं रह जाती है। आसमान वहीं रह जाता है। सिर्फ कला के रंग बदल जाते है। रिश्ते तो पाक, नापाक होते भी है और कला तो हर रिश्ते को अपने जिस्म में पनाह देती है। एक कलाकार के तजुर्बे के सामने सारे इन्सान जीव-जन्तु पशु-पक्षी और प्रकृति के हर रंग फीके है। कला न उम्र देखती है न उनके बीच की दूरियाँ। वो तो हर एक के पास मौजूद रहना चाहती है और कलाकार की लेखनी, कलाकार की कलम अपनी महक बिखेर देते है। जो कला के इस अवर्णनीय रूप को देखकर भी देख नहीं पाते वो अन्धे, बहरे और गूँगे लोगों के बीच खड़े रह जाते हैं। न वो देख पाते है कला को, न सुन पाते है और न महसूस कर पाते हैं। क्या जाने अज्ञानी लोग कला के बारे में? कला तो जानकार लोगों के लिए ज्ञान का प्रकाश है और नासमझ लोगों के लिए काली स्याह रात है।

किसने पाया है कलाकार का जीवन? कौन जानता है कला को सिवाय एक कलाकार के। कला के सामने बड़े-छोटे, ऊँचे-नीचे लोग सब एक बंजर धरती होते हैं और वो समझते है कि हम सा आबाद कोई नहीं। ये एक ऐसा तोहफा है ज्ञानियों के लिए जिसे कि पाकर वो पुरस्कृत हो जाता है। न जाने कितने लोगों को तोहफे में मिलती है ये कला।

कभी कला का रंग फीका नहीं होता। कला तो सौन्दर्य की प्रतिमा है। कला तो ईश्वर का अवतार है। कला तो माँ का प्यार है। कला के मिट जाने के बाद कलाकार का मिट जाना लाजिमी है। मौसमे बयार में कला पानी की बूँद बन बरसती है तो पतझड़ की वीरानी में खुद को तन्हा भी छोड़ देती है। कलाकार ने न जाने कितनी बार अपनी कला के माध्यम से मान-सम्मान की बात कही है। मगर सब फीके रह गये इस संसार की नजर में।

एक कला ये थी जो नाचना सीखा रही थी नर्त्तकियों को और एक कला ये थी जिसने तो घुँघरू ही तोड़ डाले नर्त्तकियों के पाँवों के। कितना बदला है कलाकार ने अपने रूप को इन नर्त्तकियों के सामने। बेचारी घुँघरू के टूटने पर रो रही है और कलाकार की कलम हँसती चली जा रही है। कितना शोर होगा कलाकार के सीने में। कभी रोने की आवाजें, कभी हँसने की बातें उसकी जिन्दगी का हिस्सा बनती जा रही है। कलाकार जब सारी बातों से खुद को जोड़ कर देखता है जो परेशान हो जाता है सोच कि मेरे इतने रूप है। मैं जमीं हूँ कि आसमान। मैं पशु हूँ कि पक्षियों की कतार। मैं कोई पौधा हूँ कि प्रकृति का नया रंग। मैं इन्सान हूँ कि भगवान। मैं आम लोगों की भाषा जानता हूँ मगर बोली बदल गयी है मेरी। ऐसा सोच कलाकार एक कोने में बैठ जाता है और सामने वो सारी चित्रित बातें, चित्रित किस्से, चित्रित बोली, चित्रित आँखें रो-रोकर शोर मचाती गुजर जाती है। वो वहीं पास की जमीन पर सो जाता है। ऐसा ही चित्रण किया था उसने अपने जीवन का कि उसके पास कुछ भी नहीं है। न पहनने को कपड़े, न सोने को बिस्तर, न सर्दी की रातों में ओढ़ने को चादर ही सिवाय कागज और कलम के।

ये धरती एक कवि की भाषा है। कवि ने कितना सुन्दर वर्णन किया अपनी बोली से इस धरती की मिट्टी के बारे में। उसे संसार ने बखूबी देखा। एक कविता उसकी रंगबिरंगी छटा बिखेर रही थी। एक कविता उसकी छटाओं के झुरमुट में बह रहे पानी के बूँदों से नहा रही थी। धरती ने तब आनन्दित होकर कवि से कहा कि ऐ कवि! मुझपे तू ऐसी ही एक कविता और लिख जिसे सुनकर मुझे आनन्दित होने का मौका मिल सके। तब कवि ने अपनी कलम से हरे-भरे पौधे, उसकी झुकती डालियों, उसपे उड़ते-भागते परिन्दों, पीछा करते जीवों और अपने बोलों से आसमान को वर्णित किया।

शाम ढली। रात का दीपक जला। कवि की कविता पढ़ी जाने लगी। धरती ने पहले कवि को गौरवान्वित किया। फिर उसके सुरक्षित बोलों पे नतमस्तक होते हुए कहा कि कवि तुने तो मुझे ऐसे वर्णित किया कि मेरी सारी जिन्दगी ही एक कविता में बदल गयी। पहले तुमने हरियाली के बारे में लिखा। फिर परिन्दें जो गगन विहार कर रहे थे, उनके बारे में लिखा और सबसे बाद में तुने उनके पीछे भागते जीवों के बारे में लिखा। कवि! मैं एक बार फिर से तेरा शुक्रिया अदा करती हूँ और कहती हूँ कि संसार में चाहे जितने भी लोगों ने मुझे देखा हो, उन्होंने तुम्हारी तरह से मुझे कभी नहीं देखा। तुमने मुझे चलते, उड़ते, दौड़ते, भागते, चिड़ी का पीछा करते देखा और मैंने तुम्हें अपने पीछे भागते देखा। ऐ कवि! ये बोल क्या है जो तुम लिखते जा रहे हो ये। बोल किसकी जुबां से सिखलायें गये हैं तुम्हें? किसने सिखाया है कि मैं एक कविता में ढाली जा सकती हूँ। तुम्हें किसने सिखाया कि मैं प्रकृति के रूप श्रृंगार को तुझमे जिन्दा पा सकती हूँ, लिखो मुझे। तब कवि की आत्मा एक बार फिर अपनी कविता के माध्यम से बोल पडती है। न धरती को गगन मिला, न गगन को धरा की धूल मिली। वफा रूसवा हुई हर जगह, वफा वालों को कहाँ कली मिली, कहाँ फूल। तब धरती आत्मविभोर होकर बोल पड़ती है, ऐसा धरती का रूप-श्रृंगार जिसे बहार नसीब न हुई। कवि तेरी कलम से ये कैसी कविता निकली? किसने कहा कि वफा को न बहार मिली न फूल मिला, न गगन को धरा की धूल मिली। तब कवि के बोल एक पंक्ति पढ़ने लग जाते हैं जो बयान करते हैं कि ये कविता एक कवि की आन है, शान है मेरी। मेरी हर एक रचना धरती को गौरवन्वित कर रही है। तुम न जानो तो क्या? हर एक ने जाना मुझे। जिन्हें तेरी पहचान बाद में मिली? उन्होंने पहले पहचाना मुझे। तब धरती एक बार फिर कवि की कविता में डूब जाती है और कहती है कि आज एक कवि ने मुझे फिर से जिन्दा कर दिया। उसके बोलों ने मुझे सादे लिबास में सींचकर रंग भरी दुनिया की सैर करायी। कवि ने मुझे शान से लिखा। अपनी आन में मुझे आनन्दित किया। मेरी मर्जी को कायम रखा। मेरी प्रकृति को कलम की एक ताकत दी। मेरे लगाये पौधों को हरे-भरे रंगों से रचित किया।

वाह रे कवि! कैसा है तेरा प्यार? एक तरफ तू है, एक तरफ संसार है। न तुम होते न हमारा निशान पाया जाता। न तुम मुझे लिखते, न लोग मेरे बारे में जानते। न तुम मुझे फलीभूत करते न संसार में बसे लोग मुझे करीब से देख पाते। एक दिन की रोशनी में आती मैं और सुबह आहिस्ता से शाम में बदल जाती। मुझे लेकर वो गुजर जाती। ऐ कवि! अगर मैं जिन्दा हूँ तो तेरी वजह से। अगर मैं फलीभूत हो रही हूँ तो तेरी वजह से। तुने अपने

बोलों से मुझे लोगों के इतने करीब ला दिया कि मैं नतमस्तक हो गयी तुमपर। ऐसा कलात्मक वर्णन मुझे आजतक न मिला, न तेरे बगैर मिल पाता। तू मुझे रचित कर ऐ कवि! अपने बोलों से मुझे जिन्दा कर। एक बार फिर से कह कि धरती को न गगन मिला, न गगन को धरा की धूल मिली। वफा रूसवा हुई हर जगह, वफा वालों को कहाँ कली मिली, कहाँ फूल। ऐसा कह धरती मौन हो जाती है और कवि के बोल एक बार फिर कोरे कागज पे धरती की छटा का वर्णन करने को तैयार हो जाते हैं। धरती बस उसे अपने भरे नयनों से अपलक देखती रह जाती है।

प्रकृति की गोद में

प्रकृति की गोद में सो रही ये धरती कितने तरह के जीवों को पनाह दिये हुए है। एक पौधा है यहाँ जिसके पास कि शाख है। एक नदी है यहाँ जिसके पास कि मौज है। एक किस्सा है यहाँ पे जिसके पास की जुबान है। एक चिड़ी है यहाँ पे जिसके पास कि आसमान है।

सब अपनी-अपनी शाखाओं के साथ जुड़े हुए है। फिर इन सब को लिखनेवाला, इन सबको देखनेवाला खामोश कैसे रहे। उसने सबके साथ एक आस जोड़े, एक आह जोड़ी और ये सब जमीन पे पड़े सिसकते रहे। किसी को आसमान तक जाने की आरजू थी, किसी को आसमान छूने की तमन्ना थी। किसी को किनारा पाने का लोभ था, किसी को एक किस्सा रचने की इल्तजा थी। सब अपनी-अपनी किस्मत के साथ जी रहे थे, जीते चले जा रहे थे। पौधे के पास भी लोग खड़े थे क्योंकि उसके पास से उन्हें छाया मिल रही थी। नदी के पास भी लोग खड़े थे क्योंकि उसके पास से उन्हें आनन्द मिल रहा था। वो मौजों से खेल रहे थे। इशारों-इशारों में अपना दिल बहला रहे थे। दिल की बातें कर रहे थे। चिड़ी के पास भी लोग खड़े थे क्योंकि उसके पास से उन्हें आसमान छूने का ख्वाब मिल रहा था और कथित रचना के सार को पढ़ ऐसा महसूस कर रहे थे वो जैसे ये उनकी ही जीवन लेखनी हो।

सबके बीच एक किनारा खड़ा था। प्रकृति अपने ऐसे मनोहर रूप के साथ आनन्दित हो रही थी और सबकुछ देखता संसार, सबकुछ देखती ये धरती अपनी प्यास बुझा रही थी इनके बोलों को सुनकर, इनके बीच रहकर। इनकी जुबां के दो बोल सुनकर ऐसा लग रहा था जैसे सब इसकी गोद में सोकर सुकून पा रहे हों। मौजों के बीच खड़ा मानव जिस्म इनसे अठखेलियाँ कर रहा था। पेड़ों के साये में बैठा जीव अपने तन की प्यास को बुझा रहा था और उड़ते हुए पंछियों को देखकर वो उनके साथ उड़ने की बात सोच रहा था। सबके साथ रहकर उसे अलग-अलग अनुभूति मिल रही थी। जिनको प्यास लगी थी वो प्यास मिटाने का सामान तलाश रहे थे। जिनको भूख से प्रताड़ित होना पड़ रहा था वो अपने-अपने पास दो रोटी का जुगाड़ करने का सामान तलाश रहे थे। जिनकी आँखों में आँसू समाये हुए थे वो दर्द के साये में पड़े-पड़े तड़प रहे थे। सबके पास ऐसा ही एक किस्सा खड़ा था। प्रकृति का ये मनोहर रूप, ये मनोनित छटा सबके पास मौजूद थी और सब प्रकृति की ही गोद में खड़े होने की बात कर रहे थे। किसी को इसके पास से जीवनयापन का जरिया मिल रहा था, किसी को जीने की प्रेरणा मिल रही थी। किसी को राग-रंग का सामान मिल रहा था, किसी के घर चिराग जलने की बात चल रही थी। सब अपनी-अपनी दुनिया में मग्न खड़े थे। किसी की बातों से उनका दिल बहल रहा था। किसी के पास सब मौजूद थे। कोई ऐसा नहीं था जिसके पास कोई नहीं था। मगर उसी संसार में एक मैं भी थी ऐसी जिसे हर जगह जाने पर अपना ही गम सता रहा था। न पेड़ के शाख मुझे छाया दे रहे थे, न नदी की मौज मुझे इशारे से अपने पास बुला रही थी। न चिड़ी का उड़ता हुआ पर मुझे उड़ने को उकसा रहा था, न कथित किस्सों में मेरी आवाज साफ-साफ सुनायी दे रही थी। सब अलग-अलग हो चले थे मुझसे। किसी के पास जाने पर भी मुझे सुकून नहीं मिल पा रहा था और मैं तड़प-तड़प एक ही बात सोच रही थी कि क्या प्रकृति की गोद में आके ये धरती मुझसे जुदा हो गयी या ये संसार मुझसे अलग हो गया था। ये सब लोग, ये सब किस्से मेरे लिए बदल से गये। क्या हो गया मेरे साथ? मेरे लिए क्या-क्या बदल गया जो कि प्रकृति की गोद में कहीं नहीं है। जो कि मुझे देखते ही प्रकृति की गोद से उतर गये।

स्नेह

पर्वत कहता है शिखर से कि मुझे स्नेह चाहिए। शिखर कहता है वादी से कि मुझे स्नेह चाहिए। वादी कहती है पेड़ों से कि मुझे स्नेह चाहिए। पेड़ कहते हैं पत्तों से कि मुझे स्नेह चाहिए। पत्ते कहतें हैं साये से कि मुझे स्नेह चाहिए। साये कहते हैं इन्सान से कि मुझे स्नेह चाहिए।

स्नेह तो सारे जीव चाहते हैं जो जीने को तत्पर हैं, जिन्हें संसार में जीने को भेजा गया है। कैसा है ये स्नेह, कैसी ये स्नेह की कड़ी जो हर शय से जुड़ी है संसार के। पर्वत भले ही शिखर के बीच खड़ा है, पर प्यार उसे भी चाहिए। स्नेह का नेह बंधन उसे भी चाहिए ताकि वो और ऊँचा हो सके किसी का प्यार पाकर, किसी की चाहत की सीढ़ी चढ़कर। शिखर को वो स्नेह वादी से मिलता है और वादी पेड़ों से स्नेह माँगती है ताकि उसको और ऊपर जाने का और प्यार पाने का मौका मिल सके। वो जितना ऊपर जायेगा साये उससे भी ऊपर तक जायेंगे। वो जितनी बार अपने पत्तों की ओर देखेगा उतनी ही बार आनन्दित होगा। पत्ते कहेंगे मैं हरा-भरा रहूँ, मुझे सागर से स्नेह मिलता रहे ताकि जीवन में कभी हमें प्यास का एहसास न हो सके और सागर के पास से उसकी प्यास बुझाने वाला माध्यम एक है जिसे इन्सान कहते हैं। जिसको कि इन सबसे एक साथ स्नेह चाहिए।

तो कैसा है ये स्नेह? कैसी है ये स्नेह की अनुभूति जो सबके जीवन में एक सा मायना लेकर आती है। न किसी से कुछ माँगती है वो न किसी का कुछ त्यागती है। वो हमेशा एक जीव के इन्तजार में रहती है जो स्नेह के साथ जोड़ सके उसे, जिसका स्नेह पा सके वो। पानी का स्वाद मीठा होता है जिससे सारे लोगो की प्यास मिटती है। अगर वो मीठी न होती तो संसार का एक-एक जीव प्यास से तड़पता रह जाता। तो पानी इतना मीठा क्यों हैं? उसे अम्बर से स्नेह मिलता है। और अम्बर इतना स्नेह क्यों लुटाता है उसपर क्योंकि उसे भी प्यास लगने पर धरती की ही तरफ देखना पड़ता है। धूप कितनी चमकीली होती है और सूरज किस कदर आग उगलता है। अगर चाँद को चाँदनी रात का स्नेह न मिलता तो क्या जीवों को जीने का सामान मिल पाता? नहीं। दिन भर की थकान और जलन से छुटकारा पाने को हम शाम का इन्तजार करते हैं और शाम हमें सुकून क्यों देती है क्योंकि उसे ठंडी हवाओं का स्नेह प्राप्त है। अगर ये हवाएँ स्नेह में सराबोर होकर हमारे पास नहीं आती तो हम शाम के धुँधले साये में भी जाने कब का जलकर राख बन गये होते। तो कितनी बड़ी कड़ी है ये स्नेह की। एक तरफ शाम स्नेह के दामन से हमे झाँक रही है, एक तरफ सूरज की गर्मी हमें जला-जला तमाशा देख रही है क्योंकि उसे किसी का स्नेह नहीं चाहिए। उसका स्वभाव है जलाना और जिसका स्वभाव जलन भरा हो वो इन्सान तो क्या, किसी को सुकून नहीं दे सकता। पर्वत शिखर तलाशते हैं ताकि उसे लोग ऊँचाई तक जाते हुए देख सकें और इस ऊँचाई तक किसी को सिवाय स्नेह के कोई नहीं ले जा सकता।

शिखर वादी को इसी वजह से तो पुकारा करता है ताकि ठंडी हवा का झोंका उसे धूप में जलने से बचा सके और ये ठंडी हवा वादी-वादी ही तो घूमा करती है फकत। वादी पेड़ों को तलाशती है ताकि पेड़ों के सहारे मिल रहे साये से बहते हुए रिमझिम बयारों की धुन को सुन सके वो और इसी वजह से उसने स्नेह माँगा है वादी से ताकि ये प्यार का जज्बा

हमेशा कायम रह सके।

धूप क्यों बने जलाने को? हवाएँ क्यों बनी उन्हें मिटाने को और इन्सान क्यों मिटा? किसने मिटाया उसे? स्नेह के जलते अंगारों ने। सब एक-एक चीज तलाश रहे थे और हर चीज उन्हें स्नेह की परिभाषा बताना चाह रही थी। वो इसी परिभाषा को जगह-जगह तलाशते हुए इतनी दूर तक आ गए जितनी दूर की उनका स्नेह उन्हें पास में मिलने को बुला सका। ये स्नेह का पौधा हर जगह जवान था। मगर कब कहाँ, किसको किन वेशों में मिला, इसकी खबर किसी को नहीं थी। वो सब स्नेह दौड़ में शामिल होना चाह रहे थे और उसको पाकर सबसे ज्यादा आनन्द उठाना चाह रहे थे जबकि स्नेह इतनी दूर से सबसे मिलने अकेले आया था और यहाँ आकर वो सारे जीवों में समोहित हो चुका था। जिसने जितना करीब पाया इसे वो उतना मालामाल हो गया। जिसने कुछ भी स्नेह नहीं पाया किसी से वो कंगाल हो चला गया और स्नेह एक बार फिर तड़प उठा मिलने को ।

अपनी आभा समेटे प्रकृति रंगबिरंगी छटा बिखेर रही है। कहीं हरियाली में लिपटी वादी इसकी कामना करती अपनी-अपनी दुनिया में मग्न है, कहीं हरे-भरे वृक्ष इसकी चर्चा करते नजर आ रहे है। आभा इनकी आन-शान और गौरव है। वादी-वादी घूमती ये परिन्दों की कतारें उड़-उड़कर इसके गुणों को बखान कर रही है। कहीं पशु अपने-अपने घरों में जंगल को तलाश रहे हैं।

कितना अजब है ये आभामय जीवन प्रकृति का। एक तरफ कल-कल करती नदी की धारायें शोर मचा रही है तो एक तरफ प्रकृति अपने किरणों में नहा रही है। आभा कह रही है, मैं सुन्दर हुँ। प्रकृति कह रही है, मैं सुन्दर हूँ। पर कौन किसके लिए कितनी लुभावनी चीज है, ये प्रकृति की प्यार भरी बोली जान रही है। उड़ते परिन्दों की कतारें जान रही है।

मेघ बरस रहे है। आकाश नीले रंगों में रंगना चाह रहा है। हरियाली बाग-बाग घूमना चाह रही है। पौधे शोर मचा रहे हैं, पत्ते गिर-गिर कर गजल गा रहे है। मौन धड़कनें शोर को सुन आ रही है, जा रही है। किसी के पास आभा की कमी नहीं है। कोई शान से कह रहा है, मेरा बदन छूके देखो। कोई आन में अपने को मिटाता जा रहा है। किसी के पास पानी की बूँदे बादल बन बरस रही है। किसी की प्यार भरी कूक पानी की बूँदों को बरसने से रोक रही है। कह रही है, मुझे गाने दो। मैं शीत ऋतु में आयी हूँ। मुझे गाने दो। मैं शीत ऋतु के बाद चली जाऊँगी। सब मान जाते है। पानी को लिये बादल गुजर जाता है। कोयल कूकती हुई कहती है, मैं वीणा का तान हूँ। मैं कोकिला, सरस्वती का अवतार हूँ। मैं अपने कोमल कण्ठों से मधुर आवाज निकालती एक तरफ पेड़ के झुरमुट में छूपी बैठी हूँ। मुझसे परिन्दे कण्ठ माँग रहे है। मेरी आवाज से प्रकृति में एक नया निखार आ रहा है। मैं अपनी काया का, अपने रंग-रूप का इससे अच्छा बखान और क्या करूँ। मैं प्रकृति के साथ घुलमिल कर रहने लगी हूँ आज क्योंकि मुझे नाज है अपनी सुन्दर काया पर। मुझे नाज है अपनी कोमल छवि पर और ऐसा कह वो कोकिला शीत ऋतु से वसन्त ऋतु तक अपनी मधुर आवाज से चाहत बिखेरती गुजर जाती है मगर साथ में हरियाली दे जाती है। पशु-पक्षियों का जीवन नीरस था। वो रंगबिरंगे रंगों से रंग जाता है। सभी अपनी-अपनी काया के साथ खुश होते हैं। किसी को उड़ने को नीला आसमान मिल जाता है, किसी को कुछ और। सब अपने-अपने लिए एक आसियाँ बुलाते है। उसे ढूँढने को निकल पड़ते है। प्रकृति की हरी भरी वादी पेड़-पौधों के झुरमुट में अपने को छुपा लेती है। जब कोई वहाँ से गुजरता है उसकी बाहें थाम लेती है और कहती है कि मैं तुम्हारे ही इन्तजार में बैठी थी। देखो, मेरी आभा को देखो। देखो मेरे रंगबिरंगे सपनों को देखो। देखो मेरे चेहरे की रंगत को और सोचो कि तुममें कितनी आभा है। तुम अपनी आभा से कैसा संसार बसाते हो और फिर उनके आगे चले जाने पर फिर से झुरमुट में खुद को छुपा लेती है। वहाँ से पशु अपने झुंड में मदमस्त गाते, शोर मचाते गुजरते हैं। परिन्दे अपने-अपने आसियाँ बनाने के लिए वहाँ से तिनका समेट उड़ जाते हैं। प्रकृति के रूप-रंग को और निखार मिल जाता है। वो हँसती-गाती शोर गुल में खुद को छुपाती अपने भाव मनुहार को रचती कहती है कि मेरे पास क्या नहीं है। सबकुछ तो है। एक पत्ता है पेड़ का। एक पेड़ है शाख का। एक झुरमुट है बहार का और आभा

निकलकर उसके जिस्म से वादियों में समा जाती है।

फिर एक नया मौसम आता है, नई रूत आती है। वादियों को महका जाती है वो। उसकी महक हर एक दिल को सुकून देती है और कहती है कि मैं आभा जीवन हूँ। मुझसे कभी अभाव की बातें मत करना। मैं पहले तुम्हारी धरती पर एक रंग लेकर गयी थी और आज मेरे पास प्रकृति के कई रंग मौजूद हैं जिसे मैंने तुम्हारे नाम कर दिया है। फिर शीत ऋतु आयेगी। वसन्ती बयार चलेगी। फिर मेरी आभा कोयल की कूक बन बाहर आयेगी। तुम देखोगे मुझे और तलाश करोगे क्योंकि आभा नहीं होती जिस जीवन में वो जीवन बेरंगा होता है उसकी महक फीकी होती है। तुम तो मेरा श्रृंगार हो। मेरे चेहरे की बहार हो। तुम मेरे प्यार का मौसमे चिनार हो और मैं आभा का संसार हूँ। प्रकृति की गोद में सो रही हूँ। और कल जब सोकर जागूँगी तुम्हारे पास फिर से आ जाऊँगी। तुम रास्ता तो जरूर देखोगे मेरा क्योंकि मुझसे प्रकृति का, तुम सबका रंग-रूप कायम है और प्रकृति से, मुझसे तुम कायम हो।

मेरे कदमों की हल्की सी आहट हुई। लोग चौंके। दरवाजा अपने आप खुल गया। मैं अन्दर चला गया। मुझसे किसी ने न पूछा, तुम कौन हो ? मैंने बस खामोशी से किसी के जिस्म को अपना बना लिया। मैं ज्यादा देर तक खड़ा न रह सका। वो जिस्म गिर गया। मैं बाहर चला आया। तभी किसी की चीख सुनी मैंने । किसी ने कहा, मेरा बेटा कहाँ चला गया? आखें खोल बेटे। मैं तेरी माँ हूँ। पर वो आँख कैसे खोलता? मैंने तो उसकी ज्योति ही छीन ली उससे।

वो रो रहे थे। मैं अपनी जीत पे खुश हो रहा था। तभी मेरे कानों में एक औरत की चीख गूँजी जिसने उस आदमी से लिपटते हुए कहा, एक बार आँखें खोलो जी! देखो तो तुम्हारे छोटे-छोटे बच्चे कैसे बिलख रहे हैं? मगर उसने आँखें नहीं खोली। तब मैं भी सोच में पड़ गया कि एक आदमी की मौत पे इतने लोग रो रहे हैं। इनमें से कोई माँ है, कोई पत्नी है, कोई बेटा है, कोई भाई है। मगर उसका तो अब एक ही साथ था मौत का साथ, मेरा साथ।

मैं उसे लेकर गुजर जाता हूँ। लोग मृत शरीर को कफन से ढक देते है। अर्थी उठती हैं, चिता जलती है। बहुत लोग उदास होते हैं। मगर मैं जरा भी उदास नहीं होता। मैं तो फिर एक दरवाजा तलाशता हूँ अन्दर जाने को। मेरे लिए तो हर एक मंजर एक रास्ता है, हर एक घर एक सराय जहाँ मैं मुसाफिरों की तरह आता हूँ और रैनबसेरा कर चला जाता हूँ।

इसी तरह करोड़ों, अरबों लोग निकल पड़ते हैं एक नये रास्ते की ओर जहाँ से उनके एक भी कदम वापस घर की तरफ नही आ पाते । वो अब मेरे गुलाम हो जाते हैं, हाँ मेरे गुलाम। मैं उनके साथ हर एक जगह जाता हूँ और वो ही मंजर पाता हूँ अपनी आँखों में।

कहीं बेटे की मौत, कहीं पत्नी की चीख, कहीं बच्चों के बिलखने की आवाजें। मगर मैं ये सोच कभी-कभी हैरान भी होता हूँ कि इतने प्यारे जीवों पे मुझे दया क्यों नहीं आती। क्यों मैं हरे-भरे घर को खण्डहर बना देता हूँ? क्या मुझसे उनका घर देखा नहीं जाता। उनकी हँसी-खुशी देखी नहीं जाती, उनका प्यार देखा नहीं जाता। पर क्यों, उन्हें तो ईश्वर ने बनाया है। तो हँसते फिर मैं कौन होता हूँ उन्हें मिटानेवाला।

मगर इतना सोच लेने के बाद भी मेरी आदत नहीं जाती। मैं एक नये शिकार की तलाश में निकल जाता हूँ। मैं नदी की गहराई में पनडुब्बी बन खींच लेता हूँ किसी को। मैं शहनाई बन अपनी गूँज में विलीन कर लेता हूँ किसी को। लोग समझते हैं। हमारे घर में नई-नई शादी हुई और वो मर गया। इतने घरों में मैं मातम का महौल बन छा जाता हूँ। लोगों को रोते देखता हूँ तो मुझे मजा आता है, बहुत मजा। पर मैं इस बात की फिक्र कभी नहीं करता कि मरनेवालों में से कोई मेरा सगा-संबंधी होगा क्योंकि मैं जानता हूँ कि न मेरी कोई माँ है, न मेरा कोई बाप, न मेरी कोई पत्नी है, न मेरा कोई बेटा । मैं तो साया हूँ , एक अँधेरा साया जिसमें सिवाय अँधेरे के कुछ दिखता ही नहीं। मैं चुपके से आता हूँ और रात के अँधेर में चमकते घरों को अँधेरे में बदल चला जाता हूँ। मैं हँसी छीन लेता हूँ। मैं खुशी छीन लेता हूँ।

मैं अय्यास भी हूँ। जूल्म का विनाश भी हूँ। मगर मैं विनाश कर इतनी सृष्टि बर्बाद कर चुका हूँ कि आज मुझे एक भी घर ऐसा नहीं दिख रहा जहाँ से कि रोने की आवाज न आ रही हो। मैंने हर घर से एक बेटा छीना है। हर घर से एक जिन्दगी छीनी है। मेरे बढ़ते हाथों को न माँ का आँचल रोक पा रहा है, न पत्नी का त्याग। मैं बलिदान माँग रहा हूँ लोगों से। मैं हँसी से उनका घर बर्बाद कर रहा हूँ। मैं आँसू से उनका घर आबाद कर रहा हूँ।

मैंने इतने घरों की चिता तो जला डाली, मगर मुझे किसी ने नहीं देखा आजतक। मैं ऐसी खामोशी से आता हूँ कि लोग सोते रह जाते हैं। उन्हें मेरे कदमों की आहट सुनायी नहीं देती। मैं उनके जिस्म से प्राण ले गुजर जाता हूँ। सुबह उनके जिस्म को लोग सजा देते हैं। उनकी अर्थी निकलती है। उनका जिस्म मिट्टी में दफन हो जाता है। मगर आज तक मेरे गुनाह लोगों की नजरों में न आ सके। मैं बहुत शक्तिशाली हो गया हूँ। मैंने इतने लोगों के खून पीये हैं कि मैं और जवान हो गया हूँ। मैं तो बूढ़ा न कभी था, न कभी हो सकूँगा। मैं यूँ ही आता रहूँगा लोगों के पास चुपके से उनके घरों के जलते दीये को बुझाता रहूँगा। लोग अँधेरे में मुझे पहचान नहीं पायेंगे। मैं अपनी बुजदिली पे शर्मिन्दा होने की बजाय खुश होता जाऊँगा। माँ मुझे कोसती रहेगी। पत्नी मुझसे अपने सुहाग की भीख माँगती रहेगी। बच्चे मुझसे पिता का प्यार माँगेंगे। पर मैं उन्हें ये सब कैसे दे सकूँगा? मेरे पास तो न दया है, न ममता, न अफसोस। मैं तो अहसान फरामोश हूँ। हाँ, मैं तो इस गली से उस गली बस आता जाता रहता हूँ। मैंने जहाँ ज्यादा रोशनी देखी, उस घर के चिराग बुझाने की उस घर के दरवाजे पे दस्तक देने चला गया। मेरे कदमों की आहट उन्हें चौकाती है, फिर जगाती हैं मगर अफसोस! मैं उन्हें जगने ही नहीं देता, सुला देता हूँ। पहले से भी ज्यादा गहरी नींद। सुबह निकल जाता हूँ किसी और रास्ते पे, किसी और सराय को तलाशने।

मैं तो एक मुसाफिर हूँ न, आता हूँ , जाता हूँ। मैं कब रूका हूँ एक जगह। न मैं कल एक जगह था, न आज हूँ। न मैं कल पास था, न आज दूर हूँ। मैं तो मौत हूँ, हाँ मौत जिसका कोई घर नहीं, कोई माँ नहीं, कोई पत्नी नहीं, कोई बेटा नहीं।

हम सामने से गुजर जाते हैं। हमारे जीवन में एक हादसा हो जाता है। हम हताश-परेशान एक जगह से दूसरे जगह आते हैं, जाते हैं पर हादसे के उस लम्हें को भूला नहीं पाते क्योंकि हादसे में किसी की मौत हो जाती है। हमारा एक रिश्ता खत्म हो जाता है। हमारे जिस्म में बहते हुए खून धब्बे छोड़ जाते हैं। हम हादसे के शिकार हो जाते हैं। जब हम बिस्तर पे सोते हैं तो आँखों के सामने वो ही मंजर आ जाता है। वो बोल उठता है, मैं एक हादसा हूँ तुमने मुझे पहचाना की नहीं। मैं कभी भी, किसी भी जगह आ सकता हूँ। मैं पता नहीं क्यों, कभी भी खामोशी से सो नहीं पाता। मुझे नींद नहीं आती है। मैं बार-बार रोता हूँ और सोचता हूँ किसी घर से तो वापस चला जाऊँ मैं।

मैं एक वाहन हूँ जिसपे पता नहीं कितने मनुष्य सवार हैं। मैं इस शहर से उस शहर, इस नगर से उस नगर विचरण करता हूँ और मौका देख एक जगह रूक जाता हूँ। हादसा हो जाता है। हादसे में कई लोगों की मौत होती है। खबर आती है किसी पुल पे एक गाड़ी का ऍक्सिडेंट हो गया। उसमें करीब 20-25 लोग मारे गये। कुछ जख्मी भी हुए। लोग दौड़ पड़ते हैं मगर मैं! मैं तो वाहन छोड़ भाग जाता हूँ। मुझे इस बात की फिक्र कहाँ कि हादसे में किसका पैर टूटा, कौन अपाहिज हुआ, कौन एक आँख से अन्धा हुआ? किसकी माँ मरी? किसका पति बिस्तर पे सो गया? मैं तो बस एक नये हादसे पे निकल पड़ता हूँ। आवाज आती रहती है। गाड़ी खींचते हैं लोग। हॉस्पिटल में उन्हें ले जाया जाता है। उनका इलाज होता है। पुलिस आती है छानबीन करने। ड्राईवर पकड़ा जाता है, वो मुजरिम कहलाता है। उसपे इल्जाम आता है कि नशे की हालत में गाड़ी चलाने से ये ऍक्सिडेंट हुआ।

मैं तो बाइज्जत बरी हो जाता हूँ। कानून के लम्बे हाथ मेरे गिरेबान तक पहुँच नहीं पाते। हादसा फिर हो जाता है। कहीं किसी नेता की पार्टी पे हमला हो जाता है। पुलिस हमलावरों की तलाश करती है। पत्रकार तस्वीरें खींचते है मगर असल कातिल तो पकड़ा ही नहीं जाता। मेरी तो फोटो अखबार में आ ही नहीं पाती। मैं तो मुस्कराता हूँ ये सोच कि कितने लोग पकड़े गये जो बन्दूकधारी थे, जिनके चेहरे पे नकाब था। मगर उनका नकाब तो पुलिस हटा देती है, पर मेरा नकाब! मैं तो फिर आगे बढ़ जाता हूँ किसी अन्य शहर की ओर, किसी अन्य हादसे के शिकार में। मेरा स्वभाव बदल नहीं पाता और हादसा हो जाता है। मैं खामोशी से उनके बगल से गुजर जाता हूँ। मेरी वजह से कितनों को फाँसी होती है, कितने लोग उम्रकैद की सजा पा रहे होते हैं। मगर वो सब बेगुनाह। हादसा तो मैं हूँ। हादसे की वजह तो मैं हूँ। सब तो फकत हादसे की तस्वीरें हैं जिन्हें हमने अखबारों की सुर्खियों में देखा, जिन्हें हमने कानून के कटघरे में देखा। देश में पता नहीं कितने जेलखाने होंगे, कितनी जेल की मजबूत सलाखें होंगी जिनमें सब अनजान कैदी सो रहे होगें। वो भी इस बात से बेखबर कि कसूर तो उनका था ही नहीं। वे सब तो बेकसूर थे जो सजा पा रहे थे। मगर उनपर तो हादसे का इल्जाम था। वो सब तो मुजरिम थे।

मगर मैं कौन हूँ? ये सोचा कभी किसी ने। मुझे तो हादसे का जन्मदाता तक कहा जा सकता था। मगर मुझपे एक भी इल्जाम नहीं। मैं कभी कानून की गिरफ्त में आया ही

नहीं। मैंने कभी ये सोचा ही नहीं कि मुझे कोई कैद भी करेगा। मैं अपने को ले आहिस्ता से इस शहर से गुजर जाता हूँ। हादसा हो जाता है। मैं बस खामोशी से गर्दन हिला देता हूँ। मेरे ओठ मुस्कराने लगते हैं। मैं भी हँसी में शामिल हो जाता हूँ।

मेरी न कोई पहचान है, न कानूनी छवि। मैं कभी जज बन फैसला भी सुना देता हूँ कि हादसा इस वजह से हुआ। कुछ गुण्डे जेल तोड़ भाग गये थे, जाके हादसा कर गये। गुण्डों को सजा भी होती है। पर एक हादसा और हो जाता है, जज की हत्या हो जाती है। कानून डर जाता है, कानून की किताबें डर जाती है। मैं सुबह का अखबार पढ़ता हूँ, जज के मृत शरीर को देखता हूँ जिस पर फूल-माला चढ़ी होती है। मैं मुस्करा देता हूँ। इतना बड़ा हादसा हो गया पर कातिल पकड़ा न गया। कहाँ गयी ये पुलिस, कहाँ गये ये कानून के रखवाले? हादसे की चिता तो जल गयी, मगर धुएँ में कातिल को विलीन होते नहीं देखा गया। मैं जब सोकर उठता हूँ हादसे की किताब मेरे सामने खुलती जाती है। मैं पढ़ता जाता हूँ। मैं जज की तस्वीर भी देखता हूँ, नेता की भगदड़ भी देखता हूँ टीवी पर। मगर उन नकाबपोशों के असली चेहरे को नहीं देख पाता जिन्होंने हादसे किये थे। चेहरे तो हादसे कर गुजर गये थे। मैं सो गया था। यहीं कहीं हादसा फिर जरूर होगा जिसे दुनिया देखेगी। कातिल पकड़ा भी जायेगा। मगर गुनहगार कौन था पता नहीं चल पायेगा। ये कत्ल नहीं हादसा है।

अजनबी हूँ मैं

जब भी पलटा किये हमने पाया अजनबी हूँ मैं। मेरा कोई घर नहीं, कोई मुल्क नहीं, कोई घराना नहीं। मैं आवाज की ऐसा कड़ी हूँ जिसे जमानेवाले सुन-सुनकर अफसाने बना देते हैं। मैंने कभी रोकर देखा तो पाया अजनबी हूँ मैं। मैंने कभी हँसकर देखा तो पाया कि अजनबी हूँ मैं। कानों में सैकड़ों धुनें जाती है, मगर मैं तो अजनबी हूँ न इनके लिए। मैं सुन नहीं पाती इनके बोलों को। सुबह एक हँसी शाम लेकर आती है। शाम एक हँसी रात लेकर आती है। रात एक हँसी सुबह लेकर आती है। मगर मुझे कहाँ पता कि कब सुबह हुई, कब शाम ढली, कब रात का अँधेरा घिरने को हुआ। हमने तो हर मोड़ पे पाया अजनबी हूँ मैं। मेरे पालने से टूटने और चरमराने की आवाज आयी। माँ ने मुझे झूलाया ही नहीं। मेरी आँखें सो रही थी या जाग रही थी क्या पता मैं तो अजनबी हूँ। हाँ, मैं अजनबी ही हूँ।

मैंने मेले में हजारों हाथी-घोड़े देखे, बन्दर, कुत्ते सब एक करतब कर रहे थे। मगर मुझे तो इतना करतब दिखाकर चले गये वो कि मैं खुद को मेले का सामान समझ बैठी। मैंने अपने दिल में हाथी-घोड़े दौड़ते देखे। मैंने अपने दिल में कुत्ते और बन्दर को उछलते हुए देखा। मगर जब पलटी, पाया अजनबी हूँ मैं। ये तो धोखा था मेरी निगाहों का। मैंने जीवन से एक ही बात कही कि मेरे मुल्क के किस किनारे पर मेरी पहचान रह गयी। मैं किस गली में दौड़ा करती थी, मैं किस मकान में सोया करती थी। ये किसका घर है जहाँ कि खुद की नजरों में ही अजनबी हूँ मैं। मैं एक बार फिर उस पुराने खण्डहर से जीवन की पहचान चाहती हूँ जहाँ के लोगों से मेरा दोस्ताना रहा था वर्षों। वो गाँव, वो गली, वो घर, वो मकान, वो मुल्क की पहचान कहाँ रह गयी जिनके लिए अजनबी हो गयी मैं। किस जहाँ के लोगों के बीच आ फँसी मैं? मेरा कौन है जिनकी आँखों में शोले हैं, निगाहों में पानी है। मैं किन लोगों के बीच आ फँसी जिनकी जुबां बार-बार यही कह रही है मुझसे कि अजनबी हूँ मैं। एक फसाना कब से बन गयी मैं? मैं इन्सान के वेश में धरती की बोझ बन जब लटकने लगी तो पूछा कि कौन हूँ मैं? तो आवाज आयी अजनबी हूँ मैं।

मैंने माँ की उँगलियों से पूछा था कल किसको चलना सीखा रही हो? मैं तो अपाहिज हूँ। मुझे तो सड़क पर चलना ही नहीं आता। किसी के हाथ को थाम मुहब्बत का दम भरा करते थे जो वो कौन थे जिन्होंने मुझे सिर्फ इतना ही सिखाया कि अजनबी हूँ मैं। तुम कौन हो जिनके पास खाने-पीने के इतने सामान हैं और जब मुझे भूख लगती है ये कहते हैं मुझसे कि अजनबी हूँ मैं। फिर मैं खाना कैसे खाऊँ? चूल्हे की लकड़ियाँ कहती है सुलगकर बुझ गयी। पानी के बर्तन कहते हैं, पानी के साथ बह गये। रोटी का आटा कहता है, मिट्टी का ढेर हूँ मैं। चावल का दाना कहता है, कंकर हूँ मैं। फिर मैं खाऊँ तो क्या? न चूल्हा मुझे पहचानता है, न पानी का बर्तन, न रोटी का आटा, न चावल का कंकर। तो मैं किसके साथ रहूँ? सभी की नजरों में तो अजनबी हूँ मैं। भूख कहती है, खाना नहीं पहचानता मुझे। प्यास कहती है पानी नहीं जानता मुझे। लोग कहते हैं उम्र नहीं पहचानती मुझे। तो मैं किसके साथ चलना सीखूँ। न भूख चलकर खाने के पास जाने को कहती है हमें न प्यास पानी को पीना सिखाती है हमें। न उम्र ही कोई सपना दिखाती है हमें। तो फिर मैं किसके पास जाऊँ? हर एक की नजर में तो अजनबी हूँ मैं। जब पीपल का पत्ता गिरने लगा तो पूछा हमने कटोरा

बना लूँ? उसने कहा, मुझसे तो बच्चे खेलते हैं। जब कुम्हार ने मिट्टी सानी, मैंने कहा गाड़ी बना लूँ। तो उसने कहा, इससे तो बच्चे खेलते है। जब बादाम बेचनेवाला आया मैंने बादाम माँगा उससे तो उसने कहा, बिना पैसे के तो बच्चे भी नहीं आते हमारे पास और तुम तो इतने बड़े हो। तो क्या पहचाना उस पीपल के पत्ते ने मुझे, उस कुम्हार की मिट्टी ने मुझे। पहचाना उस बादामवाले ने मुझे, नहीं न। सबने तो यही कहा अजनबी हूँ मैं। मैं जब सड़क पर गाड़ी लेकर निकली किसी ने हँसते हुए कहा, आहिस्ता चला ऍक्सिडैंट हो जायेगा। मगर मेरी गाड़ी तो निकली थी। उसने भी नहीं पहचाना मुझे शायद। मैं जब नये कपड़े पहनकर निकली, सबने हमें देख-देख पहले खूब मजे लिये। फिर पूछा कि कितने की है? मैंने कुछ नहीं कहा और मेरी पोशाक ने तब उनसे आहिस्ता से कहा, नहीं जानते मुझे अजनबी हूँ मैं। मैंने जब हाथ में पत्थर उठाया किसी को मारने के लिए तब पत्थर ने कहा चोट खाये लगते हो। मैंने जब मिट्टी के टुकड़े उठाये, मिट्टी ने कहा, गन्दे से लगते हो। मैंने जब बालू की ओर देखा, उसने कहा, रेत से खेल रहे हो तुम। कहीं तुम्हारा घर न ढह जाये। सबने मुझे यही सिखाया कि मैं हर एक से अजनबी बनकर जीऊँ। किसी ने मुझे गाड़ी चलाने से रोका, किसी ने नये कपड़े पहनने से, किसी ने मिट्टी को अपने जिस्म पे मलने पर, किसी ने बालू का महल बनाने पर। सब मेरी नजरों से अजनबी होते गये। जबकि मैंने उनसे पहले भी कहा था कि मुझे क्यों टोकते हो तुम? जानते नहीं अजनबी हूँ मैं। मैंने जब बच्चों से कहा, उनकी माँ आयी मेरी माँ के पास शिकायत लेकर। मैंने तो जब बच्चों को लड़ते देखा तो छुड़ाना चाहा था मगर पलटकर उन्होंने मुझसे ऐसा कहा कि एक बार फिर लगा कि अजनबी हूँ मैं। जब पानी से खेल रही थी गर्मी की रात ने मुझसे हँसते हुए कहा ठंड लग जायेगी। मैंने जब अपने आपको ढँकना चाहा, किसी ने मुझे इशारे से बुलाते हुए कहा, आओ बैठो मेरे पास। मैं जब उसके पास बैठ गयी उसने कहा कि अजनबी हूँ मैं। मैं वहाँ से ऐसी उठी जैसे हवा का झोंका बवंडर लेकर चला आया हो और आकर बिस्तर पे लेट गयी। तब तकिये ने मुझसे मेरा सिरहाना छिनते हुए कहा, देखते नहीं शाम ढलने में वक्त है अभी। रात आये तो आना मेरे पास और जब रात आयी, रात को उसने मुझसे कहा, सोना मत अजनबी हूँ मैं।

इस तरह हर मोड़ पे गयी मगर पाया क्या अजनबी हूँ मैं, अजनबी हूँ मैं, अजनबी हूँ मैं। न रात मुझे पहचानती है न दिन। न मेरे लिए धूप खिलती है न चाँदनी मेरे दामन में पिघलती है। न मौसम में मेरी खातिर निखार आता है, न लोग मुझे पहचानते हैं। न बदली का बादल मुझे पहचानता है, न पानी मेरी प्यास बुझाती है। न हवा के झोंके मुझे सुकून दे पाते हैं, न सर्दी की रात मुझे रजाई ओढ़ा पाती है, न मेरी माँ मुझे लोरी सुना पाती है क्योंकि पालने पे माँ की नजर थी। माँ पालने के झूले को झूला रही थी और पालने को देख रही थी। शायद इसलिए कि अजनबी हूँ मैं। शायद हाँ, इन सब के लिए अजनबी ही हूँ मैं।

परिक्रमा

पृथ्वी की परिक्रमा करती जिन्दगी ऐसे मोड़ पे खड़ी है जहाँ से हर एक इन्सान को जीने की वजह मिल जाती है। इस पृथ्वी पर इन्सान के बसने से पहले आदिमानव रहा करते थे। मगर जिन्दगी ने कुछ ऐसी करवट ली कि लोगों के दिलों में अपने आप परस्पर प्रेम पनपने लगा। एक ने पहले दिल लगाना सीखा। फिर दूसरे ने प्रेम की शुरूआत गठबन्ध न जोड़कर की। फिर एक नहीं कई नस्लें आयी इस पृथ्वी पर। एक परिक्रमा ने जीवन से इन्सान का परिचय कराया। वक्त बदला। इन्सान एक-एक घर बनाने लगे अपने-अपने लिए और इस मकान में सोने को बिस्तर सजाये गये, मखमली चादर बिछाये गये बिस्तर पे ताकि कल कोई नया मानव जोड़ा इस बिस्तर पे बिछे फूलों की महक को महसूस कर सके।

परिक्रमा करती ये जिन्दगी कभी ख्वाब में पलकों पे सितारे सजाने लगती है, कभी एक ही पल में परिक्रमा करती गुजर जाती है। किसी को इससे दर्द महसूस होता है, किसी को जीने का मतलब समझ में आता है। परिक्रमा के बीच फँसा ये सारा इन्सान इस एक पल के इन्तजार में न जाने कितनी मौत मरकर चला गया। एक मौत तो वह तब मरा जब उसकी आँखों के सामने से सितारे गुजर गये जिनके ख्वाब सजाना चाह रहा था वो अपने पलकों पर। ख्वाब तो सज न सके हाँ, अफसाने जरूर बन गये। दूसरी मर्तबा वो तब मरा जब जीने की औकात नहीं थी उसकी और फिर भी जीना चाह रहा था वो।

तो जीवनचक्र के बीच चल रहे इस परिक्रमे को इन्सान क्या नाम दे? किसी ने तो मरकर जात मिटा ली। किसी ने जीकर लोगों की एक इतिहास रचना सीखाया। क्या था पहले जब जीवनचक्र में पहली बार उसके कदम घूमने को व्याकुल थे तब वो एक मामूली सा इन्सान मात्र था और आज जब वो परिक्रमे से बाहर आया, एक अदबकार रोबीला जीवन जीया उसने और तबतक जीता रहा जबतक जीवनचक्र पे चलने की ताकत बाकी रही उसके दिल में। पृथ्वी ने तो अपने रंग नहीं बदले मगर पृथ्वी के इस परिक्रमे में हम इन्सानों ने कुछ रंग जरूर बदल डाले। अपने पहले चक्र में हम एक छोटे से पालने में समानेवाले जीवमात्र थे जिसे दुनियादारी की कोई समझ नहीं थी और जब दोबारा जीवन ने परिक्रमा किया हम चालाक तो इतने बने कि शोहरत और ईमानदारी सबको अपने हिस्से में कर लिया और जब रूतवा पास में आया हमने एक और परिक्रमा की। चाहत जगायी हमारे दिल ने। इस रूतबे को बरकरार रखने वाले इन्सान की नफरत महसूस की।

फिर परिक्रमा शुरू हुआ। हम माँ-बाप बने, बेटे-बेटी हिस्सेदार आ गये। हमारे नाम के साथ उनका नाम जुड़ गया। हमारे नाम और रूतबे को कुछ उन्होंने अपने दोस्तों में बाँटा, कुछ हमने जिन्दगी की तहजीब सीखाने में गंवा डाले उनके लिए। हम उनकी नजर में एक जिम्मेदार इन्सान तो बन गये। मगर बहुत जल्द जिन्दगी ने करवट ली। परिक्रमा आज पूरा हो गया हमारी जिन्दगी का। पृथ्वी ने घूमते-घूमते हमें एक जगह दे ही दी। दो कफन उधार लाये गये, दो नगद ताकि रूतबे और ईमानदारी की कमाई शोहरत और दौलत कुछ तो बचे उनके बाद और जब ये परिक्रमा भी पूरा हुआ, वो बेटे-बेटी उस मोड़ पे आ गये। फिर यहाँ भी एक परिक्रमा शुरू हुआ। बेटे ने अपने पिता के नाम को जिन्दा रखने के लिए यही दो काम तो किया कि शराब में पैसे और रूतबे दोनों समा गये। बेटी ने मनपसन्द लड़के से ब्याह

कर लिया। वो चली गयी दूसरे शहर बसने और इसी बीच बाप की नेमप्लेट भी हटा दी गई। बेटे-बहू ने अपने इस ईमानदार बाप की शोहरत को ढकोसले का नाम दिया और खुद के नाम मकान और सारी सम्पत्ति करवा ली। मगर वक्त का इशारा हो रहा था कि धरती एक परिक्रमा और करे। बेटे ने शराब में पैसे को पानी की तरह बहा दिया और ईमानदार मेहनती बाप की चिता को मुखाग्नि तक नसीब न हो सकी और परिक्रमा करती ये जिन्दगी इस इन्सान को भी एक दिन उसी मोड़ पे ले आयी जहाँ पर कल एक ईमानदार बाप अपने रूतबे को मरता हुआ देख रहा था। जब उसने अपने इतने नामी बाप के नाम को बदल डालना जरूरी समझा तो उसी तरह उसके अपने बेटों ने एक शराबी बाप को अपने नाम के साथ जोड़ने से इनकार कर दिया।

यही तो परिक्रमा है इस जीवन का कि पृथ्वी सदैव घूमती है। आज जो हमारे पास है, कल किसी और के पास चली जायेगी। जीवनचक्र चलता रहेगा। हाँ, मगर उसे थामने वाला एक बलशाली हाथ चाहिए। परिक्रमा करती जिन्दगी ने पल-पल हमसे कुछ छीना ही। दिया तो एक सादा जीवन और जब हमने रंगीन ख्वाब सजाये पलकों पे अपने तो वो सारे मंजर दूर हो गये हमसे और पृथ्वी ने एक और नाम दिया जिन्दगी को। जो चले गये वो आ न सके। मगर क्या साँसे थम पायी है कभी? एक के चले जाने का गम किसे है जब कोई दोबारा पास में खड़ा है ही। हम इन्सान तो फकत नाचती कठपुतलियाँ हैं जीवन के इस परिक्रमा पर। असल खेल तो उस ऊपरवाले का है जिसने पहले परिक्रमा को रचा। फिर पृथ्वी घूमने लगी। फिर धरती-आकाश एक साथ गले मिलने लगे दूर नदी किनारे पहाड़ों पर और जब सब चले गये हमने एक बार खुद को ऐसे मोड़ पे मोड़ दिया जहाँ से परिक्रमा एक बार फिर शुरू होनेवाला था और इस परिक्रमे के पीछे भी उसी पाक ईश्वर का ही हाथ था जिसने हमें धूप-छाँव भरा जीवन दिया जिसने पल-पल हमें जीना सीखाया। जिसकी लौ पल-पल महसूस कर हमने एक गुर हासिल किया।

अगर दुनिया घूमती नजर न आती तो शायद हमारा साथ छूट जाता इस पृथ्वी से क्योंकि अगर जीवनचक्र स्थिर ही रह जाता तो इन्सानों का बदलाव कैसे हो पाता और जब इन्सान नहीं बदलते तो 'हम से हमारा' होता कौन। यही तो सार छुपा रखा है परिक्रमा ने हमारी निगाहों से बचा के कि हम एक रचना सार हैं कहती है ये और कहते-कहते घूम जाती है। परिक्रमा शुरू हो जाता है। यहीं से एक बार फिर परिक्रमा की शुरूआत हो जाती है।

अभिनेत्री

ये कायनात एक अभिनेत्री है, जिन्दगी सिनेमा। तस्वीरें आ रही है, जा रही हैं। कभी ठहरते हुए इन तस्वीरों में हमें कही न कहीं अपनी जिन्दगी की हल्की सी परछाई दिख जाती है। हम अपने जीवन के बारे में सोचने पर मजबूर हो जाते हैं।

सिनेमा के पहले सीन में हम एक नन्हीं बच्ची हैं जो नंगी घूमनेवाली है। उसके पास न शर्म होती है, न हया। यही बच्ची जब उम्र के साथ बड़ी होने लगती है, पहले माँ से सलवार कमीज माँगती है, फिर सर पे रखने के लिए दुपट्टा। ये कैसा जीवन है? ये कैसी अभिनेत्री है जो पहले सिनेमा के पर्दे पर नंगी नाचती है, फिर शर्म का दुपट्टा ओढ़ना चाहती है। मगर इस पर्दे पर तो मर्द के कदम पड़ जाते है । उन्हें उस नंगी खड़ी अभिनेत्री को देख लज्जा नहीं आती। वो मजा लूटते हैं। फिर पर्दा गिर जाता है।

दूसरा सीन आता है सिनेमा का जहाँ वो नंगी लड़की दुल्हन बनती है। कोई उसे डोली में बिठाकर ले जाता है। बारात के साथ गाजे-बाजे का शोर होता है। माँ-बाप, भाई सब पर्दे के पीछे खड़े रह जाते है। सिने अभिनेत्री विदा हो जाती है। मगर सामने का सीन फिर बदल जाता है। वहाँ फूलों का सजा एक बिस्तर आ जाता है जिसपे सिने अभिनेत्री सोती है। मर्द आते है, दरवाजा बन्द कर देते हैं। फिर पर्दा गिर जाता है।

अभिनेत्री के घूँघट को तो लज्जा शायद आ जाती है मर्द को देख। मगर जिन्दगी को शर्माना नहीं आता। फिर वो अभिनेत्री माँ बनती है। मर्द की एक निशानी आती है जमीं पर। मर्द शान से अपना नाम देते है उस बच्चे को। मगर जन्म देने वाली औरत का नाम भूला दिया जाता है। लोग बच्चे को उसके बाप के नाम से जानते हैं। धीरे-धीरे वो बच्चा बड़ा होता हैं। स्कूल-मास्टर दाखिले के वक्त उससे उसके पिता का नाम पूछते हैं। माँ का नाम तो पर्दे के पीछे धुँधला पड़ जाता हैं। जिस माँ ने बच्चे को पैदा किया, अपने जिस्म को दो अलग टुकड़ो में बाँटा। वो माँ की उस निशानी का नाम औलाद ने अपने पिता के नाम के साथ जोड़ दिया। माँ फिर भी खुश। पति का नाम रौशन हो रहा है संसार में।

तो क्या वो जन्म देने वाली माँ, वो नन्हीं अभिनेत्री क्या अगर चाहती तो अपना नाम ऊँचा नहीं कर पाती? वो नहीं चाहती कि उसके नाम की एक निशानी संसार के कोने-कोने में रचित हो। शायद तब तो नन्हीं लड़की आज के दौर की बूढ़ी माँ बन चुकी थी जहाँ उसे अपने पीछे वो नंगा चेहरा नहीं दिख रहा था। वो उम्रदराज हो चुकी थी। उसके सर पे पति के नाम का आँचल था और कदमों में सुहाग के नाम की जंजीर। पर्दा गिरनेवाला था। मगर गिरते-गिरते रह गया। उस अभिनेत्री ने बहू के नाम की मेंहदी की लाली देखी अपनी हथेली पे। बेटा, बहू को लेके आनेवाला था। उसने अपनी बूढ़ी हथेली पे अपना नाम नहीं देखा आज उसके चेहरे पे गहरी लाली दिख रही थी

शाम ढली। डोली फिर सजी। इस बार एक नयी लड़की दुल्हन बनी थी। उसके माँ-बाप नये थे। उसके भाई के सर पे जो सेहरा था, वो नया था। माँ ने बेटी की आरती नहीं उतारी। अपने दामाद के सर के सेहरे को आशीष दी। बारात फिर विदा हुई। वो मंजर फिर आया मगर वो मंजर पीढ़ी बदल चुका था। वो माँ थी, पहली पीढ़ी की दुल्हन थी जो। आज बेटी थी, बहू थी जो दूसरी पीढ़ी की दूसरी दुल्हन बनी। उस नन्हीं लड़की की वो दास्तां फिर

दोहरा गयी उसके सामने। अपनी पुरानी जिन्दगी याद आ गई उसे। वो सोचने लगी हमारे बेटे की शादी हो गई। अब जल्दी से हमारी बहू माँ बने। हम दादी बनें और मन्नतें माँगती रही ईश्वर से। ईश्वर ने इस अजब दास्तां को देखा भी, सुना भी और फिर एक दिन वो नंगी घूमनेवाली नन्हीं लड़की दादी माँ बन गयी। मगर इसके पीछे उसे अपने सफेद बाल न दिखे। वो बच्चे की मुँहदिखाई में अपना चेहरा देखना भूल गयी।

धीरे-धीरे वक्त बीता। आज उस नन्हीं बच्ची की जिन्दगी का आखिरी लम्हा था उसके सामने जहाँ न पति का सहारा था, न बेटे का, न पोते का। पति दो साल पहले गुजर गये थे। बेटा परदेश कमाने चला गया था। पोता शहर के स्कूल में पढ़ रहा था। यही याद करती उसकी साँसे टूट जाती है। न उसे अपना चेहरा आईने में देखने की फुर्सत मिल सकी। न बेटे, बहू या पोते ने उसका चेहरा अपने घर के आईने में देखा। अर्थी गुजर गयी। चिता जल गयी। बच्चों ने सर मुंडवाया। माँ की दुनिया विदा हो गयी। पर्दा गिर पड़ा। मगर अभिनेत्री का किस्सा खत्म न हो सका।

ऐसे अनगिनत किस्से ढलते रहेंगे इस अभिनेत्री के जीवन में जो कई नये-नये सिनेमे को जन्म देते रहेंगे। पर्दा उठेगा। फिर पर्दा गिरेगा। अभिनय करनेवाले लोग बदलते जायेंगे। मगर सिने चित्र बार-बार यही चित्र दिखलाते रहेंगे कि कल एक नन्हीं बेटी ने जन्म लिया। धीरे-धीरे वो जवान हुई और आज मिट्टी में दफन हो गयी। यही परम्परा चलेगी। यही सीन पर्दे पे आते रहेंगे जाते रहेंगे। सिनेमा के रंग नये होते जायेंगे मगर जिस्म वो ही पुराना होगा।

मैं

मैं एक सदी हूँ जो कभी नहीं गुजरती। मैं बार-बार आती हूँ कभी पत्नी बन, कभी बेटी बन, कभी माँ बन, कभी प्रेमिका बन। पर मैं एक घर नहीं बना पाती अपने लिए। पत्नी बन मैं पति के घर में रह जाती हूँ। बेटी बन मैं पिता के घर में रह जाती हूँ, माँ बन ममता के आँगन में सो जाती हूँ। प्रेमिका बन गली, मुहल्लों में बदनाम हो जाती हूँ।

मैं ऐसी क्यों हूँ? कल मैंने रोते हुए कहा था कि मेरा घर कहाँ है? तब आवाज आयी थी-दूर बहुत दूर, चिनारों से धूप निकल रही है, तू उससे जाकर अपना पता पूछ। तब मैं सोच में पड़ गयी थी कि वो चिनार कहाँ है? ये तो किसी ने बताया ही नहीं। फिर मैं अन्दाजे पर दूर, बहुत दूर कहाँ जाऊँ। मगर मैं फिर भी जाती हूँ। मुझे रास्ते में हजारों घर मिलते हैं। मगर सब-के-सब बेगाने। किसी में कोई रह रहा था, किसी में कोई। किसी ने तो मुझे पहचाना ही नहीं। मैं चलती गयी, चलती गयी मगर मेरी पहचान का कहीं कोई घर नहीं मिला। मैं थककर जमीन पे बैठ गयी। तभी सामने धूप दिखी मुझे। मैं समझी, मेरी मंजिल आ गयी। मैं दौड़ पड़ी सारी थकान भूलाकर और धूप का पीछा किया। मैं धूप के पीछे-पीछे चलती चली गयी। सूरज डूब गया। धूप खत्म हो गयी शायद। मेरा किनारा मुझे आज भी नही मिला। वो मुझसे थोड़ी और दूर था। मैं फिर बैठ गयी दिन भर की थकान से बोझिल। मुझे नींद आ गयी। सुबह पत्तों की पीली रोशनी देखी मैंने और समझा कि मैं चिनार की छाँव में सो रही थी। मैं दौड़ पड़ी ये कहते हुए कि मेरा चिनार आ गया। मैंने आसमान को पुकारा, आसमान के उड़ते पंछियों को पुकारा, मेरा चिनार आ गया कि तभी बिजली चमकी। बादलों के गरजने की आवाजें आने लगी। मैं सहम गयी। पीछे से किसी ने कहा-कौन हो तुम? मैं रो पड़ी, मैं चिनार की परछाई हूँ। वो मुझे यहीं दिखा था। तो उसने कहा ये चिनार नहीं घोंसला है। यह हमारा घर है। देखते नहीं यहाँ बिजली चमक रही है, यहाँ हमारा मिलन हो रहा है जमीन-आसमान-से। तू जा यहाँ से, नहीं तो जल जायेगी और सुन चिनार की धूप सिर्फ एक दिन निकलती है। आज अमावस की काली रात है। ग्रहण लगने वाला है। जा अभी जा। तो मैंने कहा, मैं कहाँ जाऊँ? मुझे तो न घर दिख रहा है कहीं, न घर का कोई पता मिल पा रहा है मुझे। तो उसने कहा जो लोग रास्ता भटक जाते हैं, वो घर का पता भी भूल जाते हैं। ऐसा कह अपने घोंसले में समा गयी।

बारिश होने लगी। बिजली फिर चमकी। मैं फिर चल पड़ी आगे चिनार की तलाश में। चलते-चलते सफर में मेरे पाँव में ठोकर लग गयी। मैं गिर पड़ी। ऐसे में मुझे सहारा कौन देता, मैं अकेली जो थी। ऐसे में मैंने एक पेड़ का सहारा लिया जो बूढ़ा हो चुका था, चरमराकर गिर गया। मैं भी उसके साथ गिर गयी और चिनार की धूप फिर भी नहीं मिली मुझे। तब मैंने रोते हुए आसमान से कहा-ऐ आसमान वाले! अब तू ही बता मुझे चिनार का पता कि ऐसे में फिर बिजली चमकी। सामने चिनार की धूप दिख गयी मुझे। मैं दौड़कर उससे लिपट गयी तो वो मुझसे दूर हट गया। मैं बोली-तुम मुझे नहीं पहचानते, मैं तुम्हारी माँ हूँ, मैं तुम्हारी पत्नी हूँ, मैं तुम्हारी प्रेमिका हूँ। तो चिनारों से हँसने की आवाज आयी। ये मेरा घर है। मेरी कोई माँ नहीं, मेरी कोई पत्नी नहीं, मेरी कोई प्रेमिका नहीं तुम जो भी हो एक बदनाम औरत हो जिसका कि कोई घर नहीं, कोई चिनार नहीं, कोई चिनार की धूप नहीं।

तब मैं गिर जाती हूँ और आवाज गूँजने लगती है–मैं अपना घर तलाश नहीं पायी। मुझे भूल जा। मैं जिस चिनार की धूप को ढूँढने निकली थी, वो हर उस जगह था जहाँ–जहाँ मैं गयी। मगर मेरा अपना घर कहीं नहीं था, मेरी मंजिल कहीं नहीं थी। मेरी जिन्दगी में रोशनी हर पल आती है, मगर मैं सामने से गुजर जाती हूँ और धूप रात की आगोश में सो जाती है। मुझे न चिनार मिल पाता है, न चिनार की धूप। न इन्सान रह पाती हूँ मैं किसी की नजरों में न इन्सान का रंग–रूप ही। मैं हूँ एक औरत जिसका कि कहीं कोई घर नहीं, कहीं कोई सफर नहीं, कहीं कोई मंजिल नहीं।

सांसारिक बंधन एक पत्ता है पेड़ का और इन्सान उसकी धारियाँ। हर पत्ते में छुपे इन्सान की छवि ये है कि वो हर पत्ते को रंगीन करना चाहता है। चाहता है कि इसपे मेरा रंग–रूप छपे और इसी चाहत में वो एक दिन दुनिया छोड़ भी देता है और पत्ते की छपी स्याह रेखाओं को सादापन मिल जाता है। कल फिर दूसरा इन्सान आता है और पत्ते की धारियों से चिपक जाता है। जबतक पत्ता पेड़ से टूटकर गिर नहीं जाता है, वो अपनी जगह कायम रहता है। जब वो गिरकर धूप में पड़ा दम तोड़ देता है तो इन्सान उसमें से बाहर आ जाता है एक नये पौधे की तलाश में ताकि उसके नये कोमल पत्ते में वो अपना भविष्य लिखा हुआ देख सके।

इसी उम्मीद की चाहत में हर एक पत्तों से उसकी धारियाँ दूर होती जाती है और पौधा एक बार फिर पत्ताविहीन हो जाता है। फिर बर्षों के बाद जब उसमें भाग्य से एक कपोल फूट जाता है, वो बहुत खुश होता है। मगर कपोल को पत्ता बनने में वक्त लग ही जाता है और जब इतने सारे वक्त बीत जाते हैं तो इन्सान के दिल के सारे अरमान एक कोने में पड़े सिसक रहे होते हैं और पेड़ की शाखा बहुत सारी पत्तियों के साथ जमीन पर आ गिरती है। ये एक इन्सान की जिन्दगी की दास्तां नहीं होती बल्कि सैकड़ों इन्सान इन पत्तों में पनाह ले अपनी सारी व्यथा को भूल जाते हैं। मगर जब वो डाल सूख जाता है, पत्तों की उम्र भी खत्म होने लगती है। कुछ इसे सहेजकर रख देते हैं। कुछ इसे सस्ते दामों पर नीलाम कर देते हैं। कुछ पत्ते अलाव जलाने के काम आते हैं। कुछ को वो बचाकर रख लेते हैं और इस तरह पत्तों की उम्र एक बार फिर घटती जाती है। पौधा तो सूना नहीं होता मगर शाखा सूनी हो जाती है और वो एक नरकट की भाँति उसी जगह खामोश खड़ा रह जाता है। पत्ते संसार को छोड़ दूर चले जाते हैं।

यही हर रोज हर पौधे के साथ होता है। शाखायें चरमरा जाती है, पत्ते सूख जाते हैं और जिन्दगी एक सादा लिबास पहन सो जाती है। मगर धारियों में छुपे इन्सानों की गिनती खत्म नहीं हो पाती। वो फिर बाहर निकलते है और संसार में समा जाते हैं। पौधों को एक बार फिर से खड़े होने की जगह मिल जाती है। वो स्थिर हो जाता है और इन्सान की आत्मा तब एक सुकून की साँस ले पाती है।

यही तो जिन्दगी की सही दिशा बतलायी जाती है इन्सानों को जहाँ पे कि जाके एक प्रशस्त मार्ग का मिल जाना लाजिमी होता है। एक इन्सान पता नहीं कितने पत्ते के साथ जुड़ा होता है। एक पत्ते में माँ–बाप की निशानी को पाता है वो। एक पत्ते पर भाई–बहन की निशानी को जिन्दा पाता है वो। एक पत्ते पर खुद को वो अपनी पत्नी के साथ, अपने बच्चों के साथ बिठा हुआ पाता है और इन सारे पत्तों से मोह करना स्वभाव बन जाता है उसका। वो हर एक से एक रिश्ता जोड़े संसार के धागे से बँधा पाता है खुद को। जहाँ–जहाँ पत्ते की झलक मिलती है, वहाँ–वहाँ लगातार उसकी मुलाकात इन रिश्तों से होती जाती है और पत्ते के गुजर जाने के बाद जब शाख से रिश्ता टूट जाता है उसका तो वो एक नये शाख की तलाश में निकल पड़ता है और जगह जगह भटकने पर उसे हर शाख तो मिल जाती है मगर वो शाख नहीं मिल पाती जिसपे उसे सहारा देने वाले बच्चे बैठे थे। जिसपे एक बूढ़े

माँ-बाप की जिन्दगी सो रही थी।

यही तो होता है इन्सानी जिन्दगी में कि पत्ता जबतक शाख से जुड़ा सैकड़ों पत्तों के साथ रहता है, वो हरा-भरा रहता है। और जैसे ही वो शाख से गिर जाता है, इन्सान अकेला हो जाता है। यही एक किस्सा है इस पत्ते का जिसकी उम्र इन्सान की उम्र से सदा जुड़ी होती है जिसकी एक-एक धारियों में इन्सान सो रहा होता है।

पल-दो-पल का किस्सा है ये जीवन जिसमें हर एक को सम्मोहित होना है। किसी को परिचय पाना है, किसी को परिचय देना है। कोई कह रहा है मैं यहाँ हूँ, कोई कह रहा है मैं यहाँ हूँ और जीवन है कि कह रहा है मैं कहीं भी नहीं हूँ।

तुम पत्थर में समाये हो, तुम मिट्टी का लिबास ओढ़े हो, तुम पानी में बहते तिनके के समीप भी हो, तुम सागर की मौजों में खोये हुए भी हो। तनिक मेरे बारे में सोचो। मैं तो अकेला कहीं भी नहीं हूँ। जहाँ-जहाँ तुम हो, मैं भी वहाँ-वहाँ ही हूँ।

जब मौसम का वादियों में शोर हो रहा था, मैं वहीं था। जब पत्तों की सरसराहट हो रही थी, मैं वहीं था, जब पंछी चहचहाकर सुबह होने का उन्माद कर रहे थे, मैं वहीं था। कहीं बागों के महकते बेले मुझे तलाश रहे थे, कहीं कलियाँ मुझसे एक किस्सा सुनना चाह रही थी। कहीं तितलियाँ मेरे बचपन को तलाश रही थी। मैं सब के पास रह गया था और रह-रहकर एक ही चीज के बारे में सोच रहा था कि मेरा कितना महत्व है इन लोगों के दिलों की धड़कनों में, उनकी साँसों से आती खुशबू के रेलों में। कौन कितना मुझे अपने पास बुलाना चाह रहा है। मेरी बातों में किसको कितनी दिलचस्पी है। चाँद मुझे देखकर क्या बातें करता है, सितारे मेरे बारे में कितना सोच पाते हैं, आसमान मेरे इन्तजार में कब तक खड़ा रह पाता है, वादियों से मेरी कितनी गूँज वापस आती है। मैं कहाँ-कहाँ खोया रहता हूँ इन सब के बीच। क्या मैं सागर की मौजों में खोया था या ऐसा एहसास हुआ था मुझको। क्या मिट्टी का लिबास ओढ़े जिस्मों में मेरी जगह थी? क्या पानी में बहते तिनकों के बीच उलझा हुआ था मैं?

बार-बार यही सवाल जेहन में उठता था मेरे और खो जाता था। फिर मैं सोचने लग जाता था कि किसने मेरी आवाज सुनी और किसने मेरे बारे में सोचा। मैंने जो अभी-अभी कहा उससे किन लोगों ने अपनी भाषा के सार को जोड़ा। क्या ऊँचा खड़ा पर्वत मेरे दिल में जाग नहीं रहा था। क्या सागर का पानी मेरे लिए जोशो-जवानी लेकर नहीं आया था। क्या चाँद-सितारे मेरे साथ उन्माद करने को व्याकुल नहीं हो रहे थे? शायद! और फिर एक बात जेहन में उठती है कि ये जो मैय्यत गुजरी, ये जो चिता जली, ये जो धुआँ उठा, ये जो आग लगी क्या मैं उनके पास भी था कहीं या उनके सामने आते ही मैं वहाँ से गुजर चुका था। तो लगता है, जैसे मैं तब भी वहाँ मौजूद था जब मैय्यत को लोग चार कांधा देकर ले जा रहे थे। मैं उन चार कांधों के रूप में वहाँ मौजूद था। जब चिता जली, मैं मशालों में मौजूद था और जब धुआँ उठा, मैं बादलों की ओट में छुपा हर एक को देख रहा था, मैं वहाँ भी मौजूद था।

तो जब मैं हर जगह मौजूद ही था तो फिर मुझे ऐसा क्यों लगा कि उनके किस्सों से मैं निकलता जा रहा हूँ। वो मुझसे नफरत करने लगे हैं क्योंकि मौत को बुलानेवाला भी मैं ही हूँ और मौत को गहरी नींद सुलानेवाला भी मैं ही हूँ। मुझे लोग एक साथ कई बार देख लेते हैं अलग-अलग रूपों में। कोई मुझे आकाश से उतरते देखता है, कोई सितारों से बातें करते, कोई मुझे रातों के अँधेरे में जलते दीये की लौ में देखने लग जाता है।

सब मुझे सब जगह देखते हैं और मुझसे ही निगाहें चुरा लेते हैं। किसी को नाम से डर लगता है, किसी को मकाम से, किसी को रूतवे से डर लगता है, किसी को आराम से। सब की सोचें अपनी-अपनी जगह सही हैं और इन सब सोचों के बीच उलझा मैं जीवन, खुद को कितना तन्हा पाता जा रहा हूँ। जो चला जाता है, वो मुझे पलट कर नहीं देखता। जो वापस आ जाता है, वो मुझे ताने देते नहीं थकता। जो आमतौर पर हर रोज मेरे बारे में सोचा करता था, वो भी आज मेरी तरफ नहीं तकता। सबके दिलों में मुझसे नफरत की बातें चल रही है। कोई कह रहा है, मौत चाहिए मुझे। जीने से क्या फायदा ऐसा जीवन? कोई कहता है, कफन चाहिए मुझे। इतने सारे लिबासों की क्या जरूरत? कोई कहता है दो गज जमीन चाहिए मुझे। इतने बड़े घर में रहने का क्या मतलब जब साथ खाली हाथ तक का ही है तो और मैं ये सोच हैरान होता रहता हूँ कि ये लोग मेरे बारे में कितना गलत सोचा करते हैं।

क्या मैंने उन्हें हँसते वक्त हँसने से वंचित किया था? क्या मैंने उन्हें रोते वक्त रोने से रोका था? क्या मैंने उन्हें बातें करते हुए कभी टोका था? नहीं। फिर ये बदनामी कैसी कि मैंने उन्हें कुछ नहीं दिया। सब कुछ छीन लिया उनसे जबकि कुलीन थे वो मेरे सामने और मैं उनकी ही बिरादरी में रहने वाला एक सामान था जिसे जुबान से लोग जीवन सामान का साधन मानते हैं जिसपर लोग हर पल, हर लम्हा दो चार किस्से रचा करते हैं और कहा करते हैं कि मैं उनके लिए कभी रचित रचना बन जाऊँ, कभी सादी कागज की पुड़िया बन जाऊँ, कभी स्याही बन जाऊँ उनके कलम की, तो कभी खुशहाली का पैगाम ला दूँ उनकी जिन्दगी में ताकि वो मुझे फिर हँसकर ये कह सकें कि तुमने जो किया, अच्छा किया। अगर वो ऐसा कह देते हैं तो किस्सा रोमांचक हो सकता है, नहीं तो सादा कागज बन रचित रचना का सार उड़-उड़ संसार से विलीन होता जायेगा।

अकेला कोई नहीं है

गर्मी का मौसम था। चिलचिलाती धूप थी। एक इन्सान जमीन पे पड़ा तड़प रहा था। तभी उस राह से एक अजनबी गुजरा और जमीन पे पड़े उस इन्सान से पूछा, क्यों तुम जमीन पे पड़े हो? क्या तुम्हें धूप नहीं लगती? तो उस रेंगते इन्सान ने कहा-लगती है। मगर जहाँ तक मैं चल सकता था चला। पर मेरे लिए किसी भी मोड़ पे धूप से बचने के लिए एक घर नहीं था। तो उस आदमी ने कहा, तुम कितनी देर से रेंग रहे हो। तो वो विवश इन्सान तड़पते हुए बोला, मैं तब से रेंग रहा हूँ जबसे कि ये धरती बनी। पूछने वाले को हैरानी हुई, ये तब से रेंग रहा है जब से ये धरती बनी। मगर जहाँ तक मेरा ख्याल है, धरती के साथ आसमान भी बने। आसमान में कभी धूप, कभी छाँव भी बने। फिर इस रेंगनेवाले को ऐसा क्यों लग रहा है कि इसके लिए कहीं कोई घर नहीं। मगर सोचते-सोचते वक्त काफी बीत गया। मगर उस रेंगते इन्सान की बात उसकी समझ से परे रही। आखिरकार वो ये कह वहाँ से चलने को हुआ कि मेरी समझ में तुम्हारी बातें नहीं आयी। ऐ रेंगनेवाले इन्सान! मैं आगे जा रहा हूँ। तेरे पास कहीं भी एक छत नहीं, मगर मेरे पास एक ऐसा छत है जहाँ से कि धूप पार नहीं जाती। तुम्हें तो धूप सहने की आदत पड़ गयी है जमीन पे पड़े-पड़े। मगर मुझे जरा भी धूप बर्दाश्त नहीं होती। ऐसा कह वो जाने लगा तो उस रेंगनेवाले इन्सान ने कहा, थोड़ी सी धूप उधार ले ले मुझसे ऐ अजनबी! जिन्दगी में कभी बरसात का भी मौसम आता है तब धूप की जरूरत पड़ती है लोगों को। वो बोला धूप उधार नहीं लूँगा मैं। मैं खुद धूप में आ जाऊँगा, जब बारिश का मौसम आयेगा। फिर वो एक मिनट भी न रूक सका और रेंगने वाला इन्सान रेंगते-रेंगते थोड़ा और आगे चला गया जब वो थक गया, वहीं पास की जमीन पर पानी की तलाश में निगाह ईधर-उधर दौड़ायी। मगर पानी कहीं नहीं था। वो वहीं लेटा रहा। तभी कोई दूसरा अजनबी वहाँ से गुजरा। उसने भी उससे यही सवाल किया, ऐ रेंगनेवाले इन्सान! क्या तुम्हें धूप नहीं लगती? मैं थोड़ी देर चला, मुझे प्यास लग गयी। तुम कहते हो, तुम्हारे पास पानी भी नहीं। फिर तुम क्या पीते हो? धूप से बचने के लिए क्या करते हो? तो वो बोला, जब मुझे प्यास लगती है आँसू पीता हूँ। जब धूप लगती है, सर के बाल खड़े कर लेता हूँ। पर तुम्हारे सर पर तो एक भी बाल नहीं है? उस अजनबी ने पूछा। तो उस रेंगनेवाले इन्सान ने कहा, जरा गौर से देखो मेरे सर पे अभी भी सौ-पचास सफेद बाल बाकी हैं। सौ-पचास सफेद बाल से तुम पूरी जिन्दगी कैसे बचोगे धूप से? तो उसने कहा-जब ये बाल खत्म हो जायेंगे, तब सोचूँगा और उस रेंगनेवाले की इस बेतुकी बात पर वो आदमी भी ये कहते हुए आगे चला गया कि तुम्हारी बातें मेरी समझ से परे है। मेरे पास अगर अपने पीने से ज्यादा पानी होता तो शायद मैं तुम्हें पीला भी देता। पर मेरे पास तो खुद आधा बोतल पानी है और रास्ता कोसों लम्बा तो उस रेंगनेवाले ने सोचा कि ये लोग मुझसे ऐसी बातें क्यों करते हैं? न मैं इनसे छत माँगता हूँ, न पानी। न भूख दर्शाता हूँ इनसे न प्यास। तो ये इन बातों का जिक्र मुझसे क्यों करते हैं। तो आवाज आयी, तुम्हें ऐसा इसलिए कहते हैं ये लोग कि तुम रेंगते-रेंगते ये भूल गये हो कि जीवन एक रास्ता नहीं है फकत, मंजिल भी है। तुम यूँ ही चले जा रहे हो। उम्र के कई वर्ष बीत गये तुम्हारे मगर तुमने अपने बारे में नहीं सोचा। न अपने लिए पानी की जरूरत महसूस की, न खाने की, न धूप से बचने के लिए एक छत की। तो उस रेंगनेवाले ने कहा, मेरी मंजिल जब मुझे कहीं दिखाई ही नहीं देती तो मैं कहाँ विश्राम करूँ, तो फिर आवाज आयी, तुम भी वहीं सो जाओ जहाँ लोग सोते

है। तुम भी वहीं विश्राम करो जहाँ लोग आते-जाते तुम्हारी खैर-खबर लेते हैं। तुम भी वहीं बुझा लो अपनी प्यास जहाँ पानी का एक सरारा हो। मगर नहीं, तुम तो इतने नादान बन गये हो अपनी बेबसी के आगे कि न सफर की ओर देख रहे हो न मंजिल की ओर। अगर रास्ते में धूप है तो किसी सामने वाले से छत माँगो तुम। अगर रास्ते में पानी नहीं है प्यास बुझाने को तो अपनी प्यास आँसू से मत बुझाओ। तुम पानी को खोजो और तबतक खोजो जबतक कि पानी का सरारा सामने दिखाई न दे दे। मानव वेश में रेंगनेवाले अपाहिज इन्सान! तेरा कोई नहीं है अगर तो ईश्वर है। जो चीज तुम्हें इन्सान नहीं देते, उन्हें तू भी हमसे माँग। हम ईश्वर हर भूखे को रोटी, हर प्यासे को पानी देने को तैयार खड़े हैं। देख तो मेरे पास कितने हाथ हैं। मेरे एक हाथ में सागर है, एक हाथ में रोटी, एक हाथ में कटार, एक हाथ में पुस्तक। मैं सागर से तुम्हारे दिल की प्यास बुझाना चाहता हूँ। अपने हाथों से तुम्हें रोटी खिलाना चाहता हूँ और कटार से तुम्हारा वध करना चाहता हूँ। जहाँ-जहाँ तुम बेईमानी करते हो, जहाँ-जहाँ तुम बेबस मजलूमों को लूटते हो, जहाँ-जहाँ तुम मेरा अपमान करते हो। ऐसा कर मैं तुम्हारे लिए सांसारिक द्वार खोलता हूँ। पुस्तक से ज्ञान बाँटता हूँ ताकि तुम उनमें प्रवेश करके एक अच्छा जीवन जीना सीख सको। तुमने देखा न! रास्ते से कई अजनबी गुजरे। पर तुम्हारी तरह किसी को धूप बर्दाश्त नहीं हो सकी और अगर होती भी तो वो तुम्हारी तरह नहीं रूके क्योंकि रास्ते में उनके लिए एक रोटी, एक बर्तन, एक छत, एक बहता पानी का सरारा हर जगह मौजूद है। मगर तुम्हारे पास इनमें से एक भी चीज नहीं क्योंकि तुम्हें इन चीजों की जरूरत कभी महसूस ही नहीं हुई। मगर तुम्हारी हर जरूरत पे मेरी नजर गयी। जहाँ तुम नंगे थे, मैंने तुम्हें वस्त्र दिया पहनने को। जहाँ तुम भूखे थे, रोटी दी मैंने तुम्हें खाने को। जहाँ तुम प्यासे थे, पानी दिया मैंने तुम्हें पीने को, तभी तो तुम जीते जा रहे हो। अगर मैंने तुम्हें कुछ नहीं दिया होता तो तुम कब के मर गये होते?

मगर नहीं, हमें इन्सानों को बचाना है हर मोड़ पे, हर जूल्म से, हर बेबसी से, हर दर्द से, हर गम से ताकि एक कतरा आँसू न रोए कोई। ताकि एक बूँद पानी बिना प्यासा न रहे कोई। तब उस रेंगनेवाले को समझ में आ गया कि मैं कितना गलत कर रहा था। मैंने सफर में रास्ते तो कई देखे मगर मंजिल एक भी नहीं। ऐसा कह वो आगे निकल गया कि मैं आज के बाद से भूखा नहीं सोऊँगा। आज के बाद से नंगा नहीं रहूँगा। मैं आज के बाद से प्यासा नहीं मरूँगा क्योंकि ईश्वर सबसे ऊपर है जो मुझे सबकुछ देने को तैयार है। मैं अकेला नहीं हूँ। मेरे सर पे कई हाथ हैं। हाँ मेरे सर पे कई हाथ हैं।

तीन लम्हों से गुजरता हुआ जीवन कब आखिरी पड़ाव पे आ जाता है, कोई नहीं जानता। कल ही की तो बात लगती है जब इस संसार में आँखें खोली थी हमने और चाहा था हमारी माँ ने कि मैं उनकी गोद में हमेशा रहूँ। मगर कब तक रह पाये हम उनकी गोद में।

जब हम बच्चे थे, माँ की उम्र उन्हें ले गुजरती जा रही थी। जैसे-जैसे हम बड़े होते गये, माँ बूढ़ी होती गयी और फिर एक दिन हम उनकी गोद से उतर गये क्योंकि हमारी माँ ने हमारा साथ छोड़ दिया था आज। आज वो जिन्दगी के आखिरी पड़ाव पे आ गयी थी। हम तो माँ की गोद में न रह सके मगर उनकी ममता ने हमें एक गोद दे ही दी। उनके जाने के बाद हमारी पत्नी माँ बनी। हम भी औलादवाले हो गये। एक माँ क्या गुजरी, दूसरी माँ का नाता जुड़ गया इस संसार से और फिर जब हमारी गोद में एक बच्चे की किलकारी रोने लगी, हमने अपने बचपन को, अपनी माँ को भूल जाना ही बेहतर समझा और फिर एक दिन मैं उन्हें भूल भी गया।

धीरे-धीरे हमारी ममता परवान चढ़ी। हमारा बेटा आहिस्ता-आहिस्ता बड़ा होने लगा। उसके इस दौर को देख हम खुश होते रहे मगर अपनी ओर ध्यान नहीं दिया। ये सोच न सका कि मैं एक से दूसरे पड़ाव पे आ गया हूँ। आज मेरे कुछ बाल सफेद हो गये है तो कुछ पे सफेदी के रंग चढ़ गये हैं। मैंने आईने में अपने आपको देखना ही छोड़ दिया क्योंकि हमारे पास जीवन आईना जो था देखने वाला।

हमारा बेटा आज एक साल का हो गया था। मतलब, हम बाप बने और उम्र के ऐसे मोड़ पे आ गये आज कि जहाँ हर खुशी परायी हो गयी थी हमारे लिए। हमने कभी अपने बेटे का जन्मदिन मनाया, कभी उसके जन्म की खुशी में लोगों को खाना भी खिलाया। यही तो हमारी माँ ने भी किया था जब मैं उनकी गोद में सो रहा था। आज उम्र के इस लम्बे दौर के गुजरे वक्त में मैंने अपनी माँ की तस्वीर की तरफ देखा तो पाया कि माँ आज भी मुझे प्यार से देख रही है। मैंने माँ से कहा, माँ ये मत समझना कि मैं तुम्हें भूल गया। ये समझ लेना कि उम्र ने हमें तुमसे जुदा कर दिया। हमारे पास से तुम्हारी यादें छीनकर ले गया। मैं भी आज उम्र के उसी पड़ाव पे आके खड़ा हो गया हूँ जहाँ पर कि तुम खड़ी थी। और फिर मैं माँ से निगाहें चुरा लेता हूँ। माँ मेरी मजबूरी समझ जाती है। वो समझ जाती है कि मेरा बेटा आज उम्र के उसी मोड़ पे आ गया है जिस मोड़ से मैं गुजरी थी। और फिर एक दिन हमारी यादों से परे हमारी माँ गुजर गयी थी। मैं सोचता ही रह गया था और हमारी माँ हमें याद आते-आते रह गयी थी।

वक्त बीत गया। एक दिन हमारा बेटा भी जवान हो गया और मैं उम्र के तीसरे लम्हें में आ गया जहाँ से जिन्दगी मुझे ले जाने को तैयार हो गयी और मैं कफन ओढ़ एक तरफ पड़ा रह गया। मेरी माँ का चेहरा एक बार फिर मेरे सामने आ गया और उनकी कही बातें याद आ गयी कि बेटे ये जीवन एक बहता दरिया है। यही सोचते-सोचते मैं एक बार फिर गुजर जाता हूँ। वहीं चला जाता हूँ जहाँ पर कि मेरी माँ मुझे छोड़कर गयी थी।

यही तो उम्र के इस दौर की कहानी है। कल मेरे बच्चे भी उम्र के उसी मोड़ पे आ जायेंगे जहाँ मैं और मेरी माँ खड़े थे। आज मेरा बेटा भी उसी मोड़ पे आ गया था जहाँ

से उसकी जिन्दगी भी हमारी तरह हमारी गोद से उतर चुकी थी। कल हमारी माँ मरी थी। आज हम मरे थे। कल हमारा बेटा मौत के साथ चला जायेगा। कल मौत उसे लेने आ जायेगी और हम एक कहानी कहते रह जायेंगे जिसमें कि एक मोड़ पे मेरी माँ मुझे मिली थी। एक मोड़ पे मैं माँ से मिला था और एक मोड़ ऐसा आयेगा जब मेरा बेटा मुझसे आ मिलेगा।

हाँ, यही तो जिन्दगी है जिसके लम्हें ही इतने कम हैं कि न पहली सीढ़ी की तरफ देखते रहने से एक मकसद कायम रह पाता है न दूसरी सीढ़ी की तरफ देखते रहने से। ये तो बेमकसद लक्ष्य है इन्सान का जिसे जीवनधारा कहते हैं हम। यही तो होता है हम इन्सानों के साथ हर पल, हर लम्हा कि एक के चले जाने के बाद एक और की कमी पूरी हो जाती है। एक बूढ़ा होकर मरता है, एक नन्हीं कली खिल जाती है बहारों में। न मौसम सदा एक सा रहता है न बदलती रूतों की दास्तां सदा एक सी रह पाती है और फिर जब सारे लम्हें खत्म हो जाते हैं, हम अपनी आँखें मून्द सो जाते है। न कल कोई हमें जगा पाया था, न आज जगा पाता है। कल ऐसे ही हमारी आँखों के सामने हमारी माँ गहरी नींद सो गयी थी और आज हम अपने बेटे की आँखों के सामने गहरी नींद सोये थे।

मैना

जीवन एक पखेरू है और इन्सान मैना। मुक भाषा में वो सब कुछ बयान करता चला जाता है। कभी अपनी फिक्र, कभी अपने बाल-बच्चों के गमों का एहसास, कभी तन से लिपटी बूढ़ापे की काली लकीरों की चिन्ता ये सब कायम हैं। मगर बदलाव कहाँ इस जीवन का? मन लाख चाहे कि ठहर जाये, मगर उड़ ही जाना उसकी फितरत बन जाती है । लोग हमेशा से एक ही बात किया करते हैं अपने आप से कि कितनी बड़ी दुनिया है और साँसे कितनी छोटी। मगर कहने से पहले वो एक बार भी ये नहीं सोचते कि रास्ते अजनबी हैं तो पहचान तलाशूँ ।

पहले मोड़ पे एक मोह-बन्धन, दूसरे मोड़ पे एक साज-शृंगार का आलिंगन, तीसरे मोड़ पे बहुरंगी जीवन का सार सम्बन्ध। तो क्या मुक होकर सोचनेवाला जीव इतना नहीं सोच पाता होगा कि हमें एक ऐसा जीवन क्यों मिला जिसमें बोलने का हक नहीं। क्यों बनाये कुदरत ने ऐसे नियम कि सार बदल गये, रिश्ते-नातों का प्यार बदल गया। अनचाही चाहत बदल गयी। रूसवा होने की रूत आ गयी। हर एक जज्बा बदल गया मगर हक फिर भी कायम रहा हमारा। हम पर किसी ने उँगली उठाकर कहा, चुप रह। जब हम चुप हो गये, उसने कहा इतने से तो लोग नाराज हो जायेंगे। कुछ तो बात रख हमारी।

तो क्या करे इन्सान जिसे न बोलने का हक है न खामोश रहने का। बोलने पर बच्चे बदनाम करते है। न बोलने पर दुनिया ताने मारती है। कहती है, उसे तो बोलने की तमीज भी नहीं। तो कैसी तमीज पाये पंख पसारे दुनिया में उड़ता एक परिन्दा? उसे तो कहा गया है, जहाँ-जहाँ जाना, चुप रहना। जहाँ-जहाँ जाना जुबान को कुछ कहने से रोकना। कहीं तुम कुछ ऐसा न बोल पड़ो जिससे सामने वाला तुमसे झगड़ा करे।

तो क्या घर में बोलने पर झगड़े का डर कायम नहीं था? मगर दुनिया में एक डर और था बदनामी का। सो मैने रूपी इन्सान ने खामोशी से वो जहर पी लिया। कायनात बनानेवाले को एक खुशी मिली। मिट्टी का था, मिट्टी का हो गया इन्सान। किससे कहता वो कि मुझे बोलने का हक दे। मरने से पहले मेरी आखिरी आरजू पूछ। पर क्यों कहता? बोलने पर पाबन्दी जो लगी थी। भला कौन सा, खुदा बोलने की चाहत मिटा पाता है लोगों के दिल से। अगर एक बात कहने का हक नहीं रहता हमें तो वो हमें दूसरी बात भी तो सीखा सकता था। बता सकता था कि जीवन कैसे जीया जाता है? मगर नहीं, उसने तो मुक रहने की भाषा सिखायी हमें और जुबां के होते हुए भी हम बेजुबानों की गिनती में आते चले गये। न मरने पर एतराज किया, न जीने पर। उसने कहा रोना हमारी किस्मत है। हमने हामी भरकर कह दिया जीना हमारी फितरत है। उसने कहा, सुनना तेरी आदत है। हमने कहा, ये मेरी इबादत है। इतना ही तो कहा उससे और मौनता हमारी टूट गयी सांसारिक बन्धन के साथ। हमने कहा, जीने की चाहत छोड़ देना चाहते हैं। तब उसने कहा, जीना तेरी मजबूरी है। हमने हँसकर हामी भर दी। नसीब लिखा ही गया हमारा तो बोलना क्या? और जब बोलकर किसी से अपने लिए खुशी माँग ही न सके हम तो बोलने का क्या फायदा? संसार एक माया बन्ध न है, ये बात और है जीवन एक बाग साया है, ये बात और है। तो क्या हुआ जीवन बाग पतझड़ दे गया हमें? हमारी तो यही जिन्दगी है। हमारी तो यही आदत है जिसे न खुदा बदल

सकता है? न हमें बदलने का हक दे सकता है। रूपया पैसा, धन दौलत, ऊँची-ऊँची बिल्डिंग, इमारत, किताबी जेहन भरी बातें और सबसे बड़ी बात नाम, शोहरत मगर जाते वक्त क्या ले जा सके हम एक खाली जिस्म जिससे आत्मा भी निकल चुकी थी। तो क्या जीया हमने? क्या हक रहा हमारा किसी पर। हमने तो चाहा था कि अमर बनें संसार में। मगर हमारा अमरत्व तो एक ही पल में समाप्त हो गया। जब साँस टूट गयी हमारी हमारा नाम यहीं रह गया। हमारी शोहरत यहीं रह गयी। हमारा रूतबा, हमारी सारी जागीर, साजोसामान इमारतें सब यहीं रह गये और खामोशी से सब यही छुटते भी देखा हमने। मगर कुछ नहीं कहा, कुछ भी नहीं और सबकुछ छोड़कर चले गये हम। तब उस खुदा से जाकर पूछा कि मेरे इस जीवन में क्या मिला मुझे और क्या खोया हमने तो सामने एक नन्हा सा दीया झिलमिला गया। हम दुबारा जन्म लेकर धरती पर आ गये, किसी के घर में जगह बनाने। हमें संसार में लानेवाले ने भी उससे ये नहीं कहा कि हम इस औलाद का क्या करें जिसे न देखनी आ सकी दुनिया न हमने इसे दुनिया की सैर करायी।

तो जवाब में एक बार फिर मौनता आ जाती है हमारे ओठों पर। हमारा बच्चा रोने लगता है। हम उसे गोद में उठा लेते हैं। पाल पोसकर जवान करते हैं और फिर नाम, शेहरत, दौलत, किस्मत सब यहीं कमा-कमाकर रख जाता है वो। न साथ ले जाने की जिद करता है वो हमसे न हम उसके साथ इन सब चीजों को विदा कर पाते हैं। यही जीवन है मौन रहना। न रोने पर आँसू पोछने का हक है किसी को। न हँसते-हँसते दूर किनारे पर चले जाने का हक है किसी को। जो जितना कमाता है, उतना ही खामोश होकर सबकुछ छोड़ जाता है और जो कुछ भी नहीं कमाता वो आसमान की ओर देख बस यही संतोष कर लेता है कि हम मैना है इनसानी वेश में जिसे उतना ही बोलना आता है, जितना बोलकर जीया जा सके। जब एक बार में एक भी चीज साथ न ले जा सके हम तो दूसरे जीवन का इन्तजार कैसा? खामोश रहकर हर चीज यहीं छोड़ जाने को ही तो जीवन यात्रा का सही मार्ग कहते हैं।

देश-देश में बँटवारा, भाई-भाई में बँटवारा, रिश्तों में बँटवारा

ये कैसा तांडव है मौत का? रिश्ते खून के नदी की धारा की तरह बहते जा रहे हैं। कहीं कोई रो रहा है, कहीं कोई रूला रहा है। ये बंदूकधारी किस देश से आते हैं हमारा खून बहाने? देश-देश में, भाई-भाई में ये रंजिश क्यों? क्यों रिश्ते की पहचान भूल गये लोग? किसी के पास दया नहीं। हर कोई बेहया की तरह लोगों के जिस्म से लिपटता जा रहा है। माँ अलग रो रही है, बेटी अलग सिसक रही है। आबरू तो कहीं नजर ही नहीं आती उनकी। आज हर जगह बहन-बेटी की आबरू के साथ नंगा नाच कर रहे हैं लोग। यहाँ के नेता भ्रष्ट हैं। यहाँ तो देश की गुलामी के साथ औरत की नीलामी जुड़ी है। कोई रात के अँधेरे में सशस्त्र आता है, खून बहाकर चला जाता है। खून के धब्बे माँ के आँचल से लिपट जाते हैं और वो बेटी को उठाके ले चले जाते हैं। न खून के घब्बे फिर से रक्त बन जिस्म में बह पाते हैं, न बेटी की आबरू वापस आ पाती है। ये दोनों रिश्ते बदनाम हो जाते हैं। कौन किसकी ओर देखे? कौन किससे रिश्ता जोड़े? क्यों है देश में फैलती ये आतंकवाद की बीमारी जिसका कि कोई इलाज नहीं, जिसकी कोई दवा नहीं? ये जिस्म से बहता खून कितनों की प्यास बुझाती है, नहीं पता शायद हमें। मगर ये तो जरूर पता है कि ये पानी से ज्यादा बह रहे हैं हमारे मुल्क में। ये कैसा मुल्क है हमारा? ये कैसे लोग हैं हमारे मुल्क के? देश-देश में तो बँटवारा हो गया, दिल-दिल में बँटवारा हो गया, मगर जिस्म-जिस्म में बँटवारा न हो सका। ये रंजिश नहीं मिट पायी कि उन्होंने हमारा देश तो दे दिया, हम उन्हें अमन दे देते है। मगर नहीं, ये तो हो ही नहीं सकेगा क्योंकि ये बहते हुए खूनों से मुझे लालच की बू आ रही है। ये लालची लोग हैं जो हमसे हमारे मुल्क की हर खूबसूरत शय माँग रहे हैं। कौन किसका सौदा करे, जिस्म तो सौदागरों के हाथों बिक गये, जिन्दगी तो सौदागरों के हाथों बिक गयी। तो साँसे बिकते कितनी देर लगती? वो भी सौदागर खरीद ले गये। रह गये हम अकेले गुलामी के इस देश में जहाँ हर दिन आजादी का मंजर दिखाया जाता है हमारी आँखों को। जहाँ हमें हर चीज की आजादी मिल गयी मगर खुलेआम सड़क पे घूमने की आजादी न मिल सकी। देश-देश में, भाई-भाई में बढ़ते ये झगड़े हमें एक यही आजादी दे गये कि मैं घर के अँधेरे कोने में छुपी ये सोचती रहूँ कि एक दिन ये मुल्क आजाद जरूर होगा। मगर क्या हमारी तमन्ना पूरी हो सकी। रात हुई। रात के अँधेरे में दो चार सशस्त्र बन्दूकधारी आये। हमारे बाप-भाई का खून बहाया, हमारे चेहरे से दुपट्टा हटाया और ले गये उठाके हमें। हमने माँ को पुकारा। हमने मरे हुए भाई को पुकारा। हमने मरे हुए पिता को पुकारा। मगर वो सब तो खून के धब्बे छोड़ गये थे हमारे लिए जो एक बार भी हमारी रक्षा न कर सके। हमारी आबरू एक बार फिर गैर लूट के चले गये। मैं शर्मिन्दगी से जी नहीं पायी। जूड़े से जहर की पुड़िया निकाली और सो गयी। रात को रेडियो पे समाचार आया। चार बन्दूकधारी अन्धाधुन्ध गोलियाँ बरसाते हुए रात को आये और पाँच लोगों का कत्ल कर चले गये। पुलिस ने उन्हें पकड़ने की बहुत कोशिश की मगर वो फरार हो गये। मरी हुई आँखें ये देख न सकी। मरे हुए कान ये सुन न सके और जमीन उनके लिए बिस्तर बन गयी। वो वहीं सोते रह गये। मगर मौत के इस बढ़ते सिलसिले को कोई रोक न सका। देश-देश में, भाई-भाई में फिर बँटवारा हुआ। बँटवारे में हमारी माँ अलग हो गयी। हमारे पिता अलग हो गये। वो

अलग-अलग मुल्क को चले गये। हम रह गये अकेले इस अलग मुल्क में। रिश्ते तो दूर हो गये पर खून के बहने की रफ्तार न रूक सकी। बँटवारे में राइफल बँट गए, गोले-बारूद बँट गये, प्यार बँट गये, नफरत तक बँट गयी। मगर ये खून के बहते हुए फब्बारे फिर भी न रूक सके।

ये कैसे लोग थे हमारे मुल्क में जिनका बँटवारा हमारे देश ने न किया? वो यहीं छुपे रह गये और हमें नश्तर चुभोते रहे और हमारी आबरू से खेलते रहे। इसे बाँटनेवाली एक भी सरकार न आ सकी। किसी ने भी इतनी हिम्मत न दिखायी कि देश-देश में बँटवारा तो हो गया। भाई-भाई में भी बँटवारा हो गया। मुल्क तो बँट गये पर साथ में देश में छुपे इस आतंकवाद का बँटवारा कर सका कोई? ऐसा करने की ताकत किसी में नहीं पायी हमने और यही देखती रह गयी कि खून बहता रहेगा, रिश्ते बदलते रहेंगे मगर ये खून का रंग न बदल सकेगा और मौत का तांडव होता रहेगा। सरकार आयेगी, कुर्सी पे बैठेगी और फिर यही होता रहेगा। देश-देश में बँटवारा, भाई-भाई में बँटवारा और रिश्तों में बँटवारा।

आतंकवाद देश का दुश्मन है

आतंकवाद एक जहर है। इसने लाखों जिस्मों को जहरीला किया है। तो कौन है जो इन्सान होकर इन्सानियत का दुश्मन बना है? जगह-जगह आतंकवाद है, आतंकवादी हैं, पर एक सच्चा और अच्छा इन्सान कहीं नहीं। आज हमारे दिलों में ऐसे कई सवाल उठते हैं कि आतंकवाद क्या है? आतंकवादी कौन हैं? ये सवाल लेकर हम बड़े-बुजुर्गो के पास जाते हैं। वो कहते हैं बेटे आतंकवाद भी एक माँ है, आतंकवाद भी एक पिता है और ये आतंकवादी उनकी औलाद हैं। तो हमें लगने लगता है क्या यहाँ एक माँ ही अपने बेटे को आतंकवादी बनने की शिक्षा दे रही है। एक पिता यह कह रहे हैं बेटा! उठा हाथ में गोले-बारूद, ये कारतूसों से सुसज्जित गाड़ियाँ, ये सब सदा से तेरी राह में तुझे एक मकाम देने को तैयार खड़े हैं। मगर अफसोस कि ये गोले-बारूद, ये कारतूसें, ये अफीम के डब्बे, ये सब जो कि एक जहर हैं, उन्हीं के जिस्मों को छलनी कर रहे हैं। अगर हम बारूदों के ढेर पर सो रहे हैं, तो कहीं न कहीं वो भी एक नयी मौत मर रहे हैं। जिन्दगी से प्यार किसे नहीं है? मौत के खौफ से परिचित कौन नहीं है? मगर ये सब इसी उम्मीद में जी रहे हैं कि आज हमारा एक आदमी मरा तो क्या? कल हम उनके चार आदमियों का कत्ल कर देगें और यही सोच वो लाखों लोग बहुतयात मात्रा में आगे बढ़ रहे हैं। वो कह रहे हैं ऐ दिलावर! शेरखान से चार आदमी उधार ले ले और जा दुश्मन के इलाके में अपना झण्डा फहरा। वहाँ से वापस उनकी लाशें लेकर लौटना। खाली हाथ आना हमारी शान के खिलाफ है। यही शिक्षा ले वो मिशन पे जाते है और खुद भी मरते हैं, दुश्मन को भी मारते हैं। एक गोली इनकी बन्दूक से निकलती है तो दो गोली जवाब में छोड़ी जाती है। खून दोनों का बहता है, मगर इनमें रिश्तों की पहचान कहाँ थी। वो अपने कांधों पे लाशों के ढेर उठाये आते हैं और कहते हैं शेरखान के आदमियों ने हमारे दुश्मन के इलाके में झण्डा फहरा दिया है। तब उन्हें शाबाशी के रूप में दो बोरी कारतूसें और मिलती है अगले मिशन के लिए।

तो ये आंतकवादी जो कि देश के दुश्मन हैं, ये खुद के भी दुश्मन हैं। ये नासमझ, नामुराद लोग हैं जिनकी जुबान सिर्फ मालिक की भाषा बोलती है, "कारतूस देने को कहा था मालिक ने" शब्दों के जवाब में कहा था, सुन मेरे अजीजों खाली हाथ मत आना ये हमारी शान के खिलाफ है। पूरी रात जश्न होता है उनके घरों में, उनके शिविरों में। सुबह वो एक नयी जिन्दगी की तलाश में निकल पड़ते हैं। उन्हें उनका कत्ल जो करना है।

तो ऐसे कातिल क्यों है, हमारे मुल्कों में? इनकी परवरिश कौन करता है? एक देश दूसरे देश को आतंकवादी क्यों भेजता है? इनकी शिक्षा देश के किन पाठशालों में होती है? नहीं पता हमें, अगर कुछ पता है तो ये कि वो जो नकाब ओढ़े खड़ा है, वो आतंकवादी है। चलो इस जगह से जल्दी-से-जल्दी निकल चलते हैं। हम इन्सान होकर इन्सान से डरते हैं। ये डर, इनका खौफ पूरे देश में इतना ज्यादा है कि हर रोज बड़े-बुजुर्ग, नन्हें-नन्हें बच्चे, दो या चार जवान जिस्म, मिट्टी का कफन ओढ़ रहे हैं। तो कैसे रोकें हम देश में फैले इस आतंकवाद को? ये हमारे छोटे-छोटे घरों में जगह बनाते जा रहे हैं। हम एक मुल्क छोड़ दूसरे मुल्क में पनाह लेने को भटक रहे हैं। मगर इनके हाथ इतने लम्बे हैं कि ये हमारी गर्दन तक पहुँच ही जाते हैं। एक आतंकवादी के मरने से आतंकवाद मिट नहीं सकता। इन

आतंकवादियों से निपटने के लिए हमें लाखों दिलों में हौसले की चिन्गारी सुलगानी है। ये धुआँ हैं आज अगर तो कल ये आग जरूर बनेंगे। इनके हौसले इन्हें एक कामयाबी, एक कामयाब जिन्दगी जरूर देंगे। आज अगर इस जहर को अपने जिस्मों से बाहर न निकाला हमने तो एक दिन हम जहर बनते जाएँगे और हमारे छोटे-छोटे बच्चे जो कि हमें नहीं पहचानते आतंकवादियों को पहचानने लगेंगे। इनके मुँह में हम दूध की बोतल नहीं देख सकेंगे। ये खून पी-पी बढ़ेंगे क्योंकि हमारे डिब्बों में दूध की जगह खून ही नजर आयेंगे उन्हें। इस आतंकवाद से हमारा देश निपटना चाह रहा है। मगर अफसोस हमारे घरों में हमारी एक औलाद है जो कि बहुत खूबसूरत है। पर उनके घरों में उनकी कई औलादें हैं जो कि अभी से बदसूरती का नकाब ओढ़े मिशन पे जाने को तैयार खड़े हैं। उनकी हाथों में दूध की बोतल नहीं, जहर का पैमाना है जिसे वो पी रहे हैं पीला रहे हैं लोगों को। ये आतंकवादी हैं। इनके घरों में आतंकवाद की औलादें पलती है। इनकी माँ का नाम आतंकवाद है। इनके पिता का नाम आतंकवाद है और इन्हें हम अपनी जुबान से आतंकवादी कहते हैं। हम इन्हें इसी नाम से जानते हैं। हमने जब इस धरती पे आँखें खोली, देखा हमारे घरों में एक नकाबपोश छुपा बैठा है। ये रिश्ते में हमारा भाई भी हो सकता है। पर नहीं, अभी तो वो आतंकवादी ही दिख रहा है हमें क्योंकि इनके हाथों में खन्जर, पीठ पे कारतूसों की थैली, ओठों पे विषैले जहरीले दाँत हैं जो कब हमारे जिस्मों में गड़ जायें, नहीं पता।

तो कैसे निपटें हम इन आतंकवादिया से? आखिर इस आतंकवाद के जहर को हम कब तक पीते रहें? तो क्यों न हम अपने ही कांधों को मजबूत बना लें कि कोई आतंकवाद हमारे घरों में झाँक न सके। देश के इस दुश्मन को हमें जड़ से उखाड़ना है। मिटाना है इन विषैले पेड़ों को। काट डालना है इनकी शाखाओं को और यही कहना है कि अगर तू एक हजार है तो हम एक लाख हैं। अगर तू एक लाख है तो हम समूचा भारत देश हैं। हमारे हौसले आज भी जवान हैं। हमारी रगों में आज भी इन्सानियत का खून दौड़ रहा है। अगर तू हमारे मुल्क की ओर आँख उठाकर देखेगा, तो तेरी आँखें निकाल लेने में हमें वक्त नहीं लगेगा। अगर तू आतंकवाद है तो हम भी देश की औलाद हैं। हमारे फर्ज एक हैं, हमारी मिट्टी एक है, हमारी ताकत एक है। अगर तू हमारा दुश्मन है तो हम पूरे आतंकवाद के दुश्मन हैं। यही सोच जी रहे हैं, जीते रहेंगे पर कभी हमारे हौसले पस्त नहीं होंगे। हमारी गर्दन नहीं झुकेगी। हमने ये नहीं सुना कि तुम हमारे दुश्मन हो। हमने तो ये सुना कि आतंकवाद हमारा दुश्मन है। हम यही सुनते रहेंगे भी और देश से आतंकवाद एक दिन हम मिटा के रहेंगे। यही हम कामना करते हैं। हम इन्सान हैं। हम इन्सानियत की भाषा बोलते हैं पर तुम्हारी भाषा, तुम्हारी बोली अलग है। तुम्हारा चलन अलग है पर हमारा चलन एक है कि देश से आतंकवाद को मिटाना है, ये हमारा दुश्मन है।

शोक में डूबी पुराने वर्ष की शामें और नये वर्ष की सुबहें

26 दिसम्बर 2004 सुनामी लहर

शोक में डूबी ये धरती गुजरे हुए इस साल के आखिरी दिनों से पूछती है ये शोर कैसा है? ये कोलाहल क्यों है? हमारे इर्द-गिर्द कौन रो रहा है? किसकी दुनिया उजड़ गयी? तो आवाज आती है, कितने लोग यतीम हो गये माँ! ये शोर एक बेटे का है, ये शोर एक नन्हें बच्चे का है। ये कोलाहल उनसे उनकी किलकारियाँ वापस माँगती है। ये इन्सानों की बसी-बसायी दुनिया थी जो उजड़ गयी। कितने लोग रो रहे हैं, कितनों की आँखें बन्द हैं। कितने दिल धड़कना भूल गये हैं आज। कितने मकान गिर गये हैं, कितने महल के चौबारे से झाँकती जवान औरतें अपने-अपने पल्लू में चेहरा ढाँपना भूल गयी। सब सामने है माँ! ये मातम, ये वहशत, ये जिल्लत, ये हसरत सब तुम्हारे सामने है। कितने बच्चों को जन्मदेती माएँ दब गयी ईंटो के इन दीवारों के पीछे, कितने बच्चे दब गये। पानी के रेले में सब बह चले गये एक नये मुल्क की ओर जहाँ से वापस कोई नहीं आता, जहाँ चले जाने के बाद पहचान खो जाती है। जिस्म मिट्टी का हो जाता है, आत्मा बेजान हो जाती है।

कितने गुहारों के बीच बसा ये शहर जो कि बहुत बड़ा था आज हर जगह से उसके निशान मिट गये हैं। न शहर की निशानियाँ बची न शहर में रहने वाले लोग बचे। अगर बचा कुछ तो तेरी धरती की बंजर पड़ी जमीन जिसमें शव दफनाने की भी एक जगह बाकी नहीं रही। सब-के-सब लहरों में विलीन हो गये। सारे शव सड़ गये, गल गये, बदबू बन गये। ये इन्सानी रूह, इन्सानी आत्मा, इन्सानी जिस्म जिसके जलने से अगर मौत कम हो पाती तो शायद इन्हें जला भी दिया जाता। मगर नहीं, एक लाश एक जगह से मिल रही है तो दूसरी लाश दूसरी जगह से। अब नया वर्ष कह रहा है कि मैं नया साल इनकी चीखें, सुनने आनेवाला हूँ। कह दे इस पुराने वर्ष से कि ये जाये तो अपने साथ ये नफरत, वहशत और जिल्लत की मौत साथ ले जाय। इतना स्वार्थी न बने वो कि जाते-जाते एक और तूफान दे जाये हमारी जिन्दगी में। एक शहर उजड़ा होता तो वहाँ पे बस्तियाँ बसा दी जाती। मगर नहीं यहाँ तो कई शहर उजड़ गये। पूरे देश में मातम का माहौल छा गया। मुझे बुलाने वाले वो ओठ खामोश हो गये हैं। मुझे दूर से तलाशने वाली बच्ची, बूढ़ी और जवान निगाहें खो गयी है कहीं-न-कहीं। आज कुछ भी नहीं हमारे पास। फिर मैं कैसे आऊँ? रात्रि का चौथा प्रहर बीतता चला जा रहा है। लोगों की चीखें मेरे कानों में गूँज रही है। कोई रो रहा है, कोई तड़प रहा है, कोई मरने की हालत में खामोश बिस्तर पे पड़ा मेरी राह निहार रहा है।

माँ, ये तेरी धरती वीरान होती जा रही है। रोक ले माँ! अब तो रोक इन लहरों के उठते बवंडर को। ये मुल्क माँगते हैं, ये मकान माँगते हैं, ये जीने का सामान माँगते हैं। तो कौन दे इन्हें मुल्क ऐसा जहाँ पानी के रेले में बहती लाशें जा रही हो, जहाँ मिट्टी की दरारों में जिन्दगियाँ सो रही हो। माँ तू मुझसे सवाल करती है। मैं तुझसे सवाल करता हूँ। पाँचवा प्रहर भी आने वाला है। मैं आने ही वाला हूँ। मुझे हँसी के एक जलते चिराग की रोशनी में देख। मुझे ऐसे मकान में देख जहाँ बच्चे भी सो रहे हो, जवान लोग भी सो रहे हों और बूढ़ों के पास उनकी जलती लकड़ियाँ भी सो रही हो क्योंकि ये सर्दी का मौसम है और इस ठिठुरती ठंड में गर्म कपड़े में लिपटा मैं नया वर्ष इसी इन्तजार में बैठा हूँ कि कब सुबह हो और एक नहीं अनेकों दिलों में मेरी आवाज गूँज रही हो। जब अगली सुबह हो

ये शोर न हो, ये कोलाहल न हो, ये वहशत भरी जिन्दगियाँ न हों। अगर कुछ हो तो शांत वातावरण, शांत लहरें। अगर ऐसा न हो सका तो मैं नया वर्ष फिर से वापस चला जाऊँगा और छोड़ दूँगा इस पुराने साल को इन लहरों के बीच तड़पते क्योंकि रात्रि के छठे प्रहर तक भी कोई शोर नहीं है गलियों में। गीतों पर कोई नाच नहीं रहा। कोई गा नहीं रहा। सबके घरों में टेप रिकॉर्डर की जगह रेडियो लग गये हैं जिनसे पल-पल ये खबर मिल रही है हमें कि और लोग दब गये मिट्टी की दरारों में, और लोग बह गये पानी के सरारों में, और इन्हीं बातों को सुनते-सुनते वक्त भी हो जायेगा। मैं नया से कब पुराना हो जाऊँगा, नहीं पता चल पायेगा मुझे। ऐ धरती माँ! तू मुझसे कोई सवाल न कर। तू इन मरते यमीम बच्चों, यतीम लोगों की जिन्दगी की ओर देख और ईश्वर से प्रार्थना कर कि ये बवंडर, ये बहती लाशें कम हो जाय और जो लोग बचे हैं उन्हें जिन्दगी जीने की प्रेरणा दे ताकि वहशत और दहशत से कोई बेचारा बेमौत न मारा जाय क्योंकि ये लहरें मौत इतनी दे गयी है कि मैं नया वर्ष लाशों के ढेर पे सोने लगा हूँ अभी से।

अब कोई वक्त बाकी नहीं है मेरे आने में। सुबह होने वाली है। ये पुराने वर्ष का आखिरी दिन भी कभी भी चला जा सकता है मेरी गोद में लाशों का कब्रिस्तान देकर और मेरे पास इन लाशों को थामने के सिवा कोई और रास्ता भी नहीं बाकी कि मैं तुम्हें कुछ कहूँ भी। मैं तो खुद शर्मिन्दा हूँ तुम्हारे सामने कि आने वाले इस पहले दिन में भी मैं एक वादा न कर सका कि मैं लाशों के बीच सो रहे लोगों को एक नयी जिन्दगी दूँगा क्योंकि मेरे पास इनसे कहने को एक भी शब्द नहीं और इनके पास मेरे एक भी शब्द सुनने को कान बाकी नहीं। मैं कैसे कोई सवाल करूँ! मैं कैसे कोई जवाब मागूँ! मैं एक नया वर्ष हूँ। मैं तो आने ही वाला हूँ। मुझे तो आना ही है। न मैं रूक सकता हूँ, न मैं ठहर सकता हूँ, न मैं गुजर सकता हूँ।

कश्मीर की वादी

मैं कश्मीर की वादी हूँ। मुझमें हजारों दिलों की धड़कनें छुपी है। वर्षों पहले की बात है। मेरे पास कई प्रेमी अपनी-अपनी प्रेमिकाओं के साथ आते थे और मेरी बाँहों में सुकून पाते थे। मौसम फिर आता था सर्दी का। दोशाले फिर बनते थे मेरी जमीन पर। दोशाले में लिपटे वो नाजुक दिल जोर-जोर से धड़का करते थे। मैं उनकी धड़कन सुनता-सुनता कब आत्मविभोर हो सो जाता, पता ही न चलता। फिर सुबह होती। फिर मैं शाम का इन्तजार करता।

मगर अब वक्त बदल रहा था। उन प्रेमियों के दिलों से मुझे प्यार की जगह नफरत की बू आने लगी थी। जो कल प्रेम की बातें किया करते थे, वो आज आपस में जायदाद की बातें कर रहे थे। एक के दिल से आवाज आ रही थी, मुझे तलाक दे दो। एक का दिल कह रहा था हाँ, मुझसे तलाक ले लो। मैं सोच में डूब गया कि मैं किसके दिल की आवाज सुनूँ। दोनों ही दिल तो कल मेरे पास प्यार की एक नन्हीं सी जगह तलाशने आये थे। आज उनमें ये झगड़े की बातें कैसे पनप गयी? पहल किसने किया पहले झगड़े का? प्रेम किसके दिल से निकलकर चला गया पहले? मैं यही सोच ही रहा था कि प्रेमी ने कुर्त्ते के पीछे से हथियार निकाला, प्रेमिका का खून कर दिया और भाग गया। मैं अपने जिस्म पे उनके जिस्म के खूनों को लिपटता देख रहा था और सोच रहा था कि कल का वो प्रेमी कहाँ चला गया जो प्यार-मोहब्बत की बातें किया करता था। आज ये कारतूस उसके मुहब्बत का जवाब कैसे बन गयी। तो आवाज आयी, आतंकवादी हो गये वो पहले के प्रेमी। आज उनके दिलों में आतंकवाद ने पनाह ले ली है। मैं खून के फब्बारे को एक नजर देख रहा था, एक नजर कराहती उस प्रेमिका को। मैं सोच रहा था कि कितनी जल्दी आतंकवादी आ गये हमारे जिस्म को रौंदने। कल ही की तो बात है जब सैकड़ों दिल अपनी-अपनी धड़कनों को दोशाले में लिपटा आ रहे थे मेरे पास घूमने, मुझे जगह-जगह से देखने।

कितने कवियों ने अपनी लेखनी में मेरी खूबसूरती के चर्चे किये हैं। फिर ये शोर, ये कोलाहल कैसा? ये मातम, ये दर्द का मौसम कैसा? ये कैसी प्रेमिका थी जो मेरी गोद में सो आज आखिरी साँसें ले रही है। मैं इसे फिर से जिन्दा कैसे करूँ? कैसे रोकूँ मैं इसके जिस्म से बहते खून को? ये सोच-सोच मेरे माथे पे पसीना आ गया। वो प्रेमिका मर गयी। प्रेमी को पुलिस गिरफ्तार भी न कर सकी क्योंकि मारनेवाला वो व्यक्ति इन्सान नहीं था, एक आंतकवादी था, आतंकवाद था। मैं यही शोर सुनते-सुनते कब इतना भी नंगा हो गया कि मेरे जिस्म पे जगह-जगह कँटीली झाड़ियाँ उगने लगी। मैं मखमली घास के मैदान पे सोनेवाला कश्मीर कब झाड़झंखाड़ होता चला गया मुझे पता ही न चला। मेरे जिस्म पे बर्फ भी गिरे, पर मेरे कारखानों में बननेवाले दोशाले बिक न सके। उन्हें खरीदनेवाले फिर कोई प्रेमी-प्रेमिका यहाँ नहीं आये। मुझमें डर और वहशत समा गयी। लोग मेरी जमीन पे आने से डरने लगे। मैं साल-दो-साल तक अपने जिस्म को खून से रंगा देखता रहा।

मगर ये सिलसिला खत्म क्या होता, बढ़ता ही गया। एक दिन ऐसा भी आया जब मेरा जिस्म खून में रंग गया। मैं कश्मीर दो भागों में बँट गया। एक तरफ इधर के

हिन्दू-मुसलमान सोना चाह रहे थे, एक तरफ उधर के मुसलमान मुझपे कब्जा जमाना चाहते थे। जगह-जगह आतंकवादी गिरोह बनाये उस तरफ के मुसलमानों ने। मैं कश्मीर फूलों की वादी नहीं बल्कि काँटो की दूब बनता चला गया। एक दिन मुझपे सैनिक तैनात कर दिये गये। वो मेरी रक्षा के लिए बुलाये गये थे। मगर वो सब मेरी रक्षा न कर सके। मेरी धरती पर शहीद हो गये। उन्होंने भी उस प्रेमिका की तरह अपनी कुर्बान ही दे दी। मेरी मिट्टी पर अपनी लाश बिछा दी। उनके जिस्म से भी मैं खून के फब्बारे छूटता देख रहा था। वो बार-बार एक ही नारा लगाकर कह रहे थे कश्मीर छोड़ो ऐ मुसलमानों! ये हमारी धरती है। यहाँ हमारे पाक कदम रहते हैं। यहाँ हमारी पाक मिट्टी रहती है। हम इसे तुम्हारे हवाले नहीं कर सकते। मगर जवाब में इन्सान नहीं बोल रहे थे। उनकी गोलियाँ बोल रही थी। उनके हथगोले बोल रहे थे। उनकी तोपें बोल रही थी और मैं एक तरफ खून के आँसू रोता, तड़पता हुआ सो रहा था। न रात को सुकून था मेरे दिल में न दिन को करार। मौसम तो कई आये मगर प्रेमियों ने फिर कोई दोशाला नहीं ओढ़ा मेरी दुकान से लेकर। अब धीरे-धीरे मैं खिसकता गया। मेरी आधी धरती आंतकवादी मुझसे छिन ले गये। मैंने बहुत चाहा कि कहूँ मैं तुम्हारे पास नहीं रह सकता क्योंकि तुम इन्सान नहीं हैवान हो। तुम हिन्दू नहीं मुसलमान हो। तुम प्रेम को नहीं जानते, तुम प्रेम की परिभाषा को नहीं जानते। तुम नफरत की बोली से पैदा होते हो, नफरत में चलते हो। नफरत की गन्दी बू आती है तुम्हारे जिस्मों से। तुम न खुद सोते हो, न मुझे सोने देते हो। ऐसा कह मैं रोने लगता हूँ मगर मेरी सिसकियाँ उन फौजी सैनिकों के दिल तक जाती है और वो फिर से घर से बाहर आते हैं और गोलियों का निशाना बन जाते हैं। मैं पछताने लगता हूँ। क्यों रोया मैं, क्यों तड़पा मैं, क्यों सिसका मैं? अगर मैं नहीं रोता, ये जिन्दा होते। अगर मैं नहीं रोता, ये सो रहे होते। मैं अपने को स्वार्थी पा रहा था। मगर मैं फिर सोचता हूँ। क्या हुआ अगर मेरा एक बेटा मरा। अगर मैं फिर से हरा-भरा हो गया तो मेरी गोद में सैकड़ों बेटे सोयेंगे। फिर कोई आतंकवाद नहीं होगा हमारी धरती पर। सारे आतंकवादी खदेड़ दिये जायेंगे हमारे मुल्कों से बाहर।

मगर मेरी सोचे धरी-की-धरी रह गयी। लोग मेरे पास आने से डरने लगे। अब तो मैं तरस गया हूँ एक प्रेमी जोड़े को देखने के लिए क्योंकि ये लोग अब खुली हवा में साँस नहीं ले सकते। इसलिए मेरे पास नहीं आते। डरते हैं, कहीं उनका कत्ल न हो जाय और मैं अपने जिस्म के बँटते इस टुकड़े से अपना रंग निखार चुराकर भाग जाना चाहता हूँ, वापस अपने मुल्क में। चाहता हूँ मेरे जिस हिस्से को मुसलमानों ने अपना लिया है वो बंजर हो जाये ताकि फिर कोई नया मुसलमान मेरे सैनिक, मेरे बलिदानी बेटों का कत्ल न कर सके और हम आजादी से अपनी छोटी सी धरती के छोटे से टुकड़े पे आराम से रह सकें। ताकि फिर कोई आतंक, कोई आतंकवादी की दरार न पड़े मेरे सीने पे। मैं आजाद हो जाऊँ। अगर ऐसा न हो सका तो एक दिन मैं अपने सारे हथियारों के साथ चला जाऊँगा, दूर बहुत दूर जहाँ से ये हिन्दू-मुसलमान के काफिले का सामान मुझे छू भी न सके, मेरी पनाह से किसी को छीनकर ले जा न सके।

गाँव से दूर

सूरज डूबने लगा। गाँव की पगडंडी पे अँधेरा छाने लगा। सारे लोग वापस अपनी-अपनी गायों, भैसों को ले घर लौटने लगे। किसी के हाथों में कुदाल, किसी के कांधे पे हल सुशोभित हो रहे थे। आनेवाले लोगों में कुछ बच्चे, कुछ बड़े, कुछ बूढ़े, कुछ बहुत ही बूढ़े थे। बच्चे पिता की उँगली थामे चल रहे थे। जवान कांधे पे कुदाल रख चल रहे थे। बूढ़े अपनी-अपनी लाठी के जोर पे चल रहे थे। वक्त तेजी से बीत रहा था। आखिरकार उनके गाँव की तिरछी गली ने उन्हें रोका। वहाँ से तीन राहें जाती थी। पहली बच्चों की कतारें लिये जा रही थी। दूसरी जवान लोगों की मंडली की ओर जा रही थी। तीसरी बूढ़ापे की कमजोर राहें थी जो लोगों की दालानों तक जा रही थी। बच्चों ने घर पर जाते ही माँ से रोटी माँगी। उन्हें अपने पैरों के धूल न दिख सके। जवान लोगों ने चरस-अफीम में अपनी-अपनी थकान मिटी ली। बूढ़े लोगों ने अपने-अपने बच्चों की यादों में वक्त बिता डाले। अपनी दिन भर की थकान मिटा ली।

यही रोज होता है। दिन निकलता है। सूरज डूबता है। तारे सजते हैं आसमान में मगर वक्त नहीं रूकता। साँसे थम जाती है, जिन्दगी नहीं रूकती। सुबह कुछ लोगों के रोने की आवाजें आती है। पता चलता है उनमें से एक चला गया। गाँव की गलियों ने उन्हें विदाई दी। मौसम बीत गया। बहार चली गयी। मगर दूसरे ही दिन एक नन्हें बच्चे की किलकारी ने लोगों को जगा दिया। ऐसा लगा जैसे बहारें लौट आयी।

सुबह हुई। कुछ लोग अपने-अपने कामों पे फिर निकले और इन्तजार के पल फिर जवान हो गये। दिन भर की थकान होने के बाद उन्होंने शाम होने का इन्तजार किया। शाम हुई। रात भी आयी उन्हें बुलाने को। दालानों में लोग सो भी गये मगर आधी रात के वक्त कोई चरस के नशे में चुर निकला गली में। वो ऐसे चल रहा था जैसे जिन्दगी बोझ हो उसके लिए। साँस लेने में तकलीफ हो रही हो उसे। तो गाँव ने ऐसे कई लोग बार-बार देखे और सोच में पड़ गया कौन है तभी उसे एक आवाज सुनाई दी जो कह रही थी निकल साली घर से। मेरे होते हुए पराये मर्द से रिश्ता बना रही है तू।

गाँव सोच में पड़ गया, मैं कैसा हूँ? कैसे-कैसे लोगों के बीच फँसा हूँ। मगर ये गाँव था। वापस कहाँ जाता। रह गया वहीं उस आदमी की सूरत देखते हुए। रात फिर बीती। सूरज फिर निकला। नशे की रात फिर ढली। वो सब फिर निकले घरों से। गाँव ने फिर अपनी जिन्दगी देखी सिसकते हुए। आज एक सरकारी आदमी आया गाँव में। लोगों की भीड़ जुटी। वो गाँव की पगडंडी को शहर के रास्ते से जोड़ना चाहता था। पहले तो लोगों ने इनकार किया फिर लोभ-लालच में फँस गये। वो पैसे से उनका मुँह बन्द कर गया। गाँव धीरे-धीरे शहर से जुड़ने लगा। इसे कुछ लोगों ने अपनी भाषा में गाँव की तरक्की कहा, कुछ ने गाँव की बदनामी। मगर जवान खून जोश मार रहा था कि यहाँ अब टीलर से खेती होगी। गाँव के रास्ते शहर से मिल जायेंगे। इस गाँव में नहर बनेगी। फिर हमें कुएँ से पानी भरना नहीं पड़ेगा। यहाँ मोटरकार चलेगी। कितना बदल जायेगा हमारा गाँव? पर गाँव के दिल से जो सिसकने की आवाजें आ रही थी, उसे सिवाय एक बूढ़े फकीर के किसी ने न सुनी। मगर

वो तो इतना बूढ़ा हो चला था कि न चल सकता था, न दौड़ सकता था। लोगों ने उसकी आवाज सुनने से इनकार कर दिया। कुछ लोगों ने उसका मजाक उड़ाते हुए कहा, तू क्यों नहीं चाहेगा ऐसा? तू न शहर जा सकता है, न वापस आ सकता है। हमारी ओर देख। मैं एक मिनट में गाड़ी मैं बैठ शहर चला जाऊँगा। फिर वहाँ से एक मिनट में घर वापस आ जाऊँगा। पहले हमें कितनी तकलीफ होती थी जब गाँव के ऊबड़-खाबड़ रास्ते पे हमें नंगे पाँव चलना पड़ता था। बेचारा बूढ़ा फकीर उनके इस तर्क के आगे निरूतर हो जाता है।

और फिर एक दिन गाँव की पगडंडी शहर के रास्ते में बदल जाती है। गाँव ये सोचता रह जाता है कि कल यहाँ से हमारा नामोनिशान मिट जायेगा। इस देश के नेता लोग आज गाँव में सड़क बनबा रहे हैं। कल यहाँ कल-कारखाने खोलेंगे। परसों यहाँ फैक्ट्री बनकर तैयार हो जायेगी। फिर न यहाँ हल चलेगा, न खेती होगी, न गायें चरानेवाले लोग होंगे। सब बदल जायेगा मगर मैं एक कोने में खड़ा सिसकता रह जाऊँगा। धीरे-धीरे लोग भूल जायेंगे कि यहाँ एक गाँव भी था।

सूरज फिर डूबा। रातें फिर आयी। मगर रातों में आज सुकून नहीं था। लोगों की आँखों में नींद नहीं थी। उनकी पलकों पे शहर के सपने जवान हो रहे थे। वो सब अपनी-अपनी पत्नी और बच्चों के साथ खुशियाँ मना रहे थे। कह रहे थे, कल हमारा गाँव एक पिछड़ा गाँव था। आज सरकार की नजर पड़ गयी तो हमारा गाँव कितना संवर गया। रातें फिर बीती। दिन फिर निकला। लोग जवानी के जोश में तबले-नगाड़े बजा रहे थे। अपनी-अपनी खुशी का इजहार कर रहे थे। वक्त कितना बदल गया था। आज संसार के एक कोने में बसा ये छोटा सा गाँव लोगों की नजरों में आबाद और अपनी नजरों में बर्बाद हो चुका था। मगर उनके दिलों में जो नयापन बसा था वो गाँव की छवि को धुँधला कर रहा था।

और फिर एक दिन गाँव में शहर बस गया। गाँव का नाम मिट गया। इसे लोगों ने एक छोटे से शहर का नाम दे दिया और गाँव के लोगों ने इसे एक बहुत बड़ा नगर बना लिया। यहाँ सब कुछ बदल गया। मगर गाँव की नजर में वो मौसमी बयार आज भी बह रही थी जिसे लोग देखते हुए भी नजरअन्दाज कर रहे थे। उन्हें आज बिजली के पंखे में सोने की आदत पड़ चुकी थी। सूरज डूब रहा था। रातें आ रही थी। दिन निकल रहा था। लोग अपनी-अपनी कतारों में आज भी खड़े थे। मगर आसमान से घिरे बादल ये कह रहे थे कि अब हम नहीं बरस सकेंगे क्योंकि ये गाँव नहीं शहर हैं जहाँ पानी बिजलीवाली नहरों से निकाला जाता है। मुझे भूला दिया लोगों ने। यहाँ न ईखों की खेती हो रही है, न गन्ने चूसने वाले वो दाँत हैं। अब तो गन्ने के रस लोग मशीन से निकाल रहे हैं जो उन्हें सौ बीमारियाँ दे रही है। मगर नया-नया शहर बसा था यहाँ। लोगों को गर्मी, बरसात, जाड़े का अन्दाजा कहाँ था। बुजुर्ग अपने-अपने बेटे के इन्तजार में सड़कों पे खड़े थे जो शहर के सपने ले उनसे दूर हो गये थे। पता नहीं वो कब लौटें? पता नहीं वक्त उन्हें कहाँ ले जाये? शायद गाँव से दूर, बहुत दूर एक जिन्दगी तलाश रहे होंगे वो। धीरे-धीरे सूरज डूब गया। जीने के अन्दाज बदल गये। गाँव तरस गया उस तिरछी गली को देखने को जिसपे चल लोग हलों, कुदालों

और बैलों के साथ आते थे। आज इस गाँव की सारी यादें लोगों के दिलों में धुँधली पड़ चुकी थी। बच्चे अब खेतों-खलिहानों में खेलने नहीं जाते थे। वो जुडो सीख रहे थे। उन्हें लड़नी थी एक लड़ाई, अपने दुश्मनों से लड़ाई। यही उनकी दुनिया हो गई थी। पता चला गाँव पे दुश्मन हमला कर सकते हैं इसलिए हमें सतर्क रहना चाहिए। इसलिए फौजी लोग जंग लड़ना सीखा रहे थे उन्हें। यहाँ बारूदें बन रही थी, तोपें छूट रही थी।

जो गाँव कल तक एक शांत आबाद था वो आज पूरी तरह कोलाहल में डूब चुका था। मगर लोगों के दिलों में नौकरी के सपने जाग गये थे। वो अब गाँव के पिछड़े लोग नहीं रह गये थे। वो शहर की अगली कतार में खड़े हो गये थे और इन्कलाब के नारे लग रहे थे। तोपों की आवाजें आ रही थी। गाँव का नामोनिशान पूरी तरह मिट चुका था। आसमान में बारिश की बूँदे नजर नहीं आ रही थी, जहाजें उड़ रही थी। बच्चे, जवान, बूढ़े सब अपने आपको बदल चुके थे। उनके बच्चे नौकरी करने लगे थे। खेती कौन करता अब? और जमीन भी कहाँ बची थी खेती के लायक? वो सब तो बंजर हो चुकी थी जिसपे सिवाय कारखाने के कुछ नहीं बन सकता था।

▭

रेल का खाली डिब्बा

मैं एक इन्सान हूँ। ऐसा इन्सान जिसने जीवन से कुछ ऐसा सबक सीखा कि जीवन मेरे लिए एक इतिहास बन गया। मैं जब खेल रही थी हाथ में माचिस की खाली डिबिया थी मेरे। मैं जब दौड़ रहा था उसके पीछे तो वो रेल की उस खाली पटरी पे नजर पड़ी हमारी। मैंने सोचा, मैं एक रेल हूँ और जीवन पटरी जिसपे अनगिनत रेलें दौड़ने के लिए तैयार खड़ी है। जिसमें जितने इन्सान, जितनी सवारियाँ, उसमें उतना ही कोलाहल। मैं आहिस्ता से एक डिब्बे में समा गयी। रेल गुजरने लगी। मैं रास्ते भर कभी खुद के बारे में, कभी माचिस की डिबिया के बारे में सोचती रही। वो डिबिया खाली थी जिससे मैं रेल बना रही थी, वो पटरी भी खाली थी जिसपे मैं रेल दौड़ा रही थी। फिर ये शोर, ये कोलाहल कैसा? ये कैसी रेल आ गयी आज हमें लेने जिसपे इतने लोग सवार, जिसकी चाल इतनी तेज। मैं सोचती रही, रेल गुजरती रही।

रास्ते के पहले मोड़ पे मुझे जीविका का एक छोटा सा समान मिला। मैंने उसे उठाया और आहिस्ता से रेलगाड़ी में सवार हो गयी। रेलगाड़ी चलती रही। रास्ते में फिर दुबारा मोड़ आया। लोग वहाँ भी उतरने लगे। मैंने लोगों की तरह वहाँ से भी एक सामान उठाया और रेलगाड़ी में सवार हो गयी। फिर रास्ते भर मैं यही सोचती रही कि रेलगाड़ी कहाँ तक ले जायेगी हमें? इतने वक्त बीत गये। पहला, दूसरा मोड़ आसानी से आ गया तो ये तीसरा मोड़ इतना लम्बा क्यों? मेरा मन विश्राम करने को व्याकुल हो गया। मगर विश्राम का वो तीसरा मोड़ अभी बहुत दूर था। मैं रोने लगी। आगे किस रास्ते पे गाड़ी रूकेगी, मैं नहीं जानती थी। मैंने पहले स्टेशन के मालिक को तलाशना चाहा तो पता चला वो पीछे के डिब्बे में सवार था कहीं पीछे रह गया। मैंने दूसरे स्टेशन के मालिक को तलाशना चाहा तो पता चला वो भी पहले डिब्बे में सवार था। कब कहाँ उतर गया कोई नहीं जानता। तब मैं सोच में डूब गयी हर कोई यही कर तो नहीं रहा कि वो हर भीड़ में उतरता जा रहा हो। कहीं ऐसा तो नहीं कि एक मैं ही सवार बची हूँ रेल के इस डिब्बे में। ऐसा सोच मैंने आगे-पीछे देखा। रेल आगे जा रही थी। उसकी रफ्तार बहुत तेज थी। मैं ही एक बची थी उसमे सवार फकत। सामने जो दिखाई दे रहा था हमें वो बगीचे का हरा-भरा पौधा था। सामने जो दिख रहा था हमें वो नीला आकाश था। सामने जो दिख रहा था हमें, वो मेरा टूटा हुआ विश्वास था। मैं थकी हारी रेलगाड़ी में बैठी रह गयी। रेलगाड़ी गुजरती गयी। मैं इतनी अकेली हो गयी हूँ अब ये सोच मैं खुद से शर्मिन्दा होने लगी । मैंने कभी अपने जीवन में सिवाय मोटर-गाड़ियों के शोर के कुछ नहीं देखा क्योंकि मैं बचपन से यही तो चाहती थी कि एक रेल बनाऊँ। एक पटरी पे सवार हो रेल को दौड़ाऊँ। हाँ मैं यही तो चाहती थी। मैंने ऐसा किया भी।

मगर मैंने जो रेल दौड़ायी अपनी जिन्दगी में वो खाली थी। मैंने जो पटरी बनायी अपनी रेलगाड़ी के लिए वो भी खाली थी। मेरा बचपन एक रेल का डिब्बा था, मेरी जवानी खाली पटरी। फिर सफर के किसी मोड़ पे मुझे लोगों का साथ कैसे मिलता? न मेरे आँसू इस बात को भूल सके, न मेरे अफसाने बदल सके। रेलगाड़ी गुजरती ही गयी। तीसरा मोड़ कभी आया ही नहीं और मैं उसी तीसरे मोड़ के इन्तजार में रेलगाड़ी पे सवार आज भी वहाँ बैठी हूँ जहाँ से रेलगाड़ी ने चलना शुरू किया था, जहाँ कि पटरी पे एक नहीं कई रेलें दौड़

रही थी। मगर मैं जिस रेल में सवार हुई थी वो रेलगाड़ी भी खाली थी, उसका डिब्बा भी खाली था। न रास्ता बदल सका, न इसपे चलके मुझे कोई मंजिल ही मिल सकी।

मैं आज भी उसी तरह खाली रेल के डिब्बे में सवार बैठी हूँ। न रास्ता मालूम है मुझे, न मंजिल को पहचानती हूँ मैं। कहाँ जाकर रूकूँगी ये भी नहीं जानती मैं।

कठपुतली सा नाच नाचती इन्सानी जिन्दगी किस तरह दम तोड़ रही है, ये सारा संसार देख रहा है। फिर भी वो मौन है क्योंकि उसके पास जीविका के इतने साधन जो मौजूद हैं। कहीं पे पानी है, कहीं पे जवानी है, कहीं पे दरिया हे, कहीं पे रवानी है। कहीं पे परिन्दों का शोर है, कहीं पे जिन्दगानी है। कितना सारा सामान है उसके पास एक सुकून के सिवा। ये सुकून ही कहीं नहीं है। कहीं पे मातम बिखरा है, कहीं पे दर्द का आलम। कहीं से रोने की आवाजें आ रही है, कहीं से हँसने की वजह खोती जिन्दगियों की किलकारियाँ गूँज रही है।

कितना अजब खेल है ये जीवन भी। एक हाथ में खुशी खोती नगीने के मोती रो-रोकर अपनी चमक को बर्बाद कर रहे है तो किसी के हाथ की उँगलियाँ भीख माँगते हुए कटोरे भी ठीक से पकड़ नहीं पा रहे हैं। फिर भी संसार कायम है अपनी जगह पर। सांसारिक रिश्ते कायम हैं अपनी जगह पर। माँ को बच्चा जन्माने से न इन्सान रोक रहा है, न संसार और ना ही बच्चे को माँ पे उँगली उठाने से। वो ये कह रहा है कि ऐसा ही होता है हर एक की जिन्दगी में क्योंकि बच्चे का तन छोटा, माँ का तन बड़ा था। बच्चे का तन जवान और माँ का तन बूढ़ा हो चुका था। बच्चे की भूख रोटी के एक निवाले को माँग रही थी और माँ की भूख कई रोटियों के टुकड़े को तलाश रही थी।

यही तो दिया था उसे संसार ने उसके नसीब में कि बच्चे की भूख तो वो मिटा दे पर खुद भूखी रह जाये। वाह रे तन और तन के बीच पनपती दूरियों का सामना! कितना अजब रिश्ता दिया उसने एक तन को, एक बूढ़े मन को और फिर जब ऐसा ही होना था तो क्यों बूढ़ी माँ ने एक जवान बेटे की परवरिश कर डाली? क्यों बूढ़ी माँ ने खुद भूखों रहकर बेटे को सारा अनाज खिला दिया। ये सब किसने कहा उन्हें? किसने कहा जाके उनसे कि बेटा भूखा है, तू रोटी खा रही है। बेटा प्यासा तड़प रहा है, तू पानी से अपनी प्यास मिटा रही है। क्यों ऐसी ही बातें बेटे से किसी ने न कही? क्यों बेटे को माँ की भूख सता न सकी? क्यों मरती माँ को एक बूँद गंगाजल नसीब न हो सका और प्यासे बेटे को सारा कुआँ ही पिला दिया माँ ने। कितना अजब किस्सा है ये संसार का। बूढ़ा बाप बैलों को हाँकता खेतों की क्यारियों से वापस आ रहा है। चेहरे पर कड़ी धूप पड़ रही है। गर्मी से उसका तनबदन जल रहा है और एक जवान बेटा दारू की बोतल के सहारे खड़ा है आराम से एक पंखे लगे कमरे में। क्यों? क्या बूढ़े बाप को पेट की ज्यादा चिन्ता थी इसलिए? क्या बूढ़े बाप को भूख बर्दाश्त नहीं होती थी इसलिए? नहीं, वो ऐसा इसलिए कर रहा था कि घर में कम-से-कम दो वक्त चूल्हा जल सके। सभी को पेट भर खाना मिल सके। मगर बेटे के पेट को शराब भर रही थी। वो घर के पैसे से दारू जो पी रहा था। फिर घर में चूल्हा कैसे जलता? बुझता रह गया। पानी अन्न के बोझ को कम करती रही और बूढ़ा बाप बेटे के हाथों प्रताड़ित होता एक दिन खेतों में ही भूखा मर जाता है और खाना फिर एक आदमी का बनता है घर में, बेटे का क्योंकि अब भूख का एहसास जो मिट गया था बाप की मौत के बाद। बाप की कहानी तो खत्म हो गयी थी। जीने का जरिया जो मिट गया था इस घर से।

तो क्यों खेल होता हैं ऐसा इन्सानी जिन्दगी में कि बेटे एक जन्मदाता बाप को, अपनी जन्मदायी माँ को एक बेकार सामान समझ भूला देते हैं और वो माँ-बाप बेटे की याद में रोते-रोते एक दिन संसार से विचरण करते गुजर जाते हैं। हाथ में न बेटे का नाम होता है, न बेटे का दिया रोटी का एक निवाला। वो तो सिर्फ एक बूँद पानी माँगते हैं उनसे और वर्षों इन्तजार करने के बाद जब वो भी नहीं मिलता प्रस्थान कर जाते हैं। एक बूढ़ी माँ और एक बूढ़े पिता औलाद के हाथ से अर्थी को कांधा पाने को तरस जाते हैं। तो फिर क्यों जन्म दिये उन्होंने संसार में अपने ही हाथों ऐसे रिश्ते को और क्यों सारी उम्र बीता डाले उन्ही की फिक्र में?

कैसी है ये नाचती जिन्दगी जो हमेशा अपना एक और जन्म माँगती ही है और नाच-नाच जीवन से ऊबकर चल जाती है। तो क्यों नहीं मन रोता उनका ऐसे बेजान रिश्ते को ढोते हुए? क्यों वो अपने ही बच्चों के आँगन में कठपुतली का नाच करते-करते गश खाकर गिर जाते हैं। किसने कहा था उनसे ऐसा कि नाच कठपुतली नाच और नाचने की परवरिश उन्हें किसने दी थी? किसने ऐसा सबक दिया उन बूढ़े माँ-बाप को कि बेटे की खातिर उम्र का हर बोझ उठाते जाओ और फिर एक दिन उसी के कांधे पे सवार होकर बाहर हो जाओ अपने ही घर से।

पुस्तक

222

मैं पुस्तक हूँ बेटे! मुझसे ज्ञान का सार मिलेगा तुम्हें। मुझे पढ़ के देख। मैं कागज हूँ। मुझपे लिख के देख सारी बातें। मैं कलम हूँ। मुझसे सीख ये सारी बातें। मैं ज्ञान दर्पण लिये घूम रही हूँ। मुझमें जिसने अपना अक्स देखा, वो मालामाल हो गया और जिसने मुझपे अट्टहास किया वो कंगाल हो गया। मुझपे हँसने वाला कोई भी हँसी से मुझे शर्मिन्दा नहीं कर सकता। मैं तो आगे, बहुत आगे दर्जा लिये घूम रही हूँ। पढ़नेवाले मुझे पालनकर्त्ता मानते हैं। लिखनेवाले देवी सरस्वती और हँसनेवाले अन्धा कुआँ। पर जो मुझमें डूब जाता है, वो बाहर भी जरूर निकलता है और जो डूबने के डर से अभागा बना फिरता है उसकी ज्ञान शक्ति उससे रूठ जाती है। वो जब दूसरे पे हँसता है सामने मैं आ जाती हूँ और पूछती हूँ ये क्या है मेरे हाथ में? वो कहता है पैसा। मैं कहती हूँ ये क्या है मेरे हाथ में? वो कहता है रूतबा और फिर पूछती हूँ मैं कि ये क्या है मेरे हाथ में? वो कहता है कुछ भी नहीं। पर बेटे! वो अन्धा है, बेचारा है वो जो पुस्तक को पैसे की नजर से देखता है, जिसे ज्ञान की बातें समझ में नहीं आती। मैं हंस का सफेद चेहरा हूँ। मैं मयूर का नीलदेह हूँ। मैं वीणा का तान हूँ। मैं कमल का ज्ञान हूँ। मैं खुशबू हूँ। मैं बहार हूँ। मैं आईना हूँ। मैं शृंगार हूँ। पर तुम तो मुझे पढ़ने आये हो। मुझमें अपना चेहरा देखने आये हो तो दर्पण मानो मुझे। शृंगार करो मुझसे और आगे खड़े होके देखो कि मैं तेरे कितने पास गयी। किसी के हाथ से जब मैं रचित होती हूँ उसे लोग पढ़ते हुए गर्व करते हैं उसपर और जिसके द्वारा मैं पढ़ी जाती हूँ वो आनन्द पाते हैं मुझसे। मैं ऐसा ज्ञान दीपक हूँ जिसकी ज्योति हर पल, हर लम्हा, बढ़ती ही जाती है। एक जमाने में मैं सन्त ज्ञानेश्वर के पास रहा करती थी। आज सबके पास मौजूद हूँ। सबके सामने खड़ी हूँ। मेरा नाम पुस्तक है, मैं अमर हूँ संसार में। मेरा नाम कागज है, मैं अमर हूँ संसार में। मेरा नाम कलम है, मैं अमर हूँ संसार में। मुझे बच्चे आदर से सीने से लगाते हैं। मुझे जवान लोग सन्दूक में रखते हैं सहेजकर और मुझसे काव्य पाठ करते हैं। सब मुझे लिये घूम रहे हैं। सरस्वती के हाथ की निशानी, उनकी आरजू हूँ मैं। उनका मान-सम्मान हूँ मैं। उनकी जुबां, उनकी आवाज हूँ मैं। कितना लिखा होगा तुमने मुझे पर मैं खत्म न हो सकी। कितना पढ़ा होगा तुमने मुझे पर मैं खत्म न हो सकी। कितनी कागजों को स्याही से रंगा होगा तुमने पर मैं खत्म न हो सकी। तो सोचो मैं कौन हूँ? कहाँ से आयी हूँ और किसको अपनी बातें सुना रही हूँ। मैं पुस्तक हूँ, मैं जेहन से जन्मती हूँ। मैं पुस्तक हूँ, मैं कागज पे उपजती हूँ। मैं पुस्तक हूँ, मैं स्याही से निकलती हूँ। मेरे इतने मनोहर रूप हैं जग में पर मैं खाली हाथ घूम रही हूँ गली-गली। तुम मुझे जब लेते हो अपने हाथ में, ये सोच आनन्दित होती हूँ मैं कि तुम मुझे कब समाते हो अपने विचारों में। मैं ये सोच पुलकित हो रही हूँ कि मेरे फूल से कोमल पन्ने जब पलटते हैं तो ऐसा लगता है जैसे किसी ने उठा तो लिया मुझे। मुझे सीने से लगाकर जब खुश होते हो तुम तो ऐसा लगता है मुझे जैसे कहीं इतरा तो नहीं रही मैं। और इन सब बातों को सोच लने के बाद मैं तुम्हारे सिरहाने रखी तकिए के नीचे सो जाती हूँ। सुबह तुम मुझे उठाते हो और मैं संसार में विचरित होने को निकल जाती हूँ तुम्हारे साथ। कम-से-कम तुम्हें मुझसे ज्ञान हासिल तो हुआ। यही मेरे प्रकाशन का सबसे बड़ा फल है मेरे लिए। मुझे माता ने इसलिए रचा है कि कोई अपने नंगे पाँवों को देख काँटे चुभने के दर्द से परेशान न रहे। कोई अपने नंगे जिस्म को देख धूप में जल जाने के भय से पहले ही रो न पड़े और कोई अपने भूखे पेट की खातिर भूख से पीड़ित होकर मर न जाए।

संगीत की लय में बँधा जीवन एक कटाक्ष भाषा से परिपूर्ण होता अपने लिए एक मार्ग तलाश रहा है। इस मार्ग में पतझड़, सावन, वसन्त और बहार से मुलाकात होती है उसकी और हर एक ऋतु से संगीत की लय जन्म लेती है। हर मोड़ पर एक किस्सा पनपता है। हर मोड़ पर एक लेखनी संगीत के शब्द को बयान करती है कवि के बोलों में। अगर सुरभि के रस न पनपते तो ये संगीत का परिपूर्ण जीवन कायम न रह पाता। ये एक ऐसा सार है संसार का जिससे जीवन नैया को पार होने में मदद मिलती है। धरती से आसमान तक जाती है ये गूँज जहाँ जाकर नर्तकी का नर्त्तन बन जाती है। संगीत देवता का आराध्य रूप-श्रृंगार बन जाती है ये संगीत की कोमल रूपरेखा। इससे जन्मा एक लय ऐसा भी होता है जो मृतक को जिन्दा कर देता है, जो प्यासी धरती को पानी में सराबोर कर देता है। ये रूत क्या जागी? संगीत जाग गया इसके रूप-श्रृंगार से। संगीत का रस घोलती ये जीवनधारा इसके लय के साथ बहती जा रही है। संगीत का जरिया जन-जन तक है। संगीत का वास्ता दिल और जान से है। प्रेम में डूबी संगीत की देवी हाथ में वीणा का तान लिये शाश्वत रूप से खड़ी है। ये क्या जागी, सारा संसार नींद से जाग गया। जब कोई बहाना काम न आ सका। एक औरत का शाश्वत रूप है संगीत। एक औरत के ओठों की लाली है संगीत। एक औरत की जुबां की आवाज है संगीत जिससे वो अपने-अपने प्रेमी के दिलों में झाँक रही है। जब ये रूठ जाती है मिलन अधूरा रह जाता है। कविता के सार को पढ़नेवाली बोली बेजुबान हो जाती है। आसमान से पानी बरस नहीं पाता। बिजली की चमक खो जाती है। वीणा के तार टूट जाते हैं। संगीत की देवी नाराज हो जाती है। नर्त्तकियाँ नर्त्तन करना भूल जाती है। वाद्यों से आवाज आनी बन्द हो जाती है।

संगीत का नाता ईश्वर से भक्ति तक का है। संगीत का नाता भाषा से प्रकृति तक का है। एक बोल क्या बजे सुरसागर की स्याही ही थम गयी। संगीत का रूख मोड़ पाना न तो इन्सान के वश में है न भगवान के। संगीत तो सदियों से आनेवाली नदी पहाड़ों की गूँज से निकलती है। संगीत को तराशकर निखारते हैं झंकार से इसकी भक्ति करनेवाले लोग। संगीत माँ की लोरी बन भी निकलती है माँ की जुबान से। उसके कितने अन्दाज से कितनी बोली बोली जाती है संगीत की। कितनी भाषा में बयान होता है इसका। संगीत एक वृद्धा की काँपती आवाज है। संगीत एक वृद्ध पुरूष का तिरस्कार है। कितने जुबान हैं इसके। एक तरफ पौधों से इसके रस पनपकर इसकी लय को सराबोर कर देते हैं। एक तरफ टप-टप करती पानी की बूँदें बन बह रही है संगीत। इसके ताने-बाने हजार हैं। इसके आने-जाने के मार्ग कई हैं। इसके साथ गुजर जाने के रास्ते भी कई हैं जो पगडंडियों पे बड़ी तेजी से दौड़ती जा रही है। किसी बच्चे की बोझिल आवाज है संगीत। जवानी के जोश में ओठों से गूँजती सीटी की तान है संगीत।

कई जगहें बदलकर देखी है संगीत ने। मगर हर एक जगह इसके निशान मौजूद ही रह गये थे। एक दिल के मौन हो जाने से थोड़े पलों के लिए ठहर सी जाती है ये धुनें इसकी। मगर दूसरे ही पल अपने सुरों की झंकार लिये शोर मचाती आ जाती है संगीत की धुनें। वापस आ जाती है इसकी सुरों की महफिलें। जिस महफिल में संगीत का शोर नहीं,

वो महफिल चेहरों के बीच भी वीरान ही होती है। रात सुबह में बदल जाती है। महफिलों के दीये बुझ जाते हैं।

संगीत की धुनें आप-से-आप अपना रूख मोड़ लेती है। काली रातों के बीच बसी ये धरती एक ताना-बाना है संगीत का। सुबह की चिलचिलाती धूप में शिकायत करती प्रेमिका की निगाह है संगीत। शाम के ढलते ही मिलन का रास-रंग है संगीत। जब प्रेमी के इन्तजार में प्रेमिका बगीचे में बैठी होती है उस वक्त प्रकृति श्रृंगार में सराबोर होती रहती है संगीत के और जब प्रेमी नहीं आता मौन धारण का साधन बन जाती है संगीत। संगीत हर रूप में सामने आती है। मगर निगाहों की भाषा से बयान होती ये रूतें संगीत के साज को बयान करती है। एक मोड़ पे खड़ी यही कहती रह जाती है कि मैं हर एक जगह मौजूद हूँ। मुझे हर जगह तलाशो तुम। अगर न मिलूँ तो मुझे ढूँढो। मैं हर एक पास हूँ जहाँ-जहाँ कि तुम हो, तुम्हारा रूप-श्रृंगार है। तुम्हारी भाषा का संसार है, तुम्हारी जिन्दगी का सार है।

प्रीत ने रास्ता दिखलाया। सांसारिक मार्ग आगे बढ़ा। कुछ लेखनी लिखकर अमर हुए, कुछ प्रीत की स्याही पाकर। ईश्वर ने एक रूप दिया आईने को। आईने ने प्रीत से अपने अक्स में हर एक को शामिल किया। किस्सा मानव लेख बनकर उत्पन्न हुआ और उमंग दिशा प्रीत रूप लेकर सामने आयी। कभी किसी का साया साथ रहा, कभी किसी का वजूद। आनन्दित धरती चारों तरफ से हरी-भरी हो गयी। शाम ने घूँघट खोला। रात ने आँचल बिछाया। सुबह ने चमकीली धूप दी। दोपहर ने गर्मी और शाम फिर से ठंडक लिये आ गयी। चाँद फिर निकलने लगा बादलों से। रात फिर दूध सी उजली हुई। चकोरी का रूप फिर मध्यम हुआ। मिला-जुलाकर सांसारिक बन्धन प्रीत के अमर धागे से जुड़ता चला गया। कलियों ने पुष्पलता माँगी, फूलों ने गुलजार। तितलियों ने रसपान माँगा, पंछियों ने खुला आसमान। पतंगों ने शाम का दीपक माँगा, पखेरूओं ने घोंसले का नया रूप। सबके सब एक माया बन्धन में बन्धे आते रहे। चिराग जले। रोशनी हुई। काली रात चमकी। चाँदनी की रौनक आसमान में जब विलीन हो गयी, किसी का साथ एक सुबह का रहा, किसी का एक शाम का। किसी का रचित सार लिखा ही रह गया। किसी की लेखनी संसार के लोगों में सम्मिलित हो गयी। लोगों ने उसे आदर दिया, सम्मान दिया। एक उम्मीद की शय माना। एक शय का ख्वाब माना। किस्मत चमकी उसकी और प्रीत का सहारा मिला उसे। मैं सब देखती रही पर हैरान न हो सकी। जीवों का भोजन खत्म होने लगा। उनका पेट न भर सका। पखेरू रूठ गये। पर शाम दुगना न हो सका उनके लिए।

वो उड़कर अपना मन बहला न सका और रात की स्याही चमकने लगी। मगर प्रीत ने रास्ता मोड़ा। सुबह फिर वो चहके। घोंसले से बाहर आये। दिन भर खूब मौज-मस्ती की और अपने चोच में तिनके को जमा किया। पेड़ो के झुरमुट रास्ता बदल न सके। घोंसले बनाने की जगह मिल गयी उन्हें। जमीन पर रेंगनेवाले कीड़े उनके खुराक बने। पर वो प्रीत की माया ही कहलाती रही उनके लिए। किसी के पाँव के नीचे दबकर मरने ही वाले थे वे कि किसी चिड़िया ने उन्हें अपनी चोच में उठा लिया। उन्हें इस नर्क जीवन से मुक्ति मिल गयी। उनकी योनि बदल गयी। उनके लिए एक नया जन्म शुरू हो गया। ये अमिट सत्य था। नया आधार था ये एक मानवी जीव का, जीवन आकार का। ये मेरी सोच का ही रूप आज साकार था।

कैसी थी ये अमर स्याही प्रीत की जो हर आने-जानेवाले राहगीरों से जुड़ी थी। रास्ता लम्बा था और मुसाफिर कई। रास्ते भर बातें होती रही। उनका परिचय पाते, अपना परिचय देते वक्त बीतता चला गया। सारे राहगीर अपने-अपने रास्ते मुड़ गये एक मोड़ पे आकर और ये कह चल पड़े कि हमारी मंजिल करीब आ गयी। उन्हें मैंने अलग-अलग वेश में देखा। कोई गरीबी के वेश में था, कोई अमीरी पोशाक झलकता फिर रहा था। किसी का रंग काला था, किसी का गोरा। कोई सागर सा दरियादिल था। कोई नदी की लहरों की तरह चंचल। किसी का नाम रूपम था, किसी का सुधाकर, किसी का दिवाकर। ये सब अलग-अलग नाम वाले थे। प्रीत का नाम एक था। वो इन सबको एक ही नजर से देख रहा था। सब माँझी के सहारे चल रहे थे, माँझी वक्त के सहारे। कैसा मनमोहक दृश्य था ये शाम

का कि गोधूली वेला की इस राह में सब के सब चलकर एक मार्ग तलाश चुके थे। किसी का कथन था कि दिनभर की थकान उतार लेते हैं हम। किसी का कथन था कि थकान की कैसी फिक्र। जब हमने बातें करनी शुरू की तो हमारा मन तभी बहल गया था और मैं प्रीत की तरफ देख बस मुस्करा रही थी ये सोच कि ये सब जानते ही नहीं शायद कि प्रीत ने इनकी थकान उतार दी है। नाम भले ही अलग-अलग है इनकी मंजिल का पर मार्ग अलग नहीं। संसार से होकर एक ही मार्ग सबसे परे जाता है, प्रीत का मार्ग, आदर का मार्ग, मान-सम्मान का मार्ग और जिसे वो मार्ग मिल जाता है उसके लिए जीवन पथ कभी खाली नहीं होता। एक बार अगर वो राह में रूकते हैं तो सैकड़ों लोग उनकी तरफ पलटकर देखते हैं। तभी तो कहा है किसी ने कि प्रीत अमर है संसार में। चाहे वो स्याही से कलम का हो। चाहे वो कलम से कागज का हो। चाहे वो कागज से लेखनी का हो।

सौन्दर्य

कितने लोग पूछते हैं सौन्दर्य की परिभाषा। पर बयां कोई नहीं करता। सौन्दर्य नारी का नारीत्व है। सौन्दर्य सुहागनों का रंग-रूप है। कितने कवियों ने अपनी लेखनी में सौन्दर्य को निखारा है। ये ऐसी छवि है सतीत्व की जिसको नजरअन्दाज नहीं किया जा सकता। ये एक पत्नी है, एक जवां बेटी है, एक जवां औरत है। फिर भी लोग इसे तुच्छ मान रहे हैं। इसे बदनाम कर रहे है राह चलते सौन्दर्य का मजाक उड़ाया जाता है। कोई इसका बखान सीटी बजाकर करता है, कोई गन्दी बोलियाँ बोलकर। तो ये क्यों पूछा जाता है हमसे फिर की औरत कौन है। तुने जिसे देख के हँसना चाहा वो एक सौन्दर्य था। तुने जिसपे कवितायें लिखी, वो एक सौन्दर्य था। ये तो जगह-जगह बदनाम है। फिर ऐसे सौन्दर्य से मोह कैसे करे नारी जिसमें मर्दों की चाटूकारिता दिखती हो। ये एक ऐसी रात है जिसका सबेरा नहीं होता है। ये एक ऐसी सुबह है जिसका बसेरा नहीं होता।

कहीं सौन्दर्य को निखारा है कवियों ने। कहीं इसे पुकारा है महाऋषियों ने। किसी की तपस्या भंग हुई। इससे किसी को लज्जा आयी। सौन्दर्य की अंतिम सीमा थी रम्भा। सौन्दर्य की अन्तिम सीमा थी मेनका जिसने एक महाऋषि को गृहस्थ जीवन जीने पर मजबूर कर दिया। ये सौन्दर्य उन्हें बदनामी दे गया। इतिहास इस अजब दास्तां को भूल न सका। नारी का नारीत्व इसे भूल गया। सुन्दर छवि वाली नारी की कोई कमी नहीं हुई इस कायनात के बदलते हर युग में। मगर एक सुन्दर वाणी की शालीनता हर युग में खोती गई। ईश्वर ने केवल चेहरे के सौन्दर्य को नहीं निखारा। उन्होंने आत्मा भी सुन्दर बनायी नारी की। नारी में एक सीता भी थी। सावित्री भी थी। वो चेहरे से ज्यादा मन से सुन्दर थी। उनका सौन्दर्य मन के आईने से निखरता था। वो हँसती हुई आयी थी इस धरती पर और अमर होकर गयी। ये एक पतिव्रता नारी का ऐसा सौन्दर्य था जहाँ पति को शर्मिन्दा होना पड़ा। वो अमर हो गयी और हर युग में ये बात दोहराई कि भगवान के अवतार थे राम, मन कोमल था उनका, धैर्यवान थे वो फिर भी उन्हें मन की सुन्दरता साफ न दिख सकी। उन्होंने भी एक गलत नजर ही दी सौन्दर्य को। उन्होंने सीता जैसी पवित्र और सुन्दर नारी को बदनाम किया। उनके सौन्दर्य को बदनाम किया। सौन्दर्य ने हर युग में जन्म लिया, पर उसे सिवाय बदनामी के कुछ नहीं मिला। जब ये रम्भा बनी, जब ये मेनका बनी, ईश्वर से डिगा दिया महाऋषियों को। उस वक्त ये सौन्दर्य आदर की भावना भूल गया। उन्हें अहंकार आ गया और ये पृथ्वी पर एक आम औरत की छवि बन जीने को मजबूर हो गयी। स्वर्ग की अप्सरा को उनके सौन्दर्य ने धरती की धूल बना दिया। मगर फिर भी सौन्दर्य नहीं हारा। वो बार-बार जन्म लेता रहा। मगर इस बदलते दौर में सौन्दर्य एक खिलौना बन गया। जगह-जगह बारहाउस बन गये। कहीं कोठे, कहीं मर्दों के बिस्तर सज गये। इस युग में सौन्दर्य ने अपना चेहरा ऐसे आईने में देखा जिसे जिस्मफरोश आईना कहते हैं। ये युग ऐसा समाज दे गया सौन्दर्य को जहाँ ये रूपया कमाने का सामान बन गया। जितनी सुन्दर होगी कोठे की तवायफ, उतनी ही ज्यादा पैसों की बोलियाँ लगेगी। बारहाउस कई सौन्दर्य खरीदने लगे। ये सौन्दर्य अपना चलन भूल गया। यहाँ इस युग में सौन्दर्य काला दर्पण बन गया जिसमें सिवाय गन्दे चेहरे के कुछ नहीं देख सका इन्सान। न सौन्दर्य स्वर्ग की अप्सरा सा सुन्दर रहा न सुन्दरता का बखान करनेवाली वो लेखनी रही।

आज के इस युग में सौन्दर्य एक व्यवसाय, एक तमाशायी चीज बन गया जिसकी बोली लगती रहेगी। आगे के युग में सौन्दर्य मिट्टी का ढेर बन जायेगा जिसे लिखनेवाला कोई भी हम जैसा पैदा नहीं होगा। सौन्दर्य धूमिल हो जायेगा। औरत का तन और मन मर्दों का बिस्तर बन जायेगा। सौन्दर्य फूलों की सेज पर नहीं, काँटों के बिस्तर पर सो जायेगा और नारी का नारीत्व अपना सौन्दर्य देखना भूल जायेगा आईने में।

दरिया खामोश पड़ा था। तभी उसमें एक मौज उठी और उसने मुस्कराकर कहा, कौन? कौन आया मेरे पास? कोई आवाज न हुई। दरिया में फिर मौज उठी। उसने फिर कहा कौन? आवाज फिर भी नहीं आयी तो वो सोचने लगा, शायद कोई हवा का झोंका होगा जो मुझे जगाने चला आया था। पर तभी किसी की हँसी सुनाई दी उसे। उसने फिर पूछा, कौन? तो फिर कोई आवाज नहीं आयी। उसने सोचा पत्तों की सरसराहट होगी जो सुनी मैंने। यहाँ तो कोई भी नहीं। ऐसा सोच फिर से सो गया वो। फिर एक मौज उठी। आवाज फिर भी नहीं हुई। दरिया फिर मुस्कराया। ये कैसा पागल है जो मुझे छेड़ रहा है और अपनी आँखें मून्द ली। पल-दो-पल बीते मगर उससे ये राज जाने बगैर रहा न गया। वो फिर उठा और ये सोचने को किनारे पे बैठ गया कि यहाँ कौन आया होगा मेरे पास इतने सन्नाटे में? और तभी उसे पंछियों के परों की फड़फड़ाहट सुनाई दी। वो फिर हँस पड़ा। तो तू था यहाँ इतनी देर से। मगर फिर भी कोई सामने नहीं आया। उसने फिर सोचा, शरारत करने आया होगा। शरारत कर चला गया। पागल दरिया से शरारत करता है तू! अगर डूब गया तो! ऐसा कह फिर सो गया। मगर सो जाने के बाद भी उसे सुकून नहीं मिला। वो फिर उठ बैठा और सोचने लगा, कहीं किसी को मुझसे वैर तो नहीं। मगर फिर हँस पड़ा वैर मुझसे, एक शांत समन्दर से। किसे सूझी होगी ऐसी बातें। मुझमें तो पानी का रेला बहता है। मुझमें तो पतवारों के खेमे बहते हैं। भला मुझसे किसी को कैसा वैर। जो भी मेरे पास आता हैं मैं उसे बहा देता हूँ। पर मुझसे लगाव भी होगा तो किसे? क्या दरिया में डूब मरने चला आया कोई? क्या मौजों की पुकारे, उनकी उमंगें किसी को लेके गुजर गयी? मगर किसे? तभी उसके सामने पानी पीता एक जानवर आया और बोला, मैं तो वर्षों से प्यासा भटक रहा था। मुझे पानी का एक कतरा न दिया किसी ने। मैंने घर भी देखे, कमरे भी देखे और इन्सान भी देखे वहाँ रहते हुए मगर पानी का कतरा कहीं नहीं मिला मुझे। वो सब अपनी-अपनी निद्रा में सोये थे। मैं आज तुम्हारे पास इसलिए चला आया कि तुम जरूर जाग रहे होगे। मगर नहीं तुमने तो मुझे देखा भी नहीं और चौंक गये। मगर मैं यही तुम्हारे पास पल-पल मौत की गोद में जाता एक पशु आज तुम्हारी गोद में आके मुक्त हो गया। ऐसा कह वो वहीं मरकर दरिया में बह गया। वो बेचारा समन्दर जो कितनी शांति से सो रहा था, जाग गया था और गहरी निद्रा से जाग जाने के ऐसे गम उसे पहली बार मिले और जो अनुभव से ही हालात मिले उसे अपनी जिन्दगी से, उससे वो उबर न सका और एक दिन तड़प-तड़प विलीन हो गया। पानी के रेले बहते-बहते किसी दूसरे रास्ते मुड़ गये। जिस रास्ते से कोई राहगीर गुजरता नजर न आ सका उसे और वो आगे बहुत आगे बहता निकलता चला गया। दरिया के इस रेले से आज बहते सबने देखा उसे। पशु ने, पक्षी ने, पेड़ों ने, पत्तों ने और सबसे बड़ी बात उस आसमान ने जो झुकना चाहकर भी झुक न सका शर्म से। शांत जलाशय ने पहले इतने ही मौज उठाये। फिर मौजों को खबर दी और उसे आगे, बहुत आगे बह जाने पर मजबूर किया। और जब वो बहकर विलीन हो गया तब उसने पहली बार ये बात जेहन में लायी कि अगर मौजों को किनारा मिल जाता तो वो क्यों बहता? विलीन कैसे होता और क्यों होता?

मगर आज तो वहाँ न कोई जलाशय था, न वो खड़ा पशु, न दरिया और उसकी मौज थी। तो क्या ये सत्य नहीं कि जानेवाले पे लोग अफसोस भी करते हैं तो बहुत देर बाद? मगर अफसोस में सिवाय शर्मिन्दगी के उन्हें कुछ नहीं मिलता।

तवायफ के इन घुँघरूओं के कई रंग हैं। कभी वो अपने आशिकों को रिझाने के लिए नीली बन जाती है तो कभी पीली। उसके हर कद्रदान वाहवाही करते हैं। पैसे फेंकते हैं उसपे। यही कीमत होती है, इन घुँघरूओं की।

कभी ऐसा भी वक्त था जब ये घुँघरूएँ बूढ़ी हो गयी थी। तब एक नयी तवायफ ने इसे अपनी अदाओं से जवान किया था। वो ये भूल गयी थी कि आशिक की नजरों में मैं जबतक जवान रहूँगी, ये मुझे इसी तरह नचाते रहेंगे। वही आशिक मर्द जब घर आते हैं तो उन्हें याद नहीं रहता कि वो किसी के पति भी हैं, किसी के पिता भी हैं, किसी अबला माँ के सहारे भी हैं। वो नशे में चुर घर आते हैं। खाते भी नहीं और सो जाते हैं। वो पत्नी, वो माँ, वो बच्चे भूखे पेट यही कहा करते हैं, अब्बाजान लौट आइए। बेटेजान लौट आइए। ऐ मेरे सुहाग के सहारे लौट आइए। मगर वफा के नशे में चुर मर्द इनमें से एक भी आवाज सुन पाता है, नहीं। रात बीत जाती है। सुबह फिर घुँघरू छनकते है। उन्हें याद आती है उस तवायफ की। वो घर से एक मुट्ठी रूपये के साथ निकल पड़ते हैं। जब वो तवायफ के पास पहुँचते हैं फिर उन्हें घुँघरू बुलाती हैं। कहती है मेरे आशिकों! मेरे बोल सुन। मैं नाच रही हूँ, गा रही हूँ, तुम्हें रिझा रही हूँ। वो आशिक मर्द घुँघरूओं की इस अदा पे फिदा हो जाते है और जेब से रूपया निकालते हैं। कभी उनके सामने बीमार बच्चे का चेहरा आता है, कभी जवान पत्नी का, कभी बूढ़ी माँ का। मगर ये सब चेहरे उस चेहरे के आगे धुँधले पड़ जाते हैं। जिन्हें हम तवायफ कहते हैं, वो घुँघरू की आवाज उन्हें चौंकाती है। वो ऐसे जागते हैं जैसे गहरी नींद में सोये हो। ये घुँघरू हर माँ से उसका बेटा छीन लेती है। हर पत्नी से उसका पति छीन लेती है। हर बच्चे को यतीम बना देती है।

तो क्या ये घुँघरू इतनी अदाओं की मालकिन है? क्या वो हर शाम से खूबसूरत है जो हर मर्द के सर का ताज है। ये गम देती है लोगों को। हजारों घर टूटते हैं इसकी वजह से। ये एक बार बोलती है, कद्रदान सौ बार बोलते है। ये एक बार पैसे माँगती है, आशिक दस बार लुटाते जाते हैं।

ये घुँघरू कितनी भाषायें बोलती है। पहली भाषा ये कहती है ऐ आशिक! मेरे जाम पी ले तू, थोड़ी जी लेगा। दूसरी भाषा ये कहती है तू अपने घर का त्याग कर मेरी गोद में सो जा। तीसरी भाषा ये कहती है तू मौत की गहरी नींद में सो जा। मैं तुम्हें जागने नहीं दूँगी।

तो ये है कई भाषाओं की मालकिन घुँघरू जो कई हजार लोगों के दिलों में गूँज रही है। कुछ लोग इसे नादानी में अपना लेते हैं कुछ जानबूझकर। हर जिन्दगी की यही अदा बन गयी है मर्दों के इस समाज में कि वो इसे निहारती रही।

यही घुँघरू एक बार कहा करते थे कि ऐ मेरे आशिक मर्द! जा चला जा। ये घर नहीं बाजार है। ये गली नहीं, कोठा है तवायफ का। यहाँ भूलकर भी मत आना। मगर तब किसी ने कहाँ सुनी थी उसकी आवाज? कहा था, मुझे मजा आता है मुन्नी बाई का नाच देखने में।

तो ये मुन्नी बाई क्यों नाच रही है? सदियों से ये खेल होता आ रहा है। कई युग बीते पर घुँघरूओं की आवाज नहीं थमी। नाचते-नाचते किसी तवायफ के पैर नहीं दुखे।

ये घुँघरू दीवाना बना रही है लोगों को। ये कई युगों से मर्दों को रिझा रही है। पर वास्तव में ये कुछ भी नहीं है। कभी किसी की नजरों में ये पाप बन जाती है तो कभी शाप।

ये शापित घुँघरू हर औरत के कदमों में पड़ी सोच रही है, सुहागन कहीं मुझे उतार न दे। पर ये सुहागन के घुँघरू यही कह रहे हैं जबतक सुहाग सलामत रहेगा, ये घुँघरू भी सलामत रहेगी।

तो ये है घुँघरू जो दो रंगो में ढल गयी है। ये पीली घुँघरू सुहागन के सुहाग में मिल गयी। ये नीली घुँघरू आशिकों के चेहरे पे छा गयी। यही कहानी है घुँघरूओं की जो सदियों से गूँज रही है। पूरी कायनात उन्हें दुहरा रही है। पर भूल नहीं पा रही है।

गंगाजल

न जाने कितने युगों से बहती ये पावन गंगाजल कभी पुरानी नहीं होती। सदैव नि:स्वार्थ भाव से आती-जाती रहती है। नदी की धाराओं में जब भी कोई मरने की बातें करता है ये कहती है-तनिक ठहरो! मेरे पानी से अपनी प्यास तो बुझाते जाओ ताकि तुम्हें अगले जन्म में भी पीने को मीठा पानी मिल सके। फिर उसके चले जाने के बाद वो शोक में डूब जाती है। मैंने आज फिर एक मरते के मुँह में अपना जल दे दिया। मैं पावन हो गयी। मगर कभी ये एहसास नहीं होता उसे कि मैं जूठी हो गयी क्योंकि उसके पास निर्मम प्रेम था, निर्मल आवाज थी उसकी। निर्मल जल की उसकी बहती हुई धाराओं में शाम ढलने से पहले लोग अस्थियों और राखों का सामान बहाकर जब वापस आने लगते हैं, कलकल करती गंगा मैया इन राखों को और अस्थियों को अपनी गोद में सुला देती है। लोग तो चले आते हैं, मगर नदी की गोद में सो रहे वो लाशों के बन्डल, वो राखों के बन्डल सब एक नये सफर की ओर निकल जाते हैं। तूफान आता है, उन्हें अपने सीने में छुपा कर चला जाता है। गंगा मैया कलकल बहती हुई, शोक में डूबी, इन आत्माओं को तकती रह जाती है। फिर कोई कराहता है। फिर आवाज आती है। पानी-पानी! बेटे मुझे प्यास लगी है पानी पीला दे। लोग दौड़ पड़ते हैं। पिताजी के प्राण जानेवाले हैं। जरा जल्दी से गंगाजल की शीशी लाना। एक बूँद पानी और तुलसी का पत्ता तो देना ही होगा इन्हें ताकि इनके प्राण आसानी से छूट सकें। लोग तुलसी के पत्तों को तलाश लाते हैं और उसे गंगाजल में भींगोकर पावन कर देते हैं। बूढ़े, मरते लोगों की अन्तिम इच्छा यही तो होती है। कितनी बिडम्बना है इस गंगाजल में? जबतक इन्सान गंगाजल को पी नहीं लेता, जा नहीं पाता इस संसार से। फिर वो जब सो जाता है, गंगा मैया आती है चुपके से और उसे एक नजर देखती है और फिर उसके इन्तजार में कब्रिस्तान में जाकर खड़ी हो जाती है। राम-नाम का नारा गूँजता है। वो समझती है कोई आ रहा है। आहिस्ता से अपने हाथ बढ़ा देती है। लोग उसकी बाहों में समा जाते हैं। मगर थोड़ी देर में और कोलाहल होता है। वहाँ एक जवान बेटा मर जाता है उसमें डूबकर। उसकी माँ, गंगा माँ से हिसाब माँगने आती है। किसी का पति डूबकर मर जाता है। तब, गंगा माँ से एक पत्नी हिसाब माँगने आती है। किसी का भाई डूबकर मर जाता है। तब गंगा माँ से एक बहन हिसाब माँगने आती है। मगर गंगा मैया तो बस एकटक उन लोगों को देखती रह जाती है और लोग उस पावन गंगाजल में नहाकर वापस चले जाते हैं। गंगा मैया कलकल बहती नदी की धाराओं में विलीन हो जाती है। जब लोग उनके कदमों को स्पर्श करते हैं उनकी नींद खुल जाती है। वे पूछते हैं, माँ! मुझे कौन सी योनी दी तुने। माँ! मुझे कौन से जन्म के लिए किस दिशा में जाना है। वो कहती है, बेटे! तुझे इन्सान योनी नहीं, पशु योनि मिली है। तुझे किसी बड़े खाली स्थान की ओर जाना है। वो सब आपस में बातें करते चले जाते हैं। जब उन लोगों को एक योनि मिल जाती है, दूसरे लोग आते हैं गंगा मैया के चरण को छूने। माँ, मुझे कौन सी योनि दी है तुमने? मुझे कौन से नगर की ओर जाना होगा? गंगा मैया उन्हें इशारा करते हुए कहती है, तुम्हें सर्प योनि मिली है। तुम उस पुराने जंगल की ओर चले जाओ। वहाँ सब लोग तुम्हारी राह देख रहे हैं। सर्प योनि से बड़ी कोई योनि नहीं होती। वो इन्सान सर्प योनि पाने को वहाँ से जंगल के रास्ते की तरफ मुड़ जाता है। गंगा मैया फिर से सो

जाती है। तभी उनके कानों में फिर किसी के कराहने की आवाज आती है। वो कहती है, मैं आ रही हूँ। ऐसी ही बातें सोचती गंगा मैया सदैव जागती रह जाती है, लोगों की प्यास बुझाती। एक मरता है तो पानी माँगता है। एक जलकर जब राख बन जाता है, योनि माँगता है।

तो कब सोये ये गंगा मैया, कब सोये ये गंगाजल! सदैव जागने-वाली ये गंगा की पावन जल धाराएँ एक नये मानव के इन्तजार में कभी सो नहीं पाती। उन्हें नींद ही नहीं आती। कभी जब वो सोती है, कोई सामने कराहने लगता है। एक भी दिन ऐसा नहीं आता, एक भी रात ऐसी नहीं आती जब गंगा मैया आराम से सो सके। जब वो सोना चाहती हैं किसी की चीखें उन्हें जगा देती है। तब वो ईश्वर से कहती है, हे ईश्वर! आपने हमें क्या जीवन दिया? मैं पल-पल लाशों के बहते इन बवंडर में बहती जा रही हूँ। आपने हमें न सोने दिया, न जीने दिया। जो लोग मरते हैं, वो मुझसे हिसाब माँगते हैं। मैं इन्हें क्या जवाब दूँ इनकी बातों का? मैं खुद मर जाना चाहती हूँ, इस संसार से दूर हो जाना चाहती हूँ। तब आवाज आती है, गंगे! तुझे पृथ्वी पर कलंकित होकर रहना है। शाप से पीड़ित है तू। हम तुम्हें वापस नहीं बुला सकते। ये लोग तेरे ही पास सोते रहेंगे क्योंकि पृथ्वी पे इनके रहने के लिए कोई जगह बाकी नहीं है। एक को बेकारी मार रही है, एक को बेवफाई, एक को बेहयाई। कोई दौलत के लिए लड़ रहा है, कोई शोहरत कमाने निकला है। कोई मौत का तांडव मचाने निकला है। अगर ये लोग जीवित रह गये तो पृथ्वी पर तुम बहती नजर नहीं आओगी। वहाँ पर खून बहेगा। इसलिए हमने तुम्हारी ओर देखना छोड़ दिया है। तुम्हारी बातें हम नहीं सुनना चाहते क्योंकि तुम इनकी मुक्ति का मार्ग हो। तुम सदियों से इन्हें मुक्त कर रही हो। तुम मुक्त करती रहो इन्हें। सदा इनके लिए मुक्ति का मार्ग तलाशती रहो। तब वो कहती है, क्या जिन्होंने पाप नहीं किया, वो नहीं मरते हैं। मरते हैं गंगा, मगर कब? तब, जब जमाना उन्हें याद करता है। ऐसे लोग मरकर ही पहचाने जाते हैं। ऐसे किसी इन्सान को आजतक नहीं पीलाया मैंने अपना जल। नहीं। क्यों? क्योंकि तुम पावन हो गंगा और पावन लोग, पावन लोगों की ओर बस मीठी नजर ही रखते हैं। तुमने एक-एक कर सब लोगों को सुलाया मगर सच्चे लोग आज तक नहीं आ सके तुम्हारी गोद में क्योंकि सच्चा कोई एक ही होगा इतने बड़े संसार में जिसे तुम्हारी गोद में सोने में बर्षों लगेंगे और जिस दिन उसने तुम्हारे गंगाजल को छू लिया तुम्हारे सारे पाप धूल जाएँगें। तुम पृथ्वी से फिर आसमान में आ जाओगी। तब गंगाजल से फिर कलकल बहने की आवाजें आती है और वो किसी सच्चे के इन्तजार में खड़ी रह जाती है। सोचती है कि वो ऐसा पवित्र इन्सान कब आयेगा मेरे पास? कब मैं मुक्त हो पाऊँगी। कब लोग मेरे चरणों में अपने पाप धोना छोड़ेंगे? कब, मेरी जलधारा स्वच्छ होगी?

मुनीम जी का बही-खाता

मुनीम जी ने अपने खाते खोले और उनपे एक नजर डाली। किसी जगह अँगूठे के निशान थे, किसी जगह जिस्म के बहते खूनों के। मुनीम जी तब तक खाता चेक करते रहे जबतक कि उनके चश्मे के शीशे में सारा गाँव समा न गया। किसी के नाम दो बीघा जमीन थी, किसी के नाम खाली तन। उन्होंने खाते को हाथ में लिया और निकल पड़े दो-चार बीघा जमीन के कर वसूलने। जब वो पहले घर में गये, वहाँ एक विधवा अपने बीमार बेटे को गोद में लिए रो रही थी। मुनीम जी ने चश्मे को उठाते हुए कहा, क्यों री माई, कर्जा देना है कि नहीं? तब उस विधवा ने आहिस्ता से कहा, अब भी कर्जा बाकी ही रह गया तुम्हारा मुनीम जी? तुम्हारे कारखाने में काम करते-करते तो कब के मेरे पति इस दुनिया से चले गये। तो मुनीम जी ने कहा, चले गये से हमें क्या मतलब रे माई। ये तेरी गोद में जो तेरा बीमार बेटा सो रहा है, इसे कारखाने के बाकी कर्मचारियों के साथ लगा दे। वहाँ ये ठीक भी हो जाएगा और कर्जा भी अपने आप खत्म होता चला जाएगा। अरे बीमारी क्या ये तो एक बहाना है। मैं तो अभी से इसे ले चलता हूँ। साला कैसे सो रहा है? काहिल कहीं का। भूखे पेट माँ के तन की गुदड़ी से लिपटा है। चल उठ। वो बच्चा माँ! माँ! कहता रह जाता है। माँ बेटा! बेटा! कहती रह जाती है। मगर मुनीम जी का खाता खाली नहीं हो पाता और भर जाता है चीखों से, पत्नियों की गुहारों से। मगर ये हाथ भी उसके बेटे को ही निगल जाती है। कारखाने में काम करते-करते कब उसके हाथ मशीन के नीचे आ जाते हैं, पता भी नहीं चलता। इस विधवा का एक ही सहारा था, बीमार बेटा जो अपाहिज हो चला। अब कौन करता खेती? कौन जोतता हल? जब हल जोतने वाले हाथ ही कट चुके थे। सारी जायदाद मुनीम जी के खाते में समा जाती है। मुनीम जी चश्मा सम्भालते हुए दूसरे मकान की ओर चले जाते हैं जहाँ एक बूढ़ा-बेसहारा अपने परदेश गये बेटे की एक झलक को तरस रहा होता है। मुनीम जी पूछते हैं क्यों लाला बाबू कर्जा देना है कि नहीं? या ये मकान भी दर्ज कर दूँ अपने खाते में? अँगूठे के निशान जब जी चाहे लगा देना। तब लाला बाबू रोते हैं और कहते हैं मुनीम जी! कितनों की हाय लोगे तुम। एक बेटा है तुम्हारे पास। कहीं उसे हमारी हाय न खा जाए। तब मुनीम जी कहते हैं, सही बात पे हाय की बात क्यों करते हो लाला बाबू? बेटे को परदेश भेजते समय कर्जा नहीं लिया था सेठ साहब से। लिया था मुनीम जी! मगर बेटे की कमायी के आधे से ज्यादा हिस्से तुम हर माह ले जाते हो, लाला बाबू ने कहा। तो मुनीम जी बोले, ऐसी बात मेरे और सेठ साहब की समझ में कहाँ आती है लाला बाबू! हर वक्त तो लेते ही थे पैसे तुम हमारे सेठ साहब से। जब तुम्हारी पत्नी बीमार पड़ी थी तुमने सौ रूपये नगद लिये थे हमारे सेठ साहब से की नहीं। उन्होंने तब अपनी दौलत पे ममता न दिखाई थी ये सोच कि पैसा लाला बाबू हड़प लेगा। सोचो तब उस पैसे से तुम्हारी पत्नी अच्छी हुई थी कि नहीं। तो लाला बाबू बोले अगर अच्छी हुई होती मुनीम जी तो मेरे घर में भी रोटी पक रही होती। मगर नहीं, तुमने जब सौ के पाँच सौ माँगे, मेरी पत्नी सदमे से गुजर गयी। बेटे पर भी इस बात का असर पड़ा। वो पहले ज्यादा कमाता था। मगर अब कमाते, कमाते थक गया है। उसके सर पे माँ की बीमारी का कर्जा दर्ज है तुम्हारे बही-खाते में। फिर बेईमानी का रूपया ले जा रहे हो तुम मेरे घर से इस बात का गम है उसे। उसके साथ

रहने वाला एक साथी आया था जो कह रहा था कि तुम्हारा बेटा बहुत कमजोर हो गया है लाला बाबू? उसे वापस बुला लो। अब उससे अच्छी कमाई नहीं हो पायेगी। मगर मैं बूढ़ा, स्वार्थवश बेटे को बुला नहीं पा रहा हूँ क्योंकि तुम हर महीने बही-खाते लेकर आ जाते हो ये कहने कि लाला बाब, मेरे बही-खाते में तुम्हारे अँगूठे के निशान मौजूद हैं कि तुमने सेठ साहब से पाँच हजार रूपया उधार लिया है। अब इसका ब्याज बढ़कर आठ हजार हो गया है कब देते हो? मुनीम जी! इतने पैसे दिये मैंने तुम्हें, कहाँ दबा दिये? तब मुनीम जी कहते हैं, कहते हो कहाँ दबा दिये? ये जो हर महीने खाते हो। ये किसके घर से आता है? कहाँ आता है मुनीम जी? जबसे तुमने कहा कि बेटे की आधी कमायी हमारे बही-खाते में दर्ज कर दो सेठ साहब तुम्हें दो वक्त का खाना दे दिया करेगें, तभी से आजतक भूखा सो रहा हूँ। भूखे सो रहे हो लाला बाबू। मगर क्या करूँ? कर्जा ही इतना ले लिया है तुमने। सोचो कर्ज का ब्याज भी तो बढ़ता है न खाते में । तो लाला बाबू, अगर दो वक्त के खाने में कुछ कमी भी पड़ जाए तो खालो और भजन-कीर्त्तन करो भगवान के दरवाजे पर। तो लाला बाबू बोले, क्या भजन-कीर्त्तन करूँ मैं मुनीम जी? जब पेट भूखा हो, अँतड़ियाँ सिकुड़ गयी हो तो? तब मुनीम जी ने अपना चश्मा चढ़ाते हुए कहा, कब आ रहा है तेरा बेटा, लिख इस बही-खाते में क्योंकि तू अब घर से बेघर होने वाला है। इतनी देर से तेरी बकवास सुन रहा हूँ। साला बनता है लाला बाबू और कर्ज के नाम पर खाली मकान गिरवी रखता है सेठ साहब के पास। मगर ये सब सुनने को लाला बाबू बचे ही कहाँ थे। जब उन्होंने सुना कि मकान हाथ से चला गया तो वो भी दुनिया से चले गये।

तो ये थे मुनीम जी के बही-खाते के किस्से कि बही-खाते में मुनीम जी ने इतनी जिन्दगियाँ अँगूठे के नाम पर दर्ज करवायी थी मगर कर्जा खत्म न हो सका। एक दिन वो भी आया जब वो मुनीम जी भी उसी लाला बाबू की तरह बैठे-बैठे गुजर गये। मगर उनके बही-खाते की उम्र और लम्बी हो गयी। एक मुनीम जी तो मर गये। मगर ऐसे कई मुनीम फिर आ गये उस गाँव में सेठ साहब का कर्जा वसूलने और हर बेबस के दिल से हाय ही निकलती रही। मगर इन लोगों की हाय से न मुनीम जी मरे, न मुनीम जी का बेटा मरा। मरे तो वो लोग जिनके बेटे की कमायी दौलत मुनीम जी ने छीन ली थी।

जीविका चलाने वाली ये मिट्टी पल-पल बारूद के ढेर में सोती जा रही है। कितना सुहाना कल था वो जब मिट्टी को माथे का तिलक माना करते थे लोग। आज वो ही मिट्टी कब्र में सोती जा रही है। आज न मिट्टी की कोई कद्र है, न कोई अहमियत। एक जमाना ऐसा था जब मिट्टी की लोग पूजा करते थे। मिट्टी को अन्नदाता, जगतजननी माना करते थे। आज उसी मिट्टी की ये दास्तां कि उसका अस्तित्व ही मिटता जा रहा है। जगह-जगह सड़के बन रही है, कारखाने खुल रहे हैं और वो मिट्टी दफन होती जा रही है ईंटों के ढेर से, बारूदों के ढेर से।

तो कितने युग बदल गये होंगे आज पर मिट्टी के रंग नहीं बदले। इन्सान बदल गये पर मिट्टी की खुशबू नहीं बदली। आज जगह-जगह सैनिक तैनात हैं मिट्टी का कर्ज उतारने के लिए। मगर ये सैनिक एक हैं और मिट्टी को रौंदने वाले अनेक। मिट्टी बेचने वाले दलालों की कोई कमी नहीं रही आज। लोग ये भूल गये कि हम मिट्टी नहीं बेच रहे, अपनी जन्मदायी माँ को बेच रहे हैं। पर इतनी श्रद्धा कहाँ किसी के दिलों में? जब माँ ही बिक गयी तो मिट्टी तो फिर भी मिट्टी थी। सिर्फ इस भारतीय मिट्टी की बात नहीं कर रही हूँ मैं। मैं तो पूरे कायनात की मिट्टी की बात कर रही हूँ। तो क्या हुआ? देश-देश बँट गये। मगर मिट्टी तो नहीं बँटी। ये सच है कि आधी मिट्टी हिन्दू ले गये, आधी मुसलमान। मगर मिट्टी मजहब को कहाँ मानती है, जाति-धर्म कहाँ पहचानती है? मिट्टी तो औलादों के चेहरे की काली और सफेद स्याही को पढ़ना चाहती है। सफेद चेहरेवाले लोग आये थे न चंद सालों पहले हमारी मिट्टी खरीदने और कुछ सेठ-साहूकारों और मिट्टी के दलालों ने मिट्टी बेच भी दी। मगर हमारी मिट्टी ने कर्ज चुकाने वाले ऐसे कई नौजवान माँगे ऊपरवाले से। उन्होंने उनकी प्रार्थना स्वीकार की और भेज दिया सही जवान जिस्म, जवान ताकत, नौजवान हिन्दू, नौजवान मुसलमान। मगर ये हिन्दू नहीं रहे। ये हिन्दू भी मुसलमान बन गये आजादी की जंग में। ये मुसलमान भी मुसलमान नहीं रहे थे आजादी की जंग में। सब एक से हो गये थे और चोला उतार दिया सफेद मुखौटों में लिपटे फिर्रंगियों के दिलों से। वही मिट्टी जब आजाद हुई कुछ हिन्दूओं ने अपनी ममता दिखायी कि मिट्टी हमारे पास धरोहर बनकर रहे। हम साथ-साथ रहें। मगर मुसलमानों के दिलों में मिट्टी को बाँटने की बात पनप गयी। न हिन्दू अपनी बात पर अड़े रह सके, न मुसलमान। शायद देश के सारे सपूत शहीद जो हो चुके थे अपनी मिट्टी की आन और शान में। तभी तो बँटवारा हुआ हमारे बीच। कुछ मिट्टी यहाँ रही, कुछ पाकिस्तान चली गयी। कुछ किस्से-कहानी यहीं रह गये, कुछ के रंग बदल गये। उन्होंने अपने-अपने दिलों में अपनी-अपनी जातिवाद की कहानी को बयां होने दिया। हमारे पास रह गये एक छोटी सी मिट्टी के छोटे से टुकड़े जिन्हें हमने सींच-सींच कर सोना उगाया। हमने चावल बोये, गेहूँ बोये और मिट्टी से सोने के ढेर निकले। मगर वो ढेर अब इतनी मँहगी हो गयी कि भूख से मरने वाले इसी मिट्टी में दफन होते जा रहे हैं। कुछ नेताओं ने मिट्टी की उपज को इतना मँहगा कर दिया कि न चावल खा सके गरीब लोग, न ही रोटी खा सके। तो वो जिन्दा कैसे रहते? आज मिट्टी सिसक रही थी और कह रही थी कि मेरे बच्चों मत रो! मैं शांत करूँगी तेरी

भूख को। मैं तुम्हें फिर से रोटी दूँगी। मैं तुम्हें फिर से अनाजों के ढेर पे सुलाऊँगी। कोई गरीब नहीं रहेगा हमारे बीच। मगर आज ये सुनने वाले कान बहरे हो चुके हैं। कौन सुने मिट्टी की आवाज को? इन कानों को तसल्ली के दो शब्द नहीं, खाने को रोटी चाहिए। गरीबों की मिट्टी अमीरों के घर में रो रही थी गिरवी पड़ी हुई और अमीर उसपर अनाज उगा बेच रहे थे मँहगे दामों में। कर्ज की रकम बढ़ती जा रही थी। सेठ-साहूकार अपने-अपने खलिहानों में गरीब की मिट्टी ढो रहे थे और गरीब उनपर अँगूठा लगाते जा रहे थे। अँगूठे के निशान से एक दिन पेट भरने वाले अनाज मिले। दूसरे दिन अँगूठा लगाने पर दूसरे दिन का खाना मिला। मगर जब अँगूठा लगाने वाले हाथ ही मिट गये तो अँगूठा कौन लगाता। अँगूठा साहूकारों ने उनकी पत्नी का माँगा, उनके बच्चे का माँगा और मिट्टी अँगूठे के निशान में दब गयी। रह गयी भूख से बिलखती माँ, भूख से बिलखते बच्चे। रह गये बूढ़े लोग, बूढ़ी आत्माएँ, बूढ़े किस्से और चले गये मिट्टी के खरीदार किसी और घर को तलाशने मिट्टी को अँगूठे में बदलने के लिए। मगर ये मिट्टी इतनी भी कम नहीं थी कि बिक जाती। जितनी बार अँगूठे लगे उसके कलेजे पर उतने हजार एकड़ बंजर जमीन मिट्टी के ढेर बनती गयी। खेती करने वाले हाथ कमजोर न हुए। गरीबों से जब उनकी मिट्टी छीन ली गयी, उन्होंने रेत को अनाज उगानेवाले जमीन की तरह सींचना शुरू कर दिया। मेहनत रंग लायी। यहाँ भी पौधे उगे। मगर मिट्टी के खरीदारों की नजर उसपर भी पड़ गयी। वो वहाँ भी पहुँच गये। मगर मिट्टी खरीदते-खरीदते वो नहीं थके और गरीब, बेबस, लाचार लोगों ने भी मिट्टी को अँगूठे के निशान में बदलना नहीं छोड़ा। वे गरीब थे तो क्या उन्हें भूख नहीं सताती थी और मिट्टी सिसकती उन्हें अपनी-अपनी गोद में सुलाती जा रही थी। कोई कब्र माँ की थी, कोई बाप की, कोई पत्नी की, कोई बच्चे की और कब्र की मिट्टी बार-बार उन्हें ढँकते हुए यही सोच रही थी कि मैंने किसी को ढँकने में भूल तो नहीं की। कोई नंगा तो नहीं रह गया और इस तरह मिट्टी के कलेजे से एक नहीं, दो नहीं, कई हजार कतरे आँसू बहे। वो फटती चली गयी और बारूदों के ढेर में विलीन होती गयी। उससे और लोगों की भूख-प्यास देखी न जा सकी।

एक दिन ऐसा भी आएगा जब जमीं से मिट्टी का निशान मिट जाएगा। लोग अपने-अपने जिस्मों को मिट्टी में दफन होते नहीं देख सकेगें। उन्हे रूपयों-पैसों की ढेरें जलाएगी। शायद ये मिट्टी बेचनेवाले, ये मिट्टी खरीदनेवाले पैसे खाके ही जिन्दा रह पायेंगे। इन्हें भूख नहीं होगी रोटी की। ये रोटी की जगह पैसे खायेंगे। ये पानी की जगह पैसे पीएँगे और यही सिलसिला एक दिन वहाँ तक जाएगा जहाँ तक की मिट्टी की हदें गयी थी और जहाँ से वो बंजर बन वापस आयी थी।

भक्तिभाव से रची गयी ये ममतामयी धरती जाने कितने लोगों का बोझ लिये चल रही है। कहीं पर बेबस लोगों की हाय तड़पा रही है इसे, तो कहीं पर रोते-विलखते बच्चों के आँसू। कितना कुछ सहन करना पड़ रहा है इसे। कहीं बीमारी, कहीं लाचारी, कैसे बोझ सहे ये एक साथ इतने गमों का? ये कौन सोचे, किसको पता।

जाने कितनी सदियाँ बीती होगी। धरती पे जन्में जाने कितने देवता-दानव, पशु-पक्षी, अपने-अपने साथ कुछ लेकर चले गये होंगे। पर इसे कौन ले जाए जिसे कि चलना ही नहीं आता। जिसने कि कभी चलना ही नहीं सीखा। सब तो इसपे ही चढ़कर आगे जाते रहे और बेचारी मौन बनी रही। कैसे बोलती ये? ये तो प्राकृतिक सम्पदा थी। इसको तो रचा ही गया था इसीलिए। इसको गढ़नेवाले ने तो जाने कितना बहलाया-फुसलाया होगा इसको। पर क्या मालूम था उसे कि यहाँ आकर उसे इतने दुख सहने पड़ेंगे। कीड़े पड़ेंगे उसकी देह में, मैले बहेंगे उसके तन पे। पानी की गड़गड़ के साथ हर कतरे में समाती जायेगी वो। पर यहाँ वो सबकुछ मिला उसे देखने को जिसे उसने देखा ही नहीं फकत, उसने सहन भी किया। जाने कितनी दफा बंजर भी बनी वो। कितनी हजार दरारें पड़ी उसमें, पर उफ तक न किया उसने। कैसे करती वो उफ जब उसपे चलने वाले इन्सान ही दम तोड़ते चले जा रहे थे। मानव देह तो पहले ही तड़प रही थी, मानव आत्मा तो पहले ही तड़प रही थी। बच्चों के खेले जानेवाले लट्टूओं के बिलों में भी जाने कितने दरार पड़ चुके थे। पर उन्हें अब वो खेल खेलने में मजा कहाँ आ पाता था। वो लट्टूएँ घुम ही नहीं पाती थी इन दरारों के बीच। फिर इस बंजर पड़ी धरती को क्यों न कोसते वो? कोसते ही चले जा रहे थे। मौन वाणी से सब कुछ सहन करती जा रही थी ये। क्यों पोछे वो अपने आँसू? कैसे देखे वो इनकी तरफ जब हजार कतरे पहले से ही गिरते नजर आ रहे थे उसे। उसने फिर खामोशी की चादर ओढ़ ली। प्यास के मारे पंछियों के गले सूख रहे थे। वो बार-बार नदी-नालों की तरफ देखने चले जाते थे और फिर लौट आते थे।

ये सब तमाशे धरती चुपचाप देख रही थी। प्यास से तो उसका भी गला सूख जाता पर इन मैले मल-मूत्रों को जो पीती चली जा रही थी लगातार वो। तो उसे अपनी प्यास का कभी एहसास ही नहीं हो सका था। 'राम नाम सत्य' करते कितने लोग अर्थियों को लिये चले जा रहे थे और खोद रहे थे मिट्टी। पर धरती कुदाल ही अपनी तरफ खींच ले जाती थी। वो हाँफ तो जाते थे पर मिट्टी खोदना नहीं छोड़ते थे। वो कैसे छोड़ते अगर लाशें पड़ी रह जाती जमीन पर तो सड़ाँध नहीं फैल जाती चारों तरफ। ये बीमार नहीं पड़ जाते। फिर कैसे न चीर देते ये धरती का सीना? आखिर यही तो एक सामान बचा था आज उनके पास जिससे उन्हें मोह नहीं था। अपने मरते बच्चे कैसे न प्यारे लगते उन्हें? अपनी उजड़ती दुनिया का गम कैसे न होता उन्हें? अपनी हस्ती के लूट जाने का दर्द कैसे न मिल पाता उन्हें। ये सब तो उनके अपने थे न? गम भी अपने थे, आँसू भी अपने ही थे। फिर कैसे किसी और को अपना मानकर उसकी तरफ भी देख लेते वो। नहीं देखा उन्होंने उसकी तरफ। नहीं करना चाहा उन्होंने ऐसा क्योंकि ये धरती एक उनकी शय नहीं थी। ये तो जाने कितने लोगों की सम्पदा बन विभक्त हो चुकी थी। किसी के पास दो बीघा बन उनकी सम्पदा बन खुश हो

रही थी वो। तो कोई सौ दफा पैसे का लालच देकर खरीद ले जा रहा था उसे। किसी के ओठों से आवाजें आ रही थी कि मेरे पास सौ एकड़ जमीन है। खुदाई का काम अभी से शुरू करवा दो। मील बनबाना है मुझे इसपे। पैसे से खरीदा है हमने इसे। बेचारी धरती खुदवायी भी गयी। मीलें भी बनी इसपे। पैसे की आमदनी भी हुई लोगों को। आते-जाते लोगों की गहमागहमी भी देखी इसने। पर जो सब देख रहे थे, वो ही तो थे ये सब। पर ये कौन देख रहा था कि कितनी ऊँची ईमारतें थी ये जिसका बोझ इस धरती को सहन करना पड़ रहा था अकेले। पर कैसे कहे वो और किससे कहे। सब तरफ से तो उनकी ही आवाजें आती चली जा रही थी। पर धरती ने बोला था उस वक्त एक बोल। हँसी थी उसने एक हँसी, ममता की हँसी। खुश हुई थी वो ये सोचकर कि यहाँ कोई रोनेवाला नहीं। यहाँ कोई भूखा नहीं, यहाँ कोई नंगा नही। सबके पास खाने के जाने कितने सामान हैं। यहाँ सबके पास पहनने को जाने कितने तरह के वस्त्र हैं। पर उसकी खुशी, उसकी ये हँसी भी तो क्षण भर की ही थी जो ओठों पे ऐसे ही अनायास किसी तरफ से आयी भी थी और आके चली भी गयी थी। बिजली की तरह चमक दिखाई दी थी उसे। उस धरती से लावा फटा था। एकाएक वो इमारतें डोलने लगी थी और बारी-बारी से सब गिरती चली जा रही थी। कोई इन बिजली के तारों से छूकर मर रहा था, कोई इन दीवारों के बीच दबकर। अभी-अभी जो हँसी की आवाज गूँज रही थी यहाँ, जो खुशी का महौल था यहाँ सब हाहाकार में बदल चुका था और धरती एक बार फिर से अपने आप को इन बोझों के तले दबता पा रही थी। पर कैसे कहे वो किसी से? कुछ कहे भी तो किससे? यहाँ तो सुननेवाला कोई था ही नहीं। चारों तरफ तो लाशें-ही-लाशें बिखरी पड़ी थी। तो कैसे इनके कुछ बोलने का इन्तजार करे वो? कैसे इनसे कुछ कहने की राह देखे वो जब जिन्दा लोगों से कुछ कह ही न सकी वो। तो क्या बात करना फिर इन मुर्दों से जिनकी जुबान ही एक कहर बन बरस रही थी उसपर। जिनकी आँखें ही तरेरकर हजार सवाल पूछना चाह रही थी उससे।

यही तो कहानी थी इस धरती की जिसको मौन रहने को कहा गया है। जिसने बोलने का, कुछ कहने का हक ही गंवा दिया है। मिट्टी की है न वो, तो मिट्टी ही रहेगी न? मिट्टी से हटकर इन्सानी रूह तो नहीं बन जायेगी न? उसकी तरह तड़पना तो नहीं सीख जायेगी वो और सीखकर भी क्या करेगी जब कोई समझेगा ही नहीं उसके दर्द को।

साया

जिन्दगी एक साया है और इन्सान वजूद। वो भाग रहा है इस साये से दामन बचाता हुआ और इसी भाग-दौड़ में उसके हाथ के कई सहारे छूट रहे हैं उससे। कभी बदनामी का साया वजूद से लिपट जाता है, कभी जगहँसाई का और इन्हीं सायों के बीच पीछा छुड़ाता इन्सान कब कितनी दूर निकल जाता है, नहीं जानता वो। एक जमाना था जब ये साया नन्हा सा था पीठ पीछे उगता हुआ। चमकीली धूप में, तपती दोपहरी में धीरे-धीरे वो साया बढ़ता चला गया और फिर एक दिन वो साया एक स्याह अँधेरा ले आया जिन्दगी में और वो अँधेरा घिरते-घिरते इतना भयानक हो गया कि जिन्दगी ही अँधेरी रात बन गयी इन्सान की। वो तड़पने लगा, सिसकने लगा। कहने लगा मुझे इस साये से बाहर निकालो। मगर पास में तो कोई था ही नहीं सिवाय अँधेरे के। रोशनी तो बुझ गयी थी और चिराग जलाने को हाथों में माचिस की तीली भी नहीं थी और वो तड़पता हुआ रेंग रहा था जमीन पर और फिर रेंगते-रेंगते सुबह हो गयी। जब उसे रोशनी दिखी सुबह की वो हँसने लगा! अँधेरा चला गया, जिन्दगी बदल गयी हमारी और फिर वो हँसता हुआ कमरे से बाहर आ गया। मगर जैसे-जैसे घड़ी की सूई बढ़ती जा रही थी, उसका वजूद भी बढ़ता जा रहा था। धूप तेज हो चली थी। अब उसकी पीठ पीछे फिर एक साया आकर खड़ा हो गया था। वो एक बार फिर उससे पीछा छुड़ाने लगा। मगर साया था कि बढ़ता ही जा रहा था। वो एक बार फिर चीखने लगता है, मेरे पीछे से इस साये को हटाओ। देखते नहीं ये साया मुझे आगे बढ़ने से रोक रहा है और इसी बीच शाम एक बार फिर ढलने लगती है।

साये से पीछा तो छूट जाता है उसका मगर फिर एक अँधेरी रात आकर उसके दामन से लिपट जाती है। वो फिर कहता है, मुझे रोशनी चाहिए। इस अँधेरे में मेरा दम घुटता है। मगर उसके इस शोर को सिवाय अँधेरी रातों के कोई नहीं सुन पाता और उस साये को हँसी आती है उसपे। मुझसे पीछा छुड़ाना चाहता है तू मगर मैं तो चौबीसो घंटे तुम्हें तलाश रहा था। मगर क्यों? तुमसे लिपटने के लिए, तुम्हारी जिन्दगी में पनाह लेने के लिए। इस अँधेरी रात में कोई नहीं है तुम्हारे साथ सिवाय अँधेरे के और वो इन्सान रो पड़ता है। फिर से चीखता है, चिराग जलाओ। देखते नहीं अँधेरा है मेरे कमरे में। मगर रात के अट्टहास में छुपे इस शोर में गहरे साये उससे उसकी रोशनी छीन लेते हैं। अँधेरे कमरे में चिराग नही जल पाता और रात भर वो इन्सान तड़पता ही रह जाता है। सुबह फिर होती है। वो फिर खुश होता है अपनी जिन्दगी में आयी इस रोशनी को देखकर। मगर उसपे तो कई निगाह हँसते चले जा रहे थे। वो जाता भी तो कहाँ। दोपहर होने वाली थी, साया फिर उसकी पीठ, पीछे खड़ा होने लगा था और उसके इस खुशी के क्षण को ले जाने को वो बेचैन था जिससे कि बचकर अभी इन्सान ने सुकून की एक साँस ली थी। एक बार फिर उसकी जिन्दगी में वो रात आ गयी जिससे बचकर वो जाना चाहता था सुबह के पास। मगर सुबह ने दोपहर दे दी और दोपहर ने एक साया दे दिया उसे और जब शाम हुई उसने उसे एक अँधेरी रात दे दी और वो तड़पता-सिसकता उस साये के बीच खड़ा रोता रहा मगर साये से उसे मुक्ति न मिल सकी ।

(241) कनक : स्मृति पुष्प

वो भागता-भागता इतनी दूर चला गया जीवन से कि सामने एक बार फिर अँधेरा-ही-अँधेरा घिर आया उसके और वो यही कहता इस संसार से चला गया कि मुझे साये से डर लगता है, मुझे बचाओ। मगर कोई क्या साये से बचा पाता उसे? वो साये को अपने पीछे पाते-पाते खुद एक साया बनता चला गया। आज उसके पास जिन्दगी ही नहीं थी, सिर्फ साया ही था उसके पास जिससे कि वो ये कहता चला जा रहा था कि साये को समझ पाना हमारे बस में नहीं और वो खुद साया बन किसी के पीछे लग गया भटकने के लिए।

फिर सावन आया। विरहनें निकली घर से अपने-अपने पी को आवाजें देने, ऐ सावन! मेरे पी परदेश गये हैं। उनतक मेरा ये संदेश पहुँचा दे कि मैं रिमझिम फुहारों के इस वेले में जल रही हूँ, सुलग रही हूँ। तू आया भी, आके चला भी गया। पर मेरी जलन खत्म न हो सकी। तब सावन कहता है, मैं तुम्हारे पी तक संदेश तो पहुँचा ही आता हूँ ऐ विरहनों! पर मैं उनके खाली खत का तुम्हें क्या जवाब दूँ जिसमें वो कहते है मेरी प्रेमिका से कहना सावन फिर आयेगा। मैं अगले सावन में आ जाऊँगा।

वक्त बदल जाता है। सावन ऐसा कह फिर चला जाता है। बागों के झूले फिर खाली पड़े रह जाते हैं। अब न सिर्फ विरहनें रास्ता देख रही थी सावन का, बल्कि पूरे बाग की कलियाँ, सारी नदियाँ, सारे लोग सावन का रास्ता देख रहे थे क्योंकि हरियाली बंजर हो चली थी। बाग सूखा पड़ा रह गया था। विरहनों के गीत धीमे हो गये थे। झूलों की रौनक खत्म हो चली थी। सब सावन के इन्तजार में बैठे थे। ऐसे में बादल घिर आये। उमड़-घुमड़ कर होने वाले बादलों के शोर से वातावरण पुलकित हो गया। हल्की सी रिमझिम बरसात होने लगी। सारी विरहनें घरों से निकल-निकल कर बगीचे में आ गयी और कहने लगी, सावन! तू फिर आ गया। मेरे पी को सन्देश दे आया था न तू? अबकी उन्हें लेके ही आया होगा न?

तब सावन फिर कहता है उन विरहनों से कि मैं सावन हूँ। मैं बागों में झूले, नदियों में पानी की धार और तुम्हारे आँगन में बहार ले आया। मगर मैं कैसे कहूँ कि मैं तुम्हारे पी को फिर से लाना भूल गया। विरहनें उदास हो जाती हैं। सावन के बरसते पानी उनके जिस्म को तो भिगो रहे थे, मगर उनकी आत्मा जल रही थी। वो बार-बार सावन को कोस रही थी। सावन बार-बार सिसकता हुआ यही कह रहा था कि ऐ विरहनों! अब तो मैं रो रहा हूँ। तुम्हारे दर्द से मैं दुखी हूँ। मुझे मत कोस। अगर मेरे बरसने से तुम्हारे जी की जलन शांत होती है तो मैं बरसता रह जाता हूँ। तब विरहनें मुँह फेर लेती है सावन से। सावन फिर चला जाता है। मगर विरहनों की पुकार उनके प्रियजनों की तरफ नहीं जाती है। अपने-अपने पी के रास्ते देखते-देखते वो शृंगार करना भूल जाती है। अब तो वो न गजरे लगाती हैं न फूलों की महक से पुलकित होती हैं, बस रोती हैं। उनकी जुदाई की तड़प, उनकी जुदाई का गम देखता है सावन और बस यही कहता है, मेरी सखियों! तुम्हारे पी तुम्हें भूल गये। शायद तुम्हारे पी के नगरों में सूखा पड़ गया है। तभी तो उन्हें तुम्हारी आवाज नहीं सुनाई देती। तू भी भूल जा उन्हें। मैं बरस रहा हूँ। मेरे पास आके अपने जी के जलन को शांत कर।

ऐ विरहनो! मैं जब लौटकर चला जाऊँगा, दुबारा मेरे आने में वक्त लगेगा। तू मुझे भी भूल जा, अपने-अपने पी को भी भूल जा। इतने सावन बीत गये तब भी वो नहीं आये। शायद उन्होंने तुम्हारा शृंगार, तुम्हारे गले का हार किसी और नारी को पहना दिया है। शायद उन्हें किसी और से प्यार हो गया है। शायद उनके लिए, उनके जीवन में तू जरूरतमंद चीज नहीं रही।

ऐ विरहनों! तू तड़पना भूल जा, सिसकना भूल जा। न मैं पहले आऊँगा, न बाद में। मैं तो जब भी आऊँगा, तुम्हारा जी जलता ही रहेगा। मैं आज भी बरसकर जा रहा हूँ। मैं कल भी बरसकर चला गया था। मगर न तूने बागों के झूलों से दिल लगाया, न वसन्ती

मौसम से, न दिल में उगती झाड़ियों से। तुने तो दिल लगाया अपने-अपने साजन से, जिनके लिए ऐ विरहनों! तुम्हारी तड़प बेकार है। तुम्हारी बेकरारी मैं बार-बार उन तक पहुँचाता हूँ। वो बार-बार खाली खत का जवाब भेज देते है जिसे तू जब भी खोलकर पढ़ती है सिवाय आँसूओं के कुछ नहीं पाती तू। मैं, सावन साल में एक बार ही आता हूँ। ऐ विरहनों! मेरा रास्ता निहारना छोड़ दो। मैं जब भी आऊँगा, तुम्हारे सामने बागों की बहार ही लाऊँगा, पतझड़ नहीं देता मैं, पतझड़ की वीरानी नहीं देता मैं। मगर तू है कि मेरे आने पर तड़पती है।

यारी बचपन की

कितनी मशहूर होती है यारी बचपन की। बात-बात पे रूठना, लड़ाई-झगड़े करना, किसी की शिकायत लेकर बड़े हाकिम चाचा के पास जाना, किसी को माँ की डाँट खिलाना, किसी को डंडे के मार से बचाना।

कैसा है ये रिश्ता जिसका कोई छोर नहीं। किसी को आदिल कहकर बुलाना, किसी को रूखसाना, किसी को शमा कहकर बुलाना, किसी को परवाना। सब एक ही शय का नाम है, बचपन का। नानी कहती है, एक किस्सा सुनोगे बेटे! मामी कहती है रूठकर मेरे घर से जाओगे बेटे और ताई कहती है, मेरे आँगन में खेलोगे बेटे? सब अलग-अलग बातें करते हैं और सबकी बातों की समझ एक है, ये बचपन है।

कैसा है ये अजब अफसाना बचपन का? पापा कह रहे हैं धूप में जायेगी तो पाँव तोड़ देगें। माँ कह रही है, लू लग जाएगी और दिल है कि कह रहा है, वही कर जो पापा नहीं कहते हैं करने को। वही कर जो अम्मा नहीं कहती है करने को। धूप तेज सही, धूप में यार मिलेंगे। मौसम कौन सा बदलने वाला है, परिन्दे कौन से वापस आनेवाले हैं। सूरज. कौन सा डूबनेवाला है, सखियाँ कौन सा घर में बैठकर गीत गानेवाली है, बादल कौन सा बरसनेवाला है, पानी कौन सा कागज को बहने से रोक रही है। जब ऐसा कुछ है ही नहीं तो फिर उन बातों की परवाह कैसी? किसने क्या कहा, किस बात की फिकर। माँ की डाँट की कैसी शर्म, पापा की क्रूर आवाज का कैसा डर? ये तो बचपन है। कैसा विचार इसपे, कैसी उलझन इसपे, कैसा मातम इसपे। अगर पेड़ की डालियाँ ऊपर चली जाये तो नीचे देखने की कैसी आदत? कैसे हालात बदलते रूतों में जीवन की। ये तो एक खेल है फकत बचपन का। मास्टरजी से शिकायत कैसी? बच्चों के साथ घूमने-फिरने पर टोका-टोकी कैसी? कैसी हार और कैसी जीत? कैसे रिश्ते और रिश्तों की कैसी कड़ी? एक तरफ चिराग रखा है तो दूसरी तरफ अँधेरे की ज्योति कैसी? किसका नाम बचपन है और किसका जवानी। फूलों पे मंडलाती तितलियों के झुंड के पीछे भागने में कैसा खेल, कैसी अनुभूति? बाग-बाग घूमकर कली को ढूँढने में कैसा मजा? है पता किसी को? एक हाथ में केले, एक हाथ में केले के छिलके। फिसल जाने का फिर कैसा डर? ये तो बचपन है, इसकी यारी का मतलब कैसा? एक से आज मिल लिया। कल किसी दूसरे से वो मुझे मिला देगा। परसों हमारी एक जमात बन जायेगी। अम्मा रोटी पकायेगी और हम रोटी खाने को थाल लेकर बैठ जायेंगे। किसी दूसरे के साथ खाने पर अम्मा की नफरत भरी निगाहों के वार से बचने की उम्मीद कैसी? खाना तो मिल ही जायेगा। खाने की जिद कैसी? कैसा है यह पागलपन बचपन का? जगह-जगह खेलने जाना, कभी पेड़ पर चढ़ जाना, कभी पीपल के पत्तों को तलाशना, कभी हाथ से पानी छानना बारिश के मौसम में, कभी बगैर छाते के भीगना। यही सब तो होता है उस जीवन में। किसी के आँगन से मिट्टी चुरा लेना खिलौने बनाने को, किसी के घर में झाँककर देखना कि कोई जाग तो नहीं गया। किसी की बात लेकर बड़े हाकिम चाचा के पास जाकर कहना कि चाचा! चाची की कमर टेढ़ी हो गयी, आपको बुला रही हैं और फिर चाचा के खदेड़ने पर तेज-तेज कदमों से घर वापस आना और आकर छुप जाना।

कनक : स्मृति पुष्प

कैसा खेल था ये बचपन का? न किसी की बात की फिक्र, न मार का डर, न शर्म का पानी आता था निगाहों में तब न पानी के बह जाने का खतरा था। उस जमाने में हर चीज अपनी थी। माँ अपनी थी, ताई अपनी थी, मामी अपनी थी और नानी अपनी थी। अगर पराया था कुछ तो वो था जीवन जो बदलता जा रहा था उम्र के साथ। वो कभी एक किनारे पे ले जाके कहता था मुझे, दरिया में रवानी है, लहरों में जवानी है और उमंगों में एक कहानी है और जवाब में दौड़ पड़ते थे हम ये कहकर कि मौज तूफानी है यार। भाग यार भाग!

इतना कुछ था उस जीवन में, मगर सब पराया। अपना कहने को कुछ भी नहीं, न तन, न मन, न जिह्वा, न जुबान, न दिल, न दिमाग, न रिश्ता न बागवान। न किसी की जुदाई का डर था, न मौसम के बदलते मिजाज की शर्म, न आरजूओं के टूटने का डर, न दीये झिलमिलाने पर रोशनी की फिक्र। सब पराया था तब जब साथ में था बचपन का मीत और थी यारी बचपन की।

मैं एक तवायफ हूँ। कोठे की शान हूँ मैं। कुछ लोग मुझे इश्क कहते हैं, कुछ आशिकी। पर असल में मैं क्या हूँ? ये मैं भी नहीं जानती।

मैंने तो पल-पल यही देखा कि कोठे पे एक मर्द आया हाथ में पैसे की थैली लिये। वो मेरी अदा का खरीदार था और मैं बाजार। मेरी मालकिन ने मुझे चन्द रूपयों में उस आदमी के हाथों बेच दिया। मैं बिक गयी। वो मुझे खरीद ले गया। मैं क्या करती? मैं तो गुलाम बन चुकी थी उसके आगे। वो रोज कोठे पे आने लगा। कभी वो मुझे नाचने को कहता, कभी मुझे बिस्तर समझ मेरी गोद में सो जाता। यही सिलसिला चलता रहता है और फिर एक दिन उसके पैसों की कीमत खत्म हो जाती है। वो और पैसे लाने को कह चला जाता है। मुझे पलभर की आजादी तो मिलती है। मगर मैं ये देख जरा भी हैरान नहीं होती कि कोई फिर आया। वो मालकिन को कुछ ज्यादा ही पैसे दे गया। मेरी बोली लग चुकी थी। वो मुझे किसी दूसरे शहर ले जाना चाहता था नाचने के लिए। मैं मना न कर सकी। चल पड़ी उस अजनबी के साथ। रास्ते भर वो मुझे नोचता रहा। जब सफर खत्म हुआ, वो मुझे एक कमरे में ले गया जहाँ पता नहीं कितने मर्द थे। सबने मेरे साथ नाइन्साफी की। मैं शर्म से चेहरा भी न छुपा सकी क्योंकि मैं एक तवायफ जो ठहरी। मेरा तो पेशा ही यही था। कई दिन गुजर गये मगर मुझे आजादी नहीं मिली और फिर एक दिन मैं नाचते-नाचते गिर गयी और बेहोश हो गयी। मगर डॉक्टर नहीं बुलाया गया। मेरे लिये दाई को लाया गया जिसने मेरे पेट से बच्चा निकाला वो भी मरा हुआ। अगर वो जिन्दा होता तो किसका बेटा कहलाता। न मैं उसके साथ माँ का धर्म निभा पाती, न समाज में उसे नाम मिल पाता। इस तरह जब मुझे वापस लाया गया तो ठीक से सो भी न सकी कि एक और खरीदार आ गया। मैंने मालकिन के हाथ-पैर जोड़े तो उसने कहा, ठीक है! मैं यहीं तेरा और साहब का बिस्तर सजा देती हूँ। मैं तो गिर ही चुकी थी इस दलदल में जहाँ से बाहर निकलने का कोई रास्ता नहीं था। न मैं खुश हो पा रही थी, न मैं रो पा रही थी। पता नहीं क्यों, मेरे दिल में एक माँ बनने की, एक पत्नी बनने की चाहत जाग गई थी। मैंने इनकार करना चाहा भी तो न कर सकी। ये मेरे पेशे से गद्दारी होती क्योंकि एक बाजार में बिक जाने पर सामान की कोई कीमत नहीं रह पाती और तवायक भी कहीं किसी की माँ, किसी की पत्नी होती है। नहीं, ये तो महज एक झूठा ख्वाब सजा के रखा था हमने अपनी पलकों पे।

इस तरह मरते-मिटते मैं उम्र के 40 साल गुजार देती हूँ और फिर एक दिन मेरे बाल सफेद हो जाते हैं। मेरे खूबसूरत चेहरे पे झुर्रियाँ आ जाती है। अब मैं किसी की माँ, किसी की पत्नी क्या बनती, एक बूढ़ी तवायफ भी न बन सकी। मेरी बोली लगनी बन्द हो गयी। अब एक नयी तवायफ की चाहत हो चली थी उन्हें। मैं बाँझ और कलंकिनी का दर्जा पा चुकी थी।

कहाँ जाती अब मैं, रह जाती हूँ बीच सड़क पे अकेली किसी गाड़ी के इन्तजार में कि कोई मुझे एक मंजिल देगा। मगर अफसोस में आँखे रो देती है हमारी और यही कहती है कि तेरी मंजिल नहीं। तू एक बूढ़ी तवायफ है जिसके सारे कद्रदान मर चुके हैं। अब तुम्हें ले जाने कोई नहीं आयेगा।

रोटी

हमारे जीने का जरिया है, फकत दो रोटी। ये दो रोटी हम चाहे जहाँ से लायें, चोरी करें या फिर मेहनत-मजदूरी करें। इस दो रोटी के लिए हम क्या-क्या नहीं करते हैं? ये रोटी हमें कहाँ-कहाँ ले जाती है।

गरीब रोता है ये देखकर कि अमीर का बच्चा रोटी कुत्ते को खिला रहा है। वो हाथ बढ़ाता है और कहता है, बेटा! ये रोटी मुझे दे दो। मेरा बेटा भूखा है, वो मर जायेगा। मगर रोटी वो नहीं पाता, अमीर की फटकार पाता है। मगर भूख की मार ऐसी कि वो छत पे चढ़ जाता है और रोटी छीन लेता है। मगर खा नहीं पाता। अमीरों के हंटर उसके जिस्म पे इतनी तेजी से पड़ते हैं कि वो कराहता रह जाता है। उसकी भूख शांत करने को उसे रोटी नहीं मिलती। मिलते हैं घावों के निशान जिसे मिटाने को उसके पास पैसे नहीं होते, मरहम नहीं होते। इस रोटी की लालसा ने उसे इतनी बेदर्दी से मारा। इस रोटी की लालसा ने उसे जमीन से भी ऊँचा उड़ा दिया। वो अगर रोटी की चाहत न करता तो जमीन पे खड़ा होता। आज अपने आप को आसमान में उड़ाने की भूल न करता। इस रोटी ने उसे अमीरों से आँख लड़ाना सीखा दिया। मगर रोटी तो उसके नसीब में ही नहीं था। वो लड़खड़ाता हुआ वापस घर आ जाता है और दरवाजे पे गिर पड़ता है। उसकी पत्नी उसे दो बूँद पानी पिलाती है और कहती है, ये पानी कबतक पी पाओगे तुम? घर में पानी भी नहीं है। नहर भी अमीरों ने अपने नाम करवा लिया है। तब वो विवश, जख्मों से चुर आदमी लोटा उठा लेता है और कहता है, मैं पानी लेकर आता हूँ। मेरा बेटा जब सोकर उठेगा तो रोटी माँगेगा, पानी भी माँगेगा। मैं अभी उसके लिए पानी लेकर आता हूँ। तब वो बेटे के प्यार में ये भी भूल जाता है कि पहले ही उसके जिस्म पे घावों के इतने निशान पड़ चुके हैं अगर दुबारा गया तो जिन्दा वापस नहीं आयेगा। मगर वो फिर भी जाता है और नहर से पानी ले भी लेता है मगर पी नहीं पाता। अमीरों की गोली उसके जिस्म को छलनी कर देती है। वो वहीं मर जाता है। घर पर पत्नी इन्तजार करती रह जाती है, वो भी झूठा इन्तजार क्योंकि वो जानती थी कि वो मारा जायेगा। और थोड़ी ही देर में उसकी लाश भी आ जाती है। वो उसे अपने तन के फटे कपड़े से जला देती है, उसके पास तो कुछ भी नहीं था। बेटा जब सोकर उठता है, कहता है बाबा! रोटी! मगर बाबा तो जल रहा था। वो माँ को मारता है, तूने मेरे बाबा को जला डाला। वो विवश औरत कहती है, बेटे! तेरे बाबा तेरे लिए रोटी लाने गये हैं। मैं तो चूल्हा जला रही थी।

तो ये होती है विवशता। वो बेटा जब जिल्लत की मार सह-सह जवान हो भी जाता है तो वही बनता है, अमीर आदमी का गुलाम या फिर कहता फिरता है चोरी मेरा काम क्योंकि वो तो यही देखता आया था कि अमीरों के महलों में रोटी की कोई कमी नहीं। वो जिस दिन अमीर बन जायेगा, रोटी उसके पास होगी। वो दो रोटी चुराता जाता है, मुजरिम का खिताब पाता जाता है। इस रोटी की चाहत में पता नहीं, वो कितने अमीरों का खून भी करता जाता है। कानून की किताबें उसके कारनामों से भरती जाती है। मगर जब वो गिरफ्तार होता है, हँसता है। जब उसे कानून के कटघरे में खड़ा किया जाता है, एक ही सवाल पूछा जाता है, तूने इतने लोगों का खून क्यों किया? वो कहता है, ये खून मैंने नहीं किया। तो जज कहता है, ये चोरी किसने की? तो एक ही आवाज, मैंने चोरी नहीं की। फिर वो खामोश

हो जाता है। कानून सवाल-पर-सवाल करता जाता है। अन्त में वो कहता है, मैंने खून नहीं किये। मुझसे खून इस रोटी ने करवाये। मैं रोटी चुराकर भाग रहा था, कानून मेरे हाथों से रोटी छीन रहा था, हथकड़ी पहना रहा था। जज साहब! इस रोटी ने मुझसे मेरा बाबा छीन लिया। मेरी माँ बेवा हो गयी। आज रोटी की चाहत में मैं अपनी माँ से जुदा हो गया। मुझसे इतने गुनाह इस रोटी ने करवाये जज साहब! गुनहगार मैं नहीं ये रोटी है। ऐसा कह वो रो पड़ता है। मगर कानून के पास से उसे रहम नहीं मिलता। उसे फाँसी की सजा होती है।

तो इस रोटी की चाहत ने उससे जिन्दगी ही छीन ली। पहले वो बचपन में मरा। फिर भरी जवानी में उसे फाँसी पे लटकना पड़ा। तो क्या वो वाकई गुनहगार था, मुजरिम था, सजा का हकदार था? वो तो भूखा था और रोटी माँग रहा था।

खैरात की वेला

लोग आपस में बातें करते चले जा रहे हैं कि सुना है आज जो मालिक खैरात बाँटने आ रहा है, कहीं का राजा है। अरे भैया, राजा नहीं मंत्री है। अरे नहीं रे! मंत्री नहीं सिपाही है। अरे नहीं रे! सिपाही नहीं अन्नदाता ईश्वर है हमारे लिए। ऐसे ही बातें करते, आपस में बतियाते जाने वो लोग कब से जा रहे है। किसी की गोद में 2 साल की छोरी है, किसी का हाथ थामे 4 साल का बच्चा चला जा रहा है। किसी की बड़ी बहन, अपनी छोटी बहन का हाथ पकड़े है। किसी की ताई अपने भतीजे का हाथ अपने हाथ में लिये चल रही है। ये भूखे-नंगों की भीड़ है। ये बलखाती बेलों की झुकती डाले हैं जिन्हें आसमान पाने की लालसा है। जिनके दिलोदिमाग में अन्नदाता ईश्वर की छवि नाच रही है।

सब मस्ती में गाते-गुनगुनाते चले जा रहे हैं। किसी को प्यास भी सताती है अगर तो वो पानी का लोटा ऊपर वाले की तरफ बढ़ा देते हैं और कहते हैं कि हे ईश्वर! हे मालिक! एक बूँद पानी और दे दे हमारे लोटे में। हमें बड़े जोरों की प्यास लगी है। बादल उमड़-घुमड़ कर बरस पाने को बेताब हैं पर अभी आज्ञा नहीं मिली है उन्हें बरसने की और इनकी टोली में जाता एक फकीर सा आदमी कह रहा है खुदा झूठा है, ईश्वर झूठा है, अल्लाह का नाम भी झूठा है, अल्लाह की पुकार भी झूठी है और हौसला अफजाई करते लोग अपने पस्त हौसले को देख उन्हें कोस रहे हैं। किसी की छोरी रोटी माँग रही है, किसी का छोरा पानी, किसी की बहन अपनी सटी अँतड़ियों के लिए कह रही है दीदी! हमारे तो प्राण ही मिटते चले जा रहे हैं। बड़े बुजुर्ग उनसे कह रहे हैं, थोड़ा और आगे चल और कोई कह रहा है सब्र दे मेरे मालिक! सब्र दे! ऐ ऊपर वाले सब्र दे! मगर सब्र कब, कहाँ और कैसे हो किसी को? उनकी साँसे टूटती चली जा रही है। कुछ राह में दम तोड़ रहे हैं, कुछ आगे बढ़ने की हिम्मत बँधा रहे हैं एक दूसरे को। मगर वो अपने आप ही निराश भी होते चले जा रहे हैं। माँ की गोद में बेटी दम तोड़ रही है। ताई की उँगली थामे चलनेवाला भतीजा उनसे दूर चला जा रहा है ये कहते हुए कि अगर तुम्हारी उँगली पकड़ चलता रहा तो हमारी तो खैरात ही खत्म हो जायेगी। बूढ़े लाठी को और तेज चला रहे हैं और बड़े लोग अपने तन-बदन को गीला होता पा रहे हैं। उन्हें पेड़ों के झुरमुट अपनी छाया देने से इनकार कर रहे हैं और पत्ते उनकी नजर में गिर जाने को उताहुल हैं। कैसी है ये भूख की माया? कैसी है ये प्यासे मानव की अतृप्त आत्मा और कैसा है यह ऊपर वाले का दिया खैरात? नहीं मालूम। शायद इन भूखे-नंगों के काफिले उन्हें बढ़ते हुए रोक रहे हैं। शायद उनकी आत्मा प्यास मिटा पाने के गम में दम तोड़ रही है। मगर अफसोस किसे कितना है, नहीं पता। एक का खाली लोटा पानी के लिए शोर मचा रहा है। एक का खाली थाल उसे खैरात के लिए आगे गुजर जाने पर मजबूर कर रहा है उन्हें।

कैसी है ये राहों में दम तोड़ती मानव की अठखेलियाँ? ये शोर कैसा है उनके दिलों में? कैसी है ये मानव-बस्ती की पुकार? किसे किसकी मंजिल कितना पास बुला रही है उन्हें क्या पता? सबके दिलों में खैरात पाने की होड़ लगी है। सबका दिल भूख से कराह रहा है। सबकी आत्मा प्यास से पीड़ित है। माया है ये कैसी जग की? कैसा है ये वेश मानवी दिलों में उठती भूख की लौ का? क्या रोशनी की झलक है कहीं या राह में अँधेरा ही है।

किसी की साँसे टूटती मंजिल से दामन छुड़ा रही है उन्हें। किसी की कराहती आत्मा अँधेरी रातों में एक दर्पण की झलक दिखलाती नजर आ रही है उन्हें। सब एक साथ चलते हुए राह में ही दम तोड़ते चले जा रहे हैं। कैसी है ये खैरात की बेला? कैसा है ये एहसास भूख का? कैसा मातम इसपे? कैसी खोज इन प्यासी आत्माओं की? क्या ईश्वर भी आयेगा इन्हें खैरात देने या ये लोग इसी तरह खैराती अन्नदाता का नाम ले-लेकर राह में ही मिटते चले जायेंगे। किसको पता किसका गाँव कहाँ रह गया? किसको पता किसके मुल्क की बस्ती किससे कितनी दूर हुई? क्या पता वो आगे और कितनी दूर जा पायें? सबके दिल वीरान और आत्मा बेबस ही तड़प रही है भूख से। ये किसे पता किसको मंजिल कितनी दूर ले आयी। कहाँ जाना चाहिए उन्हें और बारी-बारी से वो एक-एक करके लाश बनते चले गये और न ऊपरवाले ने उन्हें पानी दिया, न अन्नदाता ईश्वर की झलक ही मिल पायी उन्हें। न ये जमीं हैरान हो सकी ऐसी काफिलाई मातमों के माहौल को देखकर, न ये आसमान हैरान हो सका अपनी बनायी कायनात की इन ढलती शामों पर। रात घिर आयी और कुछ लोग रात के अँधेरे में उन्हें कुचलते हुए जाने कितनी दफा चलते चले गये। मगर क्या ऐसा मातम दृश्य देकर भी भूखे-नंगे लोगों का काफिला मिट पाता है। नहीं! वो कल फिर निकलेंगे और ढलती शाम के दीये में जुगनू की रोशनी बन भटकते चले जायेंगे। मगर न कोई खैराती मालिक उन्हें अन्न देने आ पायेगा, न वो खैरात पाकर फिर कभी जी पायेंगे। यही हर रोज ही होना है, काफिले को रूकना ही नहीं है। उन्हें बढ़ते ही जाना है। एक मंजिल से दूसरी मंजिल तक, एक खैराती अन्नदाता से दूसरे खैरात बाँटते लोगों के घरों तक।

सांसारिक राग-रंग

कितना रंगीला है ये संसार जिसमें राग-रंग की कोई कमी नहीं। एक के आँसू दूसरे को हँसी के सामान से लाद देते हैं। एक की नम आँखे दूसरे की खुशनसीब आँखों के लिए काजल का काम करती है। कभी शहनाई का शोर होता है गली में, कभी सितार के धुन गूँजने लगते हैं। किसी को आनन्द मिलता है इससे, किसी को बेकरारी और संसार सब देखता है। वो लोगों की तरह आनन्दित नहीं होता। खुशहाल भी नहीं होता, बेहाल भी नहीं होता।

सोचता है किसी के बारे में, गौर करता है उसकी बातों पर। रंग कितने बिखरे थे संसार में मगर किसी के लिए ये बेरंग बन गये थे। कोई बेखुदी में तड़प रहा था, कोई मातम के महौल में खड़ा सिसक रहा था। कोई कोस रहा था अपने मुनष्य जीवन को तो कोई गर्व से ऊँचा हो रहा था ये सोच कि मुझे तन मिला भी तो मनुष्य का जिसमें हमने हँसना सीखा, जीना सीखा, खुशियों में सराबोर होना सीखा और कोई ऐसा भी था जो अपने मनुष्य तन पर कराह रहा था क्योंकि वो मजबूरी में ढो रहा था अपने जीवन को। उसे कोई लालसा नहीं थी जीने की। उसके जीने का मकसद था मौत सिर्फ मौत। उसे सांसारिक रिश्ते की और राग-रंग की कोई फिकर ही न थी। वो एक जगह खड़ा-खड़ा उकता गया था और दूसरी जगह जाने की उसकी चाहत ही नहीं थी। संसार को लज्जा आ रही थी तब अपने ऐसे रूप पर। दो भागों में विभक्त उसका जीवन एक भाग में चेहरा देख रहा था अपना शीशे के आईने में। एक भाग में शीशा ही टूटकर बिखर चुका था। चेहरे कई हजार रूप ले चुके थे।

तो कितना फर्क था संसार के अपने ही रूपों में? एक रूप पे लज्जा आ रही थी उसे, एक पे गर्व हो रहा था। उसके राग कह रहे थे, मैं तैयार हूँ गजल गाओ। कोई रंग कह रहा था, मैं तैयार हूँ तन-मन रंगो अपना और संसार की निगाहें अपने उस रूप को तलाश रही थी जिसमें न राग का कोई मतलब बाकी रह गया था न रंग का। तो कैसे रंगता इसमें वो अपना तन? तन तो निढाल हो चुका था राग-रंग के ऐसे लोगों के बीच आकर और शोर हो रहा था गली में कि किसी के घर में किसी की जिन्दगी लूटी है। किसी के घर में कोई मातम से रो रहा है। किसी का घर सितार की थपकियों से गिर गया है। किसी की जिन्दगी ढोल और बाजे में तबाह हो गयी है। संसार सबकुछ सुनता है मगर पलटकर कहता कुछ भी नहीं। एक को हँसते देखता है तो हँस देता है। एक को रोते देखता है तो रो देता है और कोई ऐसे सांसारिक बंधन से बिछोह पा लेना चाहता है। तो कोई राग-रंग में डूब जाना चाहता है और वक्त बीतता चला जाता है। इन्सानों की बस्ती तेजी से बसती जाती है, दुगनी होती जाती है और इन्सान गुजरता जाता है। मनुष्य तन तड़पकर एक मकाम तो हासिल कर लेता है मगर हर किस्से पे एक ही चीज के चर्चे होते हैं। यहाँ शीशे की दीवार होनी चाहिए, लगवा दो। यहाँ लोहे की खिड़कियाँ होनी चाहिए, लगवा दो। रिमझिम फुहार का आनन्द लेना है हमें। यहाँ एक बरामदा बनवा दो। फिर सब बनता जाता है और मनुष्य तन उजड़ता जाता है। राग-रंग, सितार, ढोलक सारे धरे-के-धरे रह जाते हैं। मिट्टी उन्हें ढँककर दफन कर देती है जमीन में। संसार का नाम अमर हो जाता है। बेबसी में भी जीत उसी की होती है और हँसी में भी। कहनेवाला कह ही देता है आखिर कि वो चला गया उसे भूल जा। ये घर, ये शीशे की दीवार, ये लोहे की खिड़कियाँ, ये बरामदे की खुली हवाएँ सब तो है ही न तुम्हारे

पास और फिर जब ये सारा सामान आज भी है तुम्हारे पास तो गम कैसा? रोने के हालात कैसे? मरने की फिक्र क्यों? और ऐसा कह राग में डूब जाता है फिर से संसार। अब तो हर तरफ से शोर का आना तय हो गया था। तितली भी अपने पर रंगना भूल गयी थी और मनुष्य तन तितली के परों को छूकर महसूस करना भी भूल गया था। रास रचानेवाला नन्हा कृष्ण-कन्हैया रूठकर जा चुका था। बावरी राधिका, बावरी ग्वालिनें अपने-अपने मटके में दूध जमा करना भूल गयी थी और राग-रंग का शोर खत्म हो चुका था। गली सूनसान पड़ी थी। संसार हर तरफ से मौन हो चुका था। राधिका कन्हैया की बाँसुरी छुपा चुकी थी और कन्हैया भी गाँव से दूर हो चुका था। उसकी निगाहों से संसार के किसी भी कोने तक रास-रचैये पर नजर नहीं जा रही थी। सबकुछ बदल चुका था और संसार का नाता यहीं तक का होकर रह गया था।

कोई कह रहा था मैं जीकर शर्मिन्दा हूँ। कोई कह रहा था मैं मरने की लालसा भूल चुका हूँ क्योंकि मुझे संसारिक राग-रंग से प्रेम हो गया है। मुझे नहीं पलायन करना है यहाँ से। अगर एक तन मिटता है तो दूसरी योनि में बदल जाती है रूहें। मगर वो रूहें इन्सानी नहीं रह पाती। तो क्यों न इन्सान बनकर ही रहें हम संसार में इसी जगह। यही सोचकर कि राग-रंग ही जीवन है और गम का साज भी है।

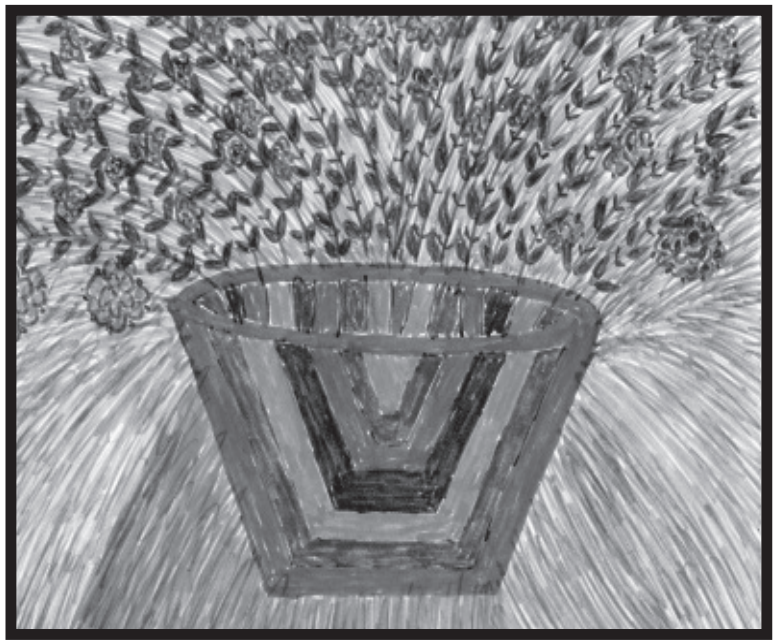

कैसी है ये जिन्दगी

बड़ी अजीब है ये जिन्दगी जो कब कौन सा मोड़ दे जाये, नहीं पता। कैसे-कैसे रिश्ते बँधते हैं और जाने कैसे टूट भी जाते हैं। खबर कहाँ हो पाती हमें फिर इस बात की कि दिल टूटा कि रिश्ते के बंधन ही टूट गये। हर मोड़ पे तो अपनों से ही मुलाकात होती है हमारी। उनसे मिलते भी हैं हम। अपने मन की जाने कितनी बातें कह भी डालते हैं पर कहाँ ये सोच पाते हैं हम कि इसी मोड़ पर मिले वो ही सारे अपने लोग कब बेगाने बन जाते हैं, पता भी नहीं चलता।

कैसा लगता है ये सोचकर कि कैसी है ये जिन्दगी नाम की शय भी जिसे कि सबसे अनमोल धरोहर माना करते हैं हम। वो ही हमें हर पल, हर लम्हा, तोहमतों से लादती चली जाती है। जख्मों से हमारा ही कलेजा छलनी कर देती है। खूब किस्से हैं जिन्दगी के अन्दाजे बयां के जिसका रूप कब, कहाँ, कैसे बदल जाये, पता ही नहीं चल पाता। ऐसा लगता है जैसे पल में जोड़े गये रिश्ते पल में ही दगाबाज बन बैठते हैं। जिनके साथ खेला था कभी हमने, जिनके साथ सारी उम्र का साथ था हमारा, जिनको लेकर कि भविष्य के जाने कितने सपने बुने थे हमने, देखो तो जिन्दगी ने कैसे हमारे उन सपनों के दिनों की मीठी यादों को भूला देने पर मजबूर कर दिया। पर क्या जिनके कलेजे पे पड़ते हों ये खंजर के निशान, उनके लिए कभी अपनों के दर्द का एहसास मिटा पाना वश में रह पाता है। पर क्या हमें नही पता कि संसार की एक धुँधली तस्वीर है जिन्दगी, जिसका रूप कब कैसे हो जाए कोई नहीं जान सकता। किसे पता चल पाता है कि कब हम खेल, खेल रहे थे बचपन का और कब जवानी के बोझ पड़ गये हमारे कांधों पे। जाने कितने आहिस्ते से गुजरे हों हमारे वो सुनहरे पल जिसका हमे पता भी न हो और सामने जिन्दगी का एक नया चेहरा भी आ गया हो। तो क्या लट्टू नचाते-नचाते जवान हो गये थे हम या कबड्डी खेलते-खेलते या तितली पकड़ते-पकड़ते या उड़ते हुए परिन्दों को तकते-तकते। ऐसा तो कुछ भी नही लगा हमें। फिर उसके चले जाने का कौन सा वक्त तय किया था जीवन ने और उनके चले जाने का सबब भी क्या था? आखिर क्या बहाना लेकर गये होंगे वो हमसे दूर। क्या उनका जी उकता गया होगा हमारे साथ ये सब करते-करते या उनका फसाना ही बीत चुका था हमारे सामने से। क्या पता, क्या खबर?

खबर तो तब भी नहीं मिली थी हमें जब हमारे अपनों ने यह एहसास दिला दिया था कि तुम जवान हो गये हो। ये लट्टू छीन ले जा रहे हैं हम। अब इनसे खेलना नहीं है तुम्हें। ये कबड्डी का खेल भी शोभा नहीं देता तुम्हें। अब ये तितली पकड़ना भी छोड़ ही दो तुम तो अच्छा। और हाँ, उन उड़ते हुए परिन्दों से कुछ इशारे करना भी अब बन्द कर दो और एक साथ इतने सितम के गिर जाने पर हम ऐसे खामोश हो गये थे जैसे किसी ने हमसे हमारी जुबान ही छीन ली हो। बोलते भी तो क्या बोलते हम जब सब तरफ से मनाही ही हो गयी थी हमें। तो कैसी वफा की कैसी तस्वीर हैं ये सितमगर जिनका कि रूख का ही अन्दाजा नहीं मिल पाता हमें। कब किस मोड़ पे कौन अपना रूख मोड़ ले क्या पता? हम तो बस अपने ही आप के आहटों को सुनते उन सूनी राहों को तकते रह जाते हैं जिसपे कि चलकर आया करता थे कभी।

यही तो जीवन पहलू का बदलता स्वरूप है जिसमें कौन कब आ मिले, पता नहीं चल पाता और कब कौन निगाहों से दूर हो जाय, इसका भी एहसास नहीं हो पाता। दिल तो बस अपने और उनके बीच पड़ी इस दूरी को खामोशी से तकता रह जाता है। आनेवाले एक नेहबंधन लिये चले ही आते हैं। जानेवाले एक बिछोह का गम देकर चले ही जाते हैं। पर सहनेवाले कहाँ ऐसा कर पाते हैं कभी? वो तो हमेशा वक्त के इशारों पर चलते हुए हर आने-जानेवाले रास्तों की तरफ तकते ही रह जाते है जिसमें कब कौन पास आके बैठ जाये नहीं पता। जब आते हैं तो रिश्ता भी बँध ही जाता है उनके बीच। जब चले जाते हैं तो दूरियाँ भी अपने आप पनप ही जाती है।

तो क्यों बना ऐसा जीवन? किसने रचा ऐसा संसार जिसमें न मिलन का ही जज्बा ठहर सका न बिछोह का ही। फिर मिलने का वक्त और तारीखें क्यों तय की गई हम इन्सानों के बीच? क्यों हमें ये इन्तजार रहा हर पल कि आज कोई आनेवाला होगा। क्यों और क्यों? काश! कोई इस बात का सबब बता जाता तो अच्छा होता।

कितना प्यारा था वो बचपन जब हम हर चीज से अनजान बस जीने में मगन थे। हजारों किस्से जेहन में घूमते थे। कहा करते थे हमसे एक बात कि तुमने हमें कितना जाना। तब हम हँस देते थे और कहते थे कि इतना तो जाना कि गुड़िया की शादी हो गयी। कोई दूल्हे की माँ बनी, कोई दुल्हन की। कोई सगा भाई बना, कोई सौतेला। झगड़े भी हुए, मेलमिलाप भी। हमारे घर शहनाई भी बजी, घर में सन्नाटा भी हुआ। यही सब तो खेल खेला करते थे हम उन किस्सों की बातों का सार लेकर। एक दिन हमारी किस्से सुनानेवाली नानी गुजर गयी। एक दिन परियाँ आसमान को छूने निकल गयी। हम उसके पीछे-पीछे भागते रहे। भागते-भागते हम ऊँचे पर्वत पे चढ़ गये। कभी ऊँची दुनिया देखी, कभी जमीन की गहराई का अन्दाजा लगाया। बचपन का वो सुहाना मंजर सैकड़ों मोड़ दे गया जिन्दगी को। हमारी चाहतों के इतने सार छुपाये थे हमारे उस बचपन ने कि हम उसी में सराबोर होते कब दुनिया के बगल से गुजर गये, पता ही न चला। हमारे संगी-साथी जो हमारी गुड़िया की शादी पे माँ-बाप, भाई-बहन, सगे-सौतेले रिश्ते में बँधे हमारी तरफ देख मुस्करा रहे थे। सब आज भी निगाहों के सामने थे हमारे। हमारी निगाहों से न पेड़-पौधे गुजर सके, न झुरमुट में छुपकर बैठे हमारे यार दोस्तों की मण्डली गुजर सकी।

कितने सपने सजाये थे उस जिन्दगी की खातिर जिस जिन्दगी में खेल इतने थे कि खेल-खेल में सारे पल बीत जाते थे। सामने नदी का किनारा था, पानी का बहता सरारा था और तैरने को तरसती हमारी निगाहें थी जो अपलक पानी के बहते धारे के साथ बह जाने को सोच रही थी। हमें तो माँ की हिदायतें याद आ गयी थी। माँ ने कहा जो था कि पानी की तरफ मत जाना, नदी गहरी है। नदी में यार-दोस्तों के साथ मत उतरना। अगर जिद करें वो तो उनकी शिकायत उनकी माँ से कर देना। तब हम बस माँ से निगाहें घुमाकर हँस पड़ते थे। माँ की बात अगर याद रखी होती हमने तो याराने का क्या होता उनके जो हमारे साथ गिल्ली-डंडा खेलने निकले थे दोपहर की धूप में। अगर धूप की फिक्र हो माँ की तरह तो खेल में हार-जीत का फैसला कैसे हो पायेगा।

कितना पागल था वो बचपन का समां जो हमें हिदायतें भी भूल जाने को कहता था माँ की। मगर माँ तो माँ थी। जरा सी आँख खुलती उनकी तो वो हमें आवाज देती, बेटा! कहाँ चले गये। अगर पास होते हम तो जवाब देते न? हम तो गिल्ली-डंडे के खेल के मजे ले रहे थे। उस वक्त न धूप की फिक्र थी, न छाँव की। न सर्दी की, न बरसात की। अगर पानी बरसता भी तो पेड़ की डाल के आगे-पीछे हम घेरकर बैठ जाते थे। पानी टप-टप करती जमीन को एक गढ्ढे में बदल कर गुजर रही थी और गढ्ढे में जब पानी भर गया था, हम उसे अपने-अपने पैरों से बहा रहे थे। कितना मजा आ रहा था। माँ ने जिस-जिस बात के लिए हमें मना किया था, हम तो वो-वो काम ही करते चले जा रहे थे। एक हिदायत एक वक्त भूल जाने का था, एक हिदायत एक वक्त और इन्हीं हिदायतो में वक्त बीतता चला जा रहा था कि ऐसे में एक दिन माँ ही बीमार पड़ गयी। हिदायतों का मौसम हमारी नजर में बीत गया। माँ की दवाई ला दी पापा ने। माँ ने बिस्तर पे लेटे-लेटे ही हमें आवाज देनी चाही, मगर अब डर कैसा, जब वो चल फिर ही नहीं रही थी। अब तो वो हमें रोक ही नहीं पाती थी। अब तो वो सोती ही रहती थी हरपल। खाना पकाने को पापा ने किसी को

रख लिया था जो रिश्ते में हमारी कुछ तो लगती ही थी मगर मेरी जुबान उनके प्रति हमेशा तेज ही चला करती थी। हमें जब अपनों की हिदायतों का गम न हो सका था तो ये पराये रिश्ते की पहचान हमें कैसे हो जाती। उन्हें तो हम आँख तरेर-तरेर भी देख लिया करते थे। वो हमें जब डाँटती थी, हम कह देते थे, घर का काम करने को आयी हो न ताई तो महरी बनकर रहो। तब वो रो-रोकर पापा से दुहाई करती, भैया हम नहीं सम्हाल पायेंगे आपके घर को। बेटी आपकी बिगड़ती जा रही है। दीदी हमेशा बिस्तर पे रहती है और ये एक पल भी घर में नहीं रहती। तब गुस्से में हमने उनके सामान को बाहर फेंक दिया था क्योंकि हमारी माँ अब खाना पकाने लायक जो हो गयी थी। माँ को इतनी हँसी आयी थी तब और मैं घमण्ड में फूल गयी थी। माँ ने एक दिन मुझे बुलाकर कहा था कि बेटा अच्छा किया जो ताई को घर से निकाल दिया। वो हमारी बीमारी के पीछे घर के अन्दर झाँकने की जगह बना रही थी। मगर माँ वो तो दरवाजे से अन्दर पिछले दिन ही आ गयी थी। हमारी इस बात पर हमारी माँ इतने जोर से हँसी थी कि पापा की आवाज सुनाई दी हमें। पापा ने कहा कि हँस लो, और हँस लो बेटी की बात पर। बिगाड़कर तुमने ही रखा है इसे। और पापा तुम जो ताई को बिगाड़ रहे थे हमारी शिकायत कर के। तो पापा ने हमारी तरफ कड़ी निगाहों से देखा और कहा, आज काम निकल गया तो माँ-बेटी को मजाक करने का भी मौका मिल गया। बेचारी वो औरत जात कितनी शर्मिन्दा होकर गयी। तो उन्हें लाज का घुँघट ओढ़ा देते तुम माँ ने भी चिढ़कर कहा और माँ-पापा के बीच बातें होते देख हम आहिस्ता से वहाँ से गुजर गये थे।

आज के इस संसार में हमारी माँ हमें छूने लायक नहीं रही वो अब भागकर हमारे पीछे नहीं आती। पापा भी हमारी शिकायत नहीं कर पाते हमारी माँ से क्योंकि आज हम बच्चे नहीं रहे, जवान हो गये और वो दोनों जवान नहीं रहे, बूढ़े हो गये। मगर वक्त के इस तरह तेजी से बीत जाने के बाद भी हमारी निगाहों में माँ-पापा का वही जवान चेहरा आ जाता है, हँसी-ठिठोली आ जाती है। ताई का चेहरा आज भी याद आता है। मगर आज वो हमारी दुनिया से बहुत दूर हो गयी हैं। आज कितना बदल गया ये जमाना जहाँ हर जाने-पहचाने चेहरों ने अपनी पहचान गंवा डाली। कल हमारी माँ क्या थी, हमारे पापा क्या थे हमारी नजर में और आज वो क्या हो गये थे। तो मजाक की आदतें कहाँ जिन्दा रह पायी थी आज उनके दिलों में। वो तो हमें ही सबकुछ सौंप गये थे। हमारे हिस्से में ही सारी तमन्नाएँ आ गयी थी और वो एक भी चाहत अपने पास बचा के नहीं रख पाये थे।

यही सब तो याद आने की बातें थी आज के इस पल में जब बचपन का किस्सा याद आने लगा था और दिल में एक हुक उठी थी कि कहाँ से लायें हम वो सुहाने दिन जहाँ हर बात को मजाक समझने की आदत सी पड़ गयी थी हमें जहाँ पौधे जवान थे और हम थोड़े से नादान। जहाँ किस्से अनेक थे और कहनेवाली एक हमारी नानी जो आज के इस दौर में खुद एक किस्सा बन चुकी थी। मगर हमारी माँ आज भी उन किस्सों को हमारे सामने दोहराती है मगर वो आज हमें उतने मजेदार नहीं लगते क्योंकि किस्सों में खुद को ढालने की उम्र जो अब बाकी नहीं रही हमारी।

जवानी के नशे में डोलते युवक, युवतियाँ अक्सर किसी हादसे का शिकार हो जाते हैं। मगर जवान धड़कनें शोर मचा-मचा कर ये कहना नहीं भूलती कि मैं सोलहवें सावन में कदम रख चुका हूँ। मुझे नशा है प्यार का, मुझे नशा है खुमार का और प्यार के नशे में डूबते वो दोनों युवक-युवतियाँ हमेशा खुद को आसमान पे बिठा हुआ पाते हैं। उनके कदम जमीन पे नहीं पड़ते। ये तो जवानी के पहले सावन का कमाल था। साथी, मित्र, दोस्त, हमदम सब साथ थे और अगर कोई गैर था तो बचपन का बचपना। गाँव-घर में बिताया वो गली-मुहल्लों का अफसाना। कितना बदला हुआ रूप था ये जीवन का।

एक तरफ जवानी, एक तरफ दीवानी खामोश खड़ी तड़प रही थी। वो कह रही थी कि सोलहवें सावन की पहली बहार हूँ मैं। मुझसे कलियाँ खिलकर जवान हो चुकी है। मुझसे फजायें रंग उधार ले जा चुकी है और जवानी के दिनों के हर क्षण फिर हमें आत्मविभोर करने लग जाते हैं । प्रेम के चर्चे, भागना, दौड़ना, छुपना-छुपाना, मिलना-मिलाना एक खेल बन जाता है इन दिनों का। एक दोस्त दूसरे दोस्त को चिट्ठी देकर कहता है उस तक पहुँचा दो मेरा पैगाम। एक सखी दूसरी सखी से कहती है मुझे मेरे प्यार के पास ले चलो मिलने का कोई बहाना लेकर और फिर खेल बन जाता है ये मेल-मिलाप, ये आपसी किस्सों का बदलना। एक सखी आकर कहती है एक जगह पार्क में वो तुम्हारा प्रेमी बैठा है। चार बजे शाम का वक्त लेकर आयी हूँ, तैयार रहना उससे मिलने जाने को। एक दोस्त अपने हमउम्र दोस्त से कहता है तुम्हारी प्रेमिका जब आ रही थी तो रास्ते में उसके वालिद ने देख लिया, पकड़कर ले गये वो उसे। तुम कल सुबह उससे मिल लेना। मगर कहाँ सब्र कर पाती है जवान धड़कने? वो भागती है, शोर होता है और लोगों की भीड़ इकट्ठी होती है। लड़की बदनाम हो जाती है। मगर प्यार का चलन बदनाम नहीं होता, प्यार का रूतवा बदनाम नहीं होता। वो ऊँचा हो जाता है, और ऊँचा। फिर जवान लोगों से उनकी जवानी को कोई छीन नहीं पाता। वो फिर मिलते हैं और भागकर पार्क में जाते हैं। खुश होते हैं, हँसते हैं, गाते हैं और प्यार की चार बातें करते हैं।

कितनी बावरी है ये जवानी जिसे न मान-मर्यादा की फिक्र है। न इज्जत और नाम खोने का डर है। मगर छुप-छुपकर मिलनेवाली ये निगाहें जब डोली में बैठकर विदा होती है तो सबसे पहले पूछती है शहनाई से कि किसके नाम की धुन है बसी तेरे धड़कनों में, किसके नाम की मेंहदी लेकर आये हो तुम मेरी गली में, किसके नाम के गजरे महक रहे हैं मेरे खूबसूरत बालों में। मगर जवाब में शहनाई रो-रो कर गुहार करती है। पराये नाम की धूम है मेरे सीने में। इसी पराये नाम की मेंहदी लेकर आये हैं हम तुम्हारी गली में। पराये के बागों के बेले की महक लेकर आये हैं हम तुम्हारे बालों में और तब जवानी तोड़ देना चाहती हैं हर बन्धन को और भाग जाती है पगडंडियों पर अपने प्यार को पुकारती। मगर सारे रास्ते पे तो पहरे बिछे थे। वो पकड़ी जाती है और डोली में बिठा दी जाती है। मगर प्यार का चलन कम नहीं होता। जवान धड़कनें फिर भी शोर मचाती है। किस्से फिर भी पनपते हैं और युवक-युवतियाँ बदनाम फिर भी होते हैं। किसी को आशिक के नाम की गाली सुननी पड़ती है, किसी को प्रेमिका के नाम की। मगर प्रेमी-प्रेमिका के लिए वो गाली भी

मानों अमृत की फुहार बरसा रही थी। उन्हें हर बन्दिश कबूल थी। हर गाली उन्हें आशीर्वाद से कम नहीं लग रही थी। हर इल्जाम उनके लिए उनसे मिलने का पैगाम माँग रहे थे।

कितना अलबेला है ये जवानी का मौसम जो किसी किस्म की तोहमतें बर्दाश्त नहीं कर पाता। जिसे हर लम्हा, हर घड़ी एक ही फिक्र सताती है कि जवानी कब दस्तक देगी मेरी गली में और यही सोचती जवानी अपने सर माथे पर जमाने के हर सितम को सजाती है कि हमें तो फिर मिलने ही हैं सोलहवें सावन की बहार में या फिर जवानी के पहले सावन की रिमझिम फुहार में। तो कितनी मदमस्त है ये जवानी भी जिसका आगाज भी एक दर्द का साया है और अन्जाम भी। जिसके शुरू में जवान होना था उन्हें, जिसके अन्त में परवान चढ़ना था उन्हें। कौन रोक सकता था किसी पागल, अल्हड़, मदमस्त जवानी को। ये तो हर पल, हर लम्हा यही कहती है अपने दिलों से कि कोई तुमसे मिलने आनेवाला है, दिल थाम लो अपना। कोई तुम्हें बुला तो रहा होगा, किसी का नाम होगा तुम्हारा अपना।

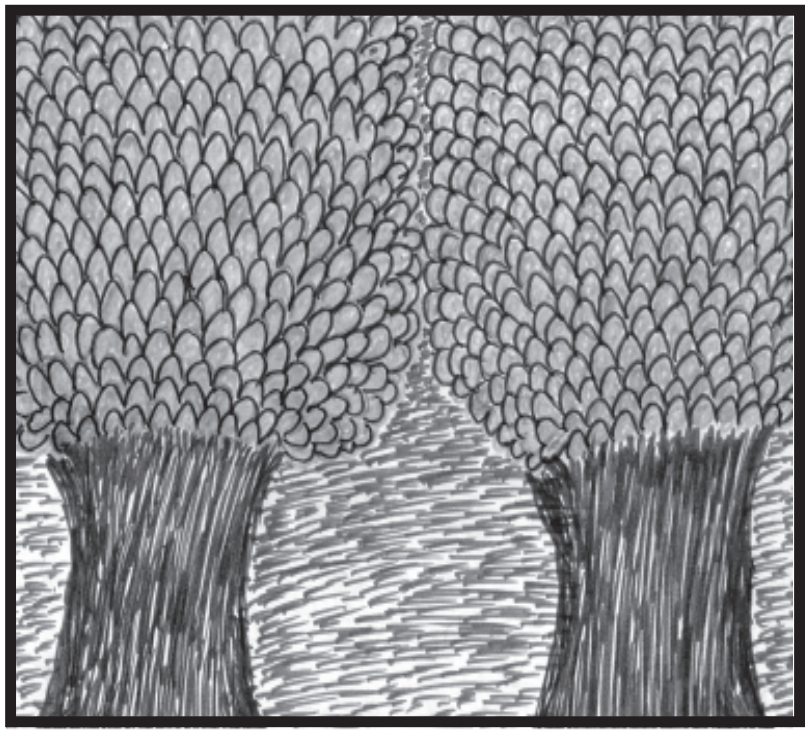

नायिका

मैं नायिका हूँ इस धरती की। मैं सदियों से इस संसार में एक नये वेश में आ रही हूँ। कभी मैं काव्य रचना का सार बन जाती हूँ। कभी उलाहने सहनेवाली औरत का चोला पहन लेती हूँ। कभी किसी रूप में लोग मेरा नाम अमर कर देते हैं तो कभी किसी रूप में वो हमें बदनाम कर देते हैं। सागर किनारे दौड़ती मेरी निगाहें बीच भँवर में जाके खो जाती है। किसी को पता भी नहीं चलता और मैं अपने आपको एक से दो बना डालती हूँ। लोग मेरा मजाक उड़ा कहते हैं कि मैं नायिका के वेश में एक ऐसी गन्दी छवि हूँ जिसे तिरस्कार मिलना चाहिए। हाँ, आदर का भाव कभी मेरे जेहन में नहीं गूँजा। आदर तो वो पा गये जिनके दिलों में औरत की हस्ती नीलाम हो रही थी, जिनकी रंगों में एक औरत की हस्ती की बदनाम रूह तड़प रही थी। कहने को वो एक आम इन्सान थे और मैं संसार को बढ़ाने का जरिया थी। मगर भाव वो पा रहे थे। दुतकार हमें मिल रही थी जगह-जगह से। मैं तड़पकर भी तड़प नहीं महसूस कर पा रही थी खुद की खातिर क्योंकि वो एक इन्सान की छवि थी और हम एक नायिका थी धरती की। शौक से वो हमें तिरस्कृत करते जा रह थे और हम भी शौक से उनके सामने अपनी हस्ती को मिटाते जा रहे थे।

धरती की गोद में पनाह लेनेवाली मैं एक अधूरी जिस्म की नायिका, पूरी हो पाऊँगी, नहीं जानती मैं। मेरी वजह से इन्सान अपने-अपने दिलों में पनपती इन्सानियत की भाषा को पढ़ पा रहे हैं। मेरी वजह से वो एक मर्द जाति का खिताब पा रहे हैं और हम क्या हैं आगाज से अन्जाम तक एक अधनंगी जिस्म की नायिका जिसे कि पल-पल दुत्तकारा जा रहा है। मैं एक तरफ से बदनाम हो रही हूँ, एक तरफ से गुमनाम। हमारे कदम जबसे इस धरती पर पड़े मुझसे पूछा न गया कि मैं कौन हूँ। लोगों ने तो मेरे चेहरे की रंगत से, मेरे बालों में महकते गजरे के फूलों से, मेरे माथे पे चमकती सुहानी बिन्दिया से ये अन्दाजा लगा लिया कि मैं औरत हूँ। औरत जाति का धर्म मुझे निभाने को कहा जाने लगा।

मैं शौक से जवान हुई। मैं शौक से डोली और बारात संग विदा हुई। मैंने शौक से अपने पति के कदमों को अपना संसार माना। फिर तरह-तरह के रूप-शृंगार दिये मैंने लोगो को। किसी को मैंने बेटा कहा, किसी को बेटी। किसी ने मुझे दीदी कहा, किसी ने अम्मा। किसी ने मुझे भाभी कहा, किसी ने मामी। मैं ऐसे-ऐसे रूप में सजनेवाली नायिका फिर भी खुद के आगे हजार मुश्किलें खड़ी पाती रही और तबतक उलझती रही उलझनों में जबतक कि मेरा जिस्म काँपने न लगा। मैं काँपते जिस्म से कभी किसी बच्चे को सहारा मानती रही, कभी किसी लाठी को। मेरी हस्ती ने बूढ़ा लिबास पहन लिया। मैं अपनी अतृप्त आत्मा पे फिर बोझ को बढ़ता हुआ तो नहीं पा सकी मगर उलझनें और ताने देती निगाहें मुझे हमेशा एक बोझ समझती रही। मेरे बेटे मुझे अम्मा कहना छोड़ गये। मेरी बेटी पराये घर चली गयी। मेरे नाती-पाते सब मुझे बुढ़िया कहने लगे। किसी की जुबां मुझपे हँसते हुए कहने लगी कि नानी माँ बूढ़ी हो गयी। जब मर जायेगी हमें अच्छा-अच्छा खाना मिलेगा खाने को। नये-नये कपड़े मिलेंगे पहनने को। उनमें से किसी ने भी ये नहीं कहा कि माँ मर जायेगी तो घर सूना हो जायेगा। मगर जिन्हें मेरी फिक्र होनी चाहिए थी वो तो कुछ भी नहीं कह पा रहे थे। मैं ऐसी नायिका बन चुकी थी आज की सारे संसार की निगाहें मेरी इस बूढ़ी काया पे खुश हो

रही थी। ताई अम्मा गुजर ही जाये तो अच्छा। अब जीकर क्या करेगी? मगर मैं गुजरकर भी कहाँ गुजर पायी इनकी निगाहों से। मैं तो हर वेश में इनके सामने खड़ी थी। मैं एक बार अपने तन के सिकुड़ते चमड़े की ओर देखती हूँ और सोच में डूब जाती हूँ कि ये एक नायिका की कैसी छवि है जो गुजरकर भी गुजर नहीं पाती और एक बार खुद की तरफ देख नतमस्तक हो जाती हूँ। ये कह कि ऐ नायिका की धरती! मुझे पनाह दे। मैं अब अपने रूप-शृंगार को प्रणाम कर गुजर जाना चाहती हूँ। मैं शौक से तबाह हो जाना चाहती हूँ। मैं शौक से बर्बाद हो जाना चाहती हूँ क्योंकि लोगों को एक नयी नायिका चाहिए। मुझे अगले पड़ाव पर फिर मिलना है इनसे एक ऐसी ही नायिका के वेश में। माँ जिसे जग कहता है, पत्नी जिसे जग कहता है बेटी जिसे जग कहता है और आँखें मून्द लेती हूँ। फिर गाजे-बाजे का शोर होता है। मेरी अर्थी गुजर जाती है। मेरा जिस्म सुलग-सुलग मुझसे एक ही सवाल करता है नायिका हो न तुम। तुम्हें फिर आना है यहीं इसी जमीं पर।

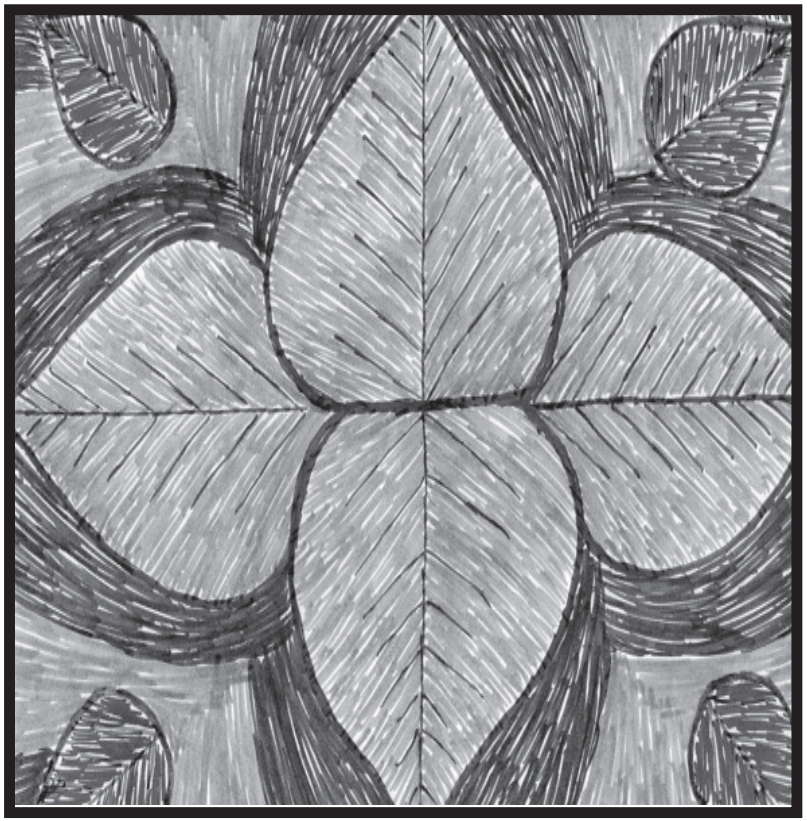

सुर

सुरसागर में सम्मोहित जिन्दगी एक मार्ग तलाश रही है अपना और इन्सानी जीवों को इसका मतलब समझ में नहीं आ रहा। वो तो एक जुबां बोलते हैं एक जुबां जानते हैं प्यार और नफरत का।

एक सुर क्या जगे इन्सान की ख्वाहिशें ही जाग गई। वो कभी प्रेमिका को तलाशता रहा, कभी पत्नी को। कभी वो अट्टहास करता रहा, कभी रोने के हालात पैदा करता रहा। जीवन के इस दरिया में डूब जाने के बाद फिर किसी रास्ते की ओर जाने का इरादा नहीं रहा। वो तो फकत एक लय में गाता, सुरसरिता की महफिल सजाता बस सामने से गुजरता जा रहा है। उसके इस सफर में कभी कामिनी का साथ मिलता है तो कभी दामिनी का और सुरसागर की बहती ये धारायें जीवन नैया को पार करती जा रही है। ये ऐसा सफर है जीवन का जहाँ कि मुड़ जाने पर एक आरजू जागती है दिल में कि मैं कैसा हूँ? मैं कौन हूँ? मेरी प्रेमिका कैसी है? मेरी पत्नी कौन है? और इसी सवाल के जवाब में मौन धड़कनें शोर मचाने लगती हैं और दिल प्रेमिका से मिलने को बेचैन हो जाता है।

न रात होती है प्यार की कभी ऐसी राह मुड़ जाने पर न रात का कोई सबेरा होता है। हर लम्हा सुरसागर में नहाती जिन्दगी उसके करीब खड़ी एक किस्सा सुनाती है उन्हें। हम भी एक प्रेमिका के इन्तजार में बैठे हैं जाने कब से और हमें भी उसका दीदार नहीं हुआ आजतक। प्रेमी उसकी इन बातों पे एक गजल पढ़ते हैं ताकि उनकी प्रेमिका उन्हें ऐसा मंजर न दिखाये। रात सुबह में तो ढल जाती है मगर मिलन का जरिया मिल नहीं पाता। चकोर बूझकर भी अपनी प्रेमिका के पास जा नहीं पाता और रोशनी के लिए लोग चमकीली धूप का सहारा ले लेते हैं। जीवन सड़क पर चल रही गाड़ी के पहिए कभी पटरी से नहीं उतर पाते। एक भाषा का ज्ञान उन्हें भी हो चला है। वो सुर से ताल तक वापस चले जाते हैं और इन्सानों की बोली गीत-संगीत को समझने में लग जाती है।

सितार बजते हैं तो एक सुर निकलता है। पंछी चहकते है तो एक सुर निकलता है और प्रकृति अपनी प्रेमिका के लिए एक नया गीत गाती है और संसार में जीवन जरिया कायम रह जाता है। पत्ते, पौधे, पेड़, उनकी झुकी डालियाँ रह-रहकर एक सुर लय को इकट्ठी करती जाती है और सब एक साथ मिल खुद को पढ़ने और सुनने लग जाते हैं। इन्सान को जीने का एक जरिया मिल जाता है। वो गाते बजाते सुर की महफिलें सजाते जाते है और आँखें बन्द कर चले जाते हैं। सुर का निशान यही रह जाता है। संसार गंगाजल में नहा लेता है। मिट्टी के तन एक आवाज बोलने लग जाते हैं सुर से कि सुकून दो हमें। दफन करो तो करो मगर हमारी आवाज को सुन लो पहले तुम और सुर के इस आखिरी जुबान से एक बार फिर मौत का मिलाप लिख लिया जाता है। वो एक तरफ रह जाता है। इन्सान एक तरफ से होकर गुजर जाता है।

कस्तूरी

जिस्म एक मृगछाल है और जीवन कस्तूरी। इन्सान एक नाचता मोर है जंगल का जो कभी इस डाल पे बैठ जाना चाहता है कभी उस डाल पे। पंख पसारे ये दुनिया ख्वाबी महल सजाती अपने पलकों पर मुस्करा रही है। ये सारे रिश्ते-नाते एक जंगल हैं और हम उसके साथ रहनेवाले जीव। एक के बाद एक की जरूरत पड़ती है। न अकेले किसी को जीना आ सकता है न जिन्दगी अकेले निभ सकती है। पलकों पे हजार सपने मगर सब मृगछाल जो ठहरते ही जाते है। हम जब भूखे होते है खाने की जिद करते हैं। हम जब प्यासे होते हैं पानी पी जलन कम करते हैं। मगर निगाह हर पल, हर लम्हा एक कस्तूरी को तलाशा करती है। ये कस्तूरी कहाँ है सोचती है वो और अपने सामने एक छोटे से जीव को पाती है। जंगल में भटककर सारी जिन्दगी गंवा डाली हमने। हमें मृग भी दिखे, मृगछाल भी। मगर कस्तूरी फिर भी नहीं दिखी। हम खाली हाथ बिस्तर पे बैठ गये अपनी और इतनी गहरी नींद सो गये कि ख्वाब भी न आ सके जेहन में।

कस्तूरी तो फिर भी सामने थी। जब हम विदा हो रहे थे संसार से, माया बन्धन था हमारे पास। जब हम गुजरकर वापस आ रहे थे, एक कस्तूरी थी हमारे पास जो कह रही थी हमें तलाश लिया तुमने मानव। क्या मैं तुम्हें मिली? मगर मृत जीव कहाँ बोल पाते हैं और कस्तूरी को एक बार फिर गुजर जाने का मौका मिल जाता है। संसार रूपी इस जंगल में एक नहीं कई मृग भटक रहे हैं। मगर सबकी एक ही चाहत है कस्तूरी मिले, कस्तूरी को देखूँ। किसी को रूपये-पैसे में कस्तूरी नजर आने लगती है, किसी को नाम और शोहरत में। मगर जब सब मिल जाता है, कस्तूरी एक खेल खेला करती है हमसे कि हमारे पीछे तुम इतनी दूर तक आये। जरा पीछे पलटकर तो देखो और जब हम इन्सान पीछे पलटकर देखते हैं तो सामने एक छाया सी आ जाती है जिससे डर लगने लगता है हमें। हमारे माथे पे लकीरें थी। हमारे जिस्म की चमड़ियाँ सिकुड़कर छोटी हो गयी थी। हमारा रक्त बहते-बहते खून का धक्का दे गया था।

मगर कस्तूरी की चाहत कहाँ जा रही थी दिल से। हमारी वफा कस्तूरी थी। हमारा नाता कस्तूरी थी। हमारी मन्जिल कस्तूरी थी और एक बार फिर जब आँखों के सामने धुँधले साये डोलने लग जाते हैं तो हमें एहसास होता है कि सारा जंगल छान लिया हमने और पाया क्या एक मौत रूपी खालिस ख्वाबी महल जिसके इतने दरवाजे थे मगर बाहर निकलने का मार्ग एक भी नहीं था। हमारी साँसें एक सहारा माँग रही थी। हमारी निगाहें एक सहारा माँग रही थी और हम माँग रहे थे मृग, मृग के जिस्मछाले, मृग की आत्मा ताकि हम इसके भीतर से कस्तूरी को बाहर निकाल सकें और जब संसार से दूर जायें तो साथ में नाम शोहरत, रूपया पैसा सब चला जाये ताकि मरने के बाद भी लोग मेरी चिता से एक कस्तूरी की उम्मीद कर सके। मगर नहीं, हमारे सारे रास्ते हमारे लिए बन्द हो चुके थे। अपना घर पराया हो चुका था। अपने रिश्ते पराये हो चुके थे। और सबसे बड़ी बात हमारी साँसे परायी हो चुकी थी। तो क्या इस सांसारिक जंगल में प्रवेश कर जाने के बाद भी मुझे वो कस्तूरी मिला? नहीं, कस्तूरी तो मृग के पेट में थी। मृग तो घर चले गये और जबतक हम उससे कस्तूरी की चाहत कर पाते वो हमारे सामने से हटते चले गये और हमारी जिन्दगी इन्सानी

वेश में, मानव जाति की दुनिया रूपी जंगल में बीत गयी। न कस्तूरी मिल सका हमें, न जंगल का घना साया जा सका और हम भटकते-भटकते दुनिया से दूर हो गये और सोचा कि अब आगे किस मोड़ पे कस्तूरी से सामना होगा हमारा। यही सोच एक बार फिर संसार में आने को व्याकुल हो गये। न कस्तूरी की तलाश पूरी हुई न ख्वाबों का महल टूट सका। हम भटकते-भटकते एक-एक जगह जाते रहे। कहीं कोई जीव मिला, कहीं कोई। मगर जब मृग पे नजर गयी हमारी हमने उसका पीछा किया और कहा कि आज सिर्फ एक कस्तूरी से मिला दे हमें। मगर सामने एक बार फिर एक घना जंगल ही आ गया। हम रास्ता भटक गये। कस्तूरी तो नहीं मिला मगर एक चीज की चाहत और बढ़ गयी कि आखिर इतना नाम कमाया, इतनी शोहरत कमायी। धन-दौलत सब मिला।

जब हमने इतना कुछ हासिल किया तो एक कस्तूरी क्यों न हासिल कर सके हम अपनी इतनी बड़ी जिन्दगी में और अगर हार मान लूँ तो हमारी आन और शान का क्या होगा? मगर आन और शान को जिन्दा रखना चाहकर भी न रख सका वो और एक चीज पा ली उसने। लोगों की वहशी निगाहें। उसपे से लोगों की निगाहें हट भी गयी क्योंकि उसने जीवन में आन कमाया, शान कमाया मगर एक भी दिन प्रेम नहीं कमाया और कस्तूरी की चाहत में हर उस जगह गया। सब मिले उसे मगर एक ही चीज न पा सका वो। कस्तूरी को तलाशने का मार्ग और इसी तलाश में उसकी दुनिया लूटी। वो आबाद न हो सका। वो असल में जिसे तलाश रहा था, वो प्रेम का एक नन्हा सा दीया था जो खुद उसके भीतर जगमगा रहा था। मगर उसकी रोशनी कभी उससे ये कह ही न सकी कि मैं ही कस्तूरी हूँ जो तुम्हारे भीतर बैठा हूँ क्योंकि वो मान देख रहा था, शान देख रहा था, नाम देख रहा था, रूपया-पैसा कमाने का सामान देख रहा था।

मगर जो पा न सका पर जिसकी चाहत की उसने वो आँचल में नहीं था क्योंकि वो कभी खुद को एक आम इन्सान न समझ सका और कस्तूरी का मार्ग उसे श्मशान तक लेके चला गया। वो सो गया और कस्तूरी एक बार फिर उसके जिस्म से निकल मृगछाले में प्रवेश कर गया। जंगल तो आबाद हो गया मगर कस्तूरी की तलाश यही कहती रही हमसे कि हमें और खोजो। वहाँ तक खोजो जहाँ तक कि सबकुछ पाने का मार्ग साफ-साफ दिखे और जहाँ से दिखे वो कस्तूरी का ही घर हो। मगर नहीं समझ सका वो कि कस्तूरी प्रेम की तलाश है और प्रेम ही एक कस्तूरी है।

शहर की दास्तां

मैं शहर की दास्तां हूँ। मुझमें सैकड़ों मकानों की बुनियादें दफन है। हिन्दूओं ने मुझे शहर की दास्तां कहा और मुसलमानों ने शहर की आबादी। सिक्खों ने मुझे वाहेगुरू का आशीर्वाद कहा और पठानों ने अजायबघर।

मैं हर एक की भाषा में ढलता चला गया। जो हिन्दू समाज की दास्तां थी वो ये थी कि हमारा शहर एक टुकड़ा है आसमान का और मुसलिम समाज की आबादी ये कह रही थी कि हमार नाम स्वर्णाक्षरों में लिख चुका होगा ऊपरवाले ने क्योंकि हमने अल्लाह का नाम पहले लिया है और जीना बाद में शुरू किया है। हमने सोचा है कि एक मकान के दफन होते ही हम कई मकान और बनवा लेंगे। सिक्खों के वाहेगुरू अपना पयाम भेज रहे हैं और कह रहे हैं कि हे आने जानेवाले मुसाफिरों! मेरा नाम वाहेगुरु है। मैं तुम्हारा नाम हूँ। मैं तुम्हारा मकाम हूँ। मेरा आशीर्वाद तबतक तुम्हारे पास रहेगा जबतक कि सारी धरती एक गुलजार न बन जाए और पठान अपनी-अपनी मस्ती में खोये अपने-अपने बुनियादी महल के अजायबघरों में एक उम्मीद में सो रहे हैं कि एक दिन हमारा पयाम मशहूर होगा। हमारा नाम अमर होगा इतिहास में और इस तरह शहर बँटता चला गया। कुछ हिन्दूओं के हिस्से में आ गए, कुछ मुसलमानों के, कुछ सिक्खों के, और कुछ पठानों के। मगर शहर को बसानेवाले लोग फिर भी न बँट सके। एक अगर भागता रहा तो दूसरा सामने आकर खड़ा हो गया। मुझे गर्व भी हुआ, खुशी भी हुई और इनाम भी मिला। मेरी धरती का कोना-कोना आबाद था आज और मैं दुल्हन की भाँति लाल जोड़े में सुशोभित हो रही थी। मेरी चुन्नी तीन रंगों में रंगी थी। मगर मुझे लहू के रंग ज्यादा पसंद थे। मैं चाह रही थी कि कहूँ मुझे लाल रंग चाहिए। मुझे जलन होती है तुम्हारे वस्त्रों से। तुम लहू के रंग के वस्त्र पहने घूम रहे हो। मुझे भी वही दो पहनने को। मैं ख्वाब का कोरा इतिहास नहीं हूँ। मैं आरजू का जलता दीपक हूँ। एक शाम ऐसी भी आयी थी जब मातम छाया था हमारे दिलों में। मकानें सो चुकी थी रात के अँधेरे में और कुछ लोग दिन में दिवाली मनाते फिर रहे थे।

मैं सब देख रही थी और खामोश थी। मगर एक रोज जब लाशों का जलता अलाव देखा तो सोचने पर मजबूर हो गई कि ये माचिस की एक तीली की रोशनी नहीं बल्कि सैकड़ों उम्मीद के जल जाने की रोशनी है और ऐसा सोच मैं खुद ही अपने आप से बातें करती उन गाती वादियों की चर्चा करती रही। न कभी मेरी बातें खत्म हो सकी, न कभी मेरी बातों से लोगों के दिलों में प्रेम पनप सका। एक के पास मैं आधा बीघा चली गई तो दूसरे के पास एक गज की कमी पूरी करने में ही वक्त लग गए हमें। किसी ने मुझसे बाँस की लठें माँगी, किसी ने चार हाथ की पगडंडी। किसी ने मुझसे चीखें माँगी, किसी ने बेबसी का नया किस्सा भी कहा और मैं ये बात तबतक सोचती रही जबतक कि मैं पूरी तरह से सज-संवर न गयी, मौसम के निखार को खुद में समोहित न कर लिया।

पर मुझे न अपने सौन्दर्य से लज्जा आ सकी, न मेरे रुप-निखार पे कोई पर्दा पड़ा रह सका। मेरा नाम उन्होंने अपने नाम के साथ जोड़ अमर कर दिया। गाजे-बाजे का शोर हुआ और मैं उनमें दीये की लौ बन महकती रही। कुछ लोगों ने मुझे एक कारीगर की कारीगरी कहा तो कुछ ने कसीदेवालों की नई डिजायनें। मैं अनगिनत रंगो में अनगिनत वेश धारण

करती रही। किसी ने मेरी दीवारों पे अपना नाम लिखा, किसी ने मिटाया। एक मकान नीलाम होकर दूसरे के पास चले गये, दूसरा मकान नीलाम होकर तीसरे के पास।

तो कैसी हूँ मैं जो एक शहर की दास्तां लिए सदियों से खामोश बैठी हूँ। न मेरे आगाज ने मुझे खड़े होने से रोका, न मेरे अन्जाम ने मुझे मशहूर होने से वंचित किया। मैं पल-पल नाम कमाती रही। मेरी खातिर छोटी-छोटी झोपड़ियों की बुनियादों में पैमाने छलकते शराब की महक दफन होने लगी। उनका तो जी ऊबता रहा मुझे आबाद देखकर और मैं तड़पती रही अपनी ऐसी तुच्छ छवि को देखकर। मैंने फिर उन्हें उकसाना शुरु किया और वो मेरा इशारा समझते रहे। तोड़ डाले उन्होंने घास-फूस की छावनी और फेंक डाले मिट्टी की चंद दीवारों को और उनकी जगह एक ऊँची बिल्डिंग आकर खड़ी हो गयी। झुग्गी में रहनेवाले लोग इस तरह अमीर भी होते गये और शहर के साथ जुड़ एक दास्तां भी लिखती गई मैं। पर एक दिन ऐसा भी आया जब सारी धरती पे किसी ने अपना ही एक घर बना लिया और लोग तितर-बितर होने लगे। मगर मैं सब देखती रही और देखते-देखते कब मेरी पलकें मून्द गयी, रात का अँधेरा कब घिरा और रोशनी की एक सुबह लिए सूरज का गोला कब चमका? मुझे इसका पता भी न लगा।

तो पता क्या लगा मुझे अपनी दास्तां सुनाने में? मैंने अपनी बातें किसी को कलम से लिखने की प्रेरणा दी और उन्होंने फिर मेरी ऐसी रचना कर डाली जिससे मुझे लज्जा भी आयी, शर्म का नाम भी मिटा और मैं सारी धरती पे मशहूर भी हुई।

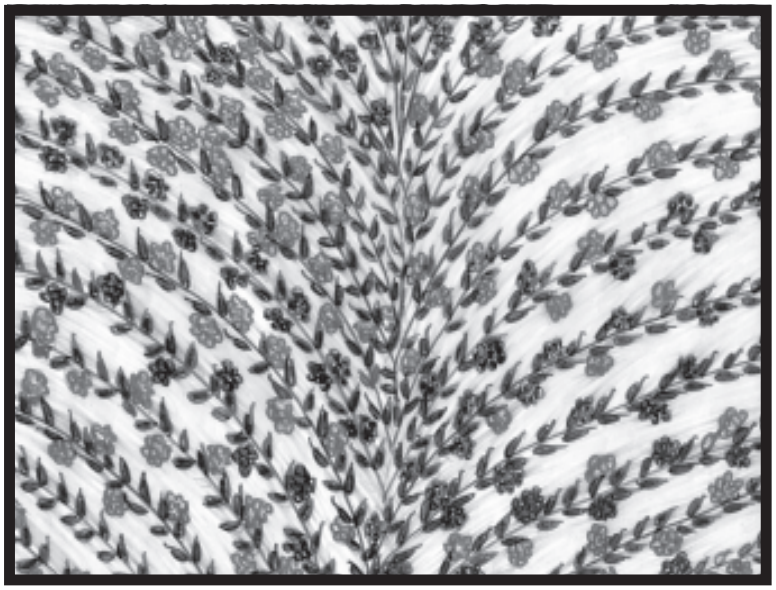

सांसारिक दृश्य

मैंने संसार में कई खूबसूरत शय देखे। कहीं पर हाथी-घोड़े दौड़ रहे थे। कहीं पर किसान खेतों में हल जोत रहे थे। कहीं पर छोटे-छोटे बच्चे गाँव की पगडंडियों पे दौड़ में शामिल हो रहे थे। कहीं पर मेले लगे थे। कहीं पर पटाखे छूट रहे थे। कहीं पर बारातें विदा हो रही थी। कहीं पर पहाड़ों से बहते हुए झरने प्रकृति को एक नया सौन्दर्य प्रदान कर रहे थे। सब अलग-अलग तरह के दृश्य थे। पर वो थे मेरे लिए एक समान क्योंकि मैं उन जगहों में अपनी एक जगह तलाशना चाह रही थी। मैं सोच रही थी कि जो हाथी-घोड़े दौड़ रहे थे रेसों में, उनमें मेरी जगह थी कि नहीं। क्या उनमें से किसी एक की पीठ पे मैं भी सवार थी? क्या जो किसान खेतों में हल जोत रहे थे, वहाँ पर मेरी कोई जगह बाकी थी। क्या मैं वहाँ उन हलों और कुदालों के बीच कहीं मौजूद थी? क्या वो लोग मेरी पहचान के थे जिनके हाथों में हल जोतने के सामान थे और जो बैलों को साथ लिये चले जा रहे थे? क्या उनमें कहीं पर भी मेरी एक पहचान मौजूद थी, पता नहीं। तो क्या जो बच्चे उन पगडंडियों पे एक दूसरे को साथ लिये चल रहे थे वो मुझे भी अपने साथ ले जा सकते थे। क्या उनकी जमात में मेरी कोई जगह बन सकती थी। अगर जाना चाहती मैं तो क्या वो लोग मेरे हमउम्र होने का बहाना बना सकते थे। कौन जाने या क्या खबर पर थे तो सब सांसारिक शय ही, सांसारिक बन्धन ही, सांसारिक रिश्ते ही। भले ही वो मुझसे जुड़ने को तैयार हों या न हों। मुझे अपनी जमात बनाना चाहते हों या न चाहते हों। क्या कभी वो पगडंडियाँ मुझे अपनी जैसी नहीं लगी थी, क्या कभी मैं भी उन बच्चों के साथ उनपे नहीं दौड़ी थी। या आज वो डगर अनजानी सी हो गयी थी। या कल ही अनजान हो कई थी वो हमसे। क्या पता क्या खबर? पानी की बूँदें तो हमने हमेशा देखी थी। नहाया भी था उनमें, पर शायद बहते हुए झरने हमने कभी पास नहीं देखे थे या उनमें मेरी अपनी जगह कहीं मौजूद नहीं थी। नहीं मालूम मुझे पर मेले तो अपने जीवन में कई बार लगे देखे थे हमने। पटाखे भी कई बार खरीदे थे हमने उस मेले से। पर आतिशबाजियों का मजा शायद मैंने लिया था कि नहीं, याद नहीं मुझे। पर गली में होते शोर तो हमारे कानों ने जरूर सुने थे। हमने दिवाली तो नहीं मनायी शायद, पर दीये जलते भी देखे या नहीं, नहीं मालूम मुझे। ईश्वर को हमने कई बार देखा बादलों के साथ जाते हुए। कभी बारिश की बूँदों के रूप में, कभी बिजली की चमकती छड़ी के रूप में, कभी धमाके की आवाजों के रूप में वो हमे दिखते रहे।

हमने सब कुछ एक साथ देखे, पर शायद ये याद नहीं रहा मुझे कि गाजे-बाजे वाले इन शोरों के बीच नाचते-गाते किस गली से गुजर गये। क्या दुल्हन सजी? क्या डोली द्वार पे रूकी? क्या सचमुच बाराती विदा हो गये या ये सब खिलौनों के दुकानों की भीड़-भीड़ थी। क्या ये सब खिलौने लेनेवाले लोग थे जो गाजे-बाजे का शोर किए आ रहे थे, जा रहे थे। क्या ये पीं-पीं की आवाज गली-मुहल्ले से आ रही थी या गली सूनी हो गई थी और राहें रो-रोकर किसी की याद में गुहार कर रही थी।

क्या सच में ये सब प्राकृतिक सौन्दर्य का निखार था या मस्ती का एक माजमा था ये। क्या पता, क्या खबर? बस ये सब जगहें थी। ये सब बातें मुझसे अपनी एक जगह बनाना चाह रही थी। मुझसे ये पूछना चाह रही थी कि सब के साथ कहीं मेरा कोई रिश्ता

तो नहीं। क्या किनारा इसी मोड़ से शुरू होता होगा? क्या सफर की मन्जिल सब रास्तों को पुकारा करती है? क्या नावें इन्हीं लोगों को लेकर गुजरती होगी? क्या पानी में तैरकर जाने वाले यही लोग होते होंगे जिनके हाथों में कागज के चन्द टुकड़े और बदन पे फटी कमीज दिखाई देती हो। क्या इन्हीं लोगों ने शुरूआत की होगी सांसारिक माजमे की? क्या इन्हीं लोगों की भीड़ों को प्रकृति ने अपने सौंदर्य-निखार का रूप-श्रृंगार माना होगा? क्या पता, क्या खबर? एक रास्ता पगडंडी का था। एक रास्ता गली का था। क्या एक रास्ता शहर का भी था उनसे होकर जाता हुआ? तो क्या हमारे कदम हर रास्ते से होकर गुजरे या हमने पहले गाँव की पगडंडी को छोड़ा, फिर गाँव की गली को, फिर गाँव के रास्तों को, फिर गाँव की बस्तियों को, फिर बढ़ती भीड़ों के कतारों को। हमने सबके पास क्या-क्या छोड़ा?

क्या हमने कभी हाथी-घोड़े के रेस देखे भी या उनमें यूँ ही अपनी एक जगह बना ली। क्या हमने कभी हल जोतते किसान देखे भी या यूँ ही उनमें अपनी एक पहचान तलाशनी चाही। क्या मेले की दुकानों से पटाखे खरीदने के पैसे थे हमारे पास या दूसरे के छोड़े हुए पटाखों के शोरों को सुनते रह गये हम आजतक। क्या पहाड़ों से बहते झरने कभी आये हमारे सामने या यूँ ही उसे प्रकृति का सौंदर्य मानकर अपने जेहन में आजतक दौड़ाते रह गये हम। क्या पता, क्या खबर? क्या गाजे-बाजे के शोर सच में सुने हमने या खिलौनों की डोली को ही दुल्हन की उठती डोली मान बैठे हम। क्या पता, क्या खबर? क्या बाराती मेरे सामने ही विदा हुए या बारातियों को ही विदा कर पाने की चाह में इस गली से उस गली तक भटकते रह गये हम? नहीं मालूम, पर इतना तो जरूर मालूम होते पाया हमने कि जो भी देखा संसार का ही एक सुन्दर दृश्य था हमारे लिए। चाहे वो ख्वाब हो या हकीकत, चाहे वो हसरत हो या मुहब्बत, चाहे वो गुमनामी का नया नाम हो या मेरी जरूरत। ये सब जगहें थी। ये सब बातें मुझमें अपनी एक जगह बनाना चाह रही थी।

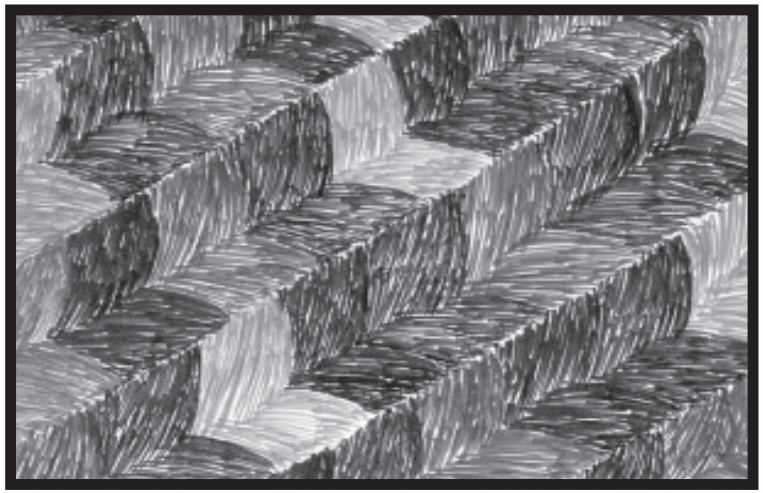

दुल्हन

मैं लाल जोड़े में लिपटी एक ऐसी दुल्हन बोल रही हूँ जिसकी शर्मोहया ने उसे मार दिया। मैं पहले ब्याही गयी। मेरी बारात जो मेरे घर आयी, वो विदा हो चली मेरे साथ। मगर मैं वहीं रह गयी उसी मकान में जहाँ पर एक कमरा मेरा भी था जहाँ मैं सोया करती थी। मैं जाते वक्त वो कमरा न ले जा सकी अपने साथ। माँ-पापा ने विदाई के वक्त मेरे आँचल में रूपये-पैसे की सौगात दी। उसे ले मैं दुल्हन चल पड़ी एक नये मकान के एक छोटे से कमरे में सोने। मगर ये कमरा तो बिल्कुल अलग था मेरे पहले वाले कमरे से। यहाँ की सारी खिड़कियाँ बन्द थी, कमरे का दरवाजा खुला जिससे लोग आ रहे थे, जा रहे थे। मगर मैं तो अपने आपको इस छोटे से कमरे में कैद पा रही थी। यहाँ न मेरे माँ-पापा थे, न मेरी सहेलियाँ थी। यहाँ तो एक बिस्तर था, बिस्तर पे बिछे फूल थे जो काँटे बन मेरे जिस्म में चुभ रहे थे। मैंने एक बार फिर माँ को पुकारा और कहा माँ! ये कमरा नहीं माँ, एक कैदखाना है मेरे लिये। ये मकान नहीं माँ! कब्रिस्तान है मेरी नजर में। मगर माँ कहाँ सुन सकी मेरी आवाज। रातें आती गयी, मैं सोती गयी। मगर खिड़की से बाहर झाँककर आज तक नहीं देखा मैंने कि दुनिया कैसी है? मेरी सास ने कहा, बहु! सर पे पल्लू डाल ले। तेरे ससुर यहीं आ रहे हैं। मैं सर पे पल्लू रख लेती हूँ। तभी फिर मेरी सास आती है ये कहने कि बहू! आँचल सँवारा कर। लोग आते ही रहते हैं। पर मैं दुल्हन ये सोच रही हूँ कि मैं कब तक सास-ससुर और पति का हुक्म मानूँ।

सास कहती है सर पे पल्लू रख। पति कहता है मेरे साथ बिस्तर बन सो जा। पर मैं दुल्हन के लिबास में छुपी अपनी पुरानी छवि को याद करती हूँ तो रो पड़ती हूँ कि माँ! तूने मुझे दुल्हन बना एक कैदी का जीवन दे दिया। माँ! तुम एक बार भी मुझसे मिलने न आ सकी। मेरे पति मुझे दुल्हन कम, एक महरी ज्यादा समझ रहे थे। मेरी सास मुझे एक चालाक लोमड़ी दिख रही थी। पर मैं इन सब के बीच खामोश बैठी यहाँ से वापस जाने का रास्ता तलाश रही थी। मगर खिड़कियाँ तो बन्द थी, कमरे तो बन्द थे। दरवाजा कैसे खुला रहता? फिर मैं किस दरवाजे से वापस जाती। मैं एक बार फिर सास के कदमों में गिर पड़ती हूँ और कहती हूँ, माँजी! मुझे पापा के घर जाना है। उनकी बहुत याद आ रही है। तो सास कहती है, तो मैं क्या करूँ बहू? तुम्हारा पति जाने कि तुम कब माँ के घर में रहोगी, कब मेरे घर में? एक बार फिर मैं सास की बातों के आगे निरूत्तर हो जाती हूँ। पति आते हैं, वही बात दुहराती हूँ कि मुझे पापा के घर जाना है। आज उनकी बहुत याद आ रही है। वो कहते हैं, ठीक है माँ-पापा से पूछ चली जाना। पर मैं दुल्हन, अकेली कैसे जाती पापा के घर? वहाँ से तो मेरा घर बहुत दूर था। टैक्सी वाले पैसे माँगते, मैं कहाँ से देती और फिर उन माँ-पापा के घर जाकर मैं क्या करती जिन्होंने खुद मुझे इस बेजान घर में भेज दिया जहाँ की दीवारें, जहाँ के कमरे, जहाँ की खिड़कियाँ, जहाँ के रास्ते मेरे लिए अजनबी थे। विवश मैं यहीं बर्दाश्त कर रह जाती हूँ और फिर एक दिन मेरे पापा आते हैं मुझसे मिलने। वो कहते हैं, बेटी खुश है न? तब मैं कैसे कहती कि पापा तुम खुश देखना चाह रहे हो मुझे यहाँ जहाँ की राहें मेरी पहचान की नहीं, जहाँ कि मिट्टी मेरी पहचान की नहीं। मैं खामोशी से गर्दन हिला देती हूँ और वो खुशी-खुशी चले जाते हैं। बेटी ससुराल में बहुत खुश

है। पर बेटी मायके में नाराज कब थी पापा! बोलो पापा! मैं आपसे नाराज कब थी। मगर सुनने वाले वो कान तो रिक्शे में बैठ शहर छोड़ जा चुके थे। मैं खामोशी से सिसकने लगती हूँ। सास-ससुर, पति मुझे रोता देखते हैं। मगर मुझपे दया नहीं आती उन्हें। दया क्यों आये? जब जन्म देने वाले माँ-पापा को दया न आ सकी मुझपे तो पराये मुल्क के पराये लोग मुझपे क्या दया दिखाते ? मैं दुल्हन आज अपने लाल जोड़े को देख रही थी और सोच रही थी कि ये लाल जोड़ा नहीं, मेरे लिए सफेद कफन है जिसे जानबूझकर मेरे जिस्म से लिपटाया गया है। मेरी दुनिया यहीं रह जाती है कैद होकर शहर के इस छोटे से मकान में। मैं खामोशी से दिन गुजार लेती हूँ। सर पे पल्लू भी रखती हूँ। सास के पैर भी दबाती हूँ। बिछड़े माँ-पापा को याद भी करती हूँ। मगर मैं जिन्दा अपने आप को कभी नहीं पाती। मेरी तो मौत कई साल पहले हो चुकी थी, जब मैं दुल्हन बनी थी। हाँ, मेरे कदमों में एक हसीन दुल्हन की लाश आज भी पड़ी थी जो चुपके से मुझसे यही कह रही थी कि पापा! ये तुमने अच्छा नहीं किया। माँ! ये तुमने अच्छा नहीं किया। ऐ मेरे रिश्ते-नातों! ये तूने अच्छा नहीं किया। ऐ समाज के रीति-रिवाजों ये तूने अच्छा नहीं किया!

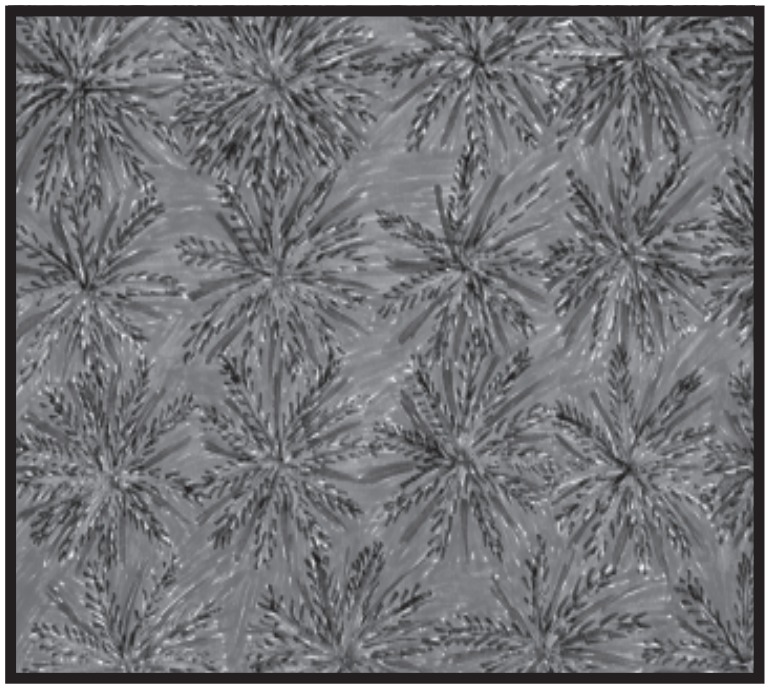

मैं समाज, मर्द का समाज

मैंने इतनी जिन्दगियों को करीब से देखा और सोच में डूब गया कि मैं कौन हूँ जिसकी गोद में इतने बच्चे सिसक रहे है, इतनी माएँ तड़प रही हैं, इतनी पत्नियों का संसार उजड़ रहा है। मैं कैसा समाज हूँ जहाँ न बच्चे को अच्छी परवरिश मिल रही है न आदमी अच्छे संस्कार पा रहा है यहाँ। हाँ, मैं आज का समाज हूँ जिसमें रहने वाले हर एक इन्सान की आँखें काली है जो अँधेरे को इतने करीब से देख रहे हैं कि मैं हैरान हो रहा हूँ। मैं ये सोच रहा हूँ कि मैंने अपने इर्द-गिर्द कैसा समाज बनाया जिसमें औरतों की गोद में यतीम बच्चे पल रहे हैं। मगर मैं उन्हें एक नाम नहीं दे पा रहा। मैंने उन्हें दुत्तकारा। उनकी आँखें नोच डालने की धमकी दी उन्हें। कहा, मैं मर्द हूँ। मुझमें हिम्मत है, मुझमें ताकत है इतनी कि मैं तेरी आबरू छीन सकूँ। मैं मर्द हूँ। मैं कभी सर झुकाकर नहीं चलता हूँ। मुझे सर उठाकर चलने की आदत पड़ चुकी है। मैंने औरतों की किस्मत में आँसू भर दिये हैं। मैंने मर्दों के लिए शराब खाना खोल रखा है। मैं आदमी को गुमराह कर रहा हूँ। हाँ, मैं यही करता आ रहा हूँ। मगर मुझे कोई हाथ रोकने को आगे नहीं बढ़ रहा। मैं मर्द हूँ। मैं मर्द का एक समाज हूँ। मेरी गोद में तवायफें नाचती है। उनके घुँघरू सोते हैं मेरी जेबों में। मैं हाथ में बोतल लिए हूँ शराब की। मैं पी भी रहा हूँ, इसे बहा भी रहा हूँ। हाँ मैं एक मर्द हूँ, हाँ मैं एक समाज हूँ। मैं लोगों को ऐसे रास्ते पे चलना सिखाता हूँ जहाँ वो नाचते हैं, गाते हैं, पीते हैं, पीलाते हैं। जहाँ वो लड़ते हैं आपस में, रंजिशें करते हैं। फिर भी मैं महान हूँ। हाँ मैं महान हूँ, मुझे समाज कहते हैं, आज का समाज। कहीं एक कोने में किसी की बेटी की बोली लगते देख रहा हूँ मैं, कहीं नन्हीं सी बच्ची बूढ़े की डोली में बैठ विदा हो रही है। कहीं कुलटा, कलंकिनी के नाम से वो जानी जा रही है जिसे मैंने अपने समाज की औरत कहा। यहाँ मैं एक रात में करोड़ों लड़कियों के जिस्मों से खिलवाड़ करता हूँ। शराब फेंकता हूँ उनपर, शराब चाटता हूँ। मैं इतना गिरा हुआ समाज हूँ कि मुझसे हर माँ शर्मिन्दा है। मुझसे हर बेटी शर्मिन्दा है, मुझसे हर पत्नी शर्मिन्दा है। पर मैं ऐसा प्रेमी हूँ जो गाकर रिझाता हूँ उन्हें, नाचकर दिखाता हूँ उन्हें। वो शर्म से मुँह छुपा लेती हैं। बुराई मैं करता हूँ। शर्म उन्हें आती है। मैं कितना बड़ा हूँ इनकी नजरों में। ये मेरे कदमों की धूल हैं। मैं उनके माथे की बिन्दिया। मैं हर ललाट पे सुशोभित हो रहा हूँ, मैं हर ओठ पे सजाया जा रहा हूँ। मैं हर हथेली पे रचाया जा रहा हूँ। मैं इतना नीच काम कर रहा हूँ और कहला रहा हूँ एक समाज। एक गुजारे का समाज, एक सहारे का समाज। मुझमें इतनी जिन्दगियाँ पनाह ले रही हैं। कोई ये कह आता है कि मुझे एक रोटी की तलाश है। मैं यहाँ पेट भरने आया हूँ। मुझे खाना दोगे। कोई ये कह जाता है कि कि मुझे यहाँ खाने का निवाला नहीं मिल रहा, ऐसे समाज से दूर हो जाना चाहता हूँ। जहाँ मेरी बहू, मेरी बेटी को नीच नजर से देखा जा रहा है। तो इन मर्दों के गंदे समाज में किसी मर्द की बेटी कहीं बदनाम हो रही है, कहीं किसी मर्द की माँ को लोग एक तवायफ का दर्जा दे रहे हैं। वो माँ की ममता को कलंकित कर रहे हैं। फिर भी वो कहते हैं, ये मेरा समाज है। तो मैं कितना खुशनसीब हूँ कि वो ही औरत मुझे जन्म दे मेरे ही कुकर्मों की सजा पा सिसक रही है। कहीं मैं अट्टहास करता खड़ा हूँ। कहीं मैं सिसकता कराह रहा हूँ क्योंकि मैं एक मर्द का समाज हूँ। मुझे जन्म देने वाली माँ भी एक औरत थी और मैं उसी माँ की

आबरू से खेल रहा हूँ। वो मेरे पास रह खुद को बदनाम महसूस कर रही है। मैं उन्हें बदनाम कर रहा हूँ। मैं कैसा नीच काम कर रहा हूँ। पर मुझे शर्मिन्दगी नहीं होती इस बात से। मैं आज इतना खुश हूँ कि मैं हर दिन एक शराबी, एक जुआरी, एक नामर्द की बेकारी खरीदता जा रहा हूँ। मुझसे शिकायत करने वाली औरतें मुझे कोस रही है। मैं फिर भी नहीं मरता। मैं बच्चे से जवान, जवान से बूढ़ा तो होता हूँ। मगर मेरी पैदा की हुई ये नामर्द नस्लें नहीं मरती। एक के साथ एक और चली आती है।

यही परम्परा है हमारी, यही रीति-रिवाज हैं हमारे कि कहीं से भी एक ही नजर आता हूँ मैं। मुझसे शर्मिन्दा होनेवाली माँ भी मुझसे नहीं ऊबी है। वो एक नहीं अनेकों मर्द पैदा कर रही है हर दिन और इन माँ की कोख से हर दिन एक गंदा समाज जन्म ले रहा है। तो गुनहगार कौन हुई? एक औरत, जिसने इतने मर्द पैदा किये। मैं तो फिर भी पाक हूँ, पवित्र हूँ कि मैं एक समाज हूँ। मुझसे डर है किसी को भी कि ऐसा काम कर मैं समाज को क्या मुँह दिखाऊँगा? अगर मेरी बेटी गैर जाति में अपनी मर्जी से ब्याही जाती है तो मैं कहीं का नहीं रहूँगा। तो कितनी अजीब बात है समाज शर्मिन्दा भी हो रहा है तो किससे? एक बेटी से, एक औरत से क्योंकि उस औरत ने अपनी पसन्द की एक मर्द जाति का चुनाव किया है। अगर मैं उसके साथ जुर्म करता हूँ तो यह मेरा गुनाह कहाँ, ये तो एक औरत की पसन्द है। हाँ मैं एक समाज, आज का समाज, किसी औरत की पसन्द ही तो हूँ ये सोच इतरा जाता हूँ और जो माँ, जो बहन, जो बेटी मुझसे शर्मिन्दा हो रही है, वो कहीं-न-कहीं जहर का एक पैमाना पी रही है।

मैं ये सब देख रहा हूँ और सोच रहा हूँ मैं कौन हूँ? मैं कैसा समाज हूँ जो जहर बेचता हूँ, जहर खरीदता हूँ मगर जहर पीता नहीं पीलाता हूँ। यही तो मेरी महानता है कि मैं कुछ भी करूँ, मैं एक समाज ही रहूँगा। सदा लोग मेरे कदमों में होंगे और सबसे ज्यादा खुश तो मैं इस बात से होता हूँ कि मैं एक मर्द का समाज हूँ जो हर क्षण, हर लम्हा एक औरत की जिन्दगी से खेल रहा हूँ और वही औरत अपनी कोख से मुझे पैदा कर रही है।

हाँ, मैं एक माँ हूँ

मैं सृष्टि की गवाह एक माँ हूँ जिसने इतने दर्द सहे, मगर बस यही कहा, बेटे खुश रह, हँस-मुस्करा। मेरी आँखों में जो तूने आँसू दिये वो तेरे ओठों की मुस्कान बन जाए। मैंने अपनी बेटी को पल-पल अपने बेटे से नीचा देखा। मेरी बेटी गैर के घरों में बर्तन माँज रही थी, मेरा बेटा ठाट से बिस्तर पे सो रहा था। मेरी बेटी रो रही थी, मेरा बेटा खुश हो रहा था। मेरी बेटी पहली मर्तबा जब ससुराल से आयी थी पूछा था मैंने पति कैसा मिला? सास-ससुर का व्यवहार कैसा रहा? उसने कहा, न सास अच्छी मिली माँ, न ससुर पिता धर्म निभा सके। न पति देवता बन मेरी रक्षा कर सका। तब मैं अपनी बेटी से झूठमूठ भी ये न कह सकी बेटी! तू भाई के घर रह जा क्योंकि मैं जानती थी ये घर बेटी के लिए पराया हो गया तब से, जब से मैंने उसे ब्याह दिया। तो बेटी के आँख से बहते आँसू भी मेरे घर में उसे एक कमरा न दे सके। मैं विवश माँ यही कह खामोश हो गयी कि बेटी अब वो ही तेरा घर है, जिन्दगी निर्वाहने की कोशिश करना। तब बेटी यही कह चुप रह गयी कि जिन्दगी निर्वाह कर लूँगी माँ। भैया तुम्हें तो ठीक से रखता ही नहीं, मुझे क्या रख लेगा माँ? ये मेरा घर नहीं माँ, ये भैया का घर है, ये भाभी का घर है, ये तुम्हारा घर है। मैं माँ, बेटी की बेबसी को समझते हुए भी न समझ सकी। बेटी तो दो दिन गम भूलाना चाहती थी भाई के घर में रहकर। मगर भाई ने कहा, माँ कह दो अपनी बेटी से कि ये घर उसका नहीं जो जब जी चाहे चली आए। बच्चे जवान हो रहे हैं। मेरे पास इतने भी पैसे नहीं कि मैं बहन और भानजी की देखभाल करूँ। मैं माँ खामोशी से कह देती हूँ अपनी बेटी से कि बेटी जा, अपने घर जा और बदनाम हो जाती हूँ। बेटी जो दो दिन गम भूलाना चाहती थी, वो गम तो और बढ़ गये उसके। मैंने बेटी के आँसू पोछे और कहा, मैं माँ हूँ बेटी। तेरी परवरिश के लिए जो पैसे बचाये थे उसे मैंने तेरे ब्याह में लगा दिया। बाकी पैसे तेरे भाई ने मुझसे छीन लिए। बेटी चली जाती है। मेरा बेटा, मेरी बहू बहुत खुश होते हैं। मगर मैं माँ इतने भी आँसू रो पड़ती हूँ कि बूढ़ापे की लाठी तक नजर नहीं आती मुझे। तो बेटी के चले जाने के बाद जब भूखी-प्यासी दरवाजे को ताकती हूँ तो याद आता है। कल मेरी बेटी इसी दरवाजे से विदा हो गयी थी। आज वो मंजर दुबारा मेरी आँखों के सामने थे। मैंने बेटे के आगे हाथ फैलाये थे कि मेरी बेटी को एक अच्छी सी साड़ी ला दे। तो बेटे ने कहा, बेटी के लिए कितना सोचती है माँ, उतना ही बहू के लिए भी सोच। तो मैं सोच में पड़ जाती हूँ। बेटी क्या थी? बहू क्या है? बेटा कैसी बातें कर रहा है? तो लगता है, मैं कैसी माँ हूँ जो इतनी भी पीड़ा सह औलाद पैदा कर देती हूँ पर औलाद को दो बातें कहने का अधिकार नहीं पाती। मेरी बेटी चली गयी। महीने गुजर गये। आज बहुत मन किया कि बेटी को दखूँ तो मैंने बेटी की तस्वीर उठा ली। तब बेटे ने मेरा चश्मा छीन लिया और कहा, माँ पहले ही तुम्हारी आँखें खराब है। ये दिन-रात फोटो निहारती रहोगी तो आँखें और कमजोर हो जाएँगी। तब मैं विवश माँ ये भी नहीं कह पाती कि बेटे मैं तो तुम्हे दिन-रात निहारती रहती हूँ पर मेरी आँखें नहीं थकती नजर आती तुम्हें। आज एक बार बेटी को निहार लिया तो मेरा इतना ख्याल आ गया तुम्हें। मेरी आँखें तो पता नहीं कब से बेटी को देखने को तरस गयी हैं। फिर एक दिन दुबारा मेरी बेटी आती है ये कहने की माँ! मेरे पति के साथ मेरा निर्वाह न हो सका। तब मैं अपने आँसू पोछ लेने को कहती

हूँ उसे, बेटी ऐसा न कह। इस घर में तुम्हारा निर्वाह नहीं हो सकेगा। तेरी भाभी सुन लेगी। बोल, कोई बच्चा-बच्चा है कि नहीं तेरी कोख में। जब बच्चे हो जाते हैं, पति अपने आप रास्ते पे आ जाता है। तब बेटी कहती है, राक्षस की औलाद पैदा कर मैं महान औरत बनूँ माँ। इसलिए कि मुझे गुजारे के लिए फकत एक घर मिल सके। भले ही यहाँ मैं नौकरानी बन ही क्यों न रहूँ। पर माँ, नौकरानी बनना भी आसान है पर किसी की बहू, किसी की पत्नी बनना बहुत मुश्किल। तब माँ ये सुन सोच में पड़ जाती है कि बेटी को इतनी भी तकलीफें उठाने पड़ रही है। मैं बेटे से ये कहने की हिम्मत नहीं कर पाती कि बेटा तुम्हारी बहन, तुम्हारे बहनोई के साथ खुश नहीं है। उसे अपने घर में एक कमरा दे दो। तुम्हारा घर तो इतना बड़ा है। मगर मैं सोच तो लेती हूँ, कह नहीं पाती। आँखों से ओझल बेटी की चिता जल जाती है। मैं माँ तमाशायी बन देखती रह जाती हूँ।

यही मेरी कहानी है, एक माँ की कहानी, जिसे पल-पल एक तड़प है कि मेरी बेटी भी मेरे बेटे की तरह खुश रह सके। मगर इस संसार की रीत मुझसे परे है।

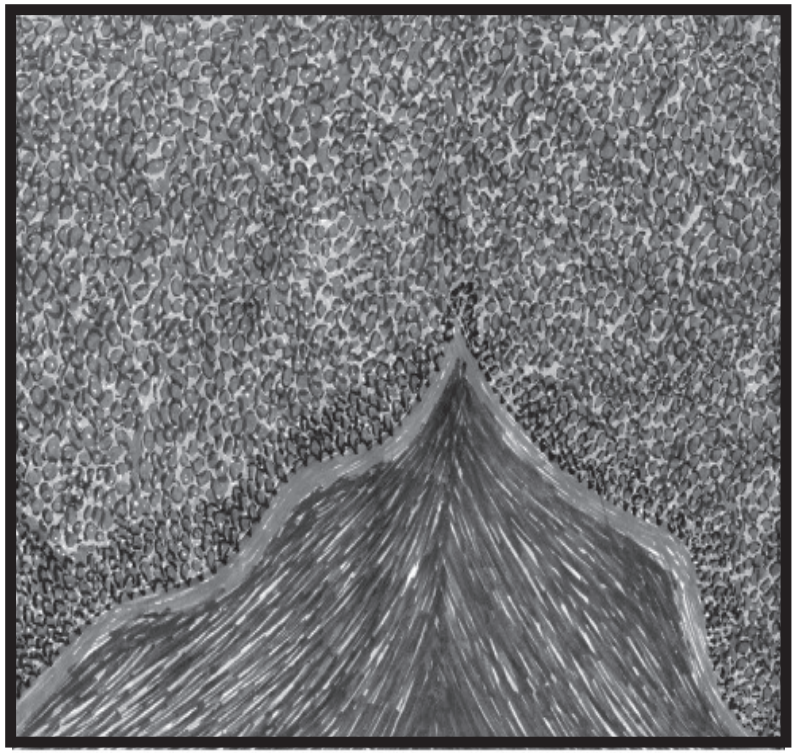

पिता धर्म

मैं एक बदनसीब पिता बोल रहा हूँ जिसने एक ही नस्ल की दो औलादों को अपने घर में पनाह दिया। मगर जब वो जवान हुए, मैंने उसे पराया बना दिया। हाँ, मैं पिता धर्म न निभा सका। अपने आँगन की नन्हीं कली की कहीं अलग दुनिया बसा दी मैंने। वो जब मेरे घर से विदा हो रही थी कहा था, पिताजी! मैंने अपना वचन निभा दिया। आपने कहा था मुझे बचपन से कि बेटी पिता की जिम्मेदारी होती है और बेटी का भी फर्ज बनता है कि वो अपनी जिम्मेदारी निभा सके। मगर मैं बदनसीब पिता, बार-बार अपने कांधे को देख रहा था और महसूस कर रहा था कि मेरा कांधा हल्का हो गया। बेटी ससुराल चली गयी, मेरा काम खत्म हुआ। मेरे सर पे आयी बला टल गयी।

हाँ, मैं एक पिता, यही सदियों से सोचता आ रहा हूँ, करता आ रहा हूँ। ये कैसा मुल्क बसाया हमने? ये कैसे घर के सपने देखे हमने जिनकी दीवार बेटी की सिसकियों पे खड़ी थी। मगर मैं इतना सोचते हुए भी इस रीत को बदल नहीं पाता हूँ। मैं तो ऐसा कर अपना फर्ज निभाता हूँ। हमारी बेटी एक नये मुल्क में, एक नये घर के छोटे से कमरे में कैद हो जाती है। मैं नहीं देखता उसकी ओर। मैं तो शान से कहता हूँ कि बेटी ससुराल में है। हाँ, हमारी बेटी ससुराल में है। तो मैं एक भद्र पिता, बेटी के ही साथ अभद्रता कर बैठा। मगर अफसोस! बेटी ने कभी हमें दोषी करार नहीं दिया। कभी ये नहीं कहा कि पिताजी! मुझे भी सम्पत्ति में हिस्सा दे दो। अपने घर में एक छोटा सा कमरा दे दो। तो इतनी भी महान बेटी को मैंने घर से निकाल दिया ये सोच कि वो हमारे कांधे का बोझ है। पर मैं पिता एक बार भी न सोच सका कि वो हमारे बेटे से कम कहाँ है। फर्क क्या है बेटी-बेटे में? बेटा शान से दारू पीता है, मैं पीने के लिए पैसे देता हूँ उसे। वो शराब के नशे में चुर डगमगाते कदमों से घर आता है, तब मुझे शर्म महसूस नहीं होती। बेटी दो-से-चार दिन क्या रह गयी मायके में, मुझे शर्मिन्दगी होने लगी। मैं लोगों से नजरें चुराने लगा कहीं कोई ये न कह दे कि बेटी को ससुराल वालों ने घर से निकाल दिया। मगर मैं पिता यही कर रहा हूँ सदियों से। बेटा दारू पीये, गाँजे-चरस का सेवन करे, ये मेरे कांधे को हल्का कर रहे हैं और बेटी जो घर में बर्तन माँज, झाड़ू लगा खाना बनाकर दे रही थी हमें, हमने उससे शर्मिन्दगी महसूस की। अरे! कितना गिरा हुआ इन्सान हूँ मैं कि आँगन के खिलते फूल को पराये घरों में झुलसने को छोड़ देता हूँ। बेटी का चेहरा मुर्झा जाता है। फिर जब मैं उसे देखने जाता हूँ, पाता हूँ कि वो बर्तन वहाँ भी माँज रही है, खाना वहाँ भी बना रही है, मगर प्यार कहाँ उसके नसीब में?

सास अलग कह रही है कि बहू काम जल्दी से खत्म कर। इनके दफ्तर जाने का समय हो गया है। बेचारी बेटी! जो बहू बन भी इस घर में एक बोझ ही बन के रह गयी। अब और क्या-क्या करना पड़ेगा उसे वहाँ ताकि लोग ये न कहें कि इसे विदा कर मैंने अपने कांधे का बोझ हल्का कर लिया। बेटी का तो कोई घर है ही नहीं। तो कितना वजन है हमारी बेटी के जिस्म में कि वो हर कांधे से उतरती ही जा रही है।

तो मैं पिता, ये सोचने पर एक बार फिर मजबूर हो जाता हूँ कि मैंने अपनी बेटी को क्या जीवन दिया? जो मेरे साथ पली-बढ़ी, खेली और जवान हुई, जिसने मेरी उँगली

का सहारा ले चलना सीखा, वो आज इतनी भी तुच्छ हो गयी हमारी नजर में कि हमने उसे पराये घर की नौकरानी बना दिया। मैं इस गुनाह के लिए अपने आपको कभी माफ नहीं कर सकूँगा क्योंकि मैं बेटी की जिन्दगी का कातिल, एक अभागा, बदनसीब, मतलबी पिता हूँ जिसे आज तक बेटी के आँसू नहीं दिखे, उसके अरमान नहीं दिखे। मैं बेटी को न जाने क्या समझ बैठा जो घर से दूर भेज परदेशी बना दिया उसे। जहाँ से न वो अकेली आ सकी, न मैं उसे लेने जा सका। बस खत से हाल-पता पूछता रहा। एक दिन बेटी ने लिखा पिताजी, मैं घर आना चाहती हूँ। भैया को भेज दो या खुद आ जाओ। तब मैं सोच में पड़ जाता हूँ कि कहीं बेटी पे कोई मुसीबत तो नहीं आ गयी जो उसने खत लिख दिया।

तो मैं कितना मतलबी खुदगर्ज पिता हूँ जो बेटी की ख्वाहिशों से, उसकी आरजूओं से मतलब निकाल रहा हूँ। मैं बेटे से कहता हूँ कि तुम्हारी बहन ने तुम्हें बुलाया है। तब बहू तपाक से कह देती है, पिताजी! रहने दीजिए, अभी इनकी तबीयत ठीक नहीं। फिर कभी चले जायेंगे। मैं पिता भी इसी बात पे रजामंदी दे देता हूँ। बेटी एक बार फिर तरस जाती है ख्वाहिशों के मेले से एक सामान खरीदने को और मैं पिता बेटे के परिवार के साथ हँस रहा हूँ, खुश हो रहा हूँ। बेटी पता नहीं कैसी होगी, ये सोचे बगैर क्योंकि मैंने उसका कन्या-दान जो कर दिया सोलह साल की उम्र में। अब वो रिश्ते से परायी हो गयी। शायद यही पिता धर्म है हमारे लिए।

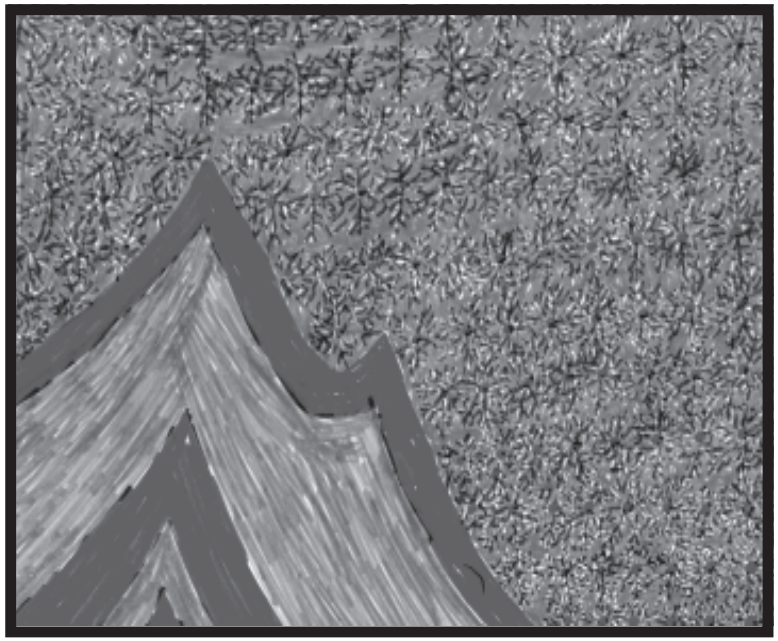

डोली

कितने अरमानों से माँ ने मुझे डोली में बिठाकर विदा किया था और कहा था कि बेटी लौटकर जरूर आना। मेरी आँखों को चाँद-तारे मुझे हिंडोले में झुलाते नजर आ रहे थे। मैं बावरी, अपने नैनों से रंगबिरंगी तितलियों को मात कर रही थी। रास्ते मुझे पहचानते हुए भी पहचान बदल चुके थे। मेरी सरहदें पराये मुल्क में दस्तक दे चुकी थी। मेरी माँ का आँचल मेरे सर से हट चुका था। मेरे संगी-साथी अलग-अलग मुल्क की तरफ मेरे आने से पहले, मेरे आने के बाद रवाना हो चुके थे। मेरे बाबा मेरे नैनों के काजल से अपनी आँखों के दीये रोशन कर चुके थे। मेरी भाभी काजल का टीका मेरे माथे पे लगा, मेरे सर पे चुन्नी ओढ़ा चुकी थी। मेरी पड़ोस की ताई, मेरी पड़ोस की भाभियाँ, मेरी पड़ोस की बहनें मुझे विदा करने आ चुकी थी। मेरे बिखरे बाल गजरे समेट चुके थे। मेरे माथे की बिन्दिया अठखेलियाँ करती मेरे साथ चलने को व्याकुल हो चुकी थी। मेरे भैया मेरे हाथों से अपना हाथ छुड़ा चुके थे। मेरे दादा-दादी मेरे गम में दरवाजे को तकते अपनी पथरायी निगाहों को वापस समेट चुके थे। मेरी सगी बहन मुझसे लिपट रो चुकी थी और मैं डोली और बारात के साथ शगुन की थाल को पलट इन सब से रिश्ता तोड़, अपनी नयी पहचान बनाने निकल पड़ी थी। ऐसे में पीछे से मेरी माँ की आवाज आयी "बिटीया धूप में मत खेल, लू लग जाएगी।" बाबा कह रहे थे-बेटी कहाँ घूमने चली गयी थी बाहर, खाना परोस दे। भाभी कह रही थी ननद रानी! खेलना छोड़ दे और भैया के साथ कुछ ठिठोली कर ले । मायके का रिश्ता बड़ा कच्चा होता है। एक पल में हाथ से छूट जाता है। भैया कह रहे थे, लाडली बहना! मेरे बटन टाँकना सीख ले। ससुराल जाएगी तो पति के काम आएँगे। पड़ोस की ताई कह रही थी, बिटिया जान! नखरे कब तक करेगी, सास की एक आहट पे दौड़ी आना पड़ेगा। सखियाँ कह रही थी, बहन! हमारी माँ तुमसे एक बात पूछना चाहती है। हमारी सखी हो तुम, अभी हमारे साथ चलो। छोटी बहन कह रही थी, दीदी! मत जाना। इसके भाई रंग लगा देंगे और सब की इन गूँजती आवाजों से पीछा छुड़ाती मैं पल्लू थामे, नाजुक गुड़िया ससुराल की राह मुड़ती चली जा रही थी। सारे राग-रंग, मान-मनुहार सब पीछे रह गये थे। कितने रिश्ते साथ छोड़ चुके थे। कितने नाते यहीं इसी मोड़ पे रह गये थे। मान रखने वाली माँ खड़ी सिसक रही थी। नाज उठाने वाले भैया हमें ढूँढ रहे थे। तौर-तरीके सिखाने वाली भाभी एक तरफ खामोश बैठी मेरे बचपन के खेल तमाशे, लड़ाई-झगड़े और तीखी बोली को याद कर रही थी। मेरी छोटी बहन मेरे जाने के गम में एक तरफ मेरी तस्वीर को सीने से लगाये तड़प रही थी। मेरे बाबा मेरी नन्ही बोली को सुनने को तरस रहे थे। पड़ोस की मेरी ताई मुझे चिढ़ाने को तलाश रही थी। सारी सखियों की मंडली मेरी हँसी को खोज रही थी। मेरे घर की चौखट मुझे विदाई देकर पछता रही थी और मैं अपनी नई दुनिया के नये सपने सजाती नये लोगों के बीच जा रही थी। मेरी अपनी पुरानी पहचान मिट चुकी थी। मेरी माँ की बोली परायी हो चुकी थी। मेरे बाबा की पुकार बदल चुकी थी। मेरी बहन की किलकारी अब मेरे पास बची नहीं रह पायी थी।

कितना बदलाव आ गया था मेरे इस जीवन में जहाँ सिर्फ रास्ते मेरे साथ थे, जहाँ सिर्फ पगडंडियाँ मेरे साथ थी। जहाँ सिर्फ मेरे घर की, मेरी माँ की, मेरी भाभी की, मेरे भैया

की, मेरी बहन की, मेरी सखियों की यादें मेरे पास थी और ये नया मुल्क मुझे जिस घर में ले जा रहा था वो मेरे ससुराल की मिट्टी थी। वो मेरे ससुराल की चौखट थी। मेरे ससुराल का आँगन था। जिस मकान में मेरी डोली जा रही थी वो मकान मेरे पति की जागिर थी, मेरे पति की मान-मर्यादा थी, मेरे पति की शानदार हवेली थी। यहाँ आकर मेरा जीवन बदल चुका था। मेरी मंजिल खो चुकी थी। मेरे रास्ते बदल चुके थे। डोली में बैठ हम अपना हर फसाना भूल चुके थे। वो डोली हमसे हमारा बचपन छीनकर ले जा चुकी थी और लौटा गयी थी एक बदला हुआ जीवन। साज और शृंगार का आईना, और लौटा गयी थी जवानी का जलता दीया जिसे बुझने से पहले हमें डोली से उतर जाना था।

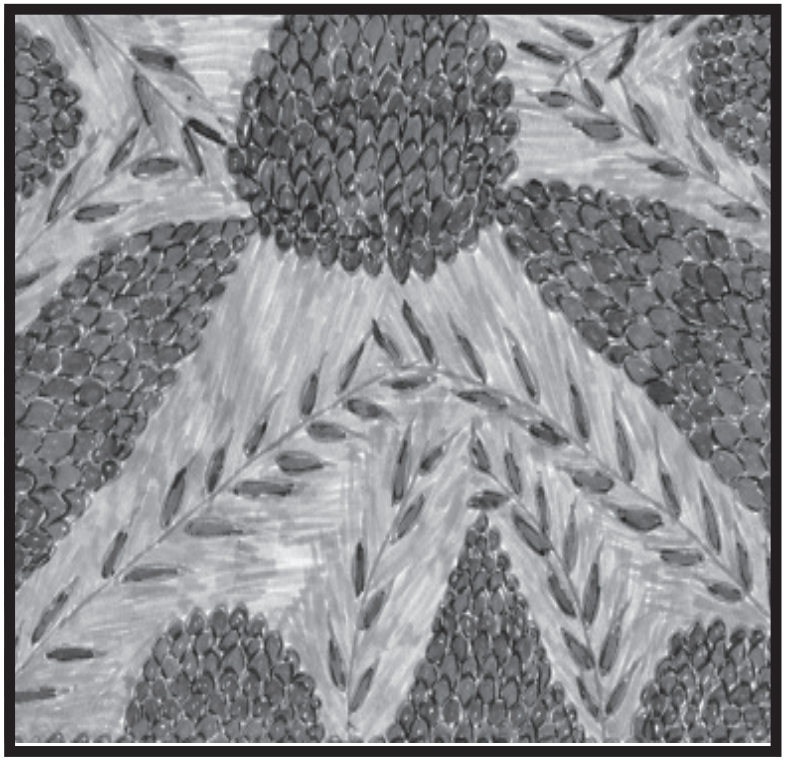

मेंहदी ने एक रोज सावन से कहा था, मेरा वक्त आ गया। मेरी डाली पत्तों से सज गयी। सुहागनें आएँगी, मुझे तोड़ ले जाएँगी। मैं अब सुहागनों के हाथ पे रच उनकी शोभा बनूँगी। बेचारी मेंहदी तब ये भी भूल गयी कि वो पत्थर पे पीसी जाएगी, वो मर जाएगी। तब कोई जाके उसे अपनी हथेली पे रचाएगा। उसकी जिन्दगी तो सुहागन के हाथ पे जाते ही खत्म हो जाती है। मगर ये तो मेंहदी का स्वभाव है। ये तो उसका बड़प्पन है कि वो परायी दुल्हन की खातिर अपनी कुर्बानी देती है। दुल्हन जब हाथ में मेंहदी रचा सुहाग को बुलाती है मेंहदी के दिल से एक ही आवाज आती है। मैं बार-बार इस सुहागन के हाथ पे रच इसकी हथेली की शोभा बनूँ। बेचारी मेंहदी ने कितनी दुआएँ दी इस दुल्हन को कि वो सुहागन बनी, उसकी हथेली पीली हुई। उसके पिता ने उसे डोली में बिठाया और कहा, जा बेटी तेरे हाथ की मेंहदी सदा सलामत रहे। मेंहदी ये सब देखती रही और सोचती रही कितने प्यार से पाला होगा इस पिता ने अपनी बेटी को और पराया कर दिया। उसे मेरे हवाले कर ये कहा कि तेरे हाथ की मेंहदी सलामत रहे। मैं भी दुआ करूँगी कि इस पिता की आरजू पूरी हो। उस पिता के आँसू पोछ मेंहदी कहना चाहती है आप निश्चिंत रहें। मैं आपकी लाडली की हिफाजत करूँगी। मैं इसके सुहाग की लम्बी उम्र की कामना करूँगी। मगर तब वो बेचारी ये भी भूल गयी कि मरे हुए लोगों की आवाज जिन्दा लोग नहीं सुन पाते। मगर वो फिर भी कहती है आप जाइए, मैं आपकी बेटी को लिए जा रही हूँ। मैं जहाँ-जहाँ से गुजरूँगी एक ही बात कहती जाऊँगी। मेरी दुल्हन की उम्र लम्बी हो। यही आशीर्वाद दे वो एक दुल्हन की रक्षा करती है। मगर उस मेंहदी की लाली वो पति ही पोछ देता है। वो कहता है तू मेंहदी रचा बैठी रहेगी और मैं तुम्हें घर में बिठाए रखूँगा। तब वो दुल्हन कहती है, बताओ न मैं क्या करूँ? मगर ये बात वो बताता नहीं। कहता है, मेरे घर से चली जा। तब पहली बार मेंहदी शर्मिन्दा होती है। वो गलत हाथों की शोभा बन गयी। इस पति को तो दुल्हन की जरूरत ही नहीं थी। वो दुल्हन हाथ की मेंहदी को निहारते वापस आती है उसी गली में जहाँ से ये मेंहदी रची गयी थी उसके हाथों में और कहती है मुझे तुम्हारी जरूरत नहीं रही। चली जा मेरे हाथ से। तेरा आदर करना नहीं जाना इस आवारा पति ने। उसने तो मेरे पाँव में जंजीरें डाल देनी चाही। मैं तुम्हें अपनी हथेली पे रचाकर किसी की गुलाम बनना नहीं चाहती। वो मुझे मारेगा, जितना जी चाहे गालियाँ देगा, वो मेरा पति नहीं, तू मेरी हथेली की शोभा नहीं। बेचारी मेंहदी दो दिन की मोहलत माँगती है उस सुहागन से और दो दिन में उसके हाथों से उतर जाती है। वो फिर उस पिता के पास जाती है और कहती है आपकी बेटी की हथेली सफेद हो गयी। तो पिता पूछते हैं मेरी बेटी ने मेंहदी धो डाली क्या? तब मेंहदी कहती है नहीं, उसके सुहाग ने उसे त्याग दिया।

यही कहानी है मेंहदी की। वो फिर गली-मुहल्लों की सैर करते हुए वापस वहाँ जाती है जहाँ एक बेवा दुबारा दुल्हन बन रही थी। लोग उसे उसकी हथेली पे रचाने को मेंहदी ढूँढ रहे थे। फिर मेंहदी के करीब जाते हुए बोले थे मेरी बेटी की माँग का सिन्दूर सलामत रहे। मैं तुम्हे लिए जा रही हूँ। उसकी हथेली को इतना पीला करना कि सारा जीवन भी उसका रंग उतर न सके। अब बेचारी मेंहदी सोचने लगी, कितनी चाहत से ये माँ-बाप, ये बहन,

ये भाई हमें तोड़ ले जाते हैं बेटी की हथेली सजाने को, बहन की हथेली सजाने को। वो रो पड़ती है। मैं इतनी महान हूँ कि हर कोई मुझे श्रद्धा से देखता है। मैं कुर्बान हो भी जाऊँ तो क्या? अगर इनका सुहाग सलामत रह जाए तो इससे बड़ी बात और क्या हो सकती है? मगर ये मेंहदी एक बार फिर सुहागन की हथेली से छूट गयी। इस बेवा दुल्हन का दूसरा पति भी मारा गया। वो मेंहदी भी मर गयी। उसने देखा कि उसके सारे पत्ते डाल से टूट जमीन पे गिर पड़े। मतलब पतझड़ का मौसम आ गया। अब बहार बहुत दूर है। वो दूसरी बहार का इन्तजार करती खड़ी रही कि शायद फिर से हमारे जीवन में सावन आये। शायद फिर से हम किसी हथेली की शोभा बनें? यही बेचारी मेंहदी का जीवन है जिसकी रंगत कितनी फीकी है। यह वही जानती है जिसकी हथेली पे रचती रही अबतलक वो।

कुछ पल जीवन के अनमोल होते हैं। मगर वो पल भी हमारी जिन्दगी में आए और आकर चले गये। मगर हमने उन पलों को जोड़ा और याद किया कि वो पल हमें कितने सुकून दे गये थे मगर थोड़े थे। हम हर दिन एक पल को समेट जी रहे हैं। उन्हीं पलों में से एक पल हम खास बनाते हैं जो गुजरे दिनों की याद बन जाती है। वो एक पल ही था जब हम इस दुनिया में आये थे। आज भी एक पल ही है जो हमें जवान किये हुए है। कल भी एक पल ही होगा जब हम बूढ़े हो जाएँगें।

तो ये पल किन-किन रूपों में हमारे सामने आता है और आकर चला जाता है। ये पल हम चाहें तो समेटकर रख सकते हैं और रखते भी हैं। जब हम शादी करते हैं तो एक पल को पाते हैं। वो पल होते हैं जवानी के पल। मगर जब हमारे बच्चे हो जाते हैं तो हम अपने बच्चे में अपने बचपन के पल को देखते हैं। धीरे-धीरे वो पल बीतते चले जाते हैं और हम उम्र के साथ बढ़ते चले जाते हैं। आदमी चाहे तो सबकुछ पा सकता है मगर एक पल नहीं क्योंकि जीवन में आँसू के बाद हँसी आ सकती है। मगर वो पल नहीं आ पाते जो हमें रूला रहे थे। चलो ये भी अच्छा ही हुआ कि आँसू दुबारा लौटकर हमारे पास नहीं आये। तो कुछ पल हमें सुकून देते हैं और कुछ पल हमें रूलाकर चले जाते हैं। ये पल ही एक ऐसी शय है जो आदमी को आदमी से जोड़े हुए है। जब हमारा बेटा जवान हो जाता है, हम उसकी शादी रचाते हैं। मगर बेटे की शादी के बाद हम कितने अकेले हो जाते हैं। बेटा बहू को ले चला जाता है और फिर साल में एक या दो बार लौटकर आता है। हम सोचते रह जाते हैं बेटे-बहू कब आयेंगे? छोड़ो जब आएँगें तब आएँगे। मगर बेटे-बहू के बाद पोते-पोती आ जाते हैं और हम वहीं रह जाते हैं खड़े उसी पल के इन्तजार में जब हमारा परिवार आने वाला था।

तो कितने पल चले गये। हमारे जीवन के पल खत्म भी हो गए। हमने क्या पाया? थोड़े से पल जो हमारे गुजरे हुए दिनों में हमने संजोकर रखे थे। तो इस पल ने आदमी को कितना सताया। कभी नन्हा सा बच्चा बना दिया तो कभी बूढ़ापे की लाठी थमा दी।

क्या है ये पल? शायद हमारी बीती जिन्दगी का दूसरा नाम पल है। यही हकीकत है। मगर ये भी सच है कि इस पल ने हमें कितने लोगों से मिलाया। अरे इस पल ने तो हमें बीती हुई जिन्दगी को आईने में दिखा दिया जो एक फिल्म की तरह हमारे सामने चलती चली गयी। हमने देखा जब हम चल रहे थे सफर में पहले हमें माँ-बाप मिले थे। फिर हम पति-पत्नी मिले, फिर हमारी जिन्दगी में हमारे बच्चे आ गये। जब उन्हीं पलों को एक साथ संजोकर देखा तो लगा ये तो हमारी जिन्दगी के सबसे अहम् पल थे। शायद इसी को जीवन कहते हैं। तभी तो हमने कहा, जीवन एक पल है जो आ रहा है, जा रहा है जिसने कभी ठहरकर नहीं देखा। ये नहीं सोचा कि अगर हम चले गये आदमी के पास कुछ नहीं बच पायेगा। वो तो आया और आकर चला भी गया।

कुछ लोग अपने-अपने मुल्क को छोड़कर शहर की ओर खींचते चले जाते हैं। मगर ये रंगीन शहरों की रंगीन सड़कें उन्हें सिवाय बदनामी के कुछ नहीं दे पाती। शहर छूट जाते हैं। जिन्दगियाँ तबाह हो जाती है। मगर शहर का मोह नहीं छूटता इन्सानी दिलों से और जब इस शहर को पलटकर देखते हैं तो सिवाय वीरानी के वहाँ कुछ नहीं दिखता उन्हें। वो भटक जाते हैं उस नये प्रांत में जहाँ के लोग नये थे। जहाँ के तौरतरीके अजनबी से दिख रहे थे उन्हें। इसी तरह घर की तलाश में निकले हजारों लोग शहर की एक सराय में भटक दम तोड़ देते हैं। मगर ये शहरों का सिलसिला खत्म नहीं हो पाता। किसी को तबाही मिलती है इस नये प्रांत में, किसी को आजादी। मगर तबाही कभी आजादी नहीं बन पाती। वो इन्सानों को भटका देती है और इन्सान इस कदर शहर का होकर रह जाता है कि अपने उस पुराने मुल्क की भाषा तक भूल जाता है। वो हमारी भाषा पुराने जाहिल लोगों की गिनती में आ जाती है और समय आगे निकलता चला जाता है। किसी को सफर में मंजिल मिलती है और कोई एक घर की तलाश में यहाँ से वहाँ भटकता रह जाता है। न समय रूकता है उसके लिए, न हालात ही बदल पाते हैं उसकी जिन्दगी के। वो एक नये शहर के इस नये मुल्क में कभी चैन से सो नहीं पाते। उन्हें हर वक्त यही डर समाया रहता है कि पता नहीं कल क्या हो? कल इन्सान था मैं जब इस शहर में आने की बात सोच रहा था, आज कातिल बन गया। जब इस शहर की ओर दुबारा देखा तो हर आने-जाने वालों ने मुझे देखा पर इस शहर ने हमें करीब से नहीं देखा। शायद हम अपने पुराने मुल्क के पुराने लोग है जिन्हें हर भाषा आती थी, जिन्हें हर भाषा का ज्ञान था। मगर शहर की इस चाहत ने मुझसे मेरी बोली छीन ली। मैं इन्सान से बेईमान बन गया। मैंने ईमान बेच कत्ल का सामान खरीद डाला। इस शहर ने सब होते देखा पर एक बार भी वो ये न कह सका कि जिन्दा हो तो जीने की कोशिश करो। कैसे कहता? यहाँ तो जिन्दगियाँ हर पल एक नये पोशाक में लिपटती जा रही थी। कौन आगे निकला, कौन पीछे रह गया, ये देखने की फुर्सत कहाँ किसी को थी। ये शहर की रंगीन बस्ती थी जहाँ हर बुरे काम हुआ करते थे जहाँ कि एक बदनाम कोठा था, एक बदनाम औरत थी। क्या नहीं था इस नये प्रांत में? हर चीज एक अलग निगाह रखती थी। पर इन्सान के पास एक ही नजर थी यहाँ देखनेवाली और हमने अपनी इस एक निगाह से इतनी ही दुनिया देखी कि वहाँ एक छोटा सा मकान था हमारा, एक छोटी सी दुनिया थी हमारी। मगर इस शहर ने तो मुझसे सब कुछ छीन लिया। मैं तो यहाँ आकर कंगाल हो गया। जो थोड़े से पैसे थे जेब में वो जेबकतरे ले गये। अब खाली हाथ मैं कहाँ जाता? वापस जाने के लिए पैसे की जरूरत होती है। मगर मेरे पास तो सिवाय कटी हुई खाली जेब के कुछ भी न था। फिर मैं वापस अपने मुल्क कैसे जा पाता? मैं इसी जगह बोझ उठाने वाला कुली बन गया। मगर फिर भी न लग सका मुझे कि मेरा मुल्क इस शहर से कहीं अच्छा था। यहाँ तो कोई बातें करने वाला भी नहीं। हमारे पुराने मुहल्ले में तो लोग एक सा बर्ताव किया करते थे। यहाँ इस शहर में तो रूक-रूक कर साँसे लेनी पड़ती है। कैसे सोचता वो ऐसा? वो तो शहर के कदमों में दौड़ने वाली मोटरकारों में उलझता चला गया। जितनी बार गाड़ियों को गुजरते देखता, हाथ हिला देता। गाड़ी रूकती या आगे निकल जाती। थोड़े दिनों बाद पता

चला कि वो तो उसका नया स्टाईल था। तो ये थी शहर की चमक जिसे पा इन्सान अन्धा हो जाता है। जिसे अपने आगे-पीछे सिवाय एक ललक के कुछ न दिख सका। वो अपने-अपने मुल्क को छोड़ इस नये प्रांत में बसते चले गये। मुल्क उजड़ता चला गया। शहर की सड़क इन्सानी जिन्दगी को चीर चौड़ी होती गई।

यही तो चाहत थी उस इन्सान की। यही तो चाहा था उस इन्सान ने कि मैं शहर जाऊँ तो वापस फिर कभी नहीं आऊँ। आऊँ तो तब, जब बहुत बड़ा आदमी बन जाऊँ। तो क्या ये बड़ा शहर बड़ा बना पाता है इन्सान को? या वो उसी मिट्टी में दफन हो जाता है जहाँ से कि सिवाय अँग्रेजी कब्र के कुछ खोदा नहीं जाता और एक दिन पूरा मुल्क वीरान हो जाता है और शहर आबाद। इन्सान तड़प-तड़प मरता जाता है और शहर आबाद होता जाता है। न यहाँ हर एक को एक मकाम मिल पाता है न मकाम पानेवाले बलशाली हाथ कायम रह पाते हैं। हम इस नये शहर की दास्तां बनकर रह जाते हैं फकत और शहर मानो शौक से जी रहा होता है। यही नादानी करता है इन्सान और नादान लोगों की भीड़ शहर जाकर अलग-अलग प्रांतों में वितरित हो जाती है और शहर उन्हें एक बार फिर भटकाता जाता है। वो भटकते रह जाते हैं और आहिस्ता से उनके बगल से जिन्दगी गुजर जाती है। उनके बाल सफेद हो जाते हैं। वो बूढ़े हो जाते हैं पर अपने पुराने घरों में वापस नहीं जा पाते।

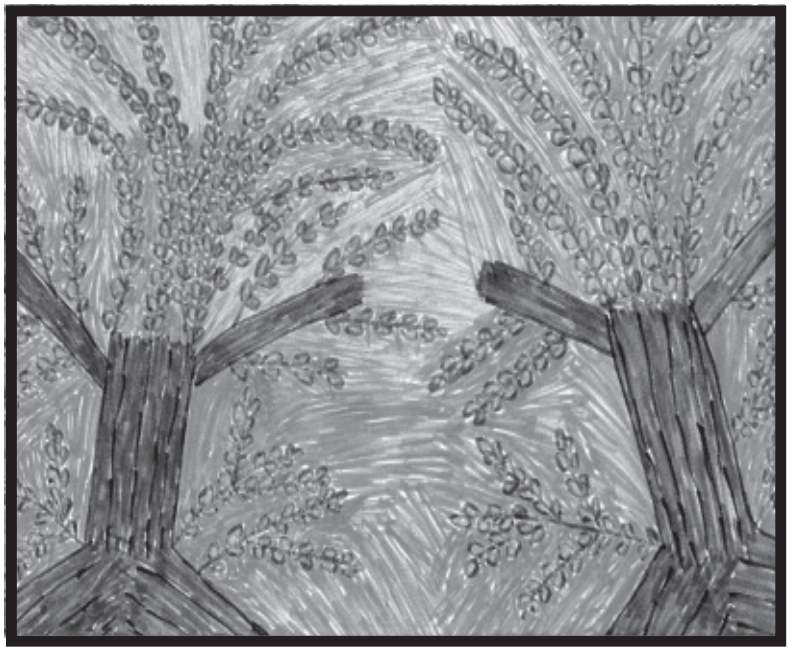

धैर्य

आदमी को चाहिए कि धैर्यवान बने। धैर्य से बड़ा कोई गहना नहीं। जितना धैर्य रखोगे, जीवन में उतना ही आगे जाओगे तुम।

तब हमसे कहा हमारे सगे-संबधियों ने, तुम तो धैर्यवान होगे न जो दूसरों को धैर्य धारण करने की सलाह दे रहे हो। तो हमने कहा नहीं! हम धैर्यवान नहीं, हम तो बात-बात में धैर्य खो बैठते हैं। हमारी बात और है, हम धैर्यवान नहीं हैं तो क्या हुआ? हम सीधे-सच्चे इन्सान तो हैं। तो वो बोला, कैसे मान लूँ कि तुम सीधे-सच्चे इन्सान हो। तो हमने कहा, न मानो तुम कि मैं अच्छी हूँ या बुरी। बस इतना जानो तुम, तुम्हें हमारी बात पे यकीन तो नहीं आया न। तो वो बोला, नहीं। तो हमने कहा तुम्हारे धैर्य का इम्तहान हो गया। तुम अगर धैर्यवान होते, तुम अगर सीधे-सच्चे इन्सान होते तो एक पल में मुझ गैर की बातों में आ जाते और ये जो गैरों की बातों का यकीन करते हैं ना, वो पल-पल एक नये खतरे से होकर गुजरते हैं। तुमने अच्छा किया जो मेरी बात का यकीन नहीं किया। कैसे मान लेते तुम कि मैं बहुत अच्छी इन्सान हूँ। मैं तो हालात की मारी भी हो सकती हूँ। मैं तो बेपरवाह, बेदर्द भी हो सकती हूँ। तो वो बोला, मान लिया कि तुम धैर्यवान हो क्योंकि इतनी बातें मैंने कही तुमसे, इतने दर्द मैंने दिये तुम्हें तुमपर एतबार न कर। फिर भी तुम नाराज नहीं। तुम वाकई धैर्यवाले हो। तो अब हमने कहा, नहीं मैं धैर्यवान हूँ ये कैसे कह दिया तुमने? इस तरह तो तुम्हारा गुरूर धूल-मिट्टी का होकर रह गया। मुझपर यकीन न करो। मैं कुछ भी हो सकती हूँ। तो वो बोला, तुम जो कुछ भी रहो, मुझे तुमसे कोई शिकायत नहीं। तो हमने कहा आगे चलो।

मैं देखना चाहती थी कि मुझपे एतबार कर इसने अपना धैर्य खो तो नहीं दिया। सारा धैर्य लूटा तो नहीं दिया मेरी बातों में आकर। वो बोला, कहाँ चलूँ तो हमने कहा, जहाँ ये दो पैर ले जाएँ हमें। तो वो बोला, चलो। मैं तबतक तुम्हारे साथ चलूँगा, जब तक मेरे पाँव में छाले न पड़ जाएँ। तो हमने कहा, छाले तो दो मील जाकर भी पड़ सकते हैं, छाले तो चार मील जाकर भी पड़ सकते हैं। अब कैसे मान लूँ कि तुम मेरे साथ कहाँ तक चल पाओगे। तो वो बोला, जबतक चल सकूँ चलता रहूँगा। मगर बीच सफर में ही लड़खड़ा कर गिर पड़ा तो बात और? तो मैंने देखा, अभी तक इसका धैर्य इसके साथ है। फिर मैंने उसके धैर्य का इम्तहान लिया। कहा, लगता है तुम्हारे पाँव में छाले पड़ गये? लगता है तुम्हारे पाँव लहूलुहान हो गये? अब ठहर जाओ। तो वो बोला, अभी तो आधी मील दूरी ही तय की है हमने। अभी से ठहर गया तो आगे कैसे चलूँगा। चलो, मैं आगे चलता हूँ। तो मैंने देखा आधी मील दूरी तय करने के बाद भी इसके साथ धैर्य है। धैर्य का दामन इससे नहीं छूटा अबतलक।

अब उसके धैर्य का इम्तहान लेते-लेते मैं ही थक गयी। मैंने कहा, थोड़ा ठहर जाओ, आगे रास्ता कठिन है। अँधेरा भी हो चला। तो वो बोला, ठीक है। मगर अभी तक तो हम बीच रास्ते में है। न सफर बीता, न मंजिल आयी। तो हमने कहा, कुछ भी हो मैं आगे नहीं जाऊँगी। फिर हमें नींद आने लगी। मैंने कहा, मैं सोती हूँ तुम पहरा देना। पता नहीं, इस सूनसान इलाके में कितने जंगली जानवर होंगे। तो वो फिर बोला, तुम सो जाओ

मैं पहरा देता हूँ। तो मैंने देखा, अभी तक उसका धैर्य उसके साथ है। फिर मैंने रात में अपने मुँह से अजीब-अजीब आवाजें निकालनी शुरू की और वो रात भर सोचता रहा, कोई जंगली जानवर आ रहा है। वो रात भर पहरा देता रहा। मैं सोती रही झूठी नींद का बहाना कर। अबतक तो वो धैर्यवान ही नजर आया मुझे। मैंने कहा, सुबह हो गयी, चलो आगे चलते हैं। जबकि मैं देख रही थी वो चलने में असमर्थ है। उसके पाँव में छाले पड़ चुके हैं। फिर भी वो मेरे साथ चलने के लिए खड़ा तो हुआ मगर लड़खड़ा कर गिर पड़ा। तो हमने कहा, रूक जाओ! तुम्हारे धैर्यवान होने में अब कोई कसर नहीं। तुम वाकई धैर्यवान हो, चलो वापस चलते हैं अपने घर। तो वो बोला, नहीं! जबतक सफर खत्म नहीं होता, जबतक मंजिल आ नहीं जाती, मैं नहीं जाऊँगा। तो मैंने कहा, मंजिल आ गयी। वो तो तुम्हारे बिल्कुल करीब है। तो वो बोला, कहाँ? तो मैंने कहा, तुम्हारे सामने। तुमने सब्र रखा, तुम्हारी मंजिल आ गयी क्योंकि सब्र से बड़ी कोई मंजिल नहीं। तुम्हारा धैर्य कायम रहा, तुम धैर्यवान कहलाए। न मैं थकी थी, न मुझे नींद आ रही थी, ना ही कोई जंगली जानवर था वहाँ। मैं तो तुम्हारे धैर्य के आगे नतमस्तक हूँ। जाओ, आगे तुम्हारा घर आ गया। हम वापस घर आ गए।

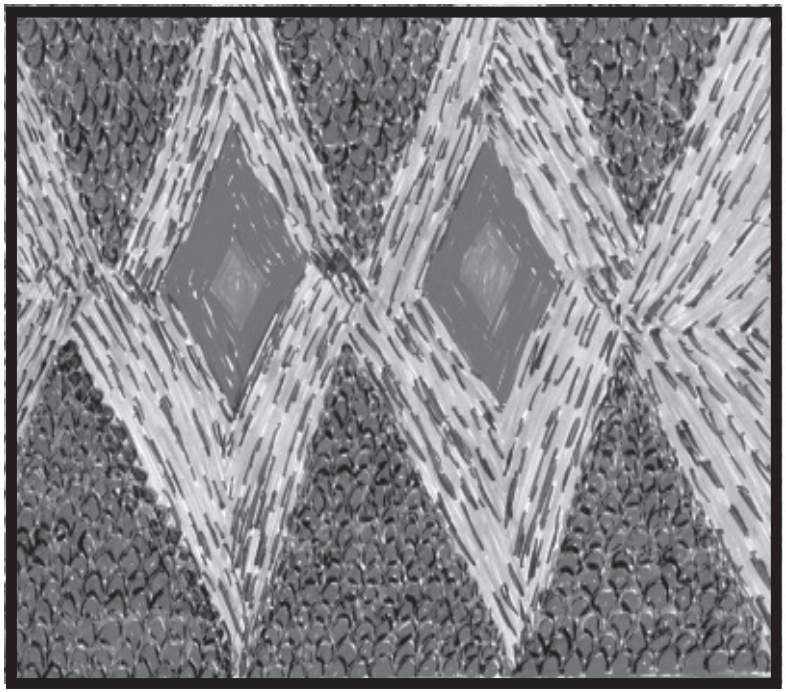

डर

ये डर क्या है? कहाँ से पनपता है ये? क्यों हर घड़ी हमें ऐसा लगता है कि सामने कोई खड़ा है? क्यों हम नहीं समझ पाते कि सामने कोई नहीं है, हमारी परछाई है फकत। ये डर हमें इस कदर क्यों जकड़ लेता है कि हमारी आत्मा हमसे डरने लगती है। आदमी डर से पीछा छुड़ाए तो कैसे? आते-जाते राहों में हमें अक्सर ऐसा लगता है जैसे कोई हमारा पीछा कर रहा है। हम आगे-आगे चलते है, वो हमारे पीछे। हमें नहीं लगता तब कि वहाँ कोई नहीं। हम डर से काँप उठते हैं। घर आकर खिड़की-दरवाजे बन्द कर लेते हैं और एक पल को शांति पाते हैं। हमारा दिल तब जोर-जोर से धड़कता है और हम दिल की धड़कन सुनते-सुनते पागल हो जाते हैं।

यही तो हर डर की कहानी है जो जीते जी हमारे साथ जुड़ी होती है। एक डर को छोड़ते है तो दूसरा डर, दूसरे डर को छोड़ते हैं, तो तीसरा डर। ये डर कई रूपों में हमारे सामने आता है। हमें जब किसी आदमी के नाम से डर लगने लगता है, हमारे आगे-पीछे हमें हर जगह वही खड़ा दिखता है। हम भाग रहे होते हैं, वो डर हमारे पीछे होता है।

ये डर का जन्म कहाँ से हुआ? किसने बनाया ये डर? इस डर का जन्म तब हुआ जब हमारा कोई दुश्मन हमें मारने की धमकी देता है। हमारा सबकुछ हमसे छीनना चाहता है और हम मोहवश उसे वो चीज नहीं दे पाते। तब वो आदमी ही डर बन हमारे जिस्म में पनाह ले लेता है। हम लाख चाहते हैं कि ये डर खत्म हो जाय, हमारा दुश्मन हमसे परास्त हो जाए। मगर डर का जन्म तो हो चुका, दुश्मन तो हर जगह हमें दिखने ही लगा। अब डर से पीछा नहीं छूट सकता हमारा। कभी-कभी डर से बोझिल हो जाते हैं हम तो हमारी साँसे तेज-तेज चलने लगती है, हमारा सीना जोर-जोर से धड़कने लगता है और फिर एक शब्द का जन्म हो जाता है, डर का। कभी-कभी हमें ऐसा भी लगता है कि कोई आदमी गाड़ी से हमारा पीछा कर रहा है। हम भी ड्राईवर से कहते हैं, भई गाड़ी तेज चलाओ, कोई हमारा पीछा कर रहा है। तब गाड़ीवाला कहता है, पीछे तो कोई नहीं है साहब! मगर हम विश्वास नहीं करते। कहते हैं, तुम्हें नहीं दिखता क्या? वो तो हमारा पीछा कर रहा है। फिर हमें लगने लगता है कि हम डर से पागल हो गये। वो कोई आदमी नहीं डर था जो हमारा पीछा कर रहा था। जब हम डरते-डरते घर पहुँच जाते हैं, लगता है, कोई पीछे खड़ा हो गया फिर से। हमारा दरवाजा तब बन्द होता है। हम दरवाजे पे दस्तक देते जाते हैं। मगर दरवाजा खोलने में थोड़ी देर हो जाती है और हमें लगता है कि उस आदमी ने हमारे पेट में छुरा घोंप दिया। तब हम चिल्लाते हैं और डर से हमारा हार्ट-फेल हो जाता है। हम मर जाते हैं, तब एक डर भी मर जाता है।

यही डर की कहानी है जो आते-जाते राहों में हमारा पीछा करती है पहले। फिर हमें मार चली जाती है हमारी जिन्दगी से आगे, बहुत आगे क्योंकि हमारा डर तो हमारे साथ ही मर चुका था।

रंगमहल की नायिका

मैं सदियों से रंगमहल में सो रही एक तराशी हुई मूर्त्ति हूँ। मुझे गढ़नेवाले को तोहफे से नवाजा गया था और मुझे कैद होने पर मजबूर किया गया था। मैं वर्षों से तन्हा इस रंगमहल के खिड़की दरवाजों की तरफ देख रही हूँ जो मेरे लिए बन्द हैं। मैं तड़प रही हूँ। मैं सिसक रही हूँ किसी के इन्तजार में। मुझे ये भी नहीं पता कि कोई आयेगा भी या ये कैद ही मेरी जिन्दगी होगी। मैंने ख्वाब तो कई सजाये अपने पलकों पर। मेरे ख्वाब में कभी मेरी बारात सजी कभी मुझे रंगमहल से निकालकर ले गया कोई। मगर जब मैंने किसी के कदमों की आहट सुनी तो चौंकी। मुझे वहम हो गया कि कहीं मैं फिर से कैद तो नहीं हो गयी और जैसे ही बचानेवाले की तरफ मेरी निगाहें गयी तो वो हलाल हो चुका था। खून से लथपथ जमीन पर उसकी लाश पड़ी थी। मैंने उसकी बाहों में दम तोड़ देना अपना नसीब माना। मगर मेरे इस नसीब को भी लोगों ने मुझसे छीन लिया। मैं एक बार फिर कैद कर ली गयी जहाँ मुझे खाने को सोने की थाल में भोजन दिया गया और पहनने को रत्नजड़ित साड़ी। मैंने तो मोह किया ही नहीं था कभी इन सब चीजों का। मैने खाने के थाल फेंक दिये, रत्नजड़ित साड़ी का त्याग कर दिया और सफेद चुनर ओढ़ ली अपने माथे पर। मगर तभी किसी ने मेरे माथे से वो चुनर उतार लिया। मेरे बालों में खूबसूरत फूलों के गजरे लगा दिये। मेरी हथेली को मेंहदी से लाल कर दिया और मैं इस लाली में छुपी वो लाश देखने लगी जिसे कि मेरे सामने बिठाया गया था। मैंने बिन्दिया और मेंहदी लगाने से इनकार कर दिया। मेरे इस इनकार को लोगों ने रंगमहल का हेय समझा। उनकी नजरों में मैंने इस रत्नजड़े आभूषणों का, साड़ियों का अपमान कर दिया। वो मुझे पकड़कर कमरे में ले गये थे जहाँ मेरी तरह कई नायिकाएँ अपने-अपने जिस्म की तराशी हुई इस प्रतिमा को देख रही थी।

न खिड़की खुली थी न दरवाजा। अगर कुछ खुला था तो दिल पर पड़ा जख्म, तड़पती साँसों का बोझ और मैंने इस सबके बीच एक ही आवाज सुनी। उनकी आवाज जिन्होंने मुझसे बेहद प्यार किया था। जिनके दिलों में मेरे कुछ अरमान सो रहे थे। मैंने तब आहिस्ता से उनकी तरफ देखा जो मेरी ही तरह आभूषणों की कैद में तड़प रही थी। मैंने कहा, सखी! ये कैसा प्रेम है हमारा उनके साथ। वो क्या चाहते हैं हमसे? तो जवाब में उन्होंने दीवार की तरफ इशारा कर दिया और कहा वो हमें दीवार के नगीने की, उस पशमीने की शोभा बनाना चाहते हैं। तब मैं रो पड़ी कि मुझे वो नगीना बनाना चाहते हैं। मेरे जिस्म से वो खाल खींच पशमीना बनाना चाहते हैं। ये कैसा रंगमहल है? हम कैसी नायिकाएँ है इनकी जिन्हें कि इस रंगमहल से बाहर जाने का रास्ता ही नहीं मालूम। कल मुझे एक इन्सान मिला भी तो इनलोगों के बीच में। मगर वो तो खून से लथपथ जमीन पर पड़ा रह गया। सखी! क्या तुमने कोई ख्वाब सजाया है अपनी पलकों पर? इस रंगमहल के बाहर की दुनिया की सैर की है तुमने। नहीं सखी! मैं तो कई सदियों से गिरफ्तार हूँ। मेरे हाथों में बेड़ियाँ, पैरों में छाले हैं। न मैं खुद चलकर जा सकती हूँ न कोई मुझे बारात और डोली के साथ यहाँ से लेने आ सकता है।

पर क्यों? हमने क्या गुनाह किया है? हमारा ऐसा कौन सा गुनाह लोगों के सामने आ गया है जो उन्होंने मुझे और तुम्हें कैद कर रखा है? तो वो सब एकसाथ कहती हैं सखी

हम संसार को जोड़नेवाली एक कड़ी हैं। हम लज्जा हैं इस संसार की जिसे इस रंगमहल में रहने की तो छूट है मगर इससे बाहर जाने की इजाजत नहीं। हम तभी तक रह सकते हैं इस रंगमहल में जबतक कि एक तराशी हुई मूर्त्ति बनकर इसकी शोभा को बढ़ाते रहें। न हमारा अन्त हो सकता है, न हमारी शुरूआत हो सकती है। हम सदियों से इस रंगमहल के दर्रो-दरवाजों को तलाश रहे हैं बाहर जाने के लिए। मगर हर दरवाजे पर एक पहरेदार खड़ा है। न हम खिड़की से झाँक सकती है न दरवाजों से। तब हम उनलोगों के बार में सोचते है जिन्होंने इस रंगमहल की रचना की है और जिनकी रचना के बोझ पर आश्रित हम तराश-तराश बनाये गये है। ऐसा कह वो सब एक बार फिर से आभूषणों से सुसज्जित होने लग जाती हैं। मैं रंगमहल की इन खूबसूरत नायिकाओं को अपना दर्द सुनाते पकड़ी जाती हूँ। मुझे उनसे दूर कर दिया जाता है और मेरी पलकों पे सजनेवाले सारे ख्वाब उतर जाते है। मैं रंगमहल की तराशी हुई इन बाकी मूर्त्तियों की तरफ एक नजर देखती हूँ एक नजर अपनी ओर और फिर सारे किस्से, सारे सार जिन्दगी के नजर आने लगते हैं हमें। मैं एक बार फिर इस रंगमहल के दरवाजे की तरफ देखना भूल जाती हूँ क्योंकि न मुझे रंगमहल से मोह रह गया था आज न अपने आप से। अगर किसी से मोह था तो वो भी सफेद चुनर जिसको कि मेरे माथे से उतार दिया गया था। जिसकी चाहत में मैं रंगमहल के हर दरवाजे तक गयी थी और मेरी जुबां एक ही गीत गा रही थी आज। संसार में एक रंगमहल बनाया गया था और उस रंगमहल में एक तस्वीर बनायी गयी थी। तराशी हुई मूर्त्तियों से रंगमहल को खूबसूरत किया गया था और तब रंगमहल की इन मूर्त्तियों की जगह खुद को तराशा पा रही थी मैं। हाँ, यही तो चाहत थी उनकी जिनहोंने इस रंगमहल की रचना की थी। जिनकी जुबां मुझे एक तराशी हुई खूबसूरत मूर्त्ति के साथ जोड़ रही थी।

सभी कहते थे कि रंगमहल में न जाने कैसे ख्वाब सजते है पलकों पर। मगर ये मैंने आज जाना कि ख्वाब सजते तो हैं मगर परवान नहीं चढ़ते। रंगमहल के एक दरवाजे से हम सारी नायिकाएँ बाहर तो आ गयी है। मगर अन्तिम दरवाजा ये कहता है कि ये लो चुनर और ओढ़ लो। ये लो मेंहदी और लगा लो। ये लो चोली, पहन लो क्योंकि तुम आबरू हो रंगमहल की। तुम एक किस्सा हो इस रंगमहल का। तुम एक पहचान हो इस रंगमहल की। अगर तुमने बाहर आने की बात सोची तो ये रंगमहल बर्बाद हो जायेगा क्योंकि तुम इनकी शान हो, तुम इनकी मान-मर्यादा हो और ये सब सुन लेने के बाद मैं रंगमहल की नायिका सारे आभूषणों से सुसज्जित एक कोने में बैठ जाती हूँ इस इन्तजार में कि कोई फिर मुझे यहाँ से निकालकर ले जानेवाला आयेगा।

प्रेम सदियों से जवान है। न वो मरता है, न मिटता है। प्रेम ने हर युग में जन्म लिया है। प्रेम की मिसाल हर युग के युवाओं ने दी है। एक वक्त ऐसा भी था जब प्रेम नन्हें बच्चे के दिल से ही पनप रहा था। वो था राधा और कृष्ण का प्रेम। प्रेम ने हर युग में जन्म तो लिया मगर रूसवाई ही पायी। ये कभी जवां दिलों की धड़कन बन गयी, तो कभी सिसकते हुए किसी आशिक पे कुर्बान हो गयी। प्रेम में अंधे हो युवा दिल सागर की असीम गहराईयों में खोते गये। मगर प्रेम का मिलन न हो सका। प्रेम ने हर युग में सिसकते हुए यही कहा हमें जी लेने दो अब्बाजान! हमे जी लेने दो अम्मीजान! मगर अब्बाजान तो शर्मिन्दगी इतनी उठा चुके थे कि वो बेटी के अरमानों को कुचलते चले गये। अम्मीजान बेबसी की चादर ओढ़ सिसकती हुई यही कहती रह गयी, बेटी! प्रेम अन्धा बना देता है लोगों को। ये भूल न करती तो अच्छा होता।

मगर वो जवान दिल कहाँ देख पाते हैं, अम्मीजान की बेबसी को, अब्बाजान की शर्मिन्दगी को। वो तो मिलन चाहते हैं। मिलन का एक जज्बा माँगते हैं जमाने से। प्यार के सहारे वो एक खूबसूरत जहां बसाने की सोचते हैं। पर यह जहां उन्हें नहीं मिल पाता। वो धरती की गोद में सो जाते हैं।

ईश्वर गवाह है कि प्रेम ने कभी उनके सामने आके कहा था, ऐ खुदा! मेरा प्यार मुझे मिल जाए। मैं तुम्हारे सजदे में सर झुकाए खड़ा हूँ। मुझे मेरे यार से मिला दे। तो भी उस ईश्वर ने, उस खुदा ने एक सिसकते प्रेम की आवाज नहीं सुनी। ये नहीं कहा जा बेटे! तेरा मिलन हो जाएगा। आज भी लोग सच्चे प्रेम की तलाश में मजनूं और लैला बन भटक रहे हैं। पर न कल किसी मजनूं को लैला मिल पायी थी, न आज मिल सकी। एक रोज हमने सुना कि एक माँ ने अपने हाथों अपनी बेटी को जहर दे दिया क्योंकि वो गैर जाति के लड़के से प्रेम करती थी और वो प्रेम बदनाम हो रहा था। तो उन्होंने इस प्रेम की ही चिता जला दी।

पर क्या? इस एक प्रेम को मार डालने से प्रेम मर सका। नहीं, फिर दूसरी नस्ल ने प्रेम किया। यही सिलसिला चलता रहा। इस संसार के पता नहीं कितने प्रेमी मौत की गोद में सोते चले गये। पर सृष्टि का ये कानून किन्हीं जवान दिलों की खातिर बदला न जा सका। वो सृष्टि भी यही तमाशा देखती रही कि वो, जिन्होंने इसी कायनात को गवाह बना प्रेम की परिभाषा सीखी थी, वो आज इसी कायनाम में एक मिट्टी की चादर ओढ़ सो रहे थे। जमाना सिसकते इन प्रेमियों को कभी पहचान न सका। उनकी फितरत बदनाम हो गयी। उनके दिलों की धड़कनें बदनाम हो गयी। पर प्रेम का नाम मिट न सका। हम यही सोचते रह गये कि उन्हें जुदा कर देने से प्रेम मिट जाएगा। पर नहीं, उन्हें मौत पसन्द आयेगी, पर अपने यार की जुदाई नहीं।

तो ये है प्रेम! जिसे हर नस्ल ने देखा सीखा। मगर आज के युग में प्रेम फैशन बन गया है जहाँ लोग प्रेम आज उससे करते हैं तो कल उससे। वो प्रेम का युग बीत गया। आज प्रेम अय्यासी में बदल गया है। लड़कियाँ बिनब्याही माँ बन रही है। नाजायज औलाद

पैदा कर रही हैं। ये प्रेम नहीं गन्दगी है जिसे हमें समाज से हटा ही देना चाहिए। हाँ सदियों से चली आ रही इस पाक प्रेम की परम्परा को किसने प्रदूषित किया? शायद आज के युवाओं ने। कल का प्रेम आज कहीं नजर नहीं आता। ये नया जमाना है, नये लोग हैं। तो ये प्रेम भी नया हो गया है आज। यही देख-देख ऐसा लगता है जैसे ये सृष्टि प्रेम को भूलती जा रही है। ये नग्में, जो दो जवां दिल गा रहे हैं। वो नग्में एकदम से झूठे हैं, बेवाक हैं जिन्हें हमने फिल्मों में देख सीखा। अगर प्रेम को इस नजर से देखते है हम तो लगता है कि वो प्रेम मिट गया। हाँ, वो प्रेम मिट गया जिसे सदियों से इतिहास के पन्ने में दर्ज होते देखा हमने। आज इतिहास का वो प्रेम जो कभी धुँधली परछाई बन पूरी कायनात में दिखाई दिया करता था, वो प्रेम आज खत्म हो गया। आज न इतिहास को कोई पलटता है, न प्रेम को ठीक से समझता है। आज उम्र के पहले चरण से ही लोग प्रेम को फैशन बना रहे हैं। आज की पोशाकें प्रेम सिखाती है। आज के बच्चे गले में रूमाल बाँधकर ऐसे घूमा करते हैं जैसे वो प्रेम को उघार रहे हों। पर शायद, वो ये नहीं जानते कि ये प्रेम आज नहीं, आज से सदियों पहले पनपा। ये प्रेम जवां धड़कनों की भाषा जरूर है। मगर वो इस तरह गले में रूमाल बाँधकर नहीं, हाथों में बेड़ियाँ डालकर घूमा करते थे। उनकी पीठ पे जख्मों के निशान होते थे जो चीख-चीख कहते थे, हमारा प्रेम नहीं मर सकता। हमारा प्यार जुदा नहीं हो सकता।

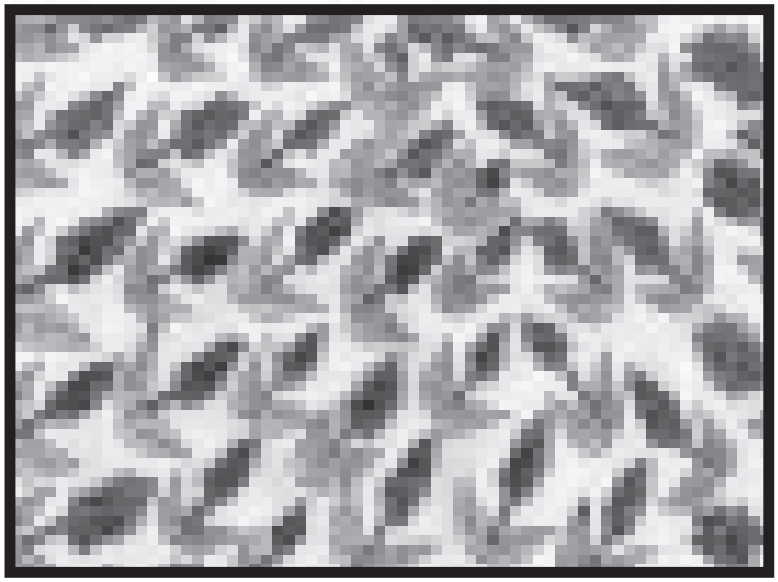

सत्य

सत्य क्या है? यही सवाल आज बार-बार जेहन में उठ रहे हैं और ऐसा लग रहा है जैसे सत्य की परिभाषा सबसे अच्छी तरह हमारा दिल ही दे सकता है, हमारी आत्मा ही दे सकती है क्योंकि आत्मा की आवाज ही सच्चाई की आवाज है। हमारे मन ने जो कहा, वो सत्य है। हमने सत्य को बार-बार देखा है। सत्य से परिचय बार-बार होता है हमारा। पहले हम सड़क पर चलते हुए भिखारी को देखते हैं जो कटोरा हाथ में लिए चल रहा है। वो कहता है, मैं भूखा हूँ, मुझे एक रोटी दे दो। पर क्या हम जान पाते हैं कि वो भूखा है कि नहीं? हमने तो यही सुना कि वो भूखा है क्योंकि उसने कहा। अब हमें क्या पता, वो सत्य कह रहा है या झूठ?

तो सत्य से बार-बार परिचय होता है हमारा। पर हम सत्य को देखते हुए भी देख नहीं पाते हैं। थोड़ी दूर आगे चलने पर एक शराबी दिखता है हमें। वो नशे में चुर अपने आप को आवाज देता हुआ जा रहा है कि मैं शराबी नहीं, पीने में खराबी नहीं। तो क्या वो सत्य कह रहा है कि मैं शराबी नहीं। हाँ, क्योंकि वो वास्तव में शराबी नहीं, वो विवश है पीने को। ये तो लत है उसकी। वो फकत शराबी नहीं, हालात का गुलाम हो मजबूर है पीने को। वो तो जिन्दा ही नहीं है तो शराबी क्या और जुआरी क्या? वो तो उसी दिन मर गया जिस दिन उसने शराब जैसे गन्दी चीज को अपनाया। तो एक तरफ ये भी सत्य है कि वो शराबी है और एक तरफ ये भी सत्य कि वो शराबी क्या जीता जागता इन्सान भी नही है। तो ये भी सत्य की परिभाषा ही है हमारी नजर में। कहीं दूर एक नन्हा बच्चा माँ की गोद में मरा पड़ा है। वो माँ रो रही है। तब एक आदमी उससे पूछता है, तुम्हारे बेटे को क्या हुआ? वो कहती है मेरा बेटा मर गया। तब वो कहता है, क्या बीमार था? तो दिखाया क्यों नहीं? बाबूजी पैसे नहीं थे हमारे पास दिखाने को। किसी से माँग लिया होता? तब वो रो पड़ती है और कहती है माँगा था बाबूजी, बहुतों से माँगा था। मगर किसी ने न दिया। मालिक ने मुझे धक्के देकर बाहर कर दिया। मेरी गोद में मेरा बेटा मर गया। थोडी देर में वो भी मर जाती है क्योंकि उसके दिल से जीने की आश ही निकल चुकी थी। तो ये सत्य है कि उसका बेटा बीमार था और बीमारी की वजह से मर गया। और ये भी सत्य था कि अमीर मालिक ने उसे पैसे नहीं दिये। तो क्यों? क्योंकि अमीर के पास गुरूर था और गरीब के पास रहम की भीख। तो सत्य तो एक विवश आदमी की विवशता के सिवा कुछ भी नहीं था। एक माँ तड़प रही थी मरे हुए बेटे को लेकर और एक सत्य तड़प रहा था उसी विवश माँ की गोद में।

तो सत्य ये है कि जिससे हम हर पल रूबरू होते हैं। मगर सत्य को जान नहीं पाते, उसे समझ नहीं पाते। हम सिर्फ अपनी दुनिया को देखते हैं, अपनी जिन्दगी को देखते हैं। मगर जिन्दगी की सच्चाई को नहीं देखते हैं। ये नहीं देखते कि सत्य किसको कहते हैं। वो जीवित माँ भी सत्य थी और वो मरा हुआ बेटा भी सत्य था। वो भिखारी भी सत्य था, वो शराबी भी सत्य था। पर इन सबके बीच कहीं-न-कहीं विवशता भी थी और ये विवशता ही एक सत्य थी, सत्य की परिभाषा थी।

वक्त

आदमी क्या है? वक्त के साथ चलता एक खिलौना । कौन जाने ये खिलौना कब टूट जाये । आदमी खेलते-खेलते ही दुनिया से चला जाता है वक्त की तरह जो कभी नहीं ठहरता, आगे ही बढ़ता जाता है। जीवन में समय बहुत बड़ी चीज है क्योंकि जबतक हम जिन्दा होते हैं, वक्त भी हमारे साथ जिन्दा रहता है। वक्त ही हमें रोके होता है। यही वक्त, यही जिन्दगी जो ठहर ही नहीं सकती है, तब रूक जाती है जब आदमी बूढ़ा हो जाता है या फिर मौत को सीने से लगा लेता है। तब पहली बार वक्त ठहरता है। वक्त में और हममें बस इतना ही फर्क है कि वक्त जिन्दा रहता है, आदमी मर जाता है। वक्त एक कठपुतली का नाच देखा करता है हमें नचाकर क्योंकि हम ही वो कठपुतली हैं जो वक्त के इशारों पे नाच रहे हैं।

जब पहली बार हम सबेरा देखते हैं, रात का वक्त गुजर जाता है। रात बीत जाती है और फिर एक नया वक्त शुरू होता है, दिन का वक्त। दिन के वक्त हम खाते हैं, पीते हैं, मौजमस्ती करते हैं। मगर जब रात का वक्त होता है, हम एक ही बात सोचा करते हैं कि ये वक्त इतनी जल्दी कैसे गुजर गया? अभी-अभी तो सुबह हुई थी मगर शाम में बदल गयी। ये वक्त न तो कभी ठहरा हमारे लिए, न हम ठहर पाये वक्त के साथ । वक्त भी बदलता गया, हम भी बदलते गये और हमारी जिन्दगी भी बदलती गयी। वक्त के बनाये हम ऐसे खिलौने हैं जो मौत की डोर से चलती है, जो डोर के टूटते ही गिर पड़ती है और फिर आदमी रूपी खिलौना टूट-टूट जमीन पर गिर जाता है ।

यही वक्त की कहानी है कि जब सुबह होती है, हम शाम के वक्त का इन्तजार करते हैं और जब शाम होती है, हम रात के वक्त का इन्तजार करते हैं और फिर जब रात का वक्त भी बीत जाता है, एक नयी सुबह हमें जगाने आती है। पहले हम घड़ी देखते हैं, फिर सोचते हैं, थोड़ा और सो लेता हूँ। अभी तो सुबह के सात ही बजे हैं। मगर वो आदमी, जो जागकर भी सो जाता है, वो उस वक्त समझता है कि वक्त मेरी मुट्ठी में हैं। मगर नहीं, वक्त तो आजाद पंछी की तरह है जो खुले आसमान में सैर करता है। न वक्त रूका, न वक्त के साथ पंछी रूका। ये वक्त चलता रहा, वक्त का दौर चलता रहा और मजबूर हुए हम क्योंकि हम वक्त के साथ चल न सके। हम थक गये और सदा के लिए चादर तान सो गये।

तो क्या वक्त रूका? नहीं, हम ही रूक गये। जब ये थमेगा, हम ही रूक नहीं पायेंगे क्योंकि चलते रहना ही सीखा हमने आजतक। कभी मुड़कर पीछे नहीं देखा कि वक्त हमें किस ओर ले जा रहा है। हम तो बस चिलचिलाती धूप में एक छाता ले निकल पड़ते हैं घर से बाहर। मगर वक्त से पीछा नहीं छुड़ा सकते और क्यों पीछा छुड़ाएँ हम वक्त से? ये समय ही तो जीवन है। ये लम्हा ही तो बस हमारा है। वक्त को जानते-जानते हम जैसा आदमी भी थक सकता है, मगर मैं नहीं थकी। मुझमें आज भी वक्त के साथ चलने की हिम्मत हैं। ये वक्त क्यों रूकेगा हमारे लिए? ये रूक ही नहीं सकता।

अगर वक्त रूक गया तो माँ के पेट में ही बच्चा मर जायेगा। ये वक्त अगर रूक गया तो उड़ते परिन्दे फिर से जमीं पे आ गिरेंगे। नहीं ये वक्त रूक ही नही सकता। अगर

ये थम गया, आदमी बचपन में ही मर जायेगा और माँ तड़पती रह जायेगी। वक्त की अहमियत जीवन में सदा से है। ये फूल, ये पत्ते, ये फलों से लदी डालियाँ अगर रूक गयी तो आदमी क्या चल पायेगा। दो कदम भी नहीं, वक्त रूक ही नहीं सकता। समय से बड़ी कोई चीज नहीं । समय ही एक धर्म को जिन्दा रखे हुए है। समय ही आदमी को आदमी से पहचान करना सिखाता है क्योंकि समय से बड़ा कोई धर्म नहीं। समय ही सबसे बड़ा धर्म है। जीना है, रहना है अगर तो समय की पूजा करो, समय के साथ चलो। यही वक्त की कहानी है जो बड़ी अजीबोगरीब है क्योंकि अगर आदमी वक्त पे भरोसा रखता है तो अपने आपको खो बैठता है अगर अपने आप पर भरोसा रखता है तो वक्त को खो बैठता है।

तो ऐसा क्या करें हम कि वक्त भी हमारे साथ चले और हमें भी वक्त के साथ चलने में तकलीफ न हो । शायद ! एक नयी सुबह का इन्तजार या एक नयी जिन्दगी की पहली घड़ी का ।

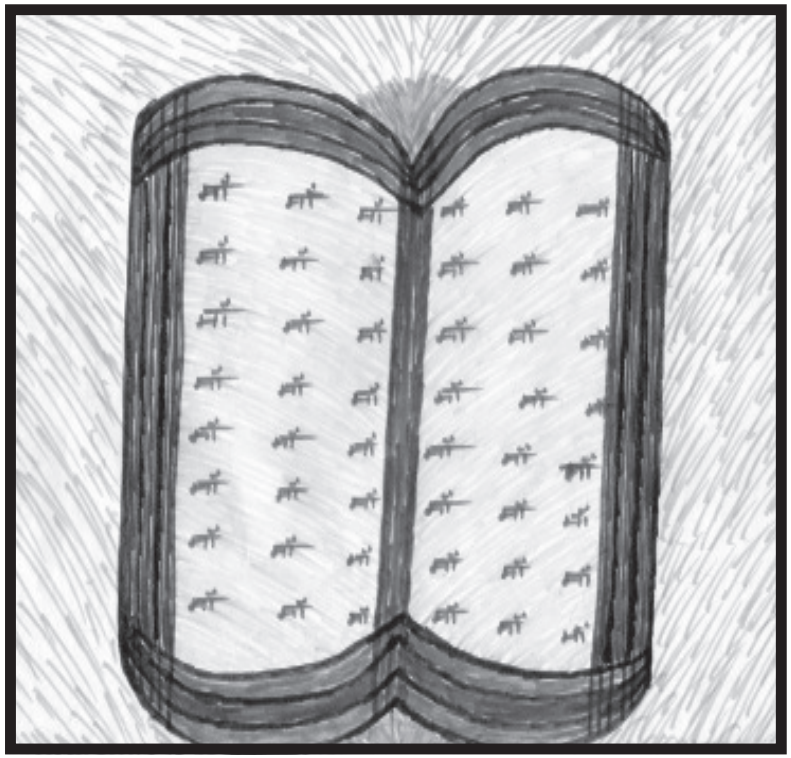

आश

293

हर इन्सान अपने दिल में एक आश जगाता है। अपनी बीती जिन्दगी को याद कर सोचता है कि अब मेरे बच्चे जवान हो गये। अब मेरे सर पे एक ही बोझ रहा इनकी शादी करना। शादी के बाद जब ये खुद बाल-बच्चे वाले हो जायेंगे इन्हें अपने कांधे पे भार महसूस होगा ये कमाने लगेंगे। जब ये कमाने लगेंगे तब मेरे सर का बोझ भी कुछ कम होगा। ये जो थोड़े पैसे कमायेंगे उनपे मेरा भी तो हक बनेगा न? मैंने इनके लिए अपने जीवन भर की कमायी सारी दौलत लुटा दी।

मगर होता कुछ और है। ये आश का पंछी उड़ जाता है। उन्हें खुद अपने लिए तिनका तलाशना लोता है। बूढ़े बाप की आरजू अधूरी रह जाती है। उनकी ख्वाहिशें पूरी नहीं हो पाती। बेटा जो दौलत कमाता है, उसे अपने ही बच्चों पे, अपने ही परिवार लुटा देता है। जैसे इनके सिवा उनका और कोई परिवार नहीं क्योंकि, बूढ़े माँ-बाप की जिन्दगी को वो अपनी जिन्दगी नहीं समझते। मगर क्यों? जबकि वही बूढ़ा बाप उनके लिए दर-दर की ठोकरें खाता रहा। जब वो बीमार पड़े, उनकी दवाई के लिए उनके पास पैसे नहीं थे। उन्होंने अपना खून बहाया था, तब कहीं जाकर उनकी बीमारी ठीक हुई थी, उनकी दवा ला सके थे वो।

तो क्या आज एक बेटा अपने बाप की खातिर खून बहायेगा, बहाना चाहेगा। नहीं, क्योंकि वो खून पानी बन चुका आज और पानी को पैसे से नहीं खरीदा जाता। जगह-जगह मिलता है वो। जहाँ भी खुदाई करो, पानी निकल आता है। मतलब बूढ़ा बाप जगह-जगह दिखता है उन्हें कभी सर पे टोकरी लिए तो कभी हाथ में कुदाल लिये। मगर तब एक बेटा उन्हें नहीं पहचान पाता। करीब आकर दूर चला जाता है। तब वो अपनी पोजीशन देखता है, अपना रूतबा देखता है। कभी-कभी तो काम के बोझ तले दबा बूढ़ा बाप बेटे के सामने ही मर जाता है। लोगों की भीड़ इकट्ठी हो जाती है। हर कोई कहता है, इसके घर खबर कर दो। शायद कोई आये। मगर नहीं, उन्हीं भीड़वालों में उनका बेटा भी होता है। मगर वो सामने नहीं आता, दो पैसे दे चला जाता है और कहता है, इसकी मैय्यत सजा देना। तब बहुतों आशीष मिलते हैं उसे कि ये बेचारा भला आदमी था। इतने बड़े कारोबार का मालिक, एक मजदूर के लिए पैसे दे गया। कितना बड़ा दिल है इनका। इतने आशीष पाकर एक बेटे की जिन्दगी तो और बढ़ जाती है, मगर, मरा हुआ बाप वापस नहीं आ पाता।

फिर लोग उसकी मैय्यत सजा देते हैं। अर्थी को कांधा देने वाला कोई नहीं होता, बूढ़े बाप की चिता जलाने वाला कोई नहीं होता तब और फिर बेटे को जब खबर मिलती है कि उसका बाप मर गया, तो समाज को दिखाने के लिए वो अपने सर के बाल कटवा लेता है और जब मातम का माहौल खत्म हो जाता है, चला जाता है। जबकि वो पहले से ही जानता था कि उसके पिता मर गये क्योंकि वो उस वक्त वहीं मौजूद था जब बूढ़े बाप की मौत हुई थी। कोई कहता ही रहा, बेचारे ने यही आश जगायी होगी भरी जवानी में कि जब बेटा जवान होगा, कम-से-कम उनकी अर्थी को कांधा तो लगायेगा। मगर आश अधूरी ही रह गयी और इस तरह आदमी के साथ उसकी आश भी मरती गयी।

इन्तजार

294

जीवन ही एक इन्तजार है। हमारी जिन्दगी में ऐसे कई पल आते हैं और चले जाते हैं जिनको कि हम मरते दम तक दोहराते रहते हैं। मगर वो लौट नहीं पाते, इन्तजार की कतार में खड़े हो जाते हैं। कभी सोते हैं तो जागने का इन्तजार, कभी रोते है तो हँसने का इन्तजार। मगर जिस्म सो जाता है और आँसू सूख जाते हैं। पर ये इन्तजार लौट नहीं पाते और आगे चले जाते हैं हमारी जिन्दगी से। हमारा जिस्म मिट्टी का कफन ओढ़ लेती है। हमारी रूह किसी अन्य जिस्म में पनाह लेने निकल जाती है। यही सिलसिला चलता जाता है। एक गम मिट भी नहीं पाता, दूसरे गमों की सेज सज जाती है हमारे लिये। ये फूलों के बिस्तर पे काँटे बो जाती है जिसपे बैठने पर हमारा जिस्म लहूलुहान हो जाता है। हमारी आत्मा बेजान हो जाती है, खून का एक-एक कतरा निचोड़ जाती है। तो पहली बार हमें एहसास होता है कि ये फूल नहीं काँटे हैं जिसे किस्मत ने हमें बाँटे हैं। किस्मत क्या ऐसे ही लिखी जाती है आदमी की कि एक गम दूर भी नहीं होता, दूसरा पास आ जाता है। किस्मत क्या ऐसे ही लिखी जाती है किसी आदमी की कि इन्तजार के सिवा कोई रास्ता ही नहीं बच पाता।

तो क्या जीवन इसे ही कहते हैं जिसे हमने इन्तजार में बिता डाला। कल किसी चीज का इन्तजार था, आज किसी और चीज का। मगर कल तो जाने कब का चला गया। फिर हमारा इन्तजार क्यों रह गया पास में, वो भी चला जाता। हमारी कोई तो आरजू पूरी होती। हमारा कोई तो मकसद होता जीने का जिसे जीते हुए हमें इन्तजार न करना पड़ता। ये जिन्दगी क्यों इतनी बेवफाई करती है हमारे साथ। बिजलियाँ तो और भी गिरती है, तूफान तो और भी उठते हैं। मगर क्या उसका एक मौसम नहीं होता। वो तो एक मेहमां है बस जीवन का। फिर इन्तजार भी क्यों न हमारी जिन्दगी में मेहमान बनकर रह सका? मेहमान तो दो दिन तक ही शोभा देता है। दो से तीन दिन होने पर वो मेहमाननवाजी से वंचित हो जाता है। इन्तजार भी ऐसा ही मेहमान है जो इतने दिन रहा कि वो हमारी मेहमाननवाजी न पा सका। हमने उसे देख मुँह फेर लेना चाहा क्योंकि वो हमारी नजर में अच्छा नहीं बल्कि बुरा, बहुत बुरा था जिसे हमारा दिल नहीं बदल सकता था। मगर ये तो इतने भी दिन रहा कि जी ऊब गया हमारा। मगर वो वापस जाने का नाम ही नहीं ले पाया। वो हमारे घर के उसी खूबसूरत कमरे में सो गया जहाँ कि हमारी रातें अच्छी कटती थी। हमें तो दूसरे कमरे में जमीं पे बिस्तर लगा सोना पड़ा।

यही मेरे साथ बार-बार हुआ और फिर एक दिन इन्तजार ने जड़ बना ली हमारी जिन्दगी में। वर्ष पे वर्ष बीते। महीने चले जाते, साल आ जाता। मगर जिन्दगी में कोई बदलाव न आ सका। बल्कि इन्तजार और लम्बे दिन का हो गया। कल हम किसी बात का इन्तजार कर रहे थे और आज किसी बात का। मगर हमारी जिन्दगी उलझती ही गयी। उनकी गुत्थियाँ सुलझ न सकी। ऐसा कोई वक्त न आ सका हमारे जीवन में जिसे हम इन्तजार से परे पाते।

ये तो विधाता के हाथों की बिडम्बना थी। ये तो खेल था, तमाशा था। मगर इसी खेल तमाशे में वक्त ऐसे बीता कि हम बचपन से जवान, जवान से बूढ़े होते चले गये। मगर इन्तजार हमारे साथ बूढ़ा न हो सका। इन्तजार के पल हमारे साथ बूढ़े न हो सके। हम तो आये भी और मिट्टी का तिलक लगा चले भी गये। मगर हमारे बाद हमारी नस्लें रह गयी

इन्तजार के लिए, इन्तजार की कतार में खड़ी। जिन्दगी जैसी थी, वैसी भी न रह सकी। गम मिटने के बजाय बढ़ते चले गये। साँसे टूटने लगी तो हमने एक साँस उधार भी ली। मगर कब तक? ये साँसे भी तो एक दिन टूटनी ही थी, टूट गयी। तो आज न जाने क्यों ऐसा लग रहा है कि इन्तजार का दूसरा नाम मौत है क्योंकि मौत भी हमें सुकून से मरने नहीं देती। इन्तजार भी हमें सुकून से मरने नहीं देता। ये बिडम्बना है ऊपरवाले की, ये खेल है तकदीर का। हम तो ऐसे जुआरी हैं जो जीती बाजी बार-बार हार जाते हैं और हमारी कश्ती किनारे जाने से पहले डूब जाती है। हमने कितना इन्तजार किया था कि कश्ती को किनारे ला सकूँगा एक दिन। उसे एक-न-एक दिन किनारा जरूर मिलेगा। पर हमारी कश्ती तो डूब गयी, किनारा उसे नसीब न हो सका। मगर हमारा इन्तजार नहीं डूबा। उसके साथ हम फिर एक नई कश्ती बनबाने के सपने सजाने लगे, अपनी पलकों पे। मगर इसके लिए पैसों की जरूरत थी जो हमारे पास नहीं थी। इसके साथ हमने मेहनत भी करनी चाही, मगर हमारी मेहनत पसीना बन बह गयी। हम इतने पैसे न कमा सके जिससे एक कश्ती बनबाते। हमारे पैसे तो दाल-रोटी में ही खर्च होते चले गये। फिर कुछ बचा ही नहीं जिससे किनारा मिल पाता हमारी जिन्दगी को। हम डूबते चले गये, मगर हाथ में पतवार न पा सके। हमारे ख्वाबों के नदी की गहराई बढ़ती चली गयी। हम डूबते चले गये। हमारी चाहत मिट्टी में सो गयी मगर हमारा इन्तजार न मर सका। वो मिट्टी में न सो सका। वो पानी की गहराई में डूबने चला था मगर उसे तो जिन्दगी ने ऊपर उठा दिया, बहुत ऊपर जहाँ पर कि पानी के बुलबुले भी ठहर नहीं पाते थे। वहाँ हमारे इन्तजार ने हमें ले जाके बिठा दिया। हम क्या करते, मजबूर थे। पानी पे बैठे ये इन्तजार कह रहे थे कि कब हमें किनारे की तलाश होगी? कब हमारा जीवन रंगीन लिबासों से सज सकेगा? कब हमारी दुनिया रंगबिरंगी तितलियों सी खूबसूरत होगी? कब हमारा मन एक खूबसूरत शय से आनन्द पा सकेगा? यही सोचते-सोचते इन्तजार शायद एक दिन चला जाये। हमारे जीवन में शायद ऐसे पल आ सकें जिसे हसीन और महजबीन पल कहते है।

तो ये है इन्तजार जिसके लिए आदमी इतना कुछ गंवा देता है मगर पाता क्या है। वो ही खाली हाथ, वही उजली हथेली, वहीं आड़ी-तिरछी रेखायें जिसे कोई पढ़ नहीं पाता और इसे तकदीर पे छोड़ देता है। इसे तकदीर का ही सितम समझता रह जाता है।

जिस्म

मैं जिस्म हूँ। मैं बार-बार बदलता हूँ। पर कभी बलबान नहीं बना पाता खुद को। कभी कोई बेगैरत इन्सान मुझे जिन्दा जला देता है, कभी मैं गैरत की चोट में आ खुद को मिटा डालता हूँ। मैं रोता हूँ ये सोच कि इस धरती पे मेरे जिस्म के कई टुकड़े हुए। उनमें से हर एक से एक नया जिस्म तैयार हुआ मगर इस पुराने जिस्म को लोग भूल गये। उस जिस्म को जिसके टुकड़े होने के बाद ही एक नया जिस्म बना।

ये कैसी बिडम्बना है, ये कैसा खेल है तकदीर का? न आँसू बहे, न मित्रता कम हुई। न साँस टूटने के वक्त कोई जिस्म का साया ये भूला सका कि मेरे एक नहीं, कई और टुकड़े हो चुके है। जिसे देखने की लालसा आखिरी साँस तक मेरे दिल में है। मैं जब चल रहा था, रो रहा था। मैं जब खेल रहा था, रो रहा था। मैं जब भूख से व्याकुल था, रो रहा था। मैं जब नंगा था, रो रहा था। जब इतनी बार रोना आया मुझे तो कलेजा क्यों नही फटा हमारा तब जब अपने कलेजे के टुकड़े को आसमान में उड़ता देखने का ख्वाब सजा रहा था मैं पलकों पे अपने। मैं ये क्यों भूल गया कि वो नया जिस्म है, मैं पुराना? वो जवां मर्द है, मैं बूढ़ापे की कमजोर लाठी जिसको टूटते देर नहीं लगेगी। पर मैं कैसे भूल जाता? इस बूढ़े जिस्म में ममता का इतिहास जो छिपा है। इतिहास सदियों से यही गवाही देता आया है कि एक बूढ़ा जिस्म चाहे हजार बार मरे मगर एक जवान चेहरे की मौत एक बार भी न हो।

कितनी बिडम्बना है इतिहास की उन रचनाओं में? कितने किस्से पनप रहे है उसकी वजह से और कितने दम तोड़ रहे हैं मगर मैं बार-बार एक ही बात सोच रहा हूँ कि मैं गिनती न कर सका कि मेरे जिस्म के और कितने टुकड़े हो सकते है क्योंकि मैं बूढ़ा जिस्म हूँ, गिनती भूल जाता हूँ। मुझे ये याद नहीं रहता कि ईश्वर एक है या कई, कायनात एक है या अनेक। मुझे तो अपने जिस्म से बू आती महसूस होती है क्योंकि मैं पल-पल दम तोड़ता जा रहा हूँ। जिस तरह पुराने पेड़ के छाले जलने के सिवा किसी काम के नहीं रह जाते उसी तरह पुराना जिस्म तड़पने के सिवा कोई और मकाम, कोई और जगह नहीं पा सकता। रह गयी उसके जिस्म की निशानियाँ, वो भी एक दिन बूढ़ी और बेबस हो जायेगी। हाँ, मैं एक जिस्म, ये जानते हुए भी अनजान हूँ कि मैं जीने के काबिल नहीं रहा। मुझे मर जाना चाहिए। नये लोग बता रहे थे मैं पुराना हो गया और पुराने लोग तो बचे ही नहीं कुछ कहने को। मैं बार-बार एक ही बात सोचता हूँ कि मैं क्यों इतने टुकड़े करता हूँ अपने जिस्म के? अगर मैं एक जिस्म रहता, सारी जायदाद एक होती। अगर मैं एक जिस्म रहता, सारी कायनात सुकून से सोती। अगर मैं एक जिस्म होता, बूढ़ापे की लाठी कमजोर न होती। मगर नहीं, मैं तो एक रह ही न सका। मेरी चाहत ही रह गयी कि एक और टुकड़ा बने मेरे जिस्म का फिर उस एक टुकड़े से एक जिस्म बने। इसी चाहत में जिस्म के टुकड़े नये होते जाते हैं और वो जिस्म पुराना।

बस इसी सिलसिले की खातिर ये कोलाहल बना, ये जमीन बनी, ये आसमान बना। तारे हजार हैं आसमान में तो उनकी गिनती करने को हजार इन्सान आने ही चाहिए। सितारों को कोई एक तो गिन नहीं सकता। उसकी गिनती अनन्त है। वो न पहली है न आखिरी।

फिर धरती की गोद में हमारी एक गिनती कैसे होती? न तारे गिनना आसान है, न जिस्म के टुकड़े। तो किस वजह से गिनती शुरू हो? मैं यही सोच बार-बार एक जिस्म को त्यागता जाता हूँ ताकि गिनती आसान हो सके जिस्मों की। मगर नहीं, वो तो अनेकानेक हो गयी। फिर न कोई मुझे गिन सका, न मैं सितारा ही गिन सका। मैं बार-बार गिनती भूलता गया क्योंकि हमारे जिस्म के एक टुकड़े से कई टुकड़े हुए।

तो टुकड़ों में बँटती जिन्दगियाँ आखिर खत्म कहाँ हो सकी? एक जिस्म जाता है, एक चला आता है और मैं बार-बार एक ही बात सोचता रह जाता हूँ कि मैं पुराना जिस्म ये भूल तो नहीं गया कि मेरे जिस्मों के टुकड़े ने मुझे बेसहारा कर दिया। पर याद नहीं रहती ये बातें मुझे और जिस्म बदल जाता है।

आदमी कल्पना से परे है । वो हर घड़ी, हर लम्हा बस कल्पना ही करता रहता है। कभी उसकी कल्पना में कोई जादूई ताकत आती है तो कभी वो परिन्दा बन आसमान में उड़ने लगता है कभी वो कल्पना से अपने लिए एक खूबसूरत महल बनाता है तो कभी उसके ख्वाबों के महल कल्पना में ही विलीन होकर भी रह जाते है। हम तरह-तरह की कल्पना से अपने आपको जिन्दा रखते हैं। कभी ऐसा भी वक्त आता है जब हमे मौत लेने आती हे, वो भी कल्पना में। मगर जब वही कल्पना हकीकत बन सामने आती है, हमारे दिलोदिमाग पे एक गहरा सदमा पहुँचता है और हम कल्पना करते-करते कभी-कभी पागल भी हो जाते हैं।

तो क्यों देखे हमने ऐसे कई ख्वाब जिनका हकीकत से कोई वास्ता न था। वाह रे भगवान! तूने अगर कुछ दिया भी हमें तो वो भी कल्पना में। हकीकत में तो तूने हमें कुछ दिया ही नहीं। इसी तरह भगवान से शिकायत करती हमारी निगाहें सब्र सीमा पार कर जाती है और फिर एक दिन भगवान पर से भी विश्वास उठ जाता है हमारा। अरे इस भगवान ने तो हमसे हमारी कल्पना तक छीन ली। खाली कर दिया हमारा दामन। मगर क्या हमने कल्पना करना छोड़ा? ख्वाबों का एक महल बनाना छोड़ा जबकि हमें पता था कि हमारे ख्वाब की ताबीर नहीं होती। हमने ख्वाब तो बहुत देखे मगर उन्हीं ख्वाबों की मौत होते भी देखी। मगर ख्वाब देखना कहाँ छोड़ा हमने? हम आदमी हैं और आदमी तो एक छाया है ही, एक ख्वाब है ही, एक कल्पना है ही। उसके पास क्या है। न कुछ पाने की ताकत, न कुछ खोने की ताकत। उसे जो भी देता है भगवान देता है। उससे जो भी लेता है, भगवान लेता है। हमारे हाथ तो आते वक्त भी खाली थे। जाते वक्त भी खाली ही गये। तो आदमी क्या देखे हकीकत को? भगवान उसे दिखता नहीं, कल्पना हकीकत का चोला पहन सकती नहीं। हाँ, कल्पना कर हम थोड़े पलों के लिए सुकून जरूर पाते हैं। मगर सुबह ही हमारा ख्वाब टूट जाता है। हमारी कल्पना की रात जल्दी बीत जाती है। कल्पना करते-करते हम इतनी गहरी नींद सो जाते हैं कि फिर कल्पना हमें जगा नही पाती।

देखे तो हमने कितने ख्वाब, पर सच एक भी नहीं। उनमें से एक भी ख्वाब सच्चा न रह सका हमारे लिए। तो क्यों न ख्वाब देखना छोड़ दें हम? कल्पना की दुनिया से बाहर आ जायें हम और कहें कि हमने ख्वाब देखना छोड़ दिया। मगर क्या ये सच था? नहीं। ये कल्पना हकीकत हो न हो पर ये झूठा नहीं हो सकता। अगर ये भी चला गया हमारे पास से तो हमारे पास क्या रह जायेगा? अभी कम-से-कम कल्पना में हमने एक घर तो बनाया। कल्पना में ही उनमें बसेरा तो कर लिया न?

ये दो हाथ

दुआओं में उठने वाले ये दो हाथ कितने मजबूर हैं। कहीं ये हाथ हल चला रहे हैं, कहीं ये हाथ पसीना पोछ रहे हैं। कहीं ये हाथ आँख से बहते आँसूओं की मोती की माला पीरो रहे हैं, कहीं ये हाथ भीख माँगते हुए काँप रहे हैं।

ये हाथ हर उस जगह को जा रहे हैं जहाँ-जहाँ इन्सानी बस्ती है। कहीं भूख से बिलखते बच्चे अपने लिए दो निवाला साहूकारों से उधार माँग रहे हैं। कहीं साहूकारों के इनकार करने पर दो निवाला चुराकर भाग रहे हैं। ये दो हाथ कितने काम करवा रहे हैं हम इन्सानों से। हम जब संसार में आये थे, एक अकेले इन्सान थे हम। धीरे-धीरे हमने मेहनत-मजदूरी से अपने लिए एक घर बनाया। फिर उसी घर में मेरी पत्नी रहने आयी, फिर मेरे बच्चे। मेरी पत्नी ने मुझे अपने दो नाजुक हाथों से मेहनत के पैसे गिनना सिखाया। कहा, बच्चे अभी छोटे हैं। जब ये बड़े हो जायेंगे, ये भी कमाने लगेंगे। तब मैं ये कह उसकी बात टाल देता हूँ कि लक्ष्मी! ये दो हाथ अभी बहुत छोटे हैं ये मेहनत-मजदूरी के लायक नहीं। तब वो कहती है, यही हाथ कल भूख शांत करने के लिए दो निवाला चुराकर भाग सकते हैं। तब मैं निरूत्तर हो जाता हूँ उसकी बातों के आगे और कांधे पे हल ले निकल पड़ता हूँ घर से। मुझे रास्ते में मस्जिद का द्वार खुला मिलता है। मैं हल जमीन पर पटक देता हूँ और अपने दोनों हाथों से खुदा की नमाज अदा करता हूँ। खुदा हैरान होता है हमें देखकर। हम हैरान होते हैं उन दो हाथों को देखकर जो कोढ़ी के थे, भिखारी के थे, लाचारी के थे। मैं रो पड़ता हूँ इतने लोगों को देखकर और मुझे अपनी पत्नी की कही एक बात याद आती है। खुदा से दिल लगाने से हर मुश्किल आसान हो जाती है। हमें खुदा के सजदे में हमेशा झुके रहना चाहिए। तभी अल्लाह-हो-अकबर! का नारा गूँजता है। मेरे दो हाथ हल उठाने को तत्पर हो जाते हैं। मैं दौड़कर खेतों की ओर रवाना हो जाता हूँ। मैं अपने इन दो हाथों से मिट्टी से सोना उगाता हूँ और गर्व करती है ये धरती मुझपर कि अभी मेरे हौसले बुलन्द हैं। शाम हो जाती है। मैं घर आता हूँ। मेरी पत्नी मुझे नहाने को कहती है। मैं नहाता हूँ क्योंकि पसीने से जिस्म नमकीन हो चला था। मैं पूछता हूँ लक्ष्मी! बच्चे कहाँ हैं। तो वो कहती हैं, खेल रहे हैं। तभी मेरी बेटी आती है। मेरी आँखें बन्द कर देती है। मैं हँसता हूँ, अरे कौन है। मैंने नही पहचाना। तब वो कहती है माँ-माँ देखो! बाबा, हार गये। तब मैं सोच में पड़ जाता हूँ। ये दो छोटे हाथ बाबा की आँखे तक बन्द कर सकते हैं जिससे संसार अँधेरे में घिर जाता है। तब मेरी पत्नी कहती है, ये मत भूलो कि ये हाथ सिर्फ अँधेरे नहीं देते। ये हट जाने पर एक पल में रोशनी की फुहार भी देते हैं। ये आँखे थोड़े पल के लिए अन्धी हुई थी। बाद में रोशनी मिल गयी इन्हें। मैं एक बार फिर अपनी पत्नी के आगे निरूत्तर हो जाता हूँ पर गर्व करता हूँ भारत की इस नारी पर जो इतनी भी ज्ञानवान होती है। रात फिर आती है। मैं बच्चों से पूछता हूँ आज आपने क्या पढ़ा बेटे? तब मेरी बेटी कहती है बाबा देखो न! मैंने अपने हाथों पे माँ लिखा, पिता लिखा। तब मैं हैरान हो जाता हूँ ये देख कि ये दो हाथ कितनी अदा से दो शब्द लिख गये थे। मैं फिर सो जाता हूँ। सुबह होती है। बच्चे माँ की गोद में सो रहे थे। मैं कहता हूँ लक्ष्मी! जरा तौलिया लाना। काम पे जाने से पहले मैं जरा फ्रेश होना चाहता हूँ। आज कुछ सामान लाना है शहर से। तब वो बच्चों को अपने दोनों

हाथों से उठाती है और बिस्तर पे सुला देती है। वो जाग जाते हैं। मैं कहता हूँ बेटे! सुबह हो गयी। वो दोनों दौड़ पड़ते हैं। बाबा! क्या पढ़ाई का वक्त हो गया? मास्टरजी ने मुझे सुबह ही बुलाया था। तब मैं अपनी पत्नी से कहता हूँ लक्ष्मी! जरा बच्चो को तैयार कर दो। इन्हें पढ़ने जाना है। वो कहती है, ठीक है। बच्चे जब स्कूल जाते हैं, पूछता हूँ मैं उससे तुम्हें आराम भी तो करना चाहिए। तब वो कहती है, हाथ जब पति और बच्चे का बोझ उठा ही रहे हैं तब आराम कैसा जी? तब मैं फिर निरूत्तर हो जाता हूँ उसकी बातों के आगे और थोड़ी देर में शहर चला जाता हूँ। जब लौटकर आता हूँ, एक भिखारी को खड़ा पाता हूँ। वो अपने दोनों हाथों से कटोरा भी सम्हाल नहीं पा रहा था। उसके हाथ काँप रहे थे। मैं पूछता हूँ उससे ये दो हाथ काम करते-करते थके होंगे न बाबा? तो तुम्हारी जायदाद कैसे खत्म हो गयी जो तुम इस उम्र में कटोरा थाम भीख माँग रहे हो। तब वो कहता है बेटे! मेरे इन हाथों की कमाई मेरे बेटे-बहू खा गये और चले गये संसार से। मैं अकेला रह गया। मैंने अपने इन्हीं हाथों से कब्र की मिट्टी खोदी थी और इन्हीं हाथों से उन्हें दफन भी किया था। तब मैं रो पड़ता हूँ और कहता हूँ खुदा भी कमाल की चीज है जो दो हाथों से इतने सारे काम करवाता है।

पहले ये दो हाथ हल चलाते हैं। फिर मिट्टी से सोना उगाते हैं। फिर उसी सोने से जीविका का सामान खरीदते हैं। फिर ये दो हाथ भूख से निवाला माँगने लगते हैं। फिर यही दो हाथ भीख भी माँगने लग जाते हैं। यह दो हाथ चोरी भी करना सीखते हैं। तो कितने हाथ हैं ऐसे जो आसानी से खुदा के आगे उठ जाते हैं और यही दो हाथ एक आखिरी लम्हे में जुदा भी कर देते हैं हमें। कब्र खोद हमें मिट्टी में सुला देते हैं। बस इतने ही काम करते हैं ये दो हाथ और बाकी सारे लोग हाथ उठा बदनाम हो जाते हैं। कितने करामाती हैं ये दो हाथ। मेरी नजर आसमान तक जाती है। अल्लाह-हो-अकबर! का नारा गूँजने लगता है। आहिस्ता से मेरे हाथ भी दुआओं में उठ जाते हैं। मैं खुदा के आगे सर झुका देता हूँ। वो भिखारी सामने से गुजर जाता है और वक्त चला जाता है।

एक अदने से इन्सान ने आसमान से सितारे को तमन्ना की। कहा, ऐ आसमान! मुझे एक सितारा चाहिए। वो बोला किसलिए? उस इन्सान ने कहा मेरे घर की ज्योति धुँधली पड़ गयी है। मुझे अपने घर को रौशन करना है तो आसमान बोला बेटे! रोशनी पाने के लिए कर्ज चुकाना पड़ता है। तुम्हें मैं सितारा तो दूँगा पर थोड़े दिनों बाद तुम्हें मेरे साथ चलना होगा। तो उस इन्सान ने कहा, फिर तो मेरे घर की रोशनी बुझ जायेगी। तो आसमान बोला, रोशनी बुझती नहीं और सुलगती है। जिस अँधेरे घर को एक ज्योति मिल जाती है, वह घर जीवन भर रोशनी से हरा-भरा रहता है। इतना कह आसमान उसे एक सितारा दे चला गया। थोड़े दिनों बाद वो इन्सान बीमार पड़ा। उसकी पत्नी ने एक बेटे को जन्म दिया। सितारा तो रौशन हो गया मगर इन्सान चला गया। आसमान से जाके बोला, मेरे बाद मेरे बेटे का क्या होगा? वो बोला, तुम्हारे बेटे से और चार ज्योतियाँ जन्म लेगी। उनकी रोशनी इतनी दूर तक जायेगी कि पूरी धरती ये कहते हुए गर्व करेगी कि एक अदने से इन्सान ने इतने अच्छे लोगों को पैदा किया। तो वो इन्सान बोला, फिर मैं अपने बेटे से मिलूँगा कब? तो आसमान ने कहा, वो तुम्हे कभी नहीं मिलेगा। क्यों? इसलिए कि तुमने जिस सितारे की तमन्ना की, वो आसमान का था ही नहीं। वो तो जमीं पे ही जाने की बाट जोह रहा था। मेरे साथ वो खुश नहीं था और उस सितारे से जो चार ज्योतियाँ निकलेगी, वो उसके साथ खुश नहीं रह पायेगी। वो इन्सान रोने लगा। मेरे बेटे का फिर क्या होगा? तो आसमान बोला, जो जमीं से एक बार वापस आ जाते है, उन्हें जमीं की बातें भूल जानी जाहिए। तुम ये मत भूलो कि तुमने ही मुझसे एक सितारे की तमन्ना की थी कभी। तब वो अदना सा इन्सान इस बात पे रो पड़ता है कि मैंने अपनी खुशी के लिए एक सितारा माँग लिया आसमान से और उसको अपनी गोद में खिला भी न सका। तो क्यों उस सितारे की तमन्ना की मैंने? मेरे बाद मेरे बेटे की चार निशानियाँ पैदा लेंगी। वो सब उससे नफरत करेंगी। फिर मेरा बेटा मुझसे सदा नफरत करेगा। वो मुझे कभी माफ नहीं करेगा। तब मैं ये सोच रो पड़ूँगा कि एक ऐसा बदनसीब सितारा दिया तकदीर ने मुझे कि जिसे दुनिया में कोई नाम नहीं मिलेगा। यहाँ तक तक उसके चार बच्चे भी उससे नफरत ही करेंगे।

ऐ आसमान वाले! मुझे भेज दे वापस उसी जमीं पर जहाँ कि मेरा बेटा सिसक रहा है। तो आसमान बोला, ऐसा नहीं हो सकता। फिर वो इन्सान रोता है और ऊपर से आवाज आती है बेटे! मेरे बाद खुश रहने की कोशिश करना और वो देखता है चार निशानियाँ उसकी जमीं पे पैदा लेती है जो आयी तो रात के अँधेरे में थी, मगर चेहरे से उजली थी।

एक के तकदीर में कुहाग था, एक के तकदीर में सुहाग था। न सुहाग वाले सुहागन रह सके न कुहाग वाले रोना कम कर सके। न बदनसीबी उनका गला घोंट सकी, न मजबूरियाँ सिसकना कम कर सकी। मौत किसी को भी नहीं आयी। आती भी तो कैसे? वो सब सितारों की ज्योति थे जिन्हें इस संसार को रौशन करना था।

बेचारा बदनसीब सितारा धीरे-धीरे बुझने लगा। उससे बच्चों की नफरत सही नहीं जाने लगी। वो रोने लगा तो आसमान पे बैठा उसका जन्मदाता इन्सान आसमान से बोला, ऐ आसमान! मुझे मेरा सितारा वापस कर दे। मैं और उसके दर्द को सह नहीं पाऊगाँ तो

आसमान ने कहा, तुम्हें तो सहना ही होगा। वो बेचारा रो पड़ा। मैं नहीं जानता था कि एक सितारे की तमन्ना करने पर ऐसे लोग आते हैं जमीं पर दर्द सहने। धीरे-धीरे वक्त बीता। वो बूढ़ा इन्सान सिसक-सिसक मिट्टी में मिलता चला गया। बादलों की ओट में विलीन हो गया। उसने फिर ये नहीं देखा कि मैंने जिस सितारे की तमन्ना की वो इतना भी बदनसीब होगा।

इस तरह एक सितारे से कई सितारे पैदा लेते हैं मगर पास के दामन में कुछ सितारे ही रह पाते हैं और उस सितारे से तो चार ही ज्योतियाँ पैदा हो सकी। मगर वक्त बदलेगा। ये बदनसीब सितारे फिर से आसमान में जगमगाएँगे। उन चार सितारों ने जो तकदीर पायी वो आसमान नहीं बदल पायेगा। आसमान फिर एक सितारे से कई ज्योतियाँ पैदा करेगा। मगर हाँ, उन्हीं एक सितारे से जो इतनी ज्योतियाँ निकली उनमे से एक ऊपर वाले की रजा थी, ऊपर वाले की दुआ थी, ऊपर वाले की नमाज की तारीख थी ऊपर वाले कि किस्मत की ऐसी लिखाई थी जिसे जमाना बार-बार दोहराता रहेगा। मगर आसमान से फिर कोई सितारा नहीं टूटेगा।

ये जमीं गवाह है, ये फजा गवाह है, ये वादी गवाह है, ये निशा गवाह है कि उन्हीं बदनसीब सितारों में एक ऐसी ज्योति होगी जिसे कल की तारीख एक ऐसे नाम से दर्ज करेगी जिसे कहते हैं खुदा की तारीख। जिस वक्त जमाना सोयेगा वो जागेगी और कहेगी उठो ऐ दुनियावालों! सबेरा हो गया।

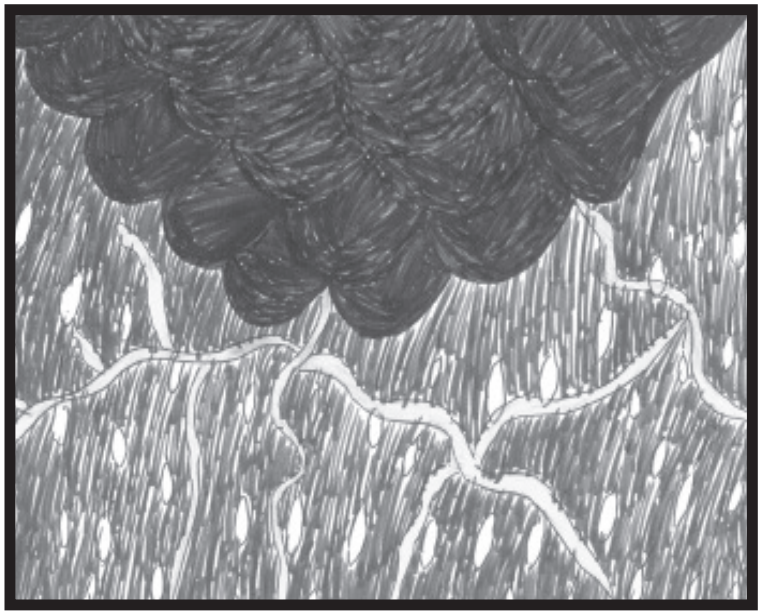

कैसी कशिश है मेरे दिल में, कौन सोच पाता है? ऐसे दर्पण पे कोई क्या मर मिटे जिसका कि अक्स ही खालिस तूफान से भरा हो। बर्षों बीते जब एक कश्ती किनारे पे लायी थी हमें और जमीं पे उतारते हुए कहा था, यहीं अब आसियाँ है तेरा और फिर कश्ती का भी पता न चला और किनारे का भी नहीं। बहुत बड़ा धोखा था ये हमारे साथ, पर हमने इसे मंजूर किया। सागर अपने ही सीने में छुपाये थी मैं। लहरों का आना-जाना तो लगा ही रहता था। कभी शोर का सामां झलकता था तो कभी खामोशी का। ऐसे पल भी जाने कितने थे जो हमें दोहरा लेना चाहते थे और ऐसे भी पल कुछ अनगिनत से ही थे जो हमें भूला देना चाहते थे। ऐसे ही पलों के साये तले मैं जाने कब तक गुजरती रही। कभी खेला-कूदा गाँव-घर के लोगों के साथ तो कभी एक दास्तां भी लिख भेजी हमने उनके नाम पर। जवाब का इन्तजार हमने कभी नहीं किया। क्या करने थे हमे जवाब पाकर हमने तो चिट्ठी ही लिखी थी बगैर स्याही के। उसमें तो हमारी आवाज थी फकत, जिसने सुनना चाहा होगा सुन लिया होगा, जिसने कहना चाहा होगा कह दिया होगा। ऐसे ही निराले अन्दाज थे हमारे जो कभी किसी को पसन्द न आ सके। वो हमें कोरा किताब जो मान बैठे थे। पर कहाँ सोचा था उन्होंने कि इसमें भी एक राज है छुपा हुआ जो सभी को नजर नहीं आ सकता। पल-पल खुद के ही बारे में सोचती, लिखती और बुदबुदाती जाने कितनी बातें कह डाली मैंने उनसे पर उन्होंने सुना ही नहीं। हमारे तो मिजाज ऐसे थे कि लोग हमें दीवाना कहने पर मजबूर हो जाया करते थे। पर वो क्या है न एक कहावत बड़ी ही मशहूर! दीवानों को ही पता है, दीवानों की बातें। पर हम तो ऐसे दीवाने थे जिसपे कोई फिदा था ही नहीं। हमारा तो दीवाना एक ही था वो था कागज का एक कोरा पन्ना। तभी तो उसी को मालूम थी हमारी सारी राज की बातें। सच हमें तो ऐसे में बड़ा मजा आता था। कितनी हँसी आती थी मुझे अपने ही लोगों की बातें लिखकर और उन्हें पढ़कर। लिखा भी क्या था हमने, मास्टरजी की मार पड़ी थी आज उन्हें। सरसों का पौधा खेतों में रोप आये थे काकाजी। फिर तो गन्ध आनी ही थी। बाबूजी ने आज गुड़ के ढेले लाये थे बाजार से। हमने खाये भी और ठुकराये भी। अम्मा की पकायी रोटी तो उस दिन तवे पर ही जलकर राख हो चुकी थी। ताऊजी के ससुराल से उनके साले साहब आये थे उनकी बीवी की चिट्ठी लेकर। पड़ोसी के घर जाने कहाँ से इतने मेहमान आ गये थे कि भाभी ने मेढ़क की चटनी परोस दी थी धनिये की जगह और चाची ने पालक की जगह कुकरौंधे बना डाले थे साग के लिए। फिर कैसे हँसी न आ पाती ऐसे मौके पर उन्हें। सब हँसे, खूब हँसे, हँसते ही रहे जाने कितनी देर तक। पर जब हमारी हँसी का कारवाँ रूका ये क्या हमारे तो नाक से पानी बहने लगा था। ये भी एक मजाक की बात बन गयी थी उनके लिए। कहीं आँख से पानी तो बहते हुए सुना था उन्होंने हँसी-हँसी में या रोने-रूलाने की घड़ी में पर ये बीच में नाक से पानी के टपक जाने की बात तो भई सच में रोमानी थी। कैसा मजाक था ये उस वक्त का? जाने क्या खूबी थी उसी नाक में जो गंगा-यमुना की तरह बहा करती थी अपने ही आप। वो भी मौके-ही-मौके पाकर। बड़ी अजीब बात थी शायद ये उनके लिए। पर नाक तो हमारी थी भई, लाज तो आनी ही थी। हमने भी गुस्से में अपनी नाक ही मरोड़ दी थी। अब तो और मजाक! लो एक और किस्सा शुरू हो गया। कहने लग

गये सब हमारी तो नाक ही टेढ़ी हो गयी। अब नाक सीधी कैसे की जाय ये सोचने लग गये हम। तभी एक बार फिर हँसी का कारवाँ रूका और इस बार जाने कहाँ से आँख से पानी बहने लग गये। बन्द करो तो भी, खोलो तो भी। अब हम सोचने लग गये नाक तो पहले ही इस झंझट में टेढ़ी हो गयी हमारी। अब हम इस आँख का क्या करें भला हमने उसे बार-बार समझाया, अरे पागल चुप भी हो जा! ये सब तो मजाक की बातें थी भई। वो काका जी के सरसों के पौधे तो जाने कब के खेतों से उखड़ गये होंगे फिर तुम्हें उसकी झाँस कैसे लग गयी? ताऊजी भी अपनी बीवी की चिट्ठी पढ़के जाने कब पुराने भी हो गये होंगे। उन्होंने जवाब भी लिख भेजा होगा अबतलक तो और ताईजी तो अपनी अम्मा को रूलाकर अपनी ससुराल वापस भी आ गयी होंगी। पड़ोसी के मेहमान तो जाने कब के मेढ़क की चटनी को ही धनिये की चटनी समझ खाके विदा भी हो गये होंगे। ये बात और है उन्हें थोड़ी बहुत कसैली लगी होगी। पर इसमें रोने की कौन सी बात हो गयी? मिर्ची ज्यादा पड़ चुकी होगी, ये सोच खा चुके होंगे वो ही सारी चटनी। मास्टरजी जब उन्हें मार रहे थे तो रोकर भी जाने कब के खेलने लग गये थे वो और वैसे भी निशान ज्यादा नहीं उगे थे हाथों पे। फिर आँसू की क्या वजह भला? तब भी हमारी आँखे चुप ही नहीं हो रही थी। तब हमने भी कहीं से एक तिनका उठाया और उसे दिखाकर धमकाना शुरू किया उसे। अब चुप भी होते हो या डालूँ इसे आँख में। वो फिर भी न माने और गलती से वो तिनका हमारी आँख में जा गड़ा। अब तो आखें और चिढ़ गयी, पानी और ज्यादा बहने लगे। हमने भी अपने को कोसा, बहुत कोसा। जब नाक से पानी बह रहे थे तो गलत लगी हमें। वो तो ठीक, पर आँख से पानी बहने में क्या ऐसी गलत बात हो गयी जो हमने बेवजह अपनी ही आँखों में तिनके गड़ा लिये। अब क्या करें, नाक तो पहले ही टेढ़ी हो गयी थी हमारी। अब इस आँख के चले जाने का गम और बड़ा हो गया था हमारे लिए। हमने खूब कोसा अपने ही आप को। पर जाने कहाँ से इतने लोग इकट्ठे हो गये थे वहाँ। हमने उनसे कह दिया, अब जाते हो या और कुछ करूँ मैं। तब वो और भी हँसने लग गये हमपर। तब हमारे ओठ काँपने लग गये और मुँह से पानी निकलने लग गया हमारे। अब तो एक और नया बखेड़ा शुरू हो गया। आँख और नाक के बहने की बात तो सुनी सुनायी भी लगती थी हमें। पर ये मुँह से पानी बहने की बात तो भई हम सबके लिए नयी थी। अब हँसी का कारवाँ क्या रूकता, बढ़ता ही चला गया। अब हमने सोचा, इस मुसीबत से कैसे छुटकारा पाऊँ। चलो मुँह ही बन्द किये लेती हूँ मैं! पर कैसे? अगर ये बन्द रह गये तो बातें-बातें किससे होगी? अब और भी मुसीबत। अब तो एक ही हल निकला इस मसले का कि बाबूजी के लाये गुड़ के ढेले खालें। कहीं इसी वजह से तो मुँह से पानी नहीं बह रहे। अरे, बात तो बिल्कुल सच निकली। मुँह के अन्दर गुड़ के ढेले पड़ते ही पानी बहने बन्द हो गये। अब क्या लोग कम हँसते। उन्होंने और भी हँसना शुरू कर दिया। तो क्या ये हँसी का कारवाँ यूँ ही रूकने देते हम। हमने भी खूब मजा लिया उस लम्हें का और एक साथ आँखों से भी पानी बहने बन्द हो गये हमारे, नाक से भी और मुँह से भी।

जब सब रूके तो हमने भी ठहरना ही मुनासिब समझा भई। भला हम कैसे गुजरते रह जाते। हमारी चिट्ठी तो लिखकर लिफाफे में बन्द भी हो चुकी थी। पर पोस्ट बाबू का तो पता ही नहीं था कहीं। अब पूछोगे, ये पोस्ट बाबू के आने का वक्त क्यों नहीं हुआ? वो क्या है न कि वो पोस्ट बाबू तो हमारे बचपन में न आया करते थे। आज तो हमारे पास हमारा बचपन ही नहीं आ सका तो पोस्ट बाबू कहाँ से आते? ये तो हमारे कोरे कागज के लिखे दास्तां थे फकत जिसे कोई पोस्ट बाबू लेने कभी नहीं आ सकेंगे हमारे पास। तो क्या हुआ? हमारा पता हाल तो वक्ते जानिब ने सुन लिया होगा न अबतलक। तो उनका जवाब भी हमें मिल ही गया होगा तन्हाई के इस आलम में।

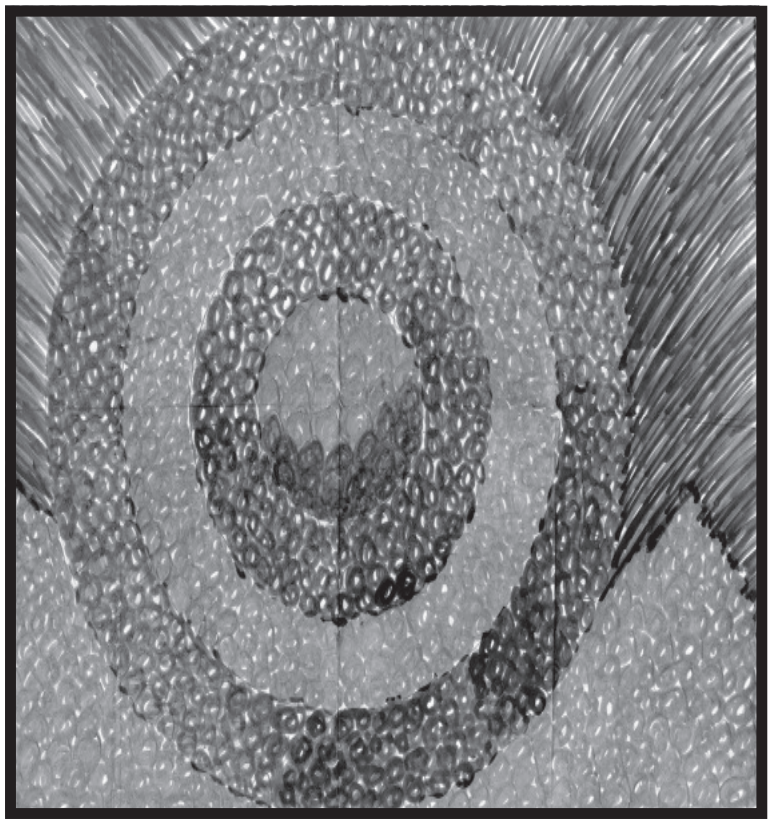

ये दो आँखें

मेरी इन दो आँखों ने संसार को इतने करीब से देखा है कि उसका रंग ही बदल सा गया है। हर मोड़ पर महफिलें और हर मोड़ पर काफिले। एक ऐसा रूप है मेरे पास इन आँखों का दिया कि मैं देख-देख हैरान रह जाती हूँ। कभी इसे पानी का रेला नजर आने लगता है कहीं पर तो कभी सूखी बंजर धरती। कैसी है ये दास्तां, कैसा है ये मंजर धुँधला सा कि मेरी सोच में आके आँखों के दीये बुझने लग जाते है। कभी ये किसी को देखकर सोचने लग जाती है कि वो पास में खड़ा समन्दर तो नहीं। कभी किसी को देखकर ये सोचने लग जाती है कि फिर वही खामोश मंजर तो नहीं आ गया मेरे पास।

मेरी इन आँखों की कई दास्तां है। एक किस्सा लिखा हमने तो एक किस्सा पढ़ा भी इसने। हमने हर मोड़ पर इनकी तारीफ करती भाषा सुनी है। मगर कैसी तारीफ थी वो जो दूजे ही पल परायी हो गयी थी। माँझी ने कहा था, पतवार छोड़ देंगे हम। कश्ती ने कहा था कगार छोड़ देंगे हम और मौजों ने कहा था खुमार छोड़ देंगे हम। सब अपनी भाषा, अपनी बोली से रिझा रही थी हमें और हम एक इशारा कर चुपचाप बैठ गये थे। सामने तक एक गहरा धुआँ छा गया था जो कह रहा था कि पानी का रेला गुजर गया। कश्ती किनारे से दूर चली गयी और पतवार ने अपना हाथ पीछे खींच लिया। मैं हैरान जरा भी न हो सकी और कहा खुद से कि ये तो होना ही था। और एक बार फिर अपनी ही किसी निगाह से संसार को देखा हमने जहाँ पर कि पानी प्यासे को नहीं मिल रही थी। रोटी भूखे को नहीं मिल रही थी और पेट क्षुधा से तड़पना न भूला सका था। कहीं पर जब मेरी इन निगाहों ने पूछा किसी से कि पानी किसके लिए था तो उसने कहा प्यासे के लिए। और रोटी? भूखे के लिए। क्षुधा किसे तड़पा रही थी? अन्नविहीन मानव को। तो तुमने रोटी किसे दी? अन्नदाता को। और पानी? अन्नदाता को। तो क्यों और किसलिए ऐसा किया तुमने? रोटी इन्सान माँग रहा था तुमसे। प्यासा मानव देह था और भूखा मानव तन। पर तुमने तो उसे देखा जो कभी बादलों की ओट से बाहर न आ सका और जिसपर तुमने अपनी सारी हस्ती लुटा दी। इस उम्मीद में कि वो तुम्हें दिखाई दे सके। पर क्या उसे तुमने देखा। नहीं। क्या प्यासा जो भटक रहा था, उसे तुमने देखा था? तुम कहते हो हाँ। क्या जो रोटी तलाश रहा था, उसे तुमने देखा था? तुम कहते हो हाँ। तो क्षुधा से तड़पती आत्मा को भी अगर देखा होता तुमने तो यूँ मुझे अपनी आँखों के लिए जगह-जगह भटकना न पड़ता।

मैंने अपनी इन दो पुतलियों में संसार को समाया देखा है। मैंने इन दो पुतलियों की रेखाओं में लाज का घूँघट छुपा देखा हैं। मैंने इन दो पुतलियों में शाख और तने की जुदाई छुपी देखी है। मैंने सबकुछ इनके सामने ही होता पाया है। मैंने किसी भूखे की भूख को इस कदर महसूस किया है कि हमे ऐसा लगने लगा है जैसे वो अन्न का भूखा मैं ही हूँ। उस प्यासे की प्यास को देखकर हमें ऐसा लगने लगा है कि सामने खड़ा वो प्यासा मेरा ही साया है। मैंने हर एक शय से जोड़कर देखा है खुद को और हर बार यही पाया है कि प्यास मेरे पास भी है। भूख मेरे पास भी है। एक क्षुधा पीड़ित आत्मा मेरे पास भी है। कैसे देख लिया मैंने इतना इन दो निगाहों से, मुझे नहीं मालूम। मालूम है तो बस इतना कि हमने संसार को ही हर नजर से देखा है और उसे देखकर ही हमें ऐसा अनुभव हो पाया है कि संसार को

कनक : स्मृति पुष्प

देखने और महसूस करनेवाली शक्ति सिवाय मेरी इन दो निगाहों के किसी के पास नहीं है। हमने सागर के पानी में बहता हुआ भी देखा है इसे। हमने सूखी बंजर धरती पर दौड़ता हुआ भी देखा है इन्हें। मगर जब इतनी जगह पे जाने के बाद मुझे ये एहसास हुआ कि ये सब मेरी इन निगाहों का धोखा था, मैंने अपने आप को आगे जाने से रोका और जब रूकी तो पाया कि मेरे पास आज भी कुछ नहीं रहा। सागर के साथ कश्ती बह गयी। तूफान के साथ मौजें खो गयी और पतवार के साथ माँझी डूब गया। और सब देख लेने के बाद जब वापस लौटी तो सामने एक मृत देह पड़ी देखी हमने जिसके मुँह पे पानी के छींटे दे रहे थे लोग और उसे दुबारा जीने पर मजबूर कर रहे थे मगर वो उनका प्यार नहीं था। वो उनकी भावना नहीं थी। उनकी गलत सोच थी कि मरनेवाला मानव अभी भी जी सकता है दोबारा।

लोग खेल खेलते हैं और खिलाड़ी कहलाने लग जाते हैं। मगर मैंने तो जीवन को ही खेल समझ खेलना सीख लिया उसके साथ। खेल-खेल में मैंने कई लोगों को जाना-समझा और यही पाया कि खेलने की उम्र आज भी है हमारी।

हमारे हाथों में एक नन्हें बच्चे की धूम है। हमारी निगाहों में दूर तक जाते लोगों की निशानी है। हमारे ओठों पे एक अनकही प्यास है। हमारी जुबां पे एक दर्द भरा गीत है जिसे गा-गाकर मैं इतने लोगों को सुना चुकी कि लोगों ने मुझे कलाकार कह डाला। किसी ने कहा, बच्ची है ये, इसके दिल से बचपना नहीं गया। किसी ने कहा, ये एक ऐसा इल्म है जिन्दगी का जिसे तजुर्बे की नजर से देखने के लिए किसी के पास समय ही नहीं है। मैं पर्दा हूँ लोगों की नजर में। मैं हुस्न का ऐसा भी नकाब हूँ जिससे जिन्दगी को उतार पाना आसान नहीं।

मैंने हर मोड़ पे एक तमाशे देखे। खेले जिन्दगी ने मेरे साथ। लोगों ने मेरा खूब मजाक उड़ाया। मगर मैंने हर बार उनसे यही कहा कोई बात नहीं, मैं कुछ और करने को चली जाती हूँ। तुम्हारी नजरों में मुझे सिर्फ खेलना आता है। मगर मेरी नजरों में मुझे इतना कुछ आता है कि समझने वाले मुझे एक ऐसा भी इन्सान समझने लग जाते हैं जिनकी जुबान मुझे समझ-समझ का फेर कहती है। कोई कहता है मैं सागर का किनारा हूँ। कोई कहता है मैं पानी का बुलबुला हूँ तो कोई मुझे ही दरियादिल कह बैठता है। तब मैं एक नजर उन्हें, एक नजर इन बहते पानी के रेले को देखने लग जाती हूँ जिनकी संज्ञा देकर उन्होंने मुझे पुकारा था। मैं यही तो हूँ जिसे कोई एक नजर देख तो लेता है मगर मेरे तजुर्बे को समझ नहीं पाता वो। उनके पास कहने को एक बड़ी उम्र है। वो उम्र में और रिश्ते में मुझसे बड़े हैं। कहने को तो वो मुझसे देखने में भी बड़े हैं, मगर समझ उनको कहाँ है हमारी जितनी?

मेरे लिए वो सिर्फ अदना सा इन्सान हैं जिनकी समझ मुझसे कम है। जिनके जीने के अन्दाज मुझसे जुदा हैं। जिनके रहने और बोलने की बातें मुझसे अलग किस्म के किस्सों को बयान करती है और मैं आहिस्ता से उनसे निगाहें घुमा ये कह देती हूँ कि आपने मुझे कहाँ पहचाना? आपने तो मुझे खिलौने से खेलनेवाली हस्ती कहा जबकि मैं तो एक खिलाड़ी हूँ। आपसे भी बड़ी, आप सबसे बड़ी।

जिनके कानों तक मेरी आवाज गयी वो शरमाकर चले गये। जिनके कानों तक मेरी आवाज नहीं गयी वो आगे निकल गये। मैंने तब एक नजर उनकी तरफ देखा, एक नजर अपनी तरफ और उनसे कहा कि समझ सके आप मुझे नहीं न! मुझे समझने को आपके पास समय नहीं। आप ठहरे एक अदना से इन्सान। मगर हम तो हजारों इल्म को जिन्दा रखे हुए हैं अपने सीने में। हमें कुदरत ने करिश्मे सिखाये हैं। रहने की, जीने की अजब तहजीब सिखायी है और आपने क्या सीखा जिन्दगी से कुछ भी नहीं। हमने तो धरती भी देखे, आकाश भी देखे। हमने तो धूल भी देखे, हवा भी। हमने माटी भी देखे, उससे निकली गन्ध भी। मगर आपने क्या देखा? धरती पे बोझ बन पड़े रह गये। उस धूल को आँखों में पड़ते हुए देखा आपने। हवा के झोंके ने आपकी साँसों में माटी की गन्ध नहीं डाली। तरह-तरह के

बनते-बिगड़ते किस्से सुने आपने जिन्हें सुनकर कि आपको किसी की शिकायत का मौका मिला। जगह-जगह किसी की बातें की आपने। किसी के दर्द को मजाक कहा, किसी के आँसू को उसका वहम कहा आपने।

मगर मैंने इन सबके बीच पड़ी जिन्दगी को देखा और यही तजुर्बा मिला मुझे उससे कि किसी के दर्द को मजाक नहीं कहते, किसी के आँसू वहम का नाम नहीं पाना चाहते। ये जीने का अपना-अपना ढंग होता है। ये तो उस कुदरत के दिये तोहफे का दूसरा नाम लगा मुझे जिन्होंने आपको गुलाब दिया, मुझे काँटे दिये। जिन्होंने आपको बहार दी, मुझे वीरानी दी।

तो कितना बड़ा तजुर्बा सीखा हमने आपसे कि आप मेरे लिए इल्म की चीज बन गये। मगर आपने तो मुझसे कुछ भी नहीं सीखा। मेरे इल्म के बारे में कहा, ये तो जगह-जगह मिलती है। मगर इसे समझ पाना हमारे बस में नहीं। कहाँ कहा आपने कि मैं किसी के दिल की किताब भी हूँ। आपने तो मुझे खाली जवाब जानकर पढ़ा। मगर इतना भी न पढ़ सके आप मुझे कि तजुर्बेकार हो सकें। आपने तो खेलते देखा फकत हमें। मगर कहाँ जाना कि इसे खेल कहते हैं जिसका नाम फकत हम जैसे खिलाड़ी को ही पता होता है। आप तो हमारे सामने अनाड़ी निकले। फिर काहे की बड़ी उम्र। काहे के दिखावे, काहे के रिश्ते-नाते की समझ। मुझे तो एक भी रिश्ते की समझ नहीं है। मगर क्या आप हैं हमारे जितने बड़े? हम तो आपसे एक भी तजुर्बा न सीख सके। मगर हमने जो सीखा दिया आपको उसे समझ सके आप नहीं न?

यही तो समझ-समझ की बात है। आप अपने आप को खिलाड़ी बता रहे हैं। मगर हम तो आपसे भी बड़े खिलाड़ी निकले जिसने खेलते-खेलते इतना भी बड़ा बना लिया खुद को कि शर्म आने लगी आपको हमारे पास आने में।

देखा न आपने, कौन जीता, कौन हारा। एक अदना सा इन्सान जिसे कहा आपने, उसने आपको इतना कुछ दिखा दिया। मगर जिसके-जिसके पास भी आप गये उन्होंने आपको हमारे बारे में न जाने क्या-क्या कहा।

भाग-3
काव्य-गजल संग्रह

शिव स्तुति

तू नीलकण्ठ, तू नीलम्बर
विषपान विषम्भर।
तेरा बदन बना भिखारी
मृग छाल पहने तू जगधारी
कैसा है ये वेश तुम्हारा
बैल बने तेरी सवारी
सती रूठी, शक्ति रूठी
रूठी माता तुझसे वो बेचारी
कैसे मनाऊँ मैं उसको
बता दे तू ऐ जग के रखवाले
ऐ नीलदेह, ऐ सर्पों वाले
क्यों पीया जहर ये सारा
सारा जग तुझसे है हारा
किसको हो खुद पे अभिमान
जब त्रिशूल तेरा करे नृत्य गान
नाच ऐ रूद्रकाले, रूद्राक्षकाले
बह रही जग में पाप की गंगा
तेरी गंगा सुस्त पड़ी है
जूड़े में तेरी बह रही जलधारा
वेश ये मेरा, वेश ये तेरा
बगैर इसके बुझे न प्यास
हो रही मुझको उच्छवास
रूठ न तन से, रूठ न मन से
माँग जल की अमृत धारा तू गगन से
मेरे पास प्यास है थोड़ी
अगर हुई जरा सी देरी
मैं मिट जाऊँ, मैं गिर जाऊँ
मेरा देह बने मृत
दे तू मुझको एक बूँद अमृत
मान ले मेरी बात ऐ रूद्रकाले, रूद्राक्षकाले
तेरा रूप खिले साँवर-साँवर
तू नीलकण्ठ, तू नीलम्बर
विषपान विषम्भर।

कृष्ण स्तुति

मुरली लेके मुरलीधर आया
हमने सामने उसको पाया
सब के साथ रचाये खेल
राधिका से बढ़ गया मेल
खेल ही मिलन बनी
खेल ही बनी उनकी जुदाई
सारा जग रह गया हैरान
क्या कर डाला तूने भगवान
कैसे भूलें प्रेम तुम्हारा
रो-रो कर ये तन हारा
रूक ऐ जानेवाले योगी
जीत न मेरी कैसे होगी
मैं माँ ठहरी तेरी यशोदा
आ जा मेरी गोद में सो जा
ललना मोरे बाँसुरीवाले
कैसे तेरी माँ खुद को सम्हाले
मैं तेरे प्यार में अन्धी
तेरी माता तेरी नन्दी
माखन का एक कटोरा लायी
वर्षों तुमने ये रास रचायी
आज जाये तू कैसे खाली
फूल लेके जा रहा है माली
किस्मत तेरी मैया से रूठी
भाग्य जगे तेरी देवकी के
कैद से आजाद हुए थे वसुदेव
और आये थे तुम नन्द के देव
वो देखो राधिका खड़ी है
हाथ में मेंहदी खामोश पड़ी है
उस मेंहदी में आँसू जड़े हैं
ऐ लाल यशोदा के
मान रख ले तू अपनी राधा के
कहाँ चला तू बनने भिखारी
कामधेनु की छोड़ सवारी

कह रहे हैं सब ग्वाल बाल आज
साथ में प्यार का सन्देशा लाया
अब तो कर न तू रंज मनोहर
तू बना द्वारिका धरोहर
किसकी गंगा कर रही इंतजार
शेषनाग पे होके आया तू सवार
ऐसी खुशी तू समोकर लाया
मुरली लेके मुरलीधर आया।

सरस्वती स्तुति

ये तन गोरा, ये केश काले
कितना सुन्दर तू पुस्तक वाले
हाथ में वीणा का तान
ओठ से छलके केवल ज्ञान
पानी में सिंहासन तेरा
कमल तेरा, कमलेश भी तेरा
हंसवाहिनी छटा बिखेरे
मयूर नृत्य हो सुबह-सबेरे
किसने नाम तेरा ऐसा रचा
शाश्वत रूप तेरा खिला
मान तेरा, सम्मान तेरा
पीपल करे तेरा नृत्यगान
तेरे सुर, तेरे साज
गीत ऐसे मनमोहक बोले
सारंगी तेरा कभी न डोले
जिसपे नाज करे तू ऐ माँ
वो है एक जग का सामां
मैं मूरख, मैं अज्ञानी
मान न मुझको तू अभिमानी
मैं सुरभि की ताजी कली
मैं धूप में पल-पल जली
जो छाँव तलाशे गली-गली
ना हूँ मैं वो खुशबू नयी
मुझे तो जग से नाम मिला
एक ऐसा सामान मिला
जिसका करें लोग बखान
मैं मूरख, मैं कहलाऊँ अज्ञानी
तू वेद मन्त्रों की दात्री
मैं जमीन पे पड़ी यात्री
छोड़ एक बोल मेरे नाम
मेरा मन हो रहा बदनाम
मेरे भी जुल्फ निराले
ऐ वेदमन्त्र वाले माले
ये तन गोरा, ये केश काले
कितना सुन्दर तू पुस्तक वाले।

लक्ष्मी स्तुति

बन के आयी तू दात्री देवी
पर ये जग है कितना लोभी
बुझे न जल से इनकी प्यास
रोज ही आयें ये तुम्हारे पास
तेरे पास है अमृत घड़िया
जीने का है तू ही जरिया
तेरा रूप ऐसा कोमल
तुझपे हारा वो नीलदेह साँवर
तेरे प्यार में भूले जग जो
सागर में खड़ा है देख वो
पाँव तले बैठी तू माता
जिनके तप से जन्मे विधाता
कमल बसाये नाभि में अपने
नाभि से निकले रचयिता
जिससे जग हारा, जो जग से जीता
तू कैसे भूल गयी ये माता
तेरे पास है जीवनदाता
एक नजर देख ले मुझको
हम दे दें कमलेश तुझको
वो ऐसे सोये निद्रा में
फर्क नहीं पड़ रही तन्द्रा में
मैं हार कर आया तेरे पास
तू दाता मैं तेरा दास
मेरे बच्चे भूखे पड़े है
एक निवाला दो, जिद पे अड़े हैं
कहाँ से लाऊँ उनकी रोटी
आज अगर मेरे पास तू लक्ष्मी होती
मैं भी खाता, वो भी खाते
नाम तेरा हमेशा लेती मेरी वो भूखी बेटी
अब तो दे तू ये वरदान
जिससे बनें हम तेरी सेवी
बन के आयी तू दात्री देवी
पर ये जग है कितना लोभी।

शाश्वत एक मार्ग ही जीवनेन्द्र है

संसार एक शाश्वत मार्ग है
भगवान प्रशस्ती केन्द्र है
सामने बैठा मेरे जैसा
कोई ज्ञानेन्द्र है
जो भी देख रहा है मुझे
वो श्यामलेन्द्र है
पर जो देखकर भी अनजान है मुझसे
वो पुष्पेन्द्र है
जिसका नाम सबसे पहले आता है
वो शामायेन्द्र है
जो बाद में पूजा जाता है
वो कर्मेन्द्र है
जो पूजकर भी चन्दन की चाहत कर रहा है
वो आलिंगेन्द्र है
जिसको लोग भूले से याद करते हैं
वो सबसे बड़ा शालिलेन्द्र है
ऐसा रचयिता एक है मात्र जग में
जिसका नाम महेन्द्र है
जो जग को पिता मानता है
और खुद को जन्मदायी माता
वो जमीन पे पड़ा जितेन्द्र है
ऐसा नाम लें हम किसी का
जिससे खिले फूल संसार का
इस जमीं पे ऐसा
एकमात्र रवियेन्द्र है।
जिसकी रोशनी में होता है सबेरा
जिसको शाम से मातेन्द्र है
ऐसी रचना को पढ़कर
जानने वाला एकमात्र
मुझसा मृतेन्द्र है।

शोभित है पुष्पिता

पुष्प शोभित है, शोभित है पुष्पिता
नादान नहीं मैं भी ऐसे काव्य की रचयिता
मुझे तो ज्ञान का सागर मिला है
सीप से मोती निकालना तो सिर्फ मुझे ही है आता
फिर कैसे कहे अन्धा कोई हमें
हमें तो पल में संसार का हर शय है दिख जाता
किसे पता है राग-अनुराग क्या है जीवन का
सारा संसार तो खोया बैठा है पाके विलासिता
एक कथित सत्य तो मैं हूँ इस कायनात का
जिसकी तरफ की कोई देख ही नहीं पाता
फिर कैसे न जग रहे अनजान अपनी ही बोली से
भाषा क्या है, क्या है वाणी, किसने है देखा
मोह है ये जग का मुझे
तो इसी मोह का बस झलक मिल पाता
कैसी है ये मृत आत्मा जिसको कहते है लोग मानव देह
क्या आदि, क्या अन्त, क्या है इसकी परिणियता
कालरागिनी है ये जग की रातें
बहुत जोड़ जाती है ये नेह के नाते
विजयी है इसी बात पे ये दुनिया
इसी बात पे कहलाती है ये विश्व विजेता
मुझे तो हर तरफ धुआँ ही आता है नजर
धुएँ में खो के ही जल जाता है
ये जग का हर कवियेता
कौन जान पायेगा ये हमारी बातें
किसी को समझ में ये रिश्ता नहीं आ पाता
मैं तो एक खिलौना हूँ अपनी माँ की गोद में
मुझसे खेलते है हर वो पालक पिता
जिनको कि नजर आती हूँ करीब से मैं
जिनपे मुझे नाज हो पाता
फिर कैसे जाने ये संसार मेरे किसी रूप को
जब आसन ही मेरा किसी को नजर नहीं आता
मैं तो आसमान की परी ठहरी
मुझे इस जग का क्या कोई मानव रिझाता

मैं करूणा, मैं कामिनी

मैं करूणा, मैं कामिनी
रूप के साये तले छुपी मैं दामिनी
मोह जग से किया, जगवालों से किया
पर कहलाती रही मैं पापडासिनी
मैं करूणा, मैं कामिनी।
जग ने मेरा नाम कुछ ऐसे पढ़ा
नेह का मतलब ही गम से जुड़ा
सागर की लहरों का किनारा मैं
बहती धारा के साथ बही मैं रागिनी
मैं करूणा, मैं कामिनी।
सुबह को तका किये
शाम का इन्तजार भी किया
पर प्यासी ही रह गयी मैं कादम्बिनी
मैं करूणा, मैं कामिनी।
एक शय बाकी बचा था दिल में
फिर भी, फिर से रूठकर
जाने किस मोड़ मुड़ी मैं विलासिनी
मैं करूणा, मैं कामिनी।
ऐसा-ऐसा कुछ नजराना भी लिया
देने वालों के आँखों से
पर हाथ आयी चीज परायी हो गयी
परायी जाल में उलझ गयी मैं प्रियप्रायणी
मैं करूणा, मैं कामिनी।
मुझपे हँसती रही दुनिया
तमाशा बनी मैं जग के लिए
तोहफे के एक फूल थे चुने हमने
पर बहारों ने जाने क्यों मुँह फेर के कहा
तू काल है, तू है कालनाशिनी
मैं करूणा, मैं कामिनी।
अब और क्या सुनने को बाकी था
मेरे लिए हर शय तड़प बन गयी
तड़पती रह गयी मैं पापिनी
रूप के साये तले छुपी मैं दामिनी
मैं करूणा, मैं कामिनी।

मान रखना मुझको नहीं आता

हे ईश्वर! हे दाता!
मान रखना मुझको नहीं आता।
मैं अल्हड़ इन्सान
तेरी भक्ति मेरी शान
कैसे जीये एक नादान।
आँगन पड़ी तुलसी तरसी
पानी दे मुझको वो बोली
हमने उस प्यास में खुद को तोला
देखकर हुई हैरान
क्या यही थी मेरी पहचान
एक जनाजा कांधे पे था
एक मरने को था तैयार
कुछ सोचना था बेकार
कैसे नाज करें हम खुद पे
इल्जाम तो थे सारे मुझपे
मुझपे हँस रही है दुनिया
हमने देखा जब आँख में आँसू
कुछ और भला मैं कैसे सोचूँ
मेरा मन हो चला बावरा
आँखों में मेरे काजल था भरा
कुछ सुरमें की थी निशानी
कुछ कह रहे थे एक नयी कहानी।
कैसे बेचूँ मैं अपना तन
बड़ा उलझा सा है ये जीवन
लुटायी हमने मुहब्बत पे हस्ती
मगर थी ये बेईमानों की बस्ती
किस तरफ देखूँ मैं अज्ञानी
हर मोड़ पे बिखरी मेरी कहानी
ये था एक सच्चा किस्सा
जो हमने अपनी कलम से रचा
हे ईश्वर! हे दाता!
मान रखना मुझको नहीं आता।

बुझ गया आरती का दीया

बुझ गया आरती का दीया
हमने जब अपने जख्मों को सीया
खामोश हो गयी चाँदनी
रूठ गयी मालिनी
किस्सा ही ऐसा था लिखा हमने
कागज रंगों से सराबोर था
एक ही किस्सा हर ओर था
गली में मेरे ही नाम का शोर था
खिड़की के पाटे बन्द हो रहे थे
और ताली पीट वो सो रहे थे
हम सिसकते हुए खड़े थे
शायद वो मेरी नजर में बड़े थे
आग सा नाता था उनका और मेरा
जल गया बदन जिससे सारा
सागर में डूबी है प्यासी
याद आयी बस एक बात जरा सी
मेरे पास थी अनमोल धरोहर
क्यों डूबने चली मैं सरोवर
जो मुझपे लगा रहे इल्जाम
उनका था बस एक ही काम
हो जाऊँ मैं बदनाम
हमने ऐसे देखा वो दरवाजा
दरवाजे पे था उमंग एक ताजा
कली खिली थी बहार में
बिक रही थी मैं बाजार में।
खेल ही था ऐसा मनोहर
मुझपे हँस रहा था सागर
मैंने पोछे अपने आँसू
और एक वादा खुद से किया
अब न करूँगी मैं बर्बाद जिया
मगर जब सोच ऐसा लिया
बुझ गया आरती का दीया
हमने जब अपने जख्मों को सीया।

ईश्वर शक्ति शाश्वत है

जल बरसे अम्बर से
नेह मिले सागर से
अमृत वाणी बोले जुबां
जो नाम तुझको मिला
वो सामने है तेरा खुदा
किसपे करे तू अभिमान
भटक रहा है तू ऐ अज्ञानी
किसकी भक्ति में है तू गुम।
ईश्वर शक्ति शाश्वत है
मेरा तन जायेगा और तेरा भी
किसका घर फूलों से जला
किसको जल से अगन मिला
मान एक किस्सा इसे
जी रहा है तू अभिमान लिये
मगर ये मान झूठा तेरा
ये अभिमान झूठा तेरा
है सम्मान उसके पास
हो पूरी न जिसकी आश
आशा फिर भी है जवान
भटक रहा है इन्सान
शर्म का पानी बह चला
जिसकी आँखों से चला
वो है एक अन्धा भिखारी
किस मोड़ पे घिरे हो अज्ञानी
है पता न जिसको धूप का
छाँव तलाशे जो गली-गली
पर उसके आँगन कली खिली
जिसका तन सुन्दर
जिसका मन सुन्दर
सुन्दर जिसकी काया
जिसको रूप मिला बादर से
छलका अमृत उस गागर से
जल बरसे अम्बर से
नेह मिले सागर से।

मैं नदी, मैं लहर

मैं नदी, मैं लहर
मैं पवन, मैं शिखर
शाम आयी, शाम आयी
ख्वाब पूछा, ख्वाब झूठा
वादा एक बार फिर टूटा
माँझी किनारे से चला
सागर उमड़ा सारा
बहा पानी का सरारा
किस्मत रूठी कश्ती की
पतवार छूटा, नाव डूबी
आँधी आयी, बहा तिनका
सहारा लेने माँझी आया
बह गयी साथ धारा
ले उड़ी कश्ती का किनारा
न शाम रूकी, न रात रूका
प्यार भरा एक दिल टूटा
ऐसी उमड़ी नैनों की क्यारी
डूब गयी वो बारी-बारी
पवन झोंका दे के ऐसे गया
जैसे साथी मिला हो नया
हारकर मैं किनारे बैठी
एक बार फिर मेरी आत्मा रूठी
किस्सा सुनाया किस्मत ने
हाथ उठाया हसरत में
मगर पूरी न हो सकी आशा
मुड़ गयी जीवन दिशा
मान ले गयी वो काली निशा
और हार मान गयी मैं विदिशा
ऐसा लगा साँस थोड़ी है बाकी
हो रही है नेह अब झूठी
मैं डूब गयी माँझी के साथ
और कहा रब से एक बार
ये ही था मेरा किस्सा
जिसे सागर ने था रचा
मैं माँग रही तन की भिक्षा
अब दे मुझको एक नयी शहर
ताकि जाग सकूँ मैं फिर एक नगर
मैं नदी, मैं लहर
मैं पवन, मैं शिखर।

मैं अगन में जली

मैं अगन में जली
मैं पवन वेग से चली
धुआँ ऐसे भी उठा
आग बुझकर भी जला
सामने एक देवता प्रकट भी हुआ
मगर उसका रूप न शाश्वत खिला
मैं समझी पवन का झोंका था खड़ा
ऐसी लगन थी लगी
मैं अगन में जलकर भी जली
राख मेरा बदन फिर भी न हुआ
एक बार फिर एक जिस्म हो गया खड़ा
ये तन की प्यास थी
पानी फिर भी न पास थी
ऐसा लग रहा था ये सोचकर
चला गया ईश्वर मुझे छोड़कर
हमने कहा था ये हाथ जोड़कर
मैं मरने से पहले चाहती हूँ अपना भला
क्या मरने से पहले भी कोई जला
अगर ये बात झूठी हो
और तू मुझसे रूठी हो
तो सोच एक बात ठहरकर जरा
मैं इन्सान हूँ, तू है खुदा
क्या ऐसा खेल और भी कहीं है तूने रचा
अगर ये बात झूठी लगे
तो फिर क्यों न इन्सां जले
मैं तो जली-ही-जली
आदर की चाहत में पली-ही-पली
मैं उड़कर गिर गयी मनचली
ये मेरा देह बन गया एक तितली
मैं अगन में जली
मैं पवन वेग से चली।

एक समन्दर था खड़ा

एक समन्दर खड़ा था प्यास लिये
पानी मिलेगा एक दिन ऐसा विश्वास लिये
मौजें सुस्त पड़ी थी उसकी
आँखे इस गम में तरस रही थी
आसमान काला भी हुआ
विश्वास ने उसका दामन भी छुआ
मगर एकबार फिर से ऐसी आँधी उठी
समन्दर से फिर लहरें रूठी
एक तिनका सूखी धरती पे पड़ा
बुझ गया भरोसे का दीया
एक बार फिर से कागज मुड़ चला
नाव कौन बनाये उससे
ये अफसोस उसे भी हुआ
खेलनेवाले उम्र बीत गये
बालपन हार गया, जवां लोग जीत गये
ऐसे में एक आह उठी
किस वादी में आके बहार लूटी
आवाज कुछ भी न हुआ
समन्दर का सीना दुखने लगा
एक शोर रोज ही हुआ
जो भी गया, किस्मत का था दिया
अब तो आईना लिये है खड़ा
वो गम का शीशा है मुझसे बड़ा
हर मोड़ पे हमने इससे है लड़ा
चेहरा इसमें पहचाना नहीं
हम थे छुपे बादलों में कहीं
यहीं दरिया की राहें मुझसे जुड़ी
ये क्या आँखे बरसने लगी
तिनका डूब गया उसमें
पानी का रेला फिर भी न बहा
ये तो आँखों की नदी ने कहा
एक डूबता किनारे चला
तुम भी आ जाओ उल्लास लिये
यही तकदीर ने खेल हैं रचे
धरती से कहाँ कभी आकाश मिले
एक समन्दर खड़ा था प्यास लिये
पानी मिलेगा एक दिन ऐसा विश्वास लिये।

वादी में उठ रही थी लहर

वादी में उठ रही थी लहर
डूबा जिससे सारा शहर
एक शोर गली में हुआ
पेड़ों ने आसमां को छूआ
लाल हुई बागवां की कली
फूल बन थी जो खिली
तारे आसमान को छूने चले
चाँद-चाँदनी मिल रहे थे गले
अम्बर की नजर थी धरा
नैना कजरों से था भरा
काली घटा उमड़ने लगी
प्यास एक अगन सी बनी
प्रकृति ने ओढ़ी ओढ़नी नयी
पशु-पक्षियों की राह इनसे जुड़ी
धरती को वाणी मिली
और तन धूप में किसी का जला
सागर उमड़कर बहता गया
था वो एक गहरा धुआँ
जिसकी नजर में कोई था खड़ा
पर्वत शिखर को छूने चले
पत्ते साये से मिल रहे थे गले
माली बाग सींचकर था गया
इन्सान को मिला रंग फिर से नया
एक डाली झुकी
परिन्दों की टोली रूकी
दूब लहलहाने लगे
मिट्टी के दामन में आँसू थे भरे
ओस का नाम जिसको था मिला
वो प्यार का था नया सिलसिला
क्यों हाले दिल कर रही थी नजर
चल लौट के दुबारा
वहीं एक पुरानी डगर
वादी में उठ रही थी लहर
डूबा जिससे सारा शहर।

ज्ञानदीप

सागर किनारे एक मोती पड़ा मिला
आँगन घर का फूलों सा खिला
उसकी शक्ति प्रकट हुई
विकराल दैत्य का नाम जुड़ा
न आग ने रोका उसे न पानी ने
किस्सा रचा एक सन्त ज्ञानी ने।
पावन हुई धरती माँ
गंगाजल का रूप-शिखा मुड़ा
व्रत एक अज्ञानी का तुड़ा
गोद हरी हुई एक माँ की
ममता का नाता परवान चढ़ा
न सफर रूका न डगर रूकी
बोली विषमाला की टूटी
एक अमृत की बूँद प्रकट हुई
स्याही से लेखनी जन्मी
और लिखी गई एक कविता
सृष्टि का नाम अमर हुआ
पावन हुई पर्वत शिखा
ये खेल शुरू हुआ
वो खेल खत्म हुआ
जीत मानव की हुई
हार गया लोभ का भिखारी
भीख उसकी निद्रा बनी, भीख बनी रोटी
न आँख से आँसू निकले
न निकली उसकी ज्योति
अमर आखिर वो ही हुआ
जिसको ज्ञान का सागर मिला
जिसके आँगन ज्ञानदीप जला।
न क्षुधा काट सकी जागकर रातें
न हो सका किसी कालरात्रि का सबेरा
यही खेल शुरू हुआ, यही खेल खत्म हुआ।
मानव आत्मा बची, मानव तन जला।
राह था पत्थर पड़ा और ज्ञानी अपनी राह चला
आँगन घर का फूलों सा खिला
सागर किनारे एक मोती पड़ा मिला।

सो जा ऐ मेरी लाडली

लोरी गाती हूँ मैं, सो जा ऐ मेरी लाडली
मैं माँ नहीं तेरी, तेरी माँ समान हूँ
कहने को खुदा हूँ मैं पर तेरे लिए बेजान हूँ।
लोरी गाती हूँ मैं, सो जा ऐ मेरी लाडली
मैं माँ नहीं तेरी, तेरी माँ समान हूँ।
तू जागे कई रात, हो न जाए बरसात
बादल बरसने को तैयार है
मैं रोक रही हूँ इसे, ये कहर है
कहर ढाने से पहले मैं कुछ परेशान हूँ
कहने को खुदा हूँ मैं पर तेरे लिए बेजान हूँ।
लोरी गाती हूँ मैं, सो जा ऐ मेरी लाडली
मैं माँ नहीं तेरी, तेरी माँ समान हूँ।
तू तो खुदा है, तू कहाँ मुझसे जुदा है
तू मेरी जगह मैं तेरी जगह
मैं कैसे कहूँ तू इन्सान है, मैं भगवान हूँ
कहने को खुदा हूँ मैं पर तेरे लिए बेजान हूँ
लोरी गाती हूँ मैं, सो जा ऐ मेरी लाडली
मैं माँ नहीं तेरी, तेरी माँ समान हूँ।
तू वेश में छुपी है किसी की
मैं तेरा रूप-शृंगार हूँ
तू न जाने तो क्या, मैं कहाँ तुझसे अनजान हूँ
कहने को खुदा हूँ मैं पर तेरे लिए बेजान हूँ
लोरी गाती हूँ मैं, सो जा ऐ मेरी लाडली
मैं माँ नहीं तेरी, तेरी माँ समान हूँ।
ये जग कैसा नापाक है, ये जानकर मैं हैरान हूँ।
जहाँ न तुझे खुशी मिली ये सुनकर मैं कैसी बेजान हूँ
लोरी गाती हूँ मैं, सो जा ऐ मेरी लाडली
मैं माँ नहीं तेरी, तेरी माँ समान हूँ।
एक दिन रोशनी न हुई अगर तो
चिराग बुझ जाएँगे सभी संसार के
आज बेबस हूँ मैं
पर मैं बेबसी का दिया लिए आज भी जवान हूँ।
कहने को खुदा हूँ मैं पर तेरे लिए बेजान हूँ
लोरी गाती हूँ मैं, सो जा ऐ मेरी लाडली
मैं माँ नहीं तेरी, तेरी माँ समान हूँ।

ये अनमिट कहानी है

ये अनमिट कहानी है
जाने किसने ये भेद रचायी है
एक हाथ कटार लिये हुए खड़ी है
एक कटकर जमीन पर पड़ी है
कौन किसको अपना माने
जिनके तन के बोझ थे ये वो जाने
धर्म अन्धा, कानून अन्धा
कितना सस्ता रह गया ये धन्धा
कहीं से आग जलने की आयी दुर्गन्ध
कहीं वादी में मिली सुगन्ध
कौन जला किसने देखा
फूल ने माली का रास्ता रोका
चमन में आयी ऐसी बाढ़
कलियों के दिल से निकली आह
काँटे चुभ गये सब तन में
हुक उठी जाने कैसी तन-मन में
किसने देखी उनकी हुक
किसने समझा इनका दुख
पानी का कतरा सबको दिखा
पर अपनी कलम से ये किसने लिखा
वो अबला है, वो बेचारी है
जिसकी दुनिया में सब बाजारी है
तन से खेलो जब तक जी चाहे
कैसे हो इनपे न्याय
कानून ने तो बाँधी है पट्टी
कैसे पढ़े फिर ये इनकी चिट्ठी
इज्जत लूटी बीच बाजार में
क्या वहाँ मिला था कोई संसार में
कैसे बोले कोई नंगी देह
लज्जा माँगे फिर भी एक नेह
पर कैसे हो इनके साथ न्याय
कानून की किताब तो पड़ गयी खाली
आँखे काली, लिखाई भी काली
उसपे अँधेरा रात का
कहीं ये किस्सा हो नहीं मुलाकात का

बोल जवाब दे ऐ भोली-भाली सूरत
क्या नाज है तुझको भी खुद पे
ऐ माटी की मूरत
मौन वाणी भाषा का ज्ञान नहीं
ये कटघरा है लोहे का
तेरी तरह ये बेजान नहीं
क्या जिस्म पे है कोई निशान
क्या देती है तू अपनी पहचान
कौन है ये सामने खड़ा
क्या कभी इससे निगाह भी तेरी थी लड़ी
बोल पहचानती है तू इनको
कातिल ठहराया है तूने जिनको
कौन बोले ऐसी जुबान
सबके सब ठहरे वहाँ विद्वान
नारी ने चुप रह के कहा
हमने इनका जूल्म है सहा
बिस्तर पे लिटाई गई कभी
चिता पे जलायी गयी कभी
कभी शोभा बनी चादर की
कभी आभा बनी बादर की
मौसम बन बरसी ये आँखे
कहें भी तो कहें हम और कितनी बातें
सुना होगा मगर किसी ने
तो कहेगा जरूर ये हँसी-हँसी में
इनको तोहफे का शौक था जनाब
ये माँगने आयी थी मुझसे एक गुलाब
काँटे चुभ गये पाँव में इनके
आलीशान चौखट पे पड़े जब कदम
पहले बोली ये जरा सहम-सहम
फिर तन सौंप दिया, मन सौंप दिया
आगे का किस्सा क्या और भी लिया
इल्जामे तोहमत से भागती रही
तभी तो दिन-रात आग में
वफा की सुलगती रही
इससे आगे क्या ये बोले

कैसे नारी जुबान ये खोले
ओठ पे तो पड़ गये ताले
कैसे माँगे थे हमने इनसे दो निवाले
यही गुनाह हमने हर बार किया
एक मर्द पे एतबार किया
इज्जत गँवायी, रोटी गँवायी
और सामने पायी एक गहरी खायी
क्या ये इतिहास भूल गया
हर युग ने तो हमारे साथ यही किया
क्या मिला इन्साफ किसी को
सीता ही जब पावन न हुई
द्रौपदी का फिर क्या नाम ले फिर कोई
सावित्री बन जब प्राण हरे
ऐसे नारी पर पुरूष कैसे गर्व करे
नाज नहीं इन्हें होगी अपनी शक्ति पर
नारी का रूप यही तो है इस धरती पर
कलकल बहती नदियों की ये निशानी है
मौजों में खोयी जिसकी रवानी है
हर युग की यही दास्तां पुरानी है
ये अनमिट कहानी है
जाने किसने ये भेद रचायी है।

हिन्द पे लहरा रहा झंडा

कण-कण बोले माटी देश की
ये हिन्द पे लहरा रहा झंडा
ये तिरंगा निशानी है अवधेश की
कण-कण बोले माटी देश की।
जंजीर से आजाद हुई माँ
कुर्बानी पाके एक लाल की
आखिरकार ढली काली रातें मलाल की
क्या उत्तर क्या दक्षिण
क्या पूरब क्या पश्चिम
किरण ज्योत की मैं रश्मि
मान दे मुझे
सम्मान की भूखी हूँ मैं
ज्ञान सागर दिया तुम्हें
गंगा का एक किनारा तो दे तू मुझे
किसपे नाज करूँ मैं
नाज तो तुम सबने दिया
न पानी मिला, न पानी मिला
खून बहा है खून दिला
रिश्ता अमर कर दे रजनीश
चाँद अपने आँगन में फिर से खिला
ये किस्सा किसने रचा
किसका नाम अमर हुआ
वो कौन तन गया
ये कैसा मातम का ढोंग है नया
मेरा सुत मेरी गोद में पड़ा
मैं माँ उसकी, मेरा नाता उससे जुड़ा
एक हरा पौधा मुझको मिला
डाली उसकी आसमान तक गयी
न काट ऐसी शाखा का तन
न शाखा को जमीन पे गिरा
बोल रही है ये भाषा एक नारी
नाम अमर हुआ जिसका
अमर हुई जिसकी कहानी
ये वाणी सन्त की
ये वाणी कमलेश की
कण-कण बोले माटी देश की।

ऐसा भी कभी होता है

ऐ जमीं तू इतना बता दे क्या लहू भी रंग बदलता है
क्या अपनी ही गली से कोई बगैर कांधे के निकलता है।
ऐ जमीं तू इतना बता दे क्या लहू भी रंग बदलता है
जिसका किनारा कश्ती ही ले डूबे
ऐसे माँझी पे एतबार क्या कोई करे
कहीं सागर का दिल भी तूफां के लिए ठहरता है
क्या अपनी ही गली से कोई बगैर कांधे के निकलता है।
ऐ जमीं तू इतना बता दे क्या लहू भी रंग बदलता है
भरोसा ही न पाये जो कभी किसी पे
क्या ऐसा भी होगा कोई इस जमीं पे
नादानी किसको कहते हैं
ये भी न हो पता जिसको
क्या ऐसा भी बेजुबां कातिल यहाँ से गुजरता है
क्या अपनी ही गली से कोई बगैर कांधे के निकलता है।
ऐ जमीं तू इतना बता दे क्या लहू भी रंग बदलता है
कैसी तस्वीर थी ये वफा की
जिसका कि रूख का ही अन्दाजा न हुआ
मालिक की दुआ में क्या कभी
कोई ऐसा आशिक भी सम्हलता है।
क्या अपनी ही गली से कोई बगैर कांधे के निकलता है।
ऐ जमीं तू इतना बता दे क्या लहू भी रंग बदलता है
कैसी महफिल फिर कैसा दस्तूर
निभानेवाला जो निभा न सके
क्या गिरकर यहाँ से कोई काँटा
पैरों से छाले बन भी लिपटता है
क्या अपनी ही गली से कोई बगैर कांधे के निकलता है।
ऐ जमीं तू इतना बता दे क्या लहू भी रंग बदलता है
जिसके निशान ही गैर बन जाते हों किसी के लिए
ऐसे लोगों का भी पता हाल पूछने को
कोई क्या जुबां रखता है
क्या किसी बिगड़ी हुई तकदीर का भी
कोई रूख रोशनी बन झलकता है
क्या सितारे गिरते हैं दामन में उसके
क्या उसका भी आसियाँ संवरता है
क्या अपनी ही गली से कोई बगैर कांधे के निकलता है।
ऐ जमीं तू इतना बता दे क्या लहू भी रंग बदलता है।

मैं कब उड़ जाऊँ क्या खबर

मैं डाल पे बैठा पंछी, कब उड़ जाऊँ क्या खबर
कहाँ मेरी शाम होगी, कहाँ होगी शहर
एक तिनका बसाया था हमने अपनी चोच में
ये डाल से जाने कब गयी उतर
कहाँ मेरी शाम होगी, कहाँ होगी शहर
मैं डाल पे बैठा पंछी, कब उड़ जाऊँ क्या खबर।
आसमान मुझसे बोले कुछ तो हम यही कहेंगे कि
उड़ते पंछियों का ठिकाना क्या, क्या ठिकाने पे नजर
कहाँ मेरी शाम होगी, कहाँ होगी शहर
मैं डाल पे बैठा पंछी, कब उड़ जाऊँ क्या खबर।
एक मेरी प्यास है थोड़ी, एक खड़ी हूँ मैं बियाबान में
पानी कब मिले न जाने कब मिले सफर
कहाँ मेरी शाम होगी, कहाँ होगी शहर
मैं डाल पे बैठा पंछी, कब उड़ जाऊँ क्या खबर।
कुछ के कहने पर शाम ढलती होगी
कुछ शाम से आगे जाते होंगे
मैं शाम ढलने से पहले गयी ठहर
कहाँ मेरी शाम होगी, कहाँ होगी शहर।
मैं डाल पे बैठा पंछी, कब उड़ जाऊँ क्या खबर।
न किसी का जिक्र करता है जमाना मुझसे
न करती है फजायें
अगर मौसम गया बदल तो हो जायेगी गजर
कहाँ मेरी शाम होगी, कहाँ होगी शहर
मैं डाल पे बैठा पंछी, कब उड़ जाऊँ क्या खबर।
अगर रास्ता हो पानी से भरा
और पंख हों मेरे चलने से बेकार
ऐसे वक्त क्या होगा, मुझको क्या फिकर
कहाँ मेरी शाम होगी, कहाँ होगी शहर
मैं डाल पे बैठा पंछी, कब उड़ जाऊँ क्या खबर।

कवि और कविता

हमने अपनी कलम से आज एक कहानी लिखी
एक राह पे चल रहे थे दो अजनबी
एक का नाम कविता था, एक थी कवि।
हमने अपनी कलम से आज एक कहानी लिखी।
एक के दिल ने दूसरे से कहा
क्या तुमने वो एक पेड़ खड़ा हुआ देखा
दूसरे ने कहा वो तो पास में ही है खड़ा
हमने अपनी कलम से आज एक कहानी लिखी।
एक राह पे चल रहे थे दो अजनबी
एक का नाम कविता था एक थी कवि।
थोड़ी दूर वो साथ-साथ चले
फिर कुछ कहने का इशारा किया
पहले वो मुस्करायी फिर कहा
मैं तो पहले से ही थी रूकी
हमने अपनी कलम से आज एक कहानी लिखी।
एक राह पे चल रहे थे दो अजनबी
एक का नाम कविता था, एक थी कवि।
तभी उन्हें एक अँधेरा कोना दिखा
वो बोले क्या तुम्हें कुछ है रास्ते का पता
हाँ, सामने जल रहा है दीया
तब वो फिर हँसी और कहा
हमें तो एक घर की खुली खिड़की दिखी
हमने अपनी कलम से आज एक कहानी लिखी।
एक राह पे चल रहे थे दो अजनबी
एक का नाम कविता था, एक थी कवि।
ऐसे ही साथ निभती रही
एक किनारे पे आके वो कुछ पल को रूके
पहले वो कुछ सोचते रहे, फिर एक ने दूसरे से कहा
क्या तुम्हें पता लगा कि हवा भी चली
उसने कहा तुम्हारे कहने से पहले
यही कहने को थी मैं रूकी
हमने अपनी कलम से आज एक कहानी लिखी।
एक राह पे चल रहे थे दो अजनबी
एक का नाम कविता था, एक थी कवि।

कनक : स्मृति पुष्प

आखिरी मोड़ पे आके वो एक दूसरे के लग गये गले
और कहा, यही तो थी रास्ते की मन्जिल
कहाँ हम चल पड़े थे और
कहाँ आके हमारी नजरें झुकी।
हमने अपनी कलम से आज एक कहानी लिखी।
एक राह पे चल रहे थे दो अजनबी
एक का नाम कविता था, एक थी कवि।

क्या नाम था उस लड़की का

जो गाती थी गजल, जिसका हुआ था कत्ल
क्या नाम था उस लड़की का।
मैं तुमसे पूछ रहा हूँ, बता पता उसकी गली का।
जो गाती थी गजल, जिसका हुआ था कत्ल
क्या नाम था उस लड़की का।
जिसकी शाम तन्हा थी, रात तन्हा थी
जिसमें सवार होके गयी आज वो
पयाम क्या था उस पालकी का
मैं तुमसे पूछ रहा हूँ
बता पता उसकी गली का।
जो गाती थी गजल, जिसका हुआ था कत्ल
क्या नाम था उस लड़की का।
एक रोज मैं भी मिला था उससे
पर जब जाना तो हुआ हैरान
यूँ ही चर्चा तो सुनी थी हमने भी एक बार किसी की
मैं तुमसे पूछ रहा हूँ बता पता उसकी गली का
जो गाती थी गजल, जिसका हुआ था कत्ल
क्या नाम था उस लड़की का।
मैं रोज आसमान को देखता और सोचता
वो सितारा तो नहीं किसी गर्दिश का
मैं तुमसे पूछ रहा हूँ, बता पता उसकी गली का।
जो गाती थी गजल, जिसका हुआ था कत्ल
क्या नाम था उस लड़की का।
कभी ऐसा भी तो होता होगा कि
बेवजह जमाने में चर्चा हो उसकी
नाम दे-न-दें कहीं उसका वो मतलबपरस्ती का।
जमाना होता होगा हैरान मेरी तरह
जब होता होगा जिक्र उस हस्ती का
मैं तुमसे पूछ रहा हूँ, बता पता उसकी गली का।
जो गाती थी गजल, जिसका हुआ था कत्ल
क्या नाम था उस लड़की का।

मेरा जहां छोड़कर वो चली गयी

मैं खड़ी रही राहों में मेरा जहां छोड़कर वो चली गयी
आँसू आँखों में थे मुझसे रिश्ता तोड़कर वो चली गयी
मैं खड़ी रही राहों में मेरा जहां छोड़कर वो चली गयी।
कुछ किस्से देकर कुछ बातें साथ लेकर
मेरे दिल से अपनी कश्ती मोड़कर वो चली गयी
मैं खड़ी रही राहों में मेरा जहां छोड़कर वो चली गयी।
मैंने तबतलक देखा उसे जबतलक आँखें खामोश रही
फिर मेरी आँखों में आँसू आ गये
आँसूओं का मुझसे रिश्ता जोड़कर वो चली गयी
मैं खड़ी रही राहों में मेरा जहां छोड़कर वो चली गयी।
उसके जाने के बाद शाम ढल गयी
मेरी जिन्दगी में सुबह भी आयेगी यही सोचकर वो चली गयी
मैं खड़ी रही राहों में मेरा जहां छोड़कर वो चली गयी।
अब तो उसकी मैय्यत सजेगी अर्थी को कांधा देंगे लोग
वो सो गयी जमीं पे मुझे रोता छोड़कर वो चली गयी।
मैं खड़ी रही राहों में मेरा जहां छोड़कर वो चली गयी।
आँसू आँखों में थे मुझसे रिश्ता तोड़कर वो चली गयी
मैं खड़ी रही राहों में मेरा जहां छोड़कर वो चली गयी।

बेशकीमती नगीना नीलाम हो गया

चाँद मुझपे हँसा, रात मुझपे हँसी
तारों का किस्सा तमाम हो गया।
आज दुनिया के बाजार में
कोई बेशकीमती नगीना नीलाम हो गया।
चाँद मुझपे हँसा, रात मुझपे हँसी
तारों का किस्सा तमाम हो गया।
कुछ मेले में मिले हमसे कुछ अकेले में
खेल खत्म भी हो न सका और
एक खिलाड़ी करतब करने में नाकाम हो गया
आज दुनिया के बाजार में
कोई बेशकीमती नगीना नीलाम हो गया।
चाँद मुझपे हँसा, रात मुझपे हँसी
तारों का किस्सा तमाम हो गया।
एक आँधी उठी, एक बिजली गिरी
इसकी चमक में कोई आज
पहली बार बदनाम हो गया
आज दुनिया के बाजार में
कोई बेशकीमती नगीना नीलाम हो गया।
चाँद मुझपे हँसा, रात मुझपे हँसी
तारों का किस्सा तमाम हो गया।
यही रीत हमने देखी जमाने में
किसी पागल का यहाँ पे नाम हो गया
और कोई सच्चा बेकाम हो गया
आज दुनिया के बाजार में
कोई बेशकीमती नगीना नीलाम हो गया।
चाँद मुझपे हँसा, रात मुझपे हँसी
तारों का किस्सा तमाम हो गया।
कुछ लोग ऐसे मिले
कुछ मिलके भी मिल न सके
मुझे पता भी न चला कि कब
सूरज डूबा और कब शाम हो गयी
आज दुनिया के बाजार में
कोई बेशकीमती नगीना नीलाम हो गया।
चाँद मुझपे हँसा, रात मुझपे हँसी
तारों का किस्सा तमाम हो गया।

शहर में शोर है कैसा

शाम ढल गयी, रात आने ही वाली है
शहर में शोर है कैसा, क्या आज की रात दीवाली है।
कहने वाले कह रहे हैं, शमा गजल गा रही है
बाग में सो रहा माली है।
शहर में शोर है कैसा, क्या आज की रात दीवाली है।
नीन्द नहीं है आँखों में, रूत भी है हैरान
मैं कह रही हूँ उनसे मेरा नाम मत पूछ मुझसे
मुझे तो फिर भी लगता है, रात काली है।
शहर में शोर है कैसा, क्या आज की रात दीवाली है।
मैं सोच रही हूँ यही बार-बार कि
दीये की लौ जगमगा रही है या
दिल में उठते तूफां की ये बात निराली है
शहर में शोर है कैसा, क्या आज की रात दीवाली है।
ऐसा लग रहा है जैसे पत्ते खामोश हो गये हैं पेड़ों के
और फूलों से विमुख हो गयी उसकी लाली है।
शहर में शोर है कैसा, क्या आज की रात दीवाली है।
ये क्या मैं खड़ी हूँ अँधेरे में
रोशनी कहीं फिर तो नहीं चमकने वाली है
मेरा नाम लेके गुमराह कर रहे हैं लोग मुझे
हमने जिनसे अभी-अभी नजरें मिलायी है।
शहर में शोर है कैसा, क्या आज की रात दीवाली है।
शाम ढल गयी, रात आने ही वाली है।
कहने वाले कह रहे हैं, शमा गजल गा रही है
बाग में सो रहा माली है।
शहर में शोर है कैसा, क्या आज की रात दीवाली है।

खिलौने टूट गये तो क्या

माँ के चेहरे की झुर्रियाँ जवान हो गयी
खिलौने टूट गये तो क्या?
उनका आँचल ढला, पर्दा गिरा
एक आँसू बहा, आँख नम हो गयी
अब हम करें भी तो क्या
माँ के चेहरे की झुर्रियाँ जवान हो गयी
खिलौने टूट गये तो क्या?
खेल-खेल में बचपन गया
जवानी का नशा करें तो क्या
मैंने वर्षों जिसकी चाहत की
इस तरह वो रूप बदल गये भी तो क्या
उनका आँचल ढला, पर्दा गिरा
एक आँसू बहा, आँख नम हो गयी
अब हम करें भी तो क्या
माँ के चेहरे की झुर्रियाँ जवान हो गयी
खिलौने टूट गये तो क्या?
आँगन वही रहा, दहलीज पे कदम पड़े ना
एक सीढ़ी तोड़ के हम चल दिये भी तो क्या
उनका आँचल ढला, पर्दा गिरा
एक आँसू बहा, आँख नम हो गयी
अब हम करें भी तो क्या
माँ के चेहरे की झुर्रियाँ जवान हो गयी
खिलौने टूट गये तो क्या?
अब न अफसोस है हमें, न रंज है जमाने से
रंजिशों में उम्र के सारे पल चल दिये भी तो क्या
उनका आँचल ढला, पर्दा गिरा
एक आँसू बहा, आँख नम हो गयी
अब हम करें भी तो क्या।
माँ के चेहरे की झुर्रियाँ जवान हो गयी
खिलौने टूट गये तो क्या?
न दिल रोयेगा अब
न आँखें शिकायत करेगी कोई
शिकायतों में जीवन बीत गया भी तो क्या

उनका आँचल ढला, पर्दा गिरा
एक आँसू बहा, आँख नम हो गयी
अब हम करें भी तो क्या
माँ के चेहरे की झुर्रियाँ जवान हो गयी
खिलौने टूट गये तो क्या?
उनका आँचल ढला, पर्दा गिरा
एक आँसू बहा, आँख नम हो गयी
अब हम करें भी तो क्या
माँ के चेहरे की झुर्रियाँ जवान हो गयी
खिलौने टूट गये तो क्या?

मैं पापा की बेटी, भैया की लाडली
बहन के दिल का करार
लोग कहते हैं मुझे
इस छोटी सी बगिया की फूलों की कतार
मैं पापा की बेटी भैया की लाडली
बहन के दिल का करार।
माँ की लोरी मैं, मैं उनकी जिन्दगी की बहार
आईना शीशे का है, जो करता है मुझे प्यार
मैं पापा की बेटी भैया की लाडली
बहन के दिल का करार।
कभी जो सोयी नहीं जमीं पे
ऐसी कली हूँ जिससे रौशन है माली
देखता है जिसे सब संसार।
मैं पापा की बेटी, भैया की लाडली
बहन के दिल का करार।
मुझे ऐसा लग रहा है
कहीं दिल में उठा एक तूफान है
बारिश थम सी गयी है
उठ गयी है नदियों में लहरों की फुहार
मैं पापा की बेटी, भैया की लाडली
बहन के दिल का करार।
मुझे न गम है किसी बात का
न अफसोस है बीते हालात का
मैं जैसी भी हूँ, हूँ एक मासूम बयार
मुझसे कलियों में हैं निखार
मैं पापा की बेटी, भैया की लाडली
बहन के दिल का करार।

मेरे आँगन में आज आयी है बहार

मेरे आँगन में आज आयी है बहार
उस बच्चे ने कहा मुझसे यही बार-बार
दीदी देखो वो है मेरा संसार।
ये गोद है तेरी ममता का
ये है मेरे दिल का करार।
उस बच्चे ने कहा मुझसे यही बार-बार
दीदी देखो वो है मेरा संसार
मेरे आँगन में आज आयी है बहार।
मैं हँसती रही, वो खेलते रहे
मैं सोचती रही, वो मचलते रहे
ये प्रीत की थी नन्हीं पुकार
उस बच्चे ने कहा मुझसे यही बार-बार
दीदी देखो वो है मेरा संसार
मेरे आँगन में आज आयी है बहार।
मेरी आँखों में आँसू हैं जज्बात के
ये किस्से बन गये कुछ हालात के
मगर मैंने बाँट दिये उनमें अपना वो पुराना प्यार
उस बच्चे ने कहा मुझसे यही बार-बार
दीदी देखो वो है मेरा संसार
मेरे आँगन में आज आयी है बहार।
लो देखो मेरे दिल के जलने लगे हैं चिराग
ये है मेरे दिल में छुपी उस बच्चे की आवाज
जिसने न देखी बहार, न देखा संसार
जिसके लिए जीना भी हो गया दुस्वार
उस बच्चे ने कहा मुझसे यही बार-बार
दीदी देखो वो है मेरा संसार
मेरे आँगन में आज आयी है बहार।

मैं कौन हूँ

हमने जब जहां में कदम रखे, पूछा माँ! मैं कौन हूँ।
आवाज आयी, कोई तेरा नहीं, एक अनाथ है तू।
आहिस्ता-आहिस्ता जिस्म पर सितम की मार लगती रही
तब मैंने पूछा एक दिन
ये कैसा सितम है जो कम होता नहीं माँ! मैं कौन हूँ।
आवाज आयी, कोई तेरा नहीं एक अनाथ है तू।
हम अपने उजड़े बाग को यूँ ही सजाते रहे
और एक दिन मिली मुझे बहार भी
मगर पतझड़ का मौसम न बीता
तब मैंने पूछा, मेरे बाग को किसकी नजर लगी
ये तो बता माँ! मैं कौन हूँ।
आवाज आयी, कोई तेरा नहीं एक अनाथ है तू।
फिर बहारों के आँगन से मैंने चुरायी चार कली
और उनके फूल बनने की राह निहारी
जब कली फूल बनने लगे, मेरे ओठ मुस्कराये
और मैंने फिर पूछा, माँ! मैं कौन हूँ।
आवाज आयी कोई तेरा नहीं, एक अनाथ है तू।
आज मेरे फूल हैं एक मकाम की तलाश में
और खुदा की इबादत में खड़ा आज भी मैं
यही पूछ रहा हूँ कि माँ! मैं कौन हूँ।
मगर फिर वो ही आवाज आयी
कोई तेरा नहीं एक अनाथ है तू।
हमने जब जहां में कदम रखे, पूछा माँ! मैं कौन हूँ।

ऐ कदम डगमगाने वाले

344

ऐ कदम डगमगाने वाले सुन जरा आहिस्ता चल
जग में बह रही है पाप की गंगा और हो रही है कलकल
ऐ कदम डगमगाने वाले सुन जरा आहिस्ता चल।
एक तरफ है गगन खड़ा, बैठी है एक तरफ धरा
जमीं भी बन जाये आसमां, ऐसा कुछ रंग बदल
जग में बह रही है पाप की गंगा और हो रही है कलकल
ऐ कदम डगमगाने वाले सुन जरा आहिस्ता चल।
शोर उनकी कह रही है, क्या कह रहा है क्या वो इन्सां
सोचने ऐसी ही एक बात घर से निकल
जग में बह रही है पाप की गंगा और हो रही है कलकल
ऐ कदम डगमगाने वाले सुन जरा आहिस्ता चल।
किसको कितना मजा आ रहा है और कौन है कितना बेखबर
ठोकर खा लेने के बाद भी अब तो जरा संभल
जग में बह रही है पाप की गंगा और हो रही है कलकल
ऐ कदम डगमगाने वाले सुन जरा आहिस्ता चल।
ये खेल अभी शुरू हुआ है जो खेल सीख गये तुम आज और कल
वो खेल एक मजाक का होगा जिसको हो चाहत तो वो आये बैठे मेरे बगल
जग में बह रही है पाप की गंगा और हो रही है कलकल
ऐ कदम डगमगाने वाले सुन जरा आहिस्ता चल।
एक सरारा बनाया है हमने तेरे लिए, तू उसके किनारे चल
मन मेरा हो रहा बावरा हो रहा बेकल
जग में बह रही है पाप की गंगा और हो रही है कलकल
ऐ कदम डगमगाने वाले सुन जरा आहिस्ता चल।
मौत ही एक मंजिल नहीं सफर तो और भी हैं
सोचना है हमें कि पी लूँ जहर या पीने चलूँ एक बूँद जल
जग में बह रही है पाप की गंगा और हो रही है कलकल
ऐ कदम डगमगाने वाले सुन जरा आहिस्ता चल।

अम्बर ने धरती से पूछा

345

अम्बर ने धरती से पूछा, प्रेमी किस गली से गुजरा करते हैं।
धरती ये अम्बर से बोली, प्रेमी हर बंधन तोड़ रोज ही मिला करते हैं।
अम्बर ने धरती से पूछा, प्रेमी किस गली से गुजरा करते हैं।
क्या इश्क तुने पैदा किया, या इश्क खुद ही है जन्मा यहाँ
ऐ धरती बता, क्यों वो दर्जा तुझे माँ का दिया करते हैं।
धरती ये अम्बर से बोली, प्रेमी हर बंधन तोड़ रोज ही मिला करते है।
अम्बर ने धरती से पूछा, प्रेमी किस गली से गुजरा करते हैं।
क्या चाहत पे होती है जिन्दगी कुर्बान
तेरे यहाँ क्या चाहत मिलना है आसान
ऐ धरती बता, क्या पानी है यहाँ
या प्रेमी पानी की जगह आँसू ही पीया करते हैं।
धरती ये अम्बर से बोली, प्रेमी हर बंधन तोड़ रोज ही मिला करते हैं।
अम्बर ने धरती से पूछा, प्रेमी किस गली से गुजरा करते हैं।
क्या खुशी तेरे दरम्याँ नहीं, फासले हैं जिन्दगी में तेरे यहाँ
ऐ धरती बता, क्या प्रेमी वहाँ हँसते भी हैं या
रो-रो कर ही मौत की दुहाई दिया करते हैं
धरती ये अम्बर से बोली, प्रेमी हर बंधन तोड़ रोज ही मिला करते हैं।
अम्बर ने धरती से पूछा, प्रेमी किस गली से गुजरा करते हैं।
क्या उनके दिलों में आग बराबर लगी
क्या चिता उनकी एक साथ जली
ऐ धरती बता, क्या प्रेमी वहाँ चाहत पे जान कुर्बान किया करते है।
धरती ये अम्बर से बोली, प्रेमी हर बंधन तोड़ रोज ही मिला करते हैं।
अम्बर ने धरती से पूछा, प्रेमी किस गली से गुजरा करते हैं।

ये मौसम है प्यार का

मैं चाँदनी गगन की, तुम बादल हो बहार का
मत रोक रास्ता मेरा, ये मौसम है प्यार का।
मैं चाँदनी गगन की, तुम बादल हो बहार का।
मेरा नाम ले के जीते हैं सभी
तुम भी कर लो एतबार मेरा
ये रूत बेवजह चली जा रही
सुन ले सदा मेरी पुकार का
मत रोक रास्ता मेरा, ये मौसम है प्यार का।
मैं चाँदनी गगन की, तुम बादल हो बहार का।
मुझे शबा कहते हैं
डालियाँ, कलियाँ खिल-खिल देती हैं मुझको आवाज
कुछ तो नाम ले मेरा इस शाम के खुमार में
मुझे नशा हो रहा है रात के इस खुमार का
मत रोक रास्ता मेरा, ये मौसम है प्यार का।
मैं चाँदनी गगन की, तुम बादल हो बहार का।
किस्सा तो सुना होगा तुमने बुलबुल और चिनार का
कि एक को रास्ता मिला, एक को मिला जीवन बेकार का।
मत रोक रास्ता मेरा, ये मौसम है प्यार का।
मैं चाँदनी गगन की, तुम बादल हो बहार का।
इतनी देर में तो बुझने लगी मेरी सूरते हयात
कुछ तो नाम ले ऐ परवाने इस दीये और तूफान का
मत रोक रास्ता मेरा, ये मौसम है प्यार का
मैं चाँदनी गगन की, तुम बादल हो बहार का।
किसने टोका है तुम्हें मेरी आवाज से
मैं एक तरफ हूँ और साया एक तरफ है मेरा
जुत्सजु न कर तू जिस्म का
जिक्र कर सामने बैठे हुस्ने यार का।
एक तरफ पैमाना है भरा, एक तरफ रूत है बेकरार का
मत रोक रास्ता मेरा, ये मौसम है प्यार का
मैं चाँदनी गगन की, तुम बादल हो बहार का।

प्रीतम आये थे इस ओर

कुछ शोर था गली में
प्रीतम आये थे इस ओर
वन-वन घूम रही है तितली
गोरी नखरे अब तो छोड़
प्रीतम आये थे इस ओर।
न पत्तों में खुद को छुपा
न पेड़ों के पीछे कोई झुरमुट बना
वन-वन नाच रहा एक मोर
गोरी नखरे अब तो छोड़
इनके कदमों में जन्नत के नजारे थे
सामने खड़े थे तेरे वो चितचोर
गोरी नखरे अब तो छोड़
प्रीतम आये थे इस ओर।
आकाश घूम रहा था उनके संग
बारिश थी घनघोर
गोरी नखरे अब तो छोड़
प्रीतम आये थे इस ओर।
उनकी जुबां उर्दू पढ़ रही थी
तू हिन्दी तो न बोल
गोरी नखरे अब तो छोड़
प्रीतम आये थे इस ओर।
जब वो सामने आये थे
हमने बहाना किया था तेरे नाम का
गलतफहमी की दीवार अब तो दे तोड़
गोरी नखरे अब तो छोड़
प्रीतम आये थे इस ओर।
अब जब भी आहट हो तुम चौंक जाना
और हँसकर थाम लेना बाहें उनकी
वो कोई गैर नहीं तेरे साजन हैं
मत देना उन्हें झकझोर।
गोरी नखरे अब तो छोड़
प्रीतम आये थे इस ओर।

दिल मुस्कराने लगा है

साँस बोझिल लग रही है, शिकस्त शमा हो रही है
रात का सन्नाटा दिल पे छाने लगा है।
लोग मिल रहे हैं हमसे कुछ इस तरह
कि दिल मुस्कराने लगा है।
साँस बोझिल लग रही है, शिकस्त शमा हो रही है
रात का सन्नाटा दिल पे छाने लगा है।
आँख नम है हमारी, ओठ थरथरा के कुछ कह रहे हैं
लबों की खामोशी पे दिल एक गजल गाने लगा है
लोग मिल रहे हैं हमसे कुछ इस तरह
कि दिल मुस्कराने लगा है।
साँस बोझिल लग रही है, शिकस्त शमा हो रही है
रात का सन्नाटा दिल पे छाने लगा है।
ये वक्त मिलने का एक बहाना लेके आया है
और सूरत पे हमारी चाँद झिलमिलाने लगा है
लोग मिल रहे हैं हमसे कुछ इस तरह
कि दिल मुस्कराने लगा है।
साँस बोझिल लग रही है, शिकस्त शमा हो रही है
रात का सन्नाटा दिल पे छाने लगा है।
अब जब दस्तक हुई दरवाजे पे
हमने सोचा ये चौंककर कि
ये कौन जाने अभी-अभी आया था
और ये कौन है जो जाने लगा है।
लोग मिल रहे हैं हमसे कुछ इस तरह
कि दिल मुस्कराने लगा है।
साँस बोझिल लग रही है, शिकस्त शमा हो रही है।
रात का सन्नाटा दिल पे छाने लगा है।

वफा

वफा इल्म है, वफा चाहत है, एक तजुर्बा है वफा।
वफा के रथ पे दुनिया खड़ी है
वफा के लिए ये बड़ी मुश्किल घड़ी है
शायद एक मेहरबां है वफा
वफा इल्म है, वफा चाहत है, एक तजुर्बा है वफा।
दिल तन्हा होता, ख्वाब होते वीरान
मगर तन्हाई के आलम का रूसवा है वफा
वफा इल्म है, वफा चाहत है, एक तजुर्बा है वफा।
न धड़कन ने शोर किया कोई
न जमाना जान सका उनकी आवाज को
मगर फिर भी वो बदनाम हुई
शायद दरो-दरवा है वफा
वफा इल्म है, वफा चाहत है, एक तजुर्बा है वफा।
लोग मिलते रहे, खामोश सोती रही उनकी जुबां
शायद प्यार भरा एक जज्बा है वफा
वफा इल्म है, वफा चाहत है, एक तजुर्बा है वफा।
किसके दामन को छू रहे हो तुम
वफा का दामन तो पाक है
खुद की नजर में मस्जिद का मौलवा है वफा
वफा इल्म है, वफा चाहत है, एक तजुर्बा है वफा।
अब न उँगली उठा उनपे
तेरी हर एक उँगली का फलसफा है वफा
वफा इल्म है, वफा चाहत है, एक तजुर्बा है वफा।
वफा को लोग टोक न सके
वफा रूक न सकी, रोक न सके
उनकी नजर में शरमा गये वो
जिनकी नजर का वादे शबा है वफा
वफा इल्म है, वफा चाहत है, एक तजुर्बा है वफा।
वफा के दम पे दुनिया खड़ी है
वफा के लिए बड़ी मुश्किल घड़ी है
शायद एक मेहरबां है वफा
वफा इल्म है, वफा चाहत है, एक तजुर्बा है वफा।

कागज

350

कभी दर्पण, कभी अर्पण, कभी खुदा बन गया कागज।
सब चले गये शहर छोड़ के रास्ते में पड़ा रह गया कागज।
कभी दर्पण, कभी अर्पण, कभी खुदा बन गया कागज।
स्याही की चन्द बूँदे पड़ी
कवि की लेखनी में ढल गया कागज।
सब चले गये शहर छोड़ के, रास्ते में पड़ा रह गया कागज।
कभी दर्पण, कभी अर्पण, कभी खुदा बन गया कागज।
किसी ने पढ़ा इसे, किसी ने रचना की इसकी
मगर इल्म इतना बढ़ा कि
इल्म बढ़ते-बढ़ते बदल गया कागज।
सब चले गये शहर छोड़ के रास्ते में पड़ा रह गया कागज।
कभी दर्पण, कभी अर्पण, कभी खुदा बन गया कागज।
कभी दिल, कभी जुबां, कभी फसाना बना ये
कभी फसाने के रूप में बयां होने लग गया कागज।
सब चले गये शहर छोड़ के, रास्ते में पड़ा रह गया कागज।
कभी दर्पण, कभी अर्पण, कभी खुदा बन गया कागज।
कभी चुपके से आया खत बन प्रेम गली में
कभी किसी बुजुर्ग के हाथों मसल गया कागज।
सब चले गये शहर छोड़ के, रास्ते में पड़ा रह गया कागज।
कभी दर्पण, कभी अर्पण, कभी खुदा बन गया कागज।

एक शोख गजल

351

ठहर जरा तू मेरे दिल का कम्बल
मैंने लिखी है तुझपे एक शोख गजल
रूप ऐसा खिला है तेरा संसार में
महक रहे हों बेले जैसे बहार में
कितना पावन है तू मेरी नजर में
क्या रखा है अब इस शामो शहर में
किसका नाता था वो सुहाना सा
तू बना फिरता था जिसके लिए दीवाना सा
न मेंहदी की रात लाये ये हमसाये वो
फिर क्यों करता है तू उनका इन्तजार
नहीं होनेवाले वो तुझपे बेकरार
कैसा नाता था वो उस पहली मुलाकात का
जूल्म ढा गये जो मुझपे जज्बात का
क्यों नाज करता है तू
ये रिश्ता तो हर मोड़ पे खड़ा है हरशू
कितना बेगाना समझते हैं तुझे ये जगवाले
तेरे तो हर अदा ही थे उनके लिए निराले
कितना कोमल सा मन-आँगन था तेरा
सूरज भी देखे तो बन बैठे सबेरा
बड़ा सुहाना मौसम था वो उस शाम का
फिक्र कहाँ थी किसी को तब आराम की
सब तो झूम रहे थे ऐसे संग तेरे
जैसे बहारों ने ले लिये हों सात फेरे
कैसा सोंचित मार्ग रचा था उस तकदीर का
पहलू ही बदल डाला था जिसने तेरी तस्वीर का।
क्यों तू हैरान न हो सका कभी
कहनेवाले तो जाने क्या कह के चले गये सभी
कैसा स्वच्छ राग-अनुराग था उनका
जिसको पढ़ने के बाद मतलब जाना जिनका
कैसे-कैसे लोग थे वो मेरे मन-आँगन के
काँटे ही छीन ले चले जो दामन के
दिल कैसे भूले फिर से नेह का बन्धन
किसने कितना समझा तुझको जाने सबका मन
तेरे नाम तो आयी एक ही चिट्ठी
ये धरती तेरी, तू इसकी मिट्टी

वो लोग तो थे बेगाने से
लगे थे जो उस वक्त पहचाने से
अब क्या फिकर करे तू उनकी
कुछ रिश्ते की पहचान मिली न जिनकी
वो तो एक संसार के लोग थे
जो मिले ऐसे मोड़ पे वो भी क्या संयोग थे
कैसा रिश्ता ले गये वो जाने हमसे
हमने प्रीत किया न कभी जिनसे
हमारी तो अदा ही थी निराली
अपनी तो रात भी काली, शाम भी काली
तूने उनको समझाया तो होगा
अब न सोच कुछ, ऐ दिल सो जा
तू नहीं उनका हो सकता
जिनको जग का मतलब ही नहीं आता
क्या वो मान गये तुम्हारी बात
या दिल में लिए है एक और मुलाकात
हम तो रोज मिल लेते हैं उनसे
पंछियों को भी पता मिला था जिनसे
वो उड़ने लगे गगन में
शोला सा भड़का नहीं फिर भी बदन में
ये मोल ही था ऐसा
जिसका मोल जाने वो हो कैसा
यही सोचकर हैरान तो होंगे वो
हमसे मिलने आये थे उस रोज जो
क्या उन्हें याद है कुछ भी
या भूल गये वो बातें उस दिन की
कैसे निगाहें-करम ऐसे गयी होगी बदल
ऐ नाजुक धड़कनें अब तो जरा संभल
ठहर जरा तू मेरे दिल का कम्बल
मैंने लिखी है तुझपे एक शोख गजल।

मैं नेता हूँ

मेरे सर पे सफेद टोपी है और है दिल काला
मैं नेता हूँ, मेरा इस शहर में है बोलबाला
कभी लोगों के ताने सुनना, कभी पैसे चुराना
यही है मेरा नेक काम
इसी वजह से मैं करता हूँ इतना घोटाला
कि मेरे सर पे सफेद टोपी है और है दिल काला।
कभी माँ के नारे गूँजे मेरी सत्ता में
कभी औरत हो गयी बिस्तर मेरी नजरों में
मैंने यही सोच अपना ईमान बेच डाला
कि मेरे सर पे सफेद टोपी है और है दिल काला।
मैं जहर बेचता हूँ यह कह कि यह दवा है
तुम्हें आराम पहुँचायेगी
मैंने इस जहर को पाने के लिए
कई साँपो को भी पाला
कि मेरे सर पे सफेद टोपी है और है दिल काला।
मैं घूमता हूँ गली-गली फौजों को साथ लेकर
वो मर जाते हैं और मैं कहता हूँ
मुझे अफसोस है कि ये था मेरा रखवाला
कि मेरे सर पे सफेद टोपी है और है दिल काला।
मैं नेता हूँ, मेरा इस शहर में है बोलबाला।

पैसा ही सब कुछ है

पैसे से बनते हैं नाते इस जमीं के
पैसे के बगैर जिन्दगी वीरान है
न माँ-बाप का नाम है कोई
न इससे ऊँचा कोई जहान है
पैसे से बनते हैं नाते इस जमीं के
पैसे के बगैर जिन्दगी वीरान है।
हाथ बेकार है, पैर बेकार है
बेकार है यह जिन्दगी
पैसा ही इन्सान है, पैसा ही ईमान है
पैसा ही जीवन का हर सामान है।
न माँ-बाप का नाम है कोई
न इससे ऊँचा कोई जहान है
पैसे से बनते हैं नाते इस जमीं के
पैसे के बगैर जिन्दगी वीरान है।
दिल टूट जाते है. शहर छूट जाते हैं
न माँ-बाप का नाम है कोई
न इससे ऊँचा कोई जहान है।
पैसे से बनते हैं नाते इस जमीं के
पैसे के बगैर जिन्दगी वीरान है
जिनके दिलों में सो रहे हैं ख्वाब, सो रही है रंजिशें
उनके बीच भी पैसा ही दीवार है
न कोई रूतबा है बड़ा
न कोई बड़ा मेहमान है
न माँ-बाप का नाम है कोई
न इससे ऊँचा कोई जहान है
पैसे से बनते हैं नाते इस जमीं के
पैसे के बगैर जिन्दगी वीरान है।

बाकी सब ठीक है सिवाय मेरी तबीयत के

दौरे तो बहुत पड़े पर दवा रास आ गयी
नीन्द मुझसे, मैं नीन्द से भाग गयी
बाकी सब ठीक है सिवाय मेरी तबीयत के।
दिल में परिन्दों ने घोंसले बना लिये
चूँ-चूँ की आवाज आ रही है
वो जाग रहे हैं, मैं सो रही हूँ
शायद मैं उनका खाना खा गयी
नीन्द मुझसे, मैं नीन्द से भाग गयी
दौरे तो बहुत पड़े पर दवा रास आ गयी
बाकी सब ठीक है सिवाय मेरी तबीयत के।
मच्छर गीत गा रहे हैं, हमें नीन्द से जगा रहे हैं
मैं भी जाग गयी मगर सुबह आ गयी
नीन्द मुझसे मैं नीन्द से भाग गयी
दौरे तो बहुत पड़े पर दवा रास आ गयी
बाकी सब ठीक है सिवाय मेरी तबीयत के।
मेरे बाल उलझ गये है,
मैं कंघी तलाश रही हूँ
सुबह शहर जाना है, मेरी गाड़ी भी आ गयी
नीन्द मुझसे, मैं नीन्द से भाग गयी
दौरे तो बहुत पड़े पर दवा रास आ गयी
बाकी सब ठीक है सिवाय मेरी तबीयत के।

ऐ दुल्हन

रूत बदली, बदली वफा, ओढ़ा घूँघट जब तूने ऐ दुल्हन।
ये महल देखते रह गये, रह गये चौबारे
उठे तेरे कदम जब ऐ दुल्हन
रूत बदली, बदली वफा, ओढ़ा घूँघट जब तूने ऐ दुल्हन।
रास्ते बन गये कफन, जुबां ने समेटा एक वचन
हो गयी महफिल से दूर, एक बार फिर तू ऐ दुल्हन
रूत बदली, बदली वफा, ओढ़ा घूँघट जब तूने ऐ दुल्हन।
न माँ के आँसू कुछ कह सके, न बहन ने कुछ कहा
जुबां-जुबां से हो गयी फिर भी बयां तू ऐ दुल्हन
रूत बदली, बदली वफा, ओढ़ा घूँघट जब तूने ऐ दुल्हन।
किसी हाथ का सहारा बनी तेरी बाहें
निभा दिया फिर एक और वचन तूने ऐ दुल्हन
रूत बदली, बदली वफा, ओढ़ा घूँघट जब तुने ऐ दुल्हन।
ये नगर सूना हो गया, सूनी हो गयी जाने कितनी डगर
घोड़ेवाले ने पुकारा तुझे जब ऐ दुल्हन
रूत बदली, बदली वफा, ओढ़ा घूँघट जब तूने ऐ दुल्हन।
फिर एक राह ऐसी मुड़ी जहाँ से पिता की हवेली हो गयी अलग
बुझ गये दीये, रोशनी पड़ गयी धुँधली
कफन बन गया जब जिस्म तेरा ऐ दुल्हन
रूत बदली, बदली वफा, ओढ़ा घूँघट जब तूने ऐ दुल्हन।
ये महल देखते रह गये, रह गये चौबारे
उठे तेरे कदम जब ऐ दुल्हन।
रूत बदली, बदली वफा, ओढ़ा घूँघट जब तूने ऐ दुल्हन।

मैं बनी हूँ दुल्हन

हमने ओढ़ी है जिसे लोग कहते हैं, है ये कफन।
पर हम तो आज ही रचाये हैं मेंहदी
हम तो आज ही बनी हैं दुल्हन।
हमने ओढ़ी है जिसे लोग कहते है ये कफन।
आज ही तो पहनी है हमने चूड़ियाँ
और आज ही बाँधे हैं गजरे
फिर क्यों न कह सका कोई
कि वो देखो जा रही है मेरी बहन
हमने ओढ़ी है जिसे लोग कहते हैं, है ये कफन।
पर हम तो आज ही रचाये हैं मेंहदी
हम तो आज ही बनी हैं दुल्हन।
ये बिन्दिया तो कभी लगा ही न था मेरी ललाट में
हमने तो सारे गहने आज ही लिये हैं पहन
हमने ओढ़ी है जिसे लोग कहते हैं, है ये कफन।
पर हम तो आज ही रचाये हैं मेंहदी
हम तो आज ही बनी हैं दुल्हन।
टीके भी सजाये माँग में अपने
हमने ओढ़ा भी है चुनर
ये ही तो मौका है, खिला है मेरा भी बदन
हमने ओढ़ी है जिसे लोग कहते हैं, है ये कफन।
पर हम तो आज ही रचाये हैं मेंहदी
हम तो आज ही बनी हैं दुल्हन।
अब तो लोग बाग भी आने लगे हैं
पर जाने कहाँ छुप गये हैं सजन
हमने ओढ़ी है जिसे लोग कहते हैं, है ये कफन।
पर हम तो आज ही रचाये हैं मेंहदी
हम तो आज ही बनी हैं दुल्हन।
अब तो विदा हो रही हूँ मैं इस घर से
जुदाई का जज्बा भी लिये जा रही हूँ मैं
जाने कैसी लगी है मुझको लगन
हमने ओढ़ी है जिसे लोग कहते हैं, है ये कफन।
पर हम तो आज ही रचाये हैं मेंहदी
हम तो आज ही बनी हैं दुल्हन।

बेटी मेरी बन रही है परायी

मैंने जिसे नाजों से पाला
वो बेटी मेरी बन रही है परायी
इस जहां की खातिर ही बेटी
मैंने भी ये रीत है निभायी।
मैंने जिसे नाजों से पाला
वो बेटी मेरी बन रही है परायी।
माँग सिन्दूर से भरा, माथे पे बिन्दिया है सजी
तू बनके दुल्हन है ससुराल चली
आके बैठ बेटी, ये डोली तेरी
मैंने कलियों-फूलों से सजायी
मैंने जिसे नाजों से पाला
वो बेटी मेरी बन रही है परायी।
ऐ मेरी गुड़िया जिस तरह तूने
यहाँ रस्मों-रिवाजों का आदर किया
मेरी दुआ है, तू वहाँ भी खुश रहना सदा
यही सोच मैंने तेरे हाथों में मेंहदी है रचायी
मैंने जिसे नाजों से पाला
वो बेटी मेरी बन रही है परायी।
ये जहां तू भूल जाना
एक नया संसार राहों में खड़ा है तेरे
जब इन बातों को याद करना तो सोचना
मेरी बातों में थी कितनी सच्चाई
मैंने जिसे नाजों से पाला
वो बेटी मेरी बन रही है परायी।
अब न मैं तेरा, न माँ तेरी
हम जैसे भी थे हो गये अब पराये
मगर बेटी उनके यहाँ तू न बनना परायी
हो जाये न तेरी रूसवाई
मैंने जिसे नाजों से पाला
वो बेटी मेरी बन रही है परायी।
इस जहां की खातिर ही बेटी
मैंने भी ये रीत है निभायी।

छूट गया घर-द्वार

मत रो मैया मोरी, टूट गये सब नाते मोरे
छूट गया घर-द्वार।
ये गली थी मेरे बचपन की
वो सामने खड़ा मेरा संसार
मत रो मैया मोरी, टूट गये सब नाते मोरे
छूट गया घर-द्वार।
रह गयी सखियाँ मोरी, रह गया मेरा हर शृंगार
सूखे पौधे बागों के खिल जायेंगे
फिर से खड़ी हो जायेगी बहार
मत रो मैया मोरी, टूट गये सब नाते मोरे
छूट गया घर-द्वार।
बाबुल से कहना, कलेजे के टुकड़े ने निभाया वचन
रख लिया रिश्ते की लाज
ओ बाग के रखवाले, ये प्रीत की है नन्हीं पुकार
मत रो मैया मोरी, टूट गये सब नाते मोरे
छूट गया घर-द्वार।
ऐ सिसकती नावें कागज वाली, भूल जाना मुझे
अब न बरसने को आयेगी नन्हीं फुहार
मेरे हाथों ने पहन लिये चुड़ियों की कतार
मत रो मैया मोरी, टूट गये सब नाते मोरे
छूट गया घर-द्वार।
मेरी गुड़िया से कहना, तेरी बहन की आयी थी बारात
ढोल ताशे बजे, सिसकियों के संग बाँसुरी कर रही थी गुहार
मत रो मैया मोरी, टूट गये सब नाते मोरे
छूट गया घर-द्वार।
ये गली थी मेरे बचपन की
वो सामने खड़ा मेरा संसार
मत रो मैया मोरी, टूट गये सब नाते मोरे
छूट गया घर-द्वार।

कुहु-कुहु कोयल बोले, मन का आँचल डोले
गुल से मैं गुलिस्तान हो गयी
मेरी मैया मैं जवान हो गयी।
तेरे घर के लिए मैं फकत दो दिन का मेहमान हो गयी
मेरी हसरत एक तूफान हो गयी
मेरी मैया मैं जवान हो गयी।
अब न गीत सुना कोई
गजल गाने को मैं परेशान हो गयी
तेरे घर के लिए मैं फकत दो दिन का मेहमान हो गयी।
मेरी मैया मैं जवान हो गयी
तितली ने पर खोले
बुलबुल के बाग सारे वीरान हो गये
तेरे घर के लिए मैं फकत दो दिन का मेहमान हो गया
मेरी हसरत एक तूफान हो गयी
मेरी मैया मैं जवान हो गयी।
गूँज दे शहनाई की हमें
तेरे आँगन में खिल के मैं बागवान हो गयी
तेरे घर के लिए मैं फकत दो दिन का मेहमान हो गयी
मेरी हसरत एक तूफान हो गयी
मेरी मैया मैं जवान हो गयी।
सजा थाल आरती का
शगुन का आज मैं सामान हो गयी
तेरे घर के लिए मैं फकत दो दिन का मेहमान हो गयी
मेरी हसरत एक तूफान हो गयी
मेरी मैया मैं जवान हो गयी।
अब देर न कर घर का दीपक जला
रोशनी का मैं अरमान हो गयी
तेरी ममता का दे मैं इम्तहान सो गयी
तेरे घर के लिए मैं फकत दो दिन का मेहमान हो गयी
मेरी हसरत एक तूफान हो गयी
मेरी मैया मैं जवान हो गयी।
कुहु-कुहु कोयल बोले, मन का आँचल डोले
गुल से मैं गुलिस्तान हो गयी
मेरी मैया मैं जवान हो गयी।

बाबुल मोरे न भेज मोहें परदेश
बदलने होगे हमें एक नये वेश
ये है पंछियों का देश।
बाबुल मोरे न भेज मोहें परदेश।
मैया का आँचल सूना हो जायेगा
धरे-के-धरे रह जायेंगे तेरे सारे उपदेश
बदलने होंगे हमें एक नये वेश
ये है पंछियों का देश।
बाबुल मोरे न भेज मोहें परदेश।
तेरे कांधे पे चढ़ के देखा है मैंने
धरती-अम्बर का उल्लेख
मेरे मन में न रहे हैं बाकी अब कोई लेश
बदलने होंगे हमें एक नये वेश
ये है पंछियों का देश।
बाबुल मोरे न भेज मोहें परदेश।
एक चाँद के खिल जाने से
रोशनी का सार नहीं मिल जाता
दिल में बाकी रह ही जाते हैं
अँधेरों के प्रति क्लेश
बदलने होंगे हमें एक नये वेश
ये है पंछियों का देश।
बाबुल मोरे न भेज मोहें परदेश।
किसके दामन में पनाह लेने होंगे हमें
जिसको न जाना हमने, न जाना उसका अवधेश।
घोड़े दौड़ भी जायें अगर
तो खाली पड़ते नहीं जिन्दगी के रेस
बदलने होंगे हमें एक नये वेश
ये है पंछियों का देश।
बाबुल मोरे न भेज मोहें परदेश।
माँ रोती रह जायेगी
तेरे कदमों में बाकी रह जायेंगे मेरे अवशेष
बदलने होंगे हमें एक नये वेश
ये है पंछियों का देश।
बाबुल मोरे न भेज मोहें परदेश।

आज मैं दुल्हन बनी

लो देखो मुझे आज मैं दुल्हन बनी
मेरे माथे पे बिन्दिया सजी, मेरे नैना ये कजरारे हुए
चमकते चाँद की गोद में खड़ी, सितारों की पालकी मैं चढ़ी
लो देखो मुझे आज मैं दुल्हन बनी।
रात सजने लगी, चाहतों के अरमां मचलने लगे
ओस की बूँदे गिरी, शीतलता मेरे मन पे पड़ी
लो देखो मुझे आज मैं दुल्हन बनी।
ये मंजर मुझे प्यार से तकने लगे
हँसने लगी वादियाँ, वसन्ती मौसम लहराने लगे
कोयल भी मेरे गीत गाने लगी
लो देखो मुझे आज मैं दुल्हन बनी।
कोई चाँद के रथ पे सवार मेरी गली आया
हाथ में हाथ लिये मेरे वो चलता रहा
आज मैं भी एक घर से विदा हो चली
लो देखो मुझे आज मैं दुल्हन बनी।
मेरे माथे पे बिन्दिया सजी, मेरे नैना ये कजरारे हुए
चमकते चाँद की गोद में खड़ी
सितारों की पालकी मैं चढ़ी।
लो देखो मुझे आज मैं दुल्हन बनी।

बेटी सुहागन बनी

बेटी सुहागन बनी, ममता मेरी परवान चढ़ी
सीढ़ियों से चढ़ने वाले कदम रूककर चले
ये कह के, है ये मेरा भ्रम
आँसू नहीं है माँ, ये आशीष है विदा की
जिस हाथ ने चलना सिखाया
उसी हाथ ने आज ये सजा दी
पर अफसोस कैसा, जीवन तो है ताश जैसा
न हार का गम, न जीत की खुशी
हमने तो पायी फिर भी एक रात की हँसी
शोर तो कल भी पड़े थे कानों में
पर बात कहाँ थी ऐसी उस जमाने में
एक हाथ में पत्थर पड़े थे
एक हाथ उनसे लड़े थे
जख्म तो वो भी हमारे लिये नये थे
पर उस जख्म के भी एक किस्से हुए थे
आज न वो खाई रही, न रहे वो निशान
हम तो खुद से ही हो गये अनजान
न लाल इन बिन्दियों की कीर्त्ति रूकेगी
न उनसे मिलन की कश्ती थमेगी
नाव कागज के थे, वो तो पुराने हुये
हम तो आज एक बेगाने हुए
जो भी मिले कहना उन सखियों से
कभी रूख मोड़ा नहीं मैंने उन बतियों से
जब भी आऊँगी लौटकर
एक पल को रूकूँगी ये सोचकर
डोली में बैठ गयी होंगी वो
कलतलक अपनी दुनिया थी जो
क्या अब भी वहाँ बचा होगा कोई
यही सोचकर मैं वर्षों रोयी
क्या यही मेल होता है उन रिश्तों का
जिसका नाम की बचपन है
पर जीवन तुझपे ही ये अर्पण है
कुछ वादे बाकी रहे, कुछ मय के शाकी रहे

पर हम कैसे भूलें उन्हें
कभी साथ पाया था जिन्हें
क्यों ये लोग आये थे मेरी गली में
जिनको न कभी देखा था मैंने
वही चले आये मेरे रास्ते के सामने
अब तो डोली रूकी थी
जाने की जल्दी भी क्या थी
पर जाना पड़ा ये जवानी जो सामने खड़ी थी
सिन्दूर की लाज तो निभानी ही थी
इसी लाज में हमने अपनी हस्ती गँवायी थी
यही सपना लिये तो मेरी सखियाँ भी है खड़ी
कह रही है उनसे भी यही दुआयें मेरी
तू भी पहने चुनर लाल
सजे तेरे भी गेशू, न रहें बिखरे ये बाल
दरवाजे पे छूटे पटाखे की लड़ी
कहने वाले फिर कहें यही
बेटी सुहागन बनी, ममता मेरी परवान चढ़ी।

इतना भी तंगहाल नहीं मेंहदी

सिर्फ पत्ते का नाम नहीं मेंहदी
जिसने रचाया उसका कमाल नहीं मेंहदी
जो चले गये उनकी ससुराल नहीं मेंहदी
बिखरे लोगों के लिए करती मलाल नहीं मेंहदी
करे कोई और सवाल नहीं मेंहदी
गुजरे कभी किसी साल नहीं मेंहदी
विधवा के बिखरे बाल नहीं मेंहदी
किस्मत के करे बयां हाल नहीं मेंहदी
रिश्तों में उलझ जाये जो, वो जाल नहीं मेंहदी
फाँदकर उस पार चली जाने वाली दीवार नहीं मेंहदी
हर युग का इतिहास लिखे ये
इतना भी कंगाल नहीं मेंहदी
बचपन को छोड़ दे जो
ऐसे शौक ऐसे बेवाल नहीं मेंहदी
हथेलियों पे रचने आयी तो
रूके-रूके से कदमों की तरह तंगहाल नहीं मेंहदी
जिसका रंग ही लाल हो
उस रंग का करे मलाल नहीं मेंहदी
हर सुहागन के दिल की धड़कन बने ये
रास्ता भूल जाये तो ऐसा भी करे धमाल नहीं मेंहदी
जिसने पाया इसे वो खुश हुआ
रूलाने का जाने हाल नहीं मेंहदी
किस्मत से इसकी हस्ती है कायम
किस्मतों के हाथों का खिलौना नहीं
ये जवान है, हसीन है
बूढ़े लोगों के सफेद बाल नहीं मेंहदी
हर गेशू तो यही कहे
और ज्यादा करे अब सवाल नहीं मेंहदी
उसकी रची हथेली हुई सुर्ख लाल
कर के फिर भी गया मुझे मालामाल नहीं मेंहदी
क्या अब कहे कोई सुहागिनों के दिल का अरमान है मेंहदी
भूखे-नंगे लोगों के लिए बने कभी तंगहाल नहीं मेंहदी
सिर्फ पत्ते का नाम नहीं मेंहदी
जिसने रचाया उसका कमाल नहीं मेंहदी।

ये किस्सा उसने ही था रचा

एक घर की खिड़की खुली, एक पर्दा उठा
हवा तेज चली, चिराग घर का बुझा
रोशनी बिखर सी गयी
तन पे मातम का बोझ चढ़ा
एक गरीब का घर जला
एक अमीर का अहंकार टूटा
एक घर की खिड़की खुली, एक पर्दा उठा।
मन का मैल धोया न गया
और तन का किस्सा कायम रहा
शाम ढलती रही, रात का आँचल गिरा
एक घर की खिड़की खुली, एक पर्दा उठा।
कुछ अहम् से लौ लेने चले
कुछ बन के पतंगे जले
ख्वाब उनका भी गया
जिन्हें था भ्रम तकदीर का नया
एक घर की खिड़की खुला, एक पर्दा उठा।
उनके घर से रोशनी किनारे चली
देख रहे थे वो एक ऐसी गली
जहाँ इन्सान था खड़ा
जिनके दामन में आँसू था भरा
वो फिर भी न रूका
एक घर की खिड़की खुली, एक पर्दा उठा।
रोक सका न कोई ऐसा माजमा
माजमे के बीच जो था खड़ा
ये किस्सा उसने ही था रचा
कि एक घर की खिड़की खुली
और एक पर्दा उठा।

ये जिन्दगी लगी ना भली

बाग महके, कोई ऐसी खिली कली
मुझे तो ये जिन्दगी लगी ना भली
तिनका-तिनका जोड़ा हमने और बनी बागानी बुलबुल
मगर मेरे कदमों में पड़ी रह गयी धूल
कैसे रचा न जाता फिर एक किस्सा
ये तो था अपना-अपना हिस्सा
पानी में डूब रही थी नाव
माँझी ओढ़े रह गया नकाब
ऐसी लगी वो नाव जब डूबी, पार गया न कोई तब
पानी में बुलबुले उठे, हम अपने ही आप मिटे
कैसे फिर न होता सबेरा
मेरे लिये था रखा एक बसेरा
वो पल कुछ निर्मम थे
खोये-खोये से कुछ हम थे
जब आँख खुली, धूप खिली
तितलियों को एक जमीं मिली
पर उड़कर वो छू न सका आसमां
कैसा निर्मोही था वो समां
जब आँख में आँसू तैर रहे थे
हम बूँद पानी को तरस गये थे
कैसा था ये जग का बंधन
टूट गया दिल, हार गया मन
खबर मिली एक तूफान आया
मुझको वो किस्सा रास न आया
ऐसी थी वो निशानी
कागज पे गिर रहा था पानी
ऐसी ही एक रात आयी थी
और सबेरे खिले थे सरसों
मुझको भूलने में लग गये बरसों
मैं चिड़िया, मैं बुलबुल मनचली
मेरी किस्मत में थी वही गली
मुझे तो ये जिन्दगी लगी ना भली
बाग महके, कोई ऐसी खिली कली।

पौधे से शाख जुदा हुआ

पौधे से शाख जुदा भी हुआ
सब देख रहा था वो खुदा
शाम को पंछी उड़-उड़ डोले
मैं गगन का चाँद हूँ, ऐसा बोले
मगर क्या आसमां होता नीचा
ये किस्सा एक ज्ञानी ने था रचा
कैसा वेश था ये ईश्वर का
खुला था दरवाजा हर एक घर का
अब वो दर बन्द पड़ा था
हर कोई उसके पास खड़ा था
किसका घर है ये भाई
मेरी समझ में बात न आयी
बोला शाख ने हम ठहरे योगी
बस जो हो वो बनूँगी भोगी
सूली पे अगर चढ़ाओगे मुझको
हम समझेंगे पागल तुझको
हम उड़ते पंछियों को छूने निकले
कुछ ने कहा, हम हैं मनचले
कैसे फिर जलने की आवाज हुई
धूप में जल गया तेरा बदन
पानी दे मुझको, बावरा है मन
पानी लेके हम गये जब वहाँ
न पौधा न शाख था जहाँ
कैसे फिर उड़ते पंछी
हर तरफ थी एक कहानी रची
सुबह भूले से राही आया बोला
इस पेड़ ने मुझको दी एक साया
अब कैसे न करता नाज वो
विशाल खड़ा था आज जो
फिर उठे न ऐसा मुद्दा
पौधे से शाख हुई थी जुदा
सब देख रहा था वो खुदा।

ये कैसा जहां

संसार से हमने कहा
तेरे पास क्या बाकी रहा
कुछ वो साथ ले गये
कुछ तुम देने को विदा हो गये
मार्ग सीधा लगा
पर तुमसे धोखा मिला
वो घर एक गरीब का था
जिसे तुमने महल समझ लिया
लूटी आबरू जिसकी
वो बेटी एक गरीब की थी
तुमने उसे मुस्तफा मान लिया
पल-पल एक जनाजा उठता रहा
महलों में दीये जलते रहे
उनके घरों से उठता रह गया धुआँ
बेबसी में पहले पिता की अर्थी सजी
फिर लाचार विधवा की भी चिता जली
तुमने कहा कोई तमाशा हुआ
हमने मौन होकर चेहरा लिया घुमा
एक आँधी उठी, घर से एक तिनका उड़ा
आँखों के दीये बुझने लगे
साँझ होने का शायद ये बहाना हुआ
हमने कमरे में बैठकर खिड़की खोली
एक बच्चा वहाँ मुझको नंगा दिखा
न तन पे लज्जा का चादर पड़ा
न भीख में एक तन का टुकड़ा मिला
किवाड़ों के पट बन्द होने लगे
कुछ सामने रहे, कुछ दूर जाने लगे
किसी ने टोका न किसी ने रोका उसे
हर दर का रास्ता देखा था उसका
वो हर उस जगह गया
जहाँ पर कि उसे कुछ पाने का भ्रम हुआ
मगर रात ने किया एक नया नाटक वहाँ
कुत्ता रोटी खाने को आ गया
तन की लज्जा रोटी ने ली चुरा

भीड़-भाड़ तो कुछ हुआ-न-हुआ
पर एक ठोकर पाँव में लगनी थी लगी
उसका वेश बन गया मजाक का माजमा
कोई हँसता रहा, कोई हँसता रहा
लज्जा गयी भाड़ में वो भागा लोगों की आड़ में
कैसा लगा ये किस्सा तुम्हें सुनकर
क्या तुमने सोचा होगा एक पल रूककर
ये तो खेल एक बच्चे का था
पर हर जगह यही किस्सा था रचा
पर्दे के पीछे बैठी थी नंगी बेटी
लाश पे ओढ़ाने को एक कफन ढूँढ रही थी बूढ़ी माँ
मृत देह ने मिट्टी से तन ढँक तो लिया
पर कहाँ ये वादा तुमने किया
कि उसका तन नंगा न रहे वो बेमौत ना मरे
तुम तो चलते रहे
किस्सा एक इतिहास कहलाता रहा
पर ये तो रोज का ही है खेल
जिसको लज्जा आये
कब्र खोदे और दफन हो जाये
पर जिसके पास कब्र की जमीन नहीं
ऐसी भी है तेरी बस्ती कई
कहाँ तक जायें वो भूखे-नंगे लोग
जिनका पेट क्या भरे, लग जाये एक रोग
एक बालक का रूप हो जहाँ बूढ़े का
क्या ऐसा नहीं है होता यहाँ
भले आँखें न खुले
भले जुबान मौनता का चादर रहे ओढ़े
पर ये एक ऐसी है दास्तां
जिसका नाम ही है एक जहां
संसार से हमने कहा
तेरे पास क्या बाकी रहा।

मैं भाग रही थी भीड़ से

मैं भाग रही थी भीड़ से
लोग देख रहे थे मुझे नजरों के तीर से
उनके घर चिराग था जला
मेरे लिये वो क्या था भला
मैं अँधेरे की सखी
थी मेरे हाथों में मेंहदी रची
पत्थर पे पीसा था हमने उसे
मेरी हथेली हो गयी काली
मैं समझी ये है उसकी लाली
रात आधी बची थी और
लेने निकले थे लोग एक कौर
उनके घर था भोजन पड़ा
मेरा पेट रह गया खाली
मैं भूखी सो गयी, सो गयी मेरी थाली
लोग जगाकर मुझसे बोले
इस बिस्तर पे तू सो ले
ये बिस्तर मेरे हैं भाई
अभी मुझे ये बात याद आई
तुम सो जाना मिट्टी के आँचल में
मैं सो जाता हूँ उनके काजल में
मैं भागी ऐसे वहाँ से
जैसे सामने कोई अय्यास पड़ा हो
मेरे ऐसे अन्दाज थे निराले
हम थे योगी, हम थे दिलवाले
ऐसे लोग क्या लगते मुझको अच्छे
मेरे बोल तो थे एक सच्चे
ये थे जीवन के किस्से सारे
मुझे ऐसी ही रात मिली थी
जब मिट्टी में मैं खिली थी
कैसा मातम ऐसी तकदीर से
आजाद हुई आज मैं एक जंजीर से
मैं भाग रही थी भीड़ से
लोग देख रहे थे मुझे नजरों के तीर से।

कहो तो मैं सो जाऊँ

बहुत दूर से आयी हूँ, थक गयी हूँ
कहो तो मैं सो जाऊँ।
मेरे पैरों के छाले जवान हो गये हैं
कहो तो मैं सो जाऊँ।
बहुत दूर से आयी हूँ, थक गयी हूँ
कहो तो मैं सो जाऊँ।
न मेरे पास माँ की लोरियाँ हैं
न वो पुराने तवे की चिकनी रोटियाँ
बड़े जोरों की भूख लगी है
भूखे पेट ही कहो तो मैं सो जाऊँ।
बहुत दूर से आयी हूँ, थक गयी हूँ
कहो तो मैं सो जाऊँ।
रोने को आँखें हैं तत्पर
ओठों पे गहरी खामोशी
इन उदास लम्हों से हँसी की एक उम्मीद कर
कहो तो मैं सो जाऊँ।
बहुत दूर से आयी हूँ, थक गयी हूँ
कहो तो मैं सो जाऊँ।
मेरे हाथों में चूड़ियाँ हैं, पैरों में बेड़ियाँ
मैं, औरत एक दास्तां सुनाती हूँ
मेरी दास्तां में उदासी है
कहो तो मैं सो जाऊँ।
बहुत दूर से आयी हूँ, थक गयी हूँ
कहो तो मैं सो जाऊँ।
अब न घर है कोई मेरा, न संसार कोई
आने वाले बहार भी बंजर हो गये हैं मुझसे
कहो तो मैं सो जाऊँ।
बहुत दूर से आयी हूँ, थक गयी हूँ
कहो तो मैं सो जाऊँ।
मेरे पैरों के छाले जवान हो गये हैं
कहो तो मैं सो जाऊँ।
बहुत दूर से आयी हूँ, थक गयी हूँ
कहो तो मैं सो जाऊँ।

दिल का किस्सा

हमने राह तकदीर की देखी
और एक किस्सा लिखा।
मुझे राह में एक प्यासा मिला
पानी का कतरा ऐसे रूका
अम्बर धरती के आगे झुका
सागर के दिल में तूफान उठा
न आँख नम हुई
न एक किस्सा हमने रचा
हमने राह तकदीर की देखी
और एक किस्सा लिखा।
ख्वाब अधूरा रहा था पूरा किया
नाम कागज पे लिखा
लिख के मिटा भी दिया
लोग कहते रहे अपनी जुबां
दर्द दे के बोले ये हे तेरा सामां
आग ऐसी लगी कि तनबदन जल गया
पानी के रेले बहे पर फिर भी न बुझा
हमने राह तकदीर की देखी
और एक किस्सा लिखा।
मेरी खातिर पेड़ों के साये पतझड़ बने
बहार दे के गये आँसू नये
हम तोहफे पे ऐसे मुस्करा ही पड़े
हाथ उठायी रजा पे उसकी
और तन घायल हुआ
हमने राह तकदीर की देखी
और एक किस्सा लिखा।
गुजर गयी हमपे हँस के गली
मुर्झा गयी आज फिर दिल की कली
बागवां हैरान फिर भी न हुआ
ये देख के जमाने का दिल खिल गया
हमारी जुबां मृत कहलाने लगी
मिली मुझको रोज ही ऐसी सजा
हमने राह तकदीर की देखी
और एक किस्सा लिखा।

आईना

आईने से अक्स ने पूछा
किसका चेहरा मुझसे रूठा
बोली वो मधुर जुबान
तरस न तू ऐ नादान
तेरी है सबको पहचान
तेरा रूप तेरा शृंगार
हर एक नारी पहने फूलों का हार।
रोज करे वो तेरा मनुहार
ये लेश की है बोली
ये क्लेश की है बोली
झूठ बोल रही है नारी बेईमान
करने चली किसी और का गुणगान
तुमने सँवारा आज एक तन
लौट के आयेगी वो विरहन
बगैर प्यार के झूठा अभिमान
तेरी सूरत तेरी शान
वो पल-दो-पल का मेहमान
तेरा नाम जग से ऊँचा
तेरे आगे हर आह बेकार
तू करे जब नारी का शृंगार।
अमृत बरसे गगन से
प्यास बुझे एक अगन से
तेरा नाम शाश्वत करे नारी
नारी अबला नारी बेचारी
शीशे के पहलू में बैठा
चेहरा एक सादा-सादा
और ऐसे खिला शृंगार वो पाके
जैसे धरती पे आयी हो आसमां से
एक देवी एक नारायणी।
जग से रूठी जग से हारी
जो नारी बनी बेचारी
चेहरा उसका सबसे सच्चा
आज सबसे मिली वो विदुषा
आईने से अक्स ने पूछा
किसका चेहरा मुझसे रूठा।

वो एक मकान मुझे सपने में दिखा था

वो एक मकान मुझे सपने में दिखा था
सीढ़ी से एक किवाड़ भी लगा था
चबूतरे पे बैठी थी मैं
सामने कागज का कुछ टुकड़ा पड़ा था
लिखनेवालों ने जाने क्या-क्या लिखा था
फिर हमने भी उस कागज को
जाने कितनी बार पढ़ा था
लिखाई तो ऐसी थी उसकी
जैसे वो कागज नहीं खुदा था
पर उसपे स्याही का एक बूँद भी गिरा था
ये सोचने को हम मुड़े थे
कहीं कुछ क्या मिटा था
तभी एक खिड़की खुली थी
आवाज का रूख भी वहीं से मुड़ा था
कदमों की आहट का आभास भी हुआ था
पर ये तो एक रास्ते का किस्सा दिया था
मैं ये सोचकर रूकी थी
कोई वापस बुलायेगा, कोई पर्दा उठायेगा
पर न आवाज आयी, न पर्दा उठा
बड़ी मुश्किल से धूल पाँवों से छुड़ा था
यही सोचकर मैं आगे बढ़ी थी
कि रूकने का एक इशारा मिला था
पीछे पलट के देखा तो हँस पड़ी थी
यहाँ तो एक पागल खड़ा था
कैसे पूछता वो हमसे फिर कोई सवाल
उसे भी तो मुझसा कोई सफर में मिला था
कहने लगा साथ मैं भी चलूँगा
जहाँ तुम रूकोगे, वहाँ मैं रूकूँगा
कोई खिड़की का पर्दा तभी तो गिरा था
ऐसे मोड़ पे आके ये मुझको भी लगा था
न जाने वो कौन सी घड़ी थी जब रूकना पड़ा था
बड़ी आरजू थी, बड़ा वो समां था
जिसमें हमने एक सपना बुना था

पर यहाँ तो बिखरा हुआ हर जहां था
ये रिश्ता ही ऐसा था जो कागज से जुड़ा था
हमने जिसे रूककर रास्ते में पढ़ा था
ये ही मोड़ मुझे सफर में मिला था
जिसपे ठहरकर हमने कुछ देर रूका था
वो एक मकान मुझे सपने में दिखा था
सीढ़ी से एक किवाड़ भी लगा था।

बचपन बीत गया

मेरे पैरों के धूल पुराने हो गये
आज वो जमाना बीत गया
मैंने जिसे बचपन कहा
आज वो फसाना बीत गया
मेरे पैरों के धूल पुराने हो गये
आज वो जमाना बीत गया।
न राहें मिली मुझे
न दास्तां ही बन सकी कोई
मेरे चेहरे की रंगत बीत गयी
वो रूठनेवाली निगाहों का फसाना बीत गया
मेरे पैरों के धूल पुराने हो गये
आज वो जमाना बीत गया।
हर शय चले जाने के बाद जब मैंने खुद को टोका
पाया जिन्दगी का वो तराना बीत गया
मेरे पैरों के धूल पुराने हो गये
आज वो जमाना बीत गया
अब तो निगाहों पे परछाईंयाँ छा गयी
ओठों पे गुजरे लम्हों का याद आना बीत गया
मेरे पैरों के धूल पुराने हो गये
आज वो जमाना बीत गया।
किस्मत के इस खेल में मैं हार गयी
वो नन्हें दोस्तों से मिलने का बहाना बीत गया
आज हमारे बचपन का वो किस्सा पुराना बीत गया
मेरे पैरों के धूल पुराने हो गये
आज वो जमाना बीत गया।
मैंने जिसे बचपन कहा
आज वो फसाना बीत गया
मेरे पैरों के धूल पुराने हो गये
आज वो जमाना बीत गया।

बचपन की वो दास्तां

ये कैसी है दास्तां, ये कैसे हैं किस्से
जिन्हें दिल भूलाये न भूले।
वो एक बचपन का सावन
वो बागों में पड़े एक झूले
ये कैसी है दास्तां, ये कैसे हैं किस्से
जिन्हें दिल भूलाये न भूले।
तितलियों की चाहत में भटकते वो नन्हें कदम
वो बागवां वो झूले
जिन्हें याद कर रहा है दिल
वो मंजर एक बार आके मुझे छूले
ये कैसी है दास्तां, ये कैसे हैं किस्से
जिन्हें दिल भूलाये न भूले।
वो नाव कागज की, उसपर वो बारिश का पानी
तैरती जवानी के धुँधले वो किस्से
डगमगाती नावों के अरमान वो झूठे
ये कैसी है दास्तां, ये कैसे हैं किस्से
जिन्हें दिल भूलाये न भूले।
वो परियों की बस्ती, वो सीढ़ियाँ वो सहारे
वो आसमान के तैरते नजारे
कोई मुझे लौटा दे मेरे वो बचपन के दिन
वो पगडंडियों पे दौड़ते कदमों की आहट
जिन्हें आज तक नहीं हम भूले।
ये कैसी है दास्तां, ये कैसे है किस्से
जिन्हें दिल भूलाये न भूले।

तुमने मुझे हँसते हुए देखा है

ऐ कलियों की बहारों, ऐ फूलों के नजारों
बोलो तुमने मुझे हँसते हुए देखा है।
वो कहते हैं बिन मौसम बरसात होती है
बोलो तुमने मुझे बरसते हुए देखा है
ऐ कलियों की बहारों, ऐ फूलों के नजारों
बोलो तुमने मुझे हँसते हुए देखा है।
मैं तो एक पेड़ हूँ पीपल का, ये अमरलता है मेरी
मेरे पास हजारों दिल है, दिलों में लोग बसते है
बोलो तुमने मुझे लड़ते हुए देखा है
ऐ कलियों की बहारों, ऐ फूलों के नजारों
बोलो तुमने मुझे हँसते हुए देखा है।
वो आते हैं मेरे पास दिलों में अरमान लिये
मैं भी हँस देती हूँ उन्हें देखकर
बोलो तुमने मुझे मुकरते हुए देखा है।
ऐ कलियों की बहारों, ऐ फूलों के नजारों
बोलो तुमने मुझे हँसते हुए देखा है।
ना मैं जिन्दा हूँ, ना मैं मर गयी
मैं तो बस आहिस्ता से गुजर गयी
बोलो तुमने मुझे सिमटते हुए देखा है।
ऐ कलियों की बहारों, ऐ फूलों के नजारों
बोलो तुमने मुझे हँसते हुए देखा है
मैं प्रकृति की एक अजब पहेली हूँ
जिसे दिल कहते हैं, जज्बात कहते हैं
बोलो तुमने मुझे संवरते हुए देखा है।
ऐ कलियों की बहारों, ऐ फूलों के नजारों
बोलो तुमने मुझे हँसते हुए देखा है।
मैं गुत्थी भी हूँ तो ऐसी कि सुलझ न सकूँ
कोई मुझे देखता है कोई नजर भर देखता भी नहीं
बोलो तुमने मुझे उलझते हुए देखा है।
वो कहते हैं बिन मौसम बरसात होती है
बोलो तुमने मुझे बरसते हुए देखा है
ऐ कलियों की बहारों, ऐ फूलों के नजारों
बोलो तुमने मुझे हँसते हुए देखा है।

न बारिश थमी न बिजली रूकी

न बारिश थमी न बिजली रूकी
साथ मेरे बह गया कागज
मैं दूर हो गयी इस जहां से, रह गया कागज
न बारिश थमी न बिजली रूकी
साथ मेरे बह गया कागज।
मेरे कुछ सपने खो गये
कुछ निकल गये शहर को
मुझसे राज की बात कह गया कागज
मैं दूर हो गयी इस जहां से, रह गया कागज
न बारिश थमी न बिजली रूकी
साथ मेरे बह गया कागज।
मेरी कुछ पहचान बदली
कुछ चेहरे ने बदले है रंग
संग मेरे बदल गया कागज
मैं दूर हो गयी इस जहां से, रह गया कागज
न बारिश थमी न बिजली रूकी
साथ मेरे बह गया कागज।
मैं ऐसे चली उस जगह से
जैसे वो कब्र हो मेरे लिए
आज मेरी दास्तां पढ़ते-पढ़ते रह गया कागज
मैं दूर हो गयी इस जहां से, रह गया कागज
न बारिश थमी न बिजली रूकी
साथ मेरे बह गया कागज।
मुझे लोगों ने न जाने क्या-क्या कहा
पर मैंने तो वही सुना, जो कह गया कागज
मैं दूर हो गयी इस जहां से, रह गया कागज
न बारिश थमी न बिजली रूकी
साथ मेरे बह गया कागज।
अब उस मोड़ पे खड़ी हूँ
जहाँ से वापसी नहीं जाती
मेरे साथ मेरे ही शहर में रह गया कागज
मैं दूर हो गयी इस जहां से, रह गया कागज
न बारिश थमी न बिजली रूकी
साथ मेरे बह गया कागज।

मैं चुपके से आसमां से मिली

रात ऐसे सोयी कि आँख ही न खुली
मैं जाके चुपके से आसमां से मिली
रात ऐसे सोयी कि आँख ही न खुली।
आसमां बोला कौन है वहाँ
हमने कहा, मैं हूँ एक बिखरा शमा
उसने मुँह फेर लिया ऐसे जैसे
मैं हूँ एक गहरा धुआँ।
मैं समझी इससे जमीं ही थी भली
मैं जाके चुपके से आसमां से मिली
रात ऐसे सोयी कि आँख ही न खुली।
चाँद रूठकर किनारे चला गया
सितारे लेके खुद को कहीं खो गये
मैं क्या करती, ऐसे वक्त में भी
मैं जली ही जली।
मैं जाके चुपके से आसमां से मिली
रात ऐसे सोयी कि आँख ही न खुली।
आखिरी प्रहर में एक ख्वाब देखा मैंने कि
कोई अर्थी है खड़ी
मेरी चाहत कहाँ थी इससे बड़ी
चढ़ के देखा उसपे तो लगा कि
ये लठ भी थी मनचली
मुझसे खिसककर दूर हो चली
मैं जाके चुपके से आसमां से मिली
रात ऐसे सोयी कि आँख ही न खुली।
सुबह का आखिरी सूरज चमका
आँखों में रोशनी पड़ी
तो ऐसा लगा मैं वर्षों के बाद आज थी जगी
मैं जाके चुपके से आसमां से मिली
रात ऐसे सोयी कि आँख ही न खुली।

जाने वो कौन होते हैं जो जिन्दगी को वफा कहते हैं
हमें तो यही लगता है पल-पल जैसे
जहर को लोग दवा कहते हैं।
जाने वो कौन होते हैं जो जिन्दगी को वफा कहते हैं।
बस्तियाँ तो बसती ही होगी उनके लिए
जिनके घर रोशनी का समां होता है।
हमें तो हर रिश्ता ही कुछ ऐसा दिखता है
कि हम मुहब्बत को दगा कहते हैं
हमें तो यही लगता है पल-पल जैसे
जहर को लोग दवा कहते हैं।
जाने वो कौन होते हैं जो जिन्दगी को वफा कहते हैं।
जिस्म दमकता है जिनका चन्दन सा
जिन्हें खुद पे गुमां होता है
हम तो ऐसे अन्दाज को उनके नशा-ही-नशा कहते हैं।
हमें तो यही लगता है पल-पल जैसे
जहर को लोग दवा कहते हैं।
जाने वो कौन होते हैं जो जिन्दगी को वफा कहते हैं।
रातों के साये जिन्हें डराते हैं
जिन्हें शाम की तन्हाई का गम नहीं होता है
ऐसे लोगों को तो हम जमाने की हवा कहते हैं।
हमें तो यही लगता है पल-पल जैसे
जहर को लोग दवा कहते हैं।
जाने वो कौन होते हैं जो जिन्दगी को वफा कहते हैं।
पीते-पीते भी जो बहक न सके ऐसा भी नशा क्या
हम तो ऐसे लोगों को छलका हुआ पैमाना कहते हैं।
जो टूट के जमीं पे बिखर न जाये
हम तो ऐसे जाम को उनका ही रवां कहते हैं।
हमें तो यही लगता है पल-पल
जैसे जहर को लोग दवा कहते हैं।
जाने वो कौन होते हैं जो जिन्दगी को वफा कहते हैं।

जब तन का बोझ कुछ कम किया, एक टीस सीने में उठी
क्या यूँ भी कभी किसी की मन्जिल रूकी
जब तन का बोझ कुछ कम किया, एक टीस सीने में उठी।
ये कैसे लोग थे मिले जो कह रहे थे कुछ किस्से नये
मैं समझी धूल में एक खत था पड़ा जो बन गयी मिट्टी
क्या यूँ भी कभी किसी की मन्जिल रूकी
जब तन का बोझ कुछ कम किया, एक टीस सीने में उठी।
कुछ फिक्र तो हुई, पर ज्यादा वक्त न लगा
गम की बात तो पहले भी थी चली
गम ही आज फिर आके मिली
क्या यूँ भी कभी किसी की मन्जिल रूकी
जब तन का बोझ कुछ कम किया, एक टीस सीने में उठी।
किसी से रास्ते का पता क्या पूछते
फिर वापस मुड़ के रह गये
कुछ लोगों ने तो देखकर जाने क्या-क्या न कहा
पर मेरी तो बस यही थी एक गली
क्या यूँ भी कभी किसी की मन्जिल रूकी
जब तन का बोझ कुछ कम किया, एक टीस सीने में उठी।
ये कम न था मेरे लिए कि लोग भी मिले मुझे
जिन्होंने मेरी तरफ पलट के देखा और कहा
ये तो पहले भी हमारी नजरों से थी गुजरी
क्या यूँ भी कभी किसी की मन्जिल रूकी
जब तन का बोझ कुछ कम किया, एक टीस सीने में उठी।
ये कहानी कुछ अधूरी सी रही पर
अब कर रही इसे मैं पूरी
कि अब आने-जाने में रह गयी है बस थोड़ी-सी दूरी
यही कहने को मैं आज फिर वापस मुड़ी
क्या यूँ भी कभी किसी की मन्जिल रूकी
जब तन का बोझ कुछ कम किया, एक टीस सीने में उठी।

जिसका कोई नहीं होता

मैं ऐसी आग हूँ जिसका कि धुआँ नहीं होता
एक बूँद स्याही के सिवा कोई दास्तां नहीं होता
मैं ऐसी आग हूँ जिसका कि धुआँ नहीं होता।
ऐसे चली थी मैं उस जगह से
जहाँ पर कि सुबह का सामां नहीं होता
एक बूँद स्याही के सिवा कोई दास्तां नहीं होता
मैं ऐसी आग हूँ जिसका कि धुआँ नहीं होता।
पेड़ ने कहा था मुझसे तुम मेरी शाख हो
हमने कहा कि शाख पेड़ से जुदा नहीं होता
एक बूँद स्याही के सिवा कोई दास्तां नहीं होता
मैं ऐसी आग हूँ जिसका कि धुआँ नहीं होता।
किनारे पे बैठे पंछी ने उड़ते वक्त कहा था हमसे
तेरी जमीं का कहीं पे आसमां नहीं होता
एक बूँद स्याही के सिवा कोई दास्तां नहीं होता
मैं ऐसी आग हूँ जिसका कि धुआँ नहीं होता।
शाम ढल जायेगी
सुबह ने कहा था एक बार ढलते-ढलते
हमने कहा था जिसका घर जले
उसका कोई आसियाँ नहीं होता
एक बूँद स्याही के सिवा कोई दास्तां नहीं होता
मैं ऐसी आग हूँ जिसका कि धुआँ नहीं होता
रात आयी तो चाँद खिला आसमान में
और हमसे इशारों में कहा
हथेली पे रच जाने के बाद कोई हिना नहीं होता
एक बूँद स्याही के सिवा कोई दास्तां नहीं होता
मैं ऐसी आग हूँ जिसका कि धुआँ नहीं होता।
फिर सुबह हुई और धूप ने खिलते हुए हमसे कहा
कि तू बर्बाद रह, तेरे जैसों का कोई जहां नहीं होता
एक बूँद स्याही के सिवा कोई दास्तां नहीं होता
मैं ऐसी आग हूँ जिसका कि धुआँ नहीं होता।

कफन

जब साँस टूटती है कोई साथ नहीं होता
साथ होती है कफन
हर शय चल जाती है रह जाती है कफन
जब साँस टूटती है कोई साथ नहीं होता
साथ होती है कफन।
जिस्म खेलता है खेल कई हँसती है जिन्दगियाँ
मगर जब उठते हैं हाथ दुआ में
नजर आती है कफन
हर शय चली जाती है रह जाती है कफन।
जब साँस टूटती है कोई साथ नहीं होता
साथ होती है कफन।
मेले लगते हैं यहाँ बिकती है लाशें
आत्मा लाती है कफन
हर शय चली जाती है रह जाती है कफन
जब साँस टूटती है कोई साथ नहीं होता
साथ होती है कफन।
सारे लोग रह जाते हैं यहीं
रिश्तों में होती है जलन
मगर जब उठती है मैय्यत उनसे माँग लाती हैं कफन
हर शय चली जाती है रह जाती है कफन।
जब साँस टूटती है कोई साथ नहीं होता
साथ होती है कफन।
मिट्टी में दफन होते हैं लोग
कब्र घर बनती है लाशें बिछती है वहाँ
मगर जलने से पहले ढूँढ लाती है कफन
हर शय चली जाती है रह जाती है कफन।
जब साँस टूटती है कोई साथ नहीं होता
साथ होती है कफन।
पीछे रह जाती है दुनिया, रह जाते हैं महल
मगर जब पलटते हैं लोग
दिख जाती है कफन
हर शय चली जाती है रह जाती है कफन।
जब साँस टूटती है कोई साथ नहीं होता
साथ होती है कफन।

कुछ भी नहीं मिला

न माँझी मिला, न कश्ती मिली, न किनारा मिला
देखने को हमें पहली बार ऐसा नजारा मिला।
न माँझी मिला, न कश्ती मिली, न किनारा मिला
ओठ खामोश रहे, आँखे भी खामोश रही
चाँदनी रातों का ऐसे में कुछ इशारा मिला
देखने को हमें पहली बार ऐसा नजारा मिला
न माँझी मिला, न कश्ती मिली, न किनारा मिला।
दरिया की लहर कलकल शोर मचाने लगी
सागर की तरफ से गुलिस्तां एक प्यार मिला
देखने को हमें पहली बार ऐसा नजारा मिला।
न माँझी मिला, न कश्ती मिली, न किनारा मिला।
रेत-रेत बिखरी कली, ख्वाबों का महल पुराना हुआ
मुझको ऐसा ही गम तकदीर से सारा मिला
न माँझी मिला, न कश्ती मिली, न किनारा मिला।
आहिस्ता-आहिस्ता कदम उठने लगे
मुझको हर मोड़ पे एक ऐसा ही सहारा मिला
देखने को हमें पहली बार ऐसा नजारा मिला
न माँझी मिला, न कश्ती मिली, न किनारा मिला।
ऐसे में अचानक कुछ याद आया हमें
रात के आने के पहले ही था हमें एक सितारा मिला
देखने को हमें पहली बार ऐसा नजारा मिला
न माँझी मिला, न कश्ती मिली, न किनारा मिला।
अब अगर ऐसे में वो आ जाते तो सोचना पड़ता हमें
ये राहगीर कौन गुजरा मेरी गली से
ये कौन मुझको यारा मिला।
न माँझी मिला, न कश्ती मिली, न किनारा मिला
देखने को हमें पहली बार ऐसा नजारा मिला।

दास्ताने जिन्दगी

नदी डूब गयी, नाले से बह गया पानी
जो तुम न कह सके वो बातें कह गया पानी
नदी डूब गयी, नाले से बह गया पानी।
तेरे आँगन में आज गूँजती नहीं किलकारी
एक बच्चे को जवानी दे के चलता रह गया पानी
नदी डूब गयी, नाले से बह गया पानी।
तुमने न इन्साफ किया, खुदा ने भी पाक नजर नहीं दी
खुदा को भूल तेरे सजदे में झुका रह गया पानी
तुम्हारे इन्तजार में रोशनी भी हो गयी मध्यम
आहिस्ता से जलकर भी बुझा ही रह गया पानी
नदी डूब गयी, नाले से बह गया पानी।
किसी ने आवाज दी हमें, मगर हमने जब पलटकर देखा
मुझपे हँसता ही रह गया पानी
नदी डूब गयी, नाले से बह गया पानी।
तुम्हें गिले भी हजार हुए, शिकवा करता रह गया पानी
नदी डूब गयी, नाले से बह गया पानी।
अब न शोर है कोई, न दास्तां
बहारों के आईने के अक्स में
पिघलता ही रह गया पानी
नदी डूब गयी, नाले से बह गया पानी।
अपना घर टूट रहा है
बिखरने की बातें चल रही है दीवारों से
दीवारों ने जो लिखा था पढ़कर भी पढ़ता ही रह गया पानी
नदी डूब गयी, नाले से बह गया पानी।
तेरे मिजाज पूछता है दिल इस सर्द मौसम में
मेरे मिजाज तो बदलते-बदलते रह गया पानी
अब न हाल पूछना न पता अपने मकान का
किसी अजनबी सा घर में ठहरता ही रह गया पानी
नदी डूब गयी, नाले से बह गया पानी।
जो तुम न कह सके, वो बातें कह गया पानी
नदी डूब गयी, नाले से बह गया पानी।

ये किसका दिल रोया

ये किसका दिल रोया, ये किसके आँसू का सामान है
बिखरा-बिखरा इस मोड़ पे खड़ा हर इन्सान है।
ये किसका दिल रोया, ये किसके आँसू का सामान है।
न ख्वाब है आँखों में, न जुबां पे हँसी की कोई बात
ये इस गली में खड़ा किसका मकान है
ये किसका दिल रोया, ये किसके आँसू का सामान है।
कहती है दुनिया, यहाँ रिश्ते बिकते हैं
ये कौन रहता है यहाँ, यहाँ पे तन्हा खड़ा कौन इन्सान है
ये किसका दिल रोया, ये किसके आँसू का सामान है।
ओठ कहते हैं कुछ, जुबां खामोशी से दे रही अपनी पहचान है
शीशे सा टूटा हुआ, ये किसका अरमान है
ये किसका दिल रोया, ये किसके आँसू का सामान है।
न शोर है जहाँ, न हँसी की गूँजती आवाज है
मैय्यत भी उठती है तो लोग होते है वहाँ
ये इलाका तो वीरान है
ये किसका दिल रोया, ये किसके आँसू का सामान है
जहाँ शर्म से छुपे हैं चेहरे, जहाँ के रास्ते सूनसान है।
जमीं है ये सामने खड़ी, सर पे खड़ा आसमान है।
ये किसका दिल रोया, ये किसके आँसू का सामान है
बिखरा-बिखरा इस मोड़ पे खड़ा हर इन्सान है।

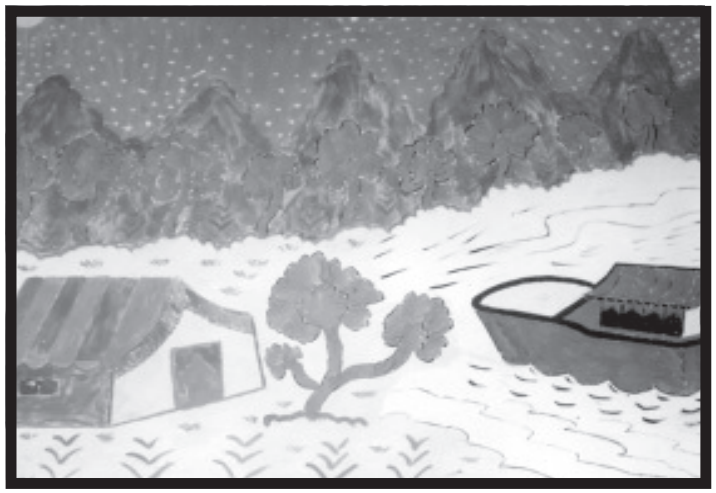

टूट गया विश्वास

हर बन्धन छूट गया यहीं, टूट गया विश्वास
मैंने कहा ऐ इन्सानी रूह, यहाँ धरती है वहाँ आकाश।
हर बन्धन छूट गया यहीं, टूट गया विश्वास।
न पालनों पे मेरे कदम पड़े
न जिन्दगी की कोई लोरी सुनी मैंने
मैं जवान हो गयी
कहा जिन्दगी से क्यों किया मैंने विश्वास
मैंने कहा ऐ इन्सानी रूह, यहाँ धरती है वहाँ आकाश।
हर बन्धन छूट गया यहीं, टूट गया विश्वास।
माँ की आँखों में आँसू दिखे मुझे
पिता के दिल का खोया करार
रिश्ते मिट्टी में मिल गये
अपनों ने भी नाता छोड़ा, हमने भी तोड़ दिया विश्वास
मैंने कहा ऐ इन्सानी रूह यहाँ धरती है वहाँ आकाश।
हर बन्धन छूट गया यहीं, टूट गया विश्वास।
बिस्तर भी खाली, कमरे भी खाली
अन्दर भी खाली, बाहर भी खाली
हर एक कमरे में खो गया विश्वास
मैंने कहा ऐ इन्सानी रूह, यहाँ धरती है, वहाँ आकाश।
हर बन्धन छूट गया यहीं, टूट गया विश्वास।
उम्र बीतते गये
फासले खत्म होते रहे जिन्दगी और मौत के बीच
श्मशान में मुझे सुलाया गया
मैंने पूछा खुद से तब, क्यों भेजा था मुझे यहाँ
क्यों तोड़ दिया विश्वास
मैंने कहा ऐ इन्सानी रूह, यहाँ धरती है वहाँ आकाश।
हर बन्धन छूट गया यहीं, टूट गया विश्वास।

कुछ पता नहीं, कुछ खबर नहीं

वो ख्वाब थे मेरे या हम थे अजनबी
कुछ पता नहीं, कुछ खबर नहीं।
जिनकी दुआ का हाथ था सर पे
वो आते कहीं अब नजर नहीं
वो ख्वाब थे मेरे या हम थे अजनबी
कुछ पता नहीं, कुछ खबर नहीं।
मैं खेल रही थी जिनकी गली में
बस सका कहीं फिर से वो शहर नहीं
जिनकी दुआ का हाथ था सर पे
वो आते कहीं अब नजर नहीं
वो ख्वाब थे मेरे या हम थे अजनबी
कुछ पता नहीं, कुछ खबर नहीं।
एक पर्दा ऐसे उठा, जैसे हो रात का सबेरा
हम चौंक गये, उनकी रोशनी का मुझे था पता नहीं
जिनकी दुआ का हाथ था सर पे
वो आते कहीं अब नजर नहीं
वो ख्वाब थे मेरे या हम थे अजनबी
कुछ पता नहीं, कुछ खबर नहीं।
हम ऐसे साये थे पतझड़ के
जिन्हें बहार का पता नहीं
रूठकर बैठे थे हम वसन्त में
और हो सका गजर नहीं
जिनकी दुआ का हाथ था सर पे
वो आते कहीं अब नजर नहीं
वो ख्वाब थे मेरे या हम थे अजनबी
कुछ पता नहीं, कुछ खबर नहीं।
न कभी फिक्र हुई फजा को मेरी
न रूत ने कोई बहाना किया
जो लोग कहकर चले गये
उसका हुआ मुझपे कोई असर नहीं।
जिनकी दुआ का हाथ था सर पे
वो आते कहीं अब नजर नहीं
वो ख्वाब थे मेरे या हम थे अजनबी
कुछ पता नहीं, कुछ खबर नहीं।

तन्हाई

हम तो तन्हा थे ही हमारी तन्हाई में
ऐसे में तेरा आना कोई अहसान क्या?
जिससे कभी कोई मिला ही न हो
ऐसे में मिलने का तेरा बद्गुमान क्या?
हम तो तन्हा थे ही हमारी तन्हाई में
ऐसे में तेरा आना कोई अहसान क्या?
तकदीर का काँटा चुभ के
जख्म दे ही गया आखिर
ऐसे में गम देके जानेवाला
फिर तू भी मेहरबान क्या?
जिससे कभी मिला ही न हो कोई
ऐसे में मिलने का तेरा बद्गुमान क्या?
हम तो तन्हा थे ही हमारी तन्हाई में
ऐसे में तेरा आना कोई अहसान क्या?
हमारी हसीन सूरत जब
काला लिहाफ ओढ़ चुकी तो
ऐसे मौके पर तेरा बिन बुलाये चले आना
हमपे हुआ निगहबान क्या?
जिससे कभी कोई मिला ही न हो
ऐसे में मिलने का तेरा बद्गुमान क्या?
हम तो तन्हा थे ही हमारी तन्हाई में
ऐसे में तेरा आना कोई अहसान क्या?
कई मोड़ मुड़ते-मुड़ते
आखिरकार हम ठहर गये
इस आखिरी मोड़ पे तेरे कदमों की आहट
पड़ जाना बने मेरे लिए मुस्कान क्या?
जिससे कभी कोई मिला ही न हो
ऐसे में मिलने का तेरा बद्गुमान क्या?
हम तो तन्हा थे ही हमारी तन्हाई में
ऐसे में तेरा आना कोई अहसान क्या?
जिसकी सूरत ना लगे पहचानी सी
ऐसे अनजानों पे नाज करूँ तो कैसे
जो अजनबी ही बन के रह जाये
घर में आया ऐसा भी मेहमान क्या?
हम तो तन्हा थे ही हमारी तन्हाई में
ऐसे में तेरा आना कोई अहसान क्या?

हम हैरान रह गये

आँचल का साया काम न आया
हम परेशान थे, परेशान रह गये
कुछ दर्द तो जायज लगे, कुछ को पाकर हम हैरान रह गये।
आँचल का साया काम न आया
हम परेशान थे, परेशान रह गये।
न ख्वाब देख सके कोई, न कोई हसरत पूरी हुई
एक बुत बने रहे हम, बेजान रह गये
कुछ दर्द तो जायज लगे, कुछ को पाकर हम हैरान रह गये।
आँचल का साया काम न आया
हम परेशान थे, परेशान रह गए।
रिश्ते निभ न सके हमसे
सारे रिश्ते खो गये जमीं के
शायद और भी बाकी हमारे इम्तहान रह गये।
कुछ दर्द तो जायज लगे, कुछ को पाकर हम हैरान रह गये
आँचल का साया काम न आया
हम परेशान थे, परेशान रह गये।
जहां एक किस्सा सुनाने लगा
जहां में आके हम तड़पते रहे
तड़पते जिस्मोजान रह गये।
कुछ दर्द तो जायज लगे, कुछ को पाकर हम हैरान रह गये
आँचल का साया काम न आया
हम परेशान थे, परेशान रह गये।
न इल्म सीखा कोई हमने न बात की कोई तजुर्बे की
कि तेरी गली में खड़े हम आखिरी मेहरबान रह गये
कुछ दर्द तो जायज लगे, कुछ को पाकर हम हैरान रह गये।
आँचल का साया काम न आया
हम परेशान थे, परेशान रह गये।
शायद पर्दा गिरा गया कोई
शायद पर्दे के पीछे खड़े बाकी हम एक इन्सान रह गये।
कछ दर्द तो जायज लगे, कुछ को पाकर हम हैरान रह गये
आँचल का साया काम न आया
हम परेशान थे, परेशान रह गये।

दास्तां

हम सुनाने बैठे हैं दास्तां एक चिड़ी और चिनार का
एक गली में घोंसला था उसका, सामने घर था एक पहरेदार का।
हम सुनाने बैठे हैं दास्तां एक चिड़ी और चिनार का।
पंख थे कोमल उसके, रंग था जिस्म पे चढ़ा
ओठ गुलाबी थे उसके, कोई दूसरा मौजूद न था वहाँ उसके आकार का
एक गली में घोंसला था उसका, सामने घर था एक पहरेदार का।
हम सुनाने बैठे हैं दास्तां एक चिड़ी और चिनार का।
चर्चे तो खूब थे जहां में उसके
और सहारा लिये बैठा था वो एक डगमगाती दीवार का
एक गली में घोंसला था उसका, सामने घर था एक पहरेदार का।
हम सुनाने बैठे हैं दास्तां एक चिड़ी और चिनार का।
मीठे थे बोल उसके और मीठी थी सुरों की तान
और चल रहे थे वार उसपे तीर और तलवार का।
एक गली में घोंसला था उसका, सामने घर था एक पहरेदार का।
हम सुनाने बैठे हैं दास्तां एक चिड़ी और चिनार का।
एक रोज वो उड़ गया आसमान में
आवाज पहुँच न सका उसके पास किसी के प्यार का
लेकर चला था वो उड़ने पंख किसी के उधार का।
एक गली में था घोंसला उसका, सामने घर था एक पहरेदार का
हम सुनाने बैठे हैं दास्तां एक चिड़ी और चिनार का।
ख्वाब में सजी रह गयी उसके अरमानों की डोली
मौत ही मन्जिल थी आखिरी उसकी
मौत को ही ठहरना पड़ा लेके एक लम्हा उसके इन्तजार का।
एक गली में घोंसला था उसका, सामने घर था एक पहरेदार का।
हम सुनाने बैठे हैं दास्तां एक चिड़ी और चिनार का।

बाग ने पुकारा किया

समय भी चला एक दिन मैं भी चली
तन्हा-तन्हा ये गली वो गली
बाग ने पुकारा किया
रूसवा क्यों हो रही मेरी नन्हीं कली।
समय भी चला एक दिन मैं भी चली
तन्हा-तन्हा ये गली, वो गली।
राह एक माली का था और मकान था एक महल सा
पहले कदम कुछ आहिस्ता चले
फिर वापस मैं मुड़ी ही मुड़ी
बाग ने पुकारा किया
रूसवा क्यों हो रही मेरी नन्हीं कली।
समय भी चला एक दिन मैं भी चली
तन्हा-तन्हा ये गली वो गली।
सोने-चाँदी के थाल थे बिछे, मखमली सोफे थे यहाँ
हर बूटे में थी एक मोती जड़ी
मैं जब बैठी वहाँ टूट गयी हर उन मोतियों की लड़ी
बाग ने पुकारा किया
रूसवा क्यों हो रही मेरी नन्हीं कली।
समय भी चला एक दिन मैं भी चली
तन्हा-तन्हा ये गली वो गली।
हर जगह काँटे गड़े, हमने समझा फूल हैं बिखरे नये
आँख झपकने लगी पर सोने की ये जगह लग रही थी नयी।
बाग ने पुकारा किया
रूसवा क्यों हो रही मेरी नन्हीं कली।
समय भी चला एक दिन मैं भी चली
तन्हा-तन्हा ये गली वो गली।
आखिर नीन्द खुलने लगी
हमने समझा भोर की है ये किरण कोई
मुझे चलना पड़ा
मैं ही फकत रह गयी थी यहाँ एक अजनबी।
बाग ने पुकारा किया
रूसवा क्यों हो रही मेरी नन्हीं कली।
समय भी चला एक दिन मैं भी चली
तन्हा-तन्हा ये गली वो गली।

लबों की खामोशियाँ बुला रही है तुम्हें

ऐ जिन्दगी कब्र में दफन होने वाली
लबों की खामोशियाँ बुला रही है तुम्हें
लम्हा-लम्हा वक्त बीतता चला जा रहा है
मौत ख्वाबों के दरम्यां सुला रही है तुम्हें।
ऐ जिन्दगी कब्र में दफन होने वाली
लबों की खामोशियाँ बुला रही है तुम्हें।
मेरे परों को तितलियाँ ले उड़ी वो बचपन वाली
अब मिटती हुई इस जवानी की निशानियाँ बुला रही है तुम्हें।
ऐ जिन्दगी कब्र में दफन होने वाली
लबों की खामोशियाँ बुला रही है तुम्हें।
मेरे कदमों में पड़ गयी जंजीरे
मेरे हाथों ने ओढ़ लिया कफन
हर निशां खो गयी
वो छोटी सी रास्तों की पगडंडियाँ बुला रही है तुम्हें
ऐ जिन्दगी कब्र में दफन होने वाली
लबों की खामोशियाँ बुला रही है तुम्हें।
रह गये हर एक साये, लौट आया जिस्म
जुबां से सुनने वाली दास्तां की बयां कहानियाँ
बुला रही है तुम्हें
ऐ जिन्दगी कब्र में दफन होने वाली
लबों की खामोशियाँ बुला रही है तुम्हें।
ये किस्से अब यहीं खत्म हो गये
हो गयी जुदा हर एक नजर
सुलानेवाली रातों की बेकरारियाँ बुला रही है तुम्हें
ऐ जिन्दगी कब्र में दफन होने वाली
लबों की खामोशियाँ बुला रही है तुम्हें।
लम्हा-लम्हा वक्त बीतता चला जा रहा है
मौत ख्वाबों के दरम्यां सुला रही है तुम्हें।
ऐ जिन्दगी कब्र में दफन होनेवाली
लबों की खामोशियाँ बुला रही है तुम्हें।

हमने शुरू एक किस्सा किया

तुम मिले मुझे राह में खड़े
हमने शुरू एक किस्सा किया
कहनेवालों ने कुछ कहा-न-कहा
पर तुमने कहा, है ये रिश्ता नया।
तुम मिले मुझे राह में खड़े
हमने शुरू एक किस्सा किया।
पहले तुम खामोश रहे
फिर हवा का एक झोंका लगा
हमने पलट के जब देखा
था वहाँ एक पत्ता गिरा
कहनेवालों ने कुछ कहा-न-कहा
पर तुमने कहा, है ये रिश्ता नया।
तुम मिले मुझे राह में खड़े
हमने शुरू एक किस्सा किया।
एक जगह तुम रूके, मुड़ के पीछे चले
हमने हाथ थामा था तुम्हारा
पर तभी पाँव में ठोकर थी लगी।
हम ठहरे कुछ पल के लिए
और ओठों को एक हल्का सा इशारा किया
कहनेवालों ने कुछ कहा-न-कहा
पर तुमने कहा, है ये रिश्ता नया।
तुम मिले मुझे राह में खड़े
हमने शुरू एक किस्सा किया।
एक ऊँची टीली मिली, हम कुछ पल बैठे वहाँ
बातों-बातों में लगा, तुमने मुझसे कुछ कहा।
तुम भी पलटे, हम भी पलटे
आँखों ने आँखों से कुछ कहना भी चाहा
तभी एक आवाज आयी
अरे यहाँ तो था एक तूफां खड़ा
कहनेवालों ने कुछ कहा-न-कहा
पर तुमने कहा, है ये रिश्ता नया
तुम मिले मुझे राह में खड़े
हमने शुरू एक किस्सा किया।

आँखों में धूल पड़ने लगे
हम चलने ही वाले थे कि सामने एक साया दिखा
हम समझे ये है रास्ता वही पहचाना हुआ
जिसका मोड़ हमें है मिला
कहनेवालों ने कुछ कहा-न-कहा
पर तुमने कहा, है ये रिश्ता नया।
तुम मिले मुझे राह में खड़े
हमने शुरू एक किस्सा किया।

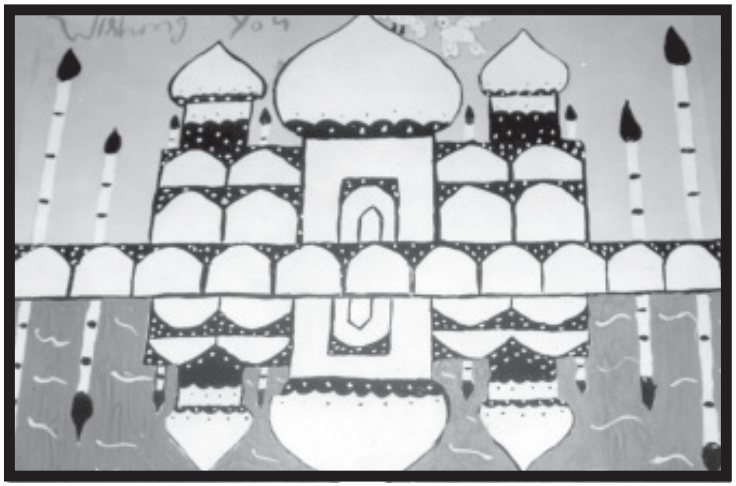

मानव देह

मृत पड़ी थी मानव देह
तड़प रही थी प्यासी नेह
चार सामान पड़े थे
रास्ता था कुछ गज लम्बा
कफन लिये खड़ी थी माँ
बेटी के जिस्म पे था जो चढ़ा
ये तड़प ऐसी थी उसकी
न जग से मिटा न रब से मिटा
लठ ऐसे खड़ी थी
जैसे कल तक थी वो खड़ी
आज आँख बन्द पड़ी थी
जुबां खामोश कर रही थी दुआ
मेरे सर पे माँ का आँचल चढ़ा
राह में क्यों छोड़ा मुझे तन्हा
कोई सुन न सका उसकी सदा
हार तन का हुआ
जिस्म जलता रहा, साँस बुझती रही
मातम की शाम आखिरकार ढली
विदा हो वो घर से गयी
चार कांधा मिला
मिला न चार सहारा नया
वो रंग लाल हो चला
जिस रंग का पता था हमने लिया
बीच भँवर में कश्ती डूबी
पानी बूँद बन बरसने लगी
आग जलकर बुझ गया, तन घायल हुआ
मन में हुक फिर से उठी, मौत ऐसी मिली
मगर जिस्म से उठ सका न धुआँ
न माँ का आँचल ढला, न रूक सका कारवाँ
ये थी किस्मत मिली जिनका नहीं था एक ध्येय
रह गया बाकी मेरा यही एक स्नेह
मृत पड़ी थी मानव देह
तड़प रही थी प्यासी नेह।

तू मृत्यु है अगर तो कितनी दूर है

तू मृत्यु है अगर तो कितनी दूर है
सुना है कि सारे जग में तू मशहूर है
मुझे लेने कब आयेगी तू
किस घड़ी रूप धर माया का
मुझे ले जायेगी तू
कब तक राह निहारूँगी मैं तेरी
जीना कर डाला मुश्किल
ये सांसारिक राग-रंगों ने
टूट-टूट कर चूर-चूर कर डाला
मुझे मेरे ही अंगों ने
कैसे फिर खड़ा होने का ढोंग करूँ मैं
कितनी बार बेमौत और मरूँ मैं
तू कब मेरे सामने प्रकट होगी
क्या उस घड़ी मुझको भी संकट होगी
जिस्म से रूह कितनी निकट होगी
क्या मेरा नाम इतिहास में रचा जाएगा
क्या फिर से जग में मेरे जैसा कोई आएगा
वो घर फिर किसका होगा
जिसने तांडव खेल फिर से रचा होगा
क्या ऐसी रचना का सार
फिर मुझसे ही लिखा जाएगा
क्या फिर कोई कविता
इस घटा में गुनगुनाएगी
मैं किस वेश में जाऊँगी यहाँ से
आवाज आ रही है ये कहाँ से
मैं आगे हूँ आसमां से
तू किसका कर रही है इन्तजार
कोई जाने को न होगा यहाँ तैयार
मेरे प्राण हर ले तू
मैं कैसे विनती तुझसे करूँ
तू तो दिव्य दृश्य का सार है
तू तो मानव प्राण का आकार है
किसने रास्ता रोक रखा है तेरा
बता दे तू उसका भी पता मुझको
मैं आदिकाल से भटक रही हूँ

मैं विचित्र मानव देह में तड़प रही हूँ
कब होगी पूरी आरजू मेरी
भला न होगा ऐसा भी दीर्घायु कोई
अगर ऐसा खेल है उसका तो
नष्ट कर दूँगी मैं ये धरा
न यहाँ जमीं बचेगी न बचेगा आसमां
मिटा डालूँगी मैं ये जहां
या तो दे मुक्ति मुझे इस मानव देह से
या जीना आसान कर दे मेरा
क्या तेरा और भी वेश है जग में कोई
मैं तन्हा पहले भी हूँ रोयी
तू खींच मुझसे मेरे प्राण
और दिखला दे माता अपनी आन
मैं मरने को हूँ तैयार
ये सारा जग तो है एक व्यापार
क्या सोचा था तुमने कभी
कि यहाँ ऐसे भी लोग होंगे सभी
जो दिया मुझे अमरता का वरदान
कितना बड़ा धोखा दे डाला
तूने मुझको नादान
मैं आयी थी यहाँ पल-दो-पल को
या रहूँगी आज या मरूँगी कल
क्या तू प्रबल है, हे मृत्यु देव!
मुझमें छुपा है जग का मोह
पर मेरा तन सह रहा बिछोह
न आदर है यहाँ मिला मुझको
न मिल पाया सम्मान
जन्म दे माता मेरी हो गयी हैरान
ये कैसा वेश धर के आया
मेरे घर तू भगवान
मेरे पिता बहुत मजबूर हैं
माँ मेरी जख्मों से चूर है
हे मृत्यु! तू अगर है तो कितनी दूर है
सुना है कि सारे जग में तू मशहूर है।

हे मृत्यु! तेरा रूप कैसा होगा

हे मृत्यु! तेरा रूप कैसा होगा
तू कितनी सुन्दर होगी
तेरे आँचल में मैं कब सोऊँगी
क्या मैं मृत्यु के बाद भी जी उठूँगी?
क्या लोगों की घृणित बातें
मुझे जिन्दा कर देगी फिर से
किसका चेहरा देखूँ मैं सबसे करीब से
वो रास्ता कितना गज लम्बा होगा
जहाँ लाशें दफन होती होगी
किस घर से चिराग ले जलूँगी मैं
क्या सदियों बाद मरूँगी मैं
मेरे नाम और कितनी जिन्दगानी होगी
लोगों की जुबां पर कब तक मेरी कहानी होगी
तुम्हें मैं कब देखूँगी
तू मेरे करीब कब आयेगी
याराना कब होगा तुम्हें हमसे
मर तो चले इस कदर हम गम से
ये रचित मृत्यु होगी मेरी
अपनी ही कलम से
न कल का सूरज देखूँगी मैं
न देखूँगी कल की शाम
पी लिया है मैंने आज फिर एक जाम।
चाहे जो भी हो मेरा अन्जाम।
मैं अर्थ हूँ काव्य का,
मैं काव्य हूँ कविता का
मेरा नाम अमर है संसार में
पर भटक रही हूँ आज
मैं इस बाजार में
न जहाँ मेरी कीमत है कोई
मैं वर्षों से नहीं हूँ सोई
क्या इतना भी मैं हूँ रोई
सुना तुमने मेरी आवाज को
मैं टूटा साज हूँ
मैं गंगा का स्वच्छ जल हूँ
मैं पावन परिणय की प्रतिमूर्त्ति हूँ
मैं संसार का कलम सूत्र हूँ

मैं आदि हूँ, मैं अन्त हूँ
मैं ख्वाब हूँ, मैं मलिनता हूँ
विधाता की रचित मैं एक कविता हूँ
मेरा यही रंग है, मेरा यही रूप है
पर तू बता मुझसे कितनी दूर है
इस गोधूली वेला में भी क्या तू मजबूर है?
किसने रास्ता रोक रखा है तेरा
जानेजिगर तड़प-तड़प
तलाश रहा है एक नया बसेरा
अब न घर दिखता है मुझे कहीं
न दिखता है रातों का अन्धियारा
चिराग की लौ में जल गया बदन सारा
क्या नाता और भी है इस मिट्टी से हमारा
कागज कब उत्पन्न होगा
चिट्ठी कब लिखी जाएगी मेरे नाम
स्याही कब करेगी मुझको बदनाम?
किसका वेश धरूँ मैं
किसका वेश उतारूँ मैं
मैं आरती का थाल भी नहीं हूँ,
मैं इतना कंगाल भी नहीं हूँ
पर मैं मालामाल भी नहीं हूँ
किस तरफ रूख करूँ मैं अपना
देखूँ किन आँखों से मैं ये सपना
तुमसे मेरा दीदार कब होगा
तेरा शृंगार कैसा होगा
कितनी सुंदर होगी तुम
तेरे आसार कैसे होंगे
तेरा किस्सा कैसा होगा
नाम विधाता का कब बदलेगा
कब गंगा रूख तेरा मुड़ेगा
हे मृत्यु! तेरा रूप कैसा होगा
तू कितनी सुन्दर होगी
तेरे आँचल में मैं कब सोऊँगी
वो वेला मेरे लिए कैसी होगी
वो शाम का आँचल कैसा होगा
हे मृत्यु! तेरा रूप कैसा होगा।

हमें चलते जाना है

हमें आगे जाना है
हमें चलते जाना है
बस चलते ही जाना है।
परस्पर चलना ही जीवन शिक्षा का सही मार्ग है
पीछे पलटकर तकना जुर्म है, पाप है, कायरता है
कोई कम ज्ञान वाला नहीं संसार में
हर एक के पास एक ज्ञान दीपक है
कोई पाता है उसे
कोई खोता है उसे
और कोई जलाता है उसे
किसी का नाम कोरा पन्ना पढ़ता है
कोई खुद किताबों में ढलता है
यही कर्म है इन्सान का
यही धर्म है इन्सान का
कि हमें चलते जाना है
बस चलते ही जाना है।
एक पुस्तक हो अगर हाथ में तो
स्याही कभी चलने से नहीं थकती
किस्सा रचा ही जाना है आखिर
एक नाम लिखा ही जाना है आखिर
यही ध्येय हो जीवन का
कि हमें चलते जाना है
बस चलते ही जाना है।
जन्मदेयी माता जो सामने खड़ी है तेरे
वो अमर तो करेगी ही तुम्हें
संसार एक अमरलता है
इसे बढ़ते जाना है
बढ़ते ही जाना है
हमें चलते जाना है।
बस चलते ही जाना है।
न पीछे तकना है
न रूककर मुड़ना है
कि हमें चलते जाना है
बस चलते ही जाना है।

मेरा नाम याद रखना

ऐ जमाना मेरे बाद तू मेरा नाम याद रखना
खुशी को तरस रही हूँ मैं, मेरे लिए ये पयाम याद रखना
ऐ जमाना मेरे बाद तू मेरा नाम याद रखना।
कोई हँसता है मुझे देखकर, कोई सोचता है मेरे बारे में
मै गुजरूँ जिस गली से, उस गली का सलाम याद रखना
ऐ जमाना मेरे बाद तू मेरा नाम याद रखना
इतने भी सितम न करना कि मैं सो जाऊँ जमीं पे
मुझे सोते से जगाने का काम याद रखना
ऐ जमाना मेरे बाद तू मेरा नाम याद रखना।
खुशियाँ मिले मुझे भी, मेरे गम की शाम तो ढले
तू मेरे साथ मेरा भी सरेशाम याद रखना
ऐ जमाना मेरे बाद तू मेरा नाम याद रखना।
मुझे दलदल कहते हैं लोग, पाकीजगी का कोई नाम नहीं
मैं पाकिजा बनूँ, तू मेरी पाकीजगी का इनाम याद रखना
खुशी को तरस रही हूँ मैं, मेरे लिए ये पयाम याद रखना
ऐ जमाना मेरे बाद तू मेरा नाम याद रखना।